History of The Ancient and Medieval World

DHIS401

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY

प्राचीन एवं मध्य जगत का इतिहास

HISTORY OF ANCIENT AND MEDIEVAL WORLD

Copyright © 2013 Laxmi Publications (P) Ltd.
All rights reserved

Produced & Printed by
LAXMI PUBLICATIONS (P) LTD.
113, Golden House, Daryaganj,
New Delhi-110002
for
Lovely Professional University
Phagwara

पाठ्यक्रम
(SYLLABUS)
प्राचीन एवं मध्य जगत का इतिहास
(HISTORY OF ANCIENT AND MEDIEVAL WORLD)

उद्देश्य

- छात्रों को आदिकाल, काँस्य-युग, लौह-युग, पाषण-युग तथा इन युगों की मानवीय सभ्यताओं की मूलभूत विशेषताओं से परिचित कराना ।
- छात्रों को विभिन्न काल के साम्राज्यों, सामन्ती व्यवस्था तथा आरम्भिक व्यापार रीतियों से सम्बन्धित विस्तृत जानकारी देना।
- छात्रों को मध्ययुगीन कृषि और उत्पादन तकनीक, शिक्षण संस्थाओं तथा आधुनिक विश्व में आए प्रमुख बदलावों की बौद्धिक जानकारी प्रदान करना।

Sr. No.	Topics
1	**Early Human Societies:** Hunting and Gathering, Pastoral Nomadism , Tradition to Agricultural , Neolithic Revolution and Implications for the world.
2	**Bronze Age Civilization:** Cultural and Natural Settings of the Early Civilizations, Technological Foundations and Socio-Economic Parameters, Writing and Artistic Expression, The Social Structure Reconstructed
3	**Formation of States and Empires -I:** A General Introduction, The Persian Empire,
4	**Formation of States and Empires –II-** Ancient Greece, The Roman Empire
5	**Alternative Social Formations** :- Latin America, Africa, Nomadic Empires
6	**Religion, State and Society:-** The Late Roman World, The Arab World, China
7	**Feudalism:** Debates on Feudalism, Feudalism: Form and Structures, Phases of Feudalism, Trade and the Decline of Feudalism
8	**Trade and Commerce in the Medieval World:** Oceanic Trade, Business Communities, Commercial Practices, Craft Production
9	**Medieval World in Transition:** Science and Technologies and Expansion of Knowledge, Literature and Institutions of Learning, Religious Establishment, Transition to Modern World
10	**Pre-modern World: An Overview:-** Trends and Transition in Population, Urbanism, Technologies of Warfare and Communication, Kinship Pattern and Family Structure

विषय-सूची

इकाई (Units) **(CONTENTS)** **पृष्ठ संख्या (Page No.)**

1. आदि-मानव समाज : आखेट और जनसमूह (Early Human Societies : Hunting and Gathering) 1
2. ग्राम्य खानाबदोशी (Pastoral Nomadism) 5
3. कृषि में परिवर्तन (Transition to Agriculture) 12
4. नवपाषाण क्रांति (The Neolithic Revolution) 14
5. दुनिया के उलझाव (Implication for the World) 19
6. काँस्य-युग की सभ्यताएँ (Bronze Age Civilizations) 22
7. लौह-युग (Iron Age) 24
8. लेखन एवं कलात्मक प्रभाव (Writing and Artistic Expression) 26
9. सामाजिक ढाँचे का पुनर्गठन (The Social Structure Reconstructed) 33
10. राज्य और साम्राज्यों का निर्माण : एक सामान्य परिचय (Formation of States and Empires : A General Introduction) 36
11. पर्शिया (ईरान) का साम्राज्य (The Persian Empire) 45
12. प्राचीन यूनान (Ancient Greece) 55
13. रोमन साम्राज्य (Roman Empire) 75
14. लैटिन अमरीका (Latin America) 81
15. अफ्रीका (Africa) 85
16. यायावर साम्राज्य (Nomadic Empires) 91
17. परवर्ती रोमन विश्व (The Late Roman World) 104
18. अरब जगत (The Arab World) 117
19. चीन की प्राचीन सभ्यता (Ancient Civilisation of China) 132
20. सामन्तवाद पर विचार (Debates on Feudalism) 144
21. सामन्तवाद : स्वरूप और संरचना (Feudalism : Form and Structures) 159
22. सामन्तवाद के गुण एवं दोष (Merit and Demerit of Feudalism) 164
23. व्यापार एवं सामंतवाद का पतन (Trade and the Decline of Feudalism) 169
24. सामुद्रिक व्यापार (Oceanic Trade) 182
25. व्यापारिक समुदाय (Business Communities) 187
26. वाणिज्यिक पद्धति (Commercial Systems) 193
27. कृषि-उत्पादन एवं पद्धतियाँ (Agriculture Productions and Methods) 196
28. विज्ञान एवं तकनीक : ज्ञान का विस्तार (Science and Technology : Expansion of Knowledge) 204
29. साहित्य और शिक्षण संस्थाएँ (Literature and Institutions of Learnings) 209
30. धार्मिक संस्था (Religious Establishment) 215
31. आधुनिक विश्व की ओर (Transition to Modern World) 226
32. जनसंख्या में बदलाव एवं प्रवृत्ति (Trends and Transition in Population) 230
33. नगरवाद (Urbanism) 239
34. युद्ध एवं संचार की तकनीक (Technologies of Warfare and Communication) 246
35. रिश्तेदारी व्यवस्था और पारिवारिक संरचना (Kinship Pattern and Family Structure) 252

नोट

इकाई–1: आदि-मानव समाज : आखेट और जनसमूह (Early Human Societies : Hunting and Gathering)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
1.1 प्राक् ऐतिहासिक काल (Pro-Historical Phase)
1.2 पूर्व-पाषाण युग (Paleolithic Age)
1.3 सारांश (Summary)
1.4 शब्दकोश (Keywords)
1.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
1.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्राक्-ऐतिहासिक काल को समझने में।
- पूर्व-पाषाण युग को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पृथ्वी पर मानव जीवन का प्रारम्भ–पहले लोगों की धारणा थी कि सृष्टि की रचना एवं विभिन्न प्राणियों का सृजन ईश्वर ने किया। कालान्तर में मनुष्य ने सभ्यता की नींव डाली। दूसरे शब्दों में, लोग मानव की उत्पत्ति एवं सभ्यता के विकास के दैविक सिद्धान्त में विश्वास करते थे, किन्तु आज के इस वैज्ञानिक युग में ऐसी धारणाओं का शायद ही कोई महत्त्व रह गया है। वैज्ञानिक अन्वेषणों के आधार पर अब यह प्रमाणित किया जा चुका है कि पृथ्वी की उत्पत्ति आज से लगभग दो सौ करोड़ वर्ष पहले हुई और लाखों वर्ष के बाद पृथ्वी पर मानव का अवतरण हुआ। पृथ्वी पर मानव का प्रादुर्भाव क्रमशः विकास के फलस्वरूप हुआ। यही मनुष्य की उत्पत्ति का विकासवादी सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के जनक डारविन हैं।

आज तो हम सभ्यता की बहुत ऊँची मंजिल पर पहुँच गये हैं, किन्तु इस मंजिल की सीढ़ियों का निर्माण आदि मानव ने सहस्राब्दियों पूर्व सुदूर अतीत में किया था। मानव–सभ्यता एक सरिता की भाँति विकास के मार्ग पर अग्रसर होती रही है। बहुत दिनों तक हमें मानव सभ्यता के इस विकास–क्रम की कोई जानकारी नहीं थी। किन्तु, विगत सौ वर्षों के प्रयास से इस सम्बन्ध में हमें बहुत कुछ जानकारी हो चुकी है।

नोट

1.1 प्राक् ऐतिहासिक काल (Pro-Historical Phase)

सभ्यता के क्रमबद्ध विकास के पूर्व मानव इतिहास को प्राक् ऐतिहासिक काल कहा जाता है। इस काल में मनुष्य ने जिस सभ्यता का विकास किया, उसे हम आदि काल की सभ्यता अथवा आदिम सभ्यता के नाम से जानते हैं। यद्यपि इस सभ्यता का काल निश्चित करना कठिन है, किन्तु विद्वानों ने अपने अथक प्रयास से प्राक् ऐतिहासिक काल के मानव जीवन की एक रूपरेखा प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। इस काल के लिए कोई लिखित ऐतिहासिक ग्रन्थ नहीं है। अत:, इस संदर्भ में विद्वानों ने जो कुछ भी कहा है उन्हें पूर्णत: सत्य नहीं माना जा सकता है। फिर भी, वैज्ञानिक अन्वेषण और विश्लेषण के आधार पर मानव की आदिम सभ्यता के मनोरंजक इतिहास का अध्ययन किया जा सकता है।

मनुष्य भोजन-संग्राहक के रूप में–सभ्यता के प्रथम सोपान पर मनुष्य और पशु में कोई विशेष अन्तर नहीं था। दोनों लगभग एक ही तरह का जीवन व्यतीत करते थे। किन्तु इनके बीच एक बहुत बड़ा अन्तर था। ईश्वर ने मनुष्य को बुद्धि दी, जिसका हम पशुओं में अभाव–सा पाते हैं। इसी बुद्धि का सहारा लेकर मनुष्य क्रमिक रूप से आगे की ओर बढ़ता चला गया।

आदि मानव को मौलिक रूप से भोजन संग्राहक के रूप में लिया जा सकता है। किसी भी युग में मनुष्य की पहली मौलिक आवश्यकता है–भोजन। बिना खाये-पिये कोई भी प्राणी जिन्दा नहीं रह सकता है। प्रारम्भ में कृषि का तो आविष्कार हुआ नहीं था। अत: मनुष्य को जीवन के लिए पूर्णत: प्रकृति पर निर्भर करना पड़ता था। वह जंगली कन्द-मूल, फल-फूल तथा जानवरों का मांस खाकर अपना पेट भरता था। अत: इनकी खोज में वह एक जगह से दूसरी जगह भटकता फिरता था। सघन जंगलों में ही वह जीवन-यापन करता था। वन्य वृक्षों के फल ही उसके भोजन थे। वृक्षों की पत्तियाँ ही, शीत-ताप एवं वर्षा से वस्त्र के रूप में उसे त्राण दिलाती थीं। सघन झाड़ियाँ और गुफागुह्वर ही उसके निवास स्थान थे। सरिता एवं झरने के जल से ही वह अपनी प्यास बुझाता था। आदि-मानव का यही रूप था और उसके जीवन-यापन के यही साधन थे। उनका सारा जीवन भोजन की खोज में ही समाप्त हो जाता था।

प्रारम्भ में मनुष्य को प्राकृतिक प्रकोपों और जंगली जानवरों के साथ हमेशा संघर्ष करना पड़ता था। इसके लिए उसने अनेक हथियारों और औजारों का आविष्कार किया। प्रारम्भ में ये औजार पत्थरों के बने होते थे, किन्तु बाद में इसके लिए विभिन्न धातुओं का प्रयोग किया जाने लगा। इन अस्त्र-शस्त्रों के आधार पर आदिमानव के प्राक् ऐतिहासिक युग को विद्वानों ने तीन चरणों में विभक्त किया है–पूर्व–पाषाण युग, नव–पाषण युग और धातु युग।

नोट्स आदि-मानव को मौलिक रूप से भोजन संग्राहक के रूप में लिया जा सकता है।

1.2 पूर्व-पाषाण युग (Paleolithic Age)

सामान्यत: पचास हजार ई. पू. से दस हजार ई. पू. तक के काल को पूर्व–पाषाण युग माना जाता है। खुदाई में प्राप्त सामग्री से पता चलता है कि इस काल में नीयंडरथल, पिल्ट डाउन, त्रिनिल, रोडेशियन, काकेशस, पिथकैंथ्रोपस, हिंडलवर्ग आदि मानव रहते थे। पूर्व–पाषाण युग के अवशेष जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैंड आदि यूरोपीय देशों के अतिरिक्त भारत, जावा आदि में भी मिले हैं। अनुमानत: मानव का अधिकांश जीवन इसी युग में बीता है।

आजीविका एवं आवश्यकताएँ–पूर्व–पाषाण युग का मनुष्य पूर्णत: बर्बर एवं जंगली था। उसका जीवन पशुओं के समान था। उस समय जीवन अत्यन्त ही संघर्षमय रहा होगा। हिंसक पशुओं तथा प्राकृतिक प्रकोपों के कारण उसका जीवन सदा खतरे में रहता था।

सदा से मनुष्य की मौलिक आवश्यकताओं में भोजन, वस्त्र एवं आवास का महत्त्व सर्वाधिक रहा है आदि मानव की भी यही तीन आवश्यकताएँ थीं।

भोजन–प्राणरक्षा के लिए भोजन अत्यन्त आवश्यक होता है। उन दिनों मनुष्य की आजीविका का कोई स्थिर आधार नहीं था। कृषि अथवा पशुपालन की उन्हें जानकारी नहीं थी। अत:, लोग कन्द-मूल खाकर अथवा जंगली जानवरों के मांस से अपना पेट भरते थे। मांस को लोग कच्चा अथवा पकाकर खाते थे।

वस्त्र–भोजन की पूर्ति के बाद शरीर-रक्षा की आवश्यकता पड़ती थी। प्रारम्भ में मनुष्य नंगा ही रहता होगा। झाड़ियों, खाड़ियों और गुफाओं में लुक-छिपकर वह प्रतिकूल मौसम से अपनी रक्षा करता था। अपनी शरीर-रक्षा के उद्देश्य तथा लज्जा की भावना से उत्प्रेरित होकर आदि-मानव ने वृक्षों की छालों, पेड़ों की पत्तियों तथा जानवरों की खालों से अपने शरीर को ढंकना प्रारम्भ किया।

आवास–आदि-मानव को रहने की काफी असुविधा थी। आज की तरह भवनों अथवा झोपड़ियों के निर्माण की कला का उन्हें ज्ञान नहीं था। अत:, वह कन्दराओं, झाड़ियों और खाइयों में लुक-छिपकर प्रकृति के प्रकोपों और प्रतिकूल मौसमों से किसी तरह अपने शरीर की रक्षा करता था।

अस्त्र-शस्त्र तथा औजार–पूर्व-पाषाण युग के मानव ने आवश्यकतानुसार अनेक प्रकार के औजारों तथा हथियारों का आविष्कार किया। आदिमानव के प्रारम्भिक हथियार उसके हाथ-पाँव ही थे। बाद में उसने लकड़ी और पत्थरों के हथियार बनाये। लकड़ी के उपकरण टिकाऊ नहीं होते थे। अत: पत्थरों का प्रयोग बढ़ा। पाषाण खण्डों को घिस-घिस कर नुकीले और सीधे चुभने वाले हथियार बनाये जाने लगे। इस प्रकार पत्थरों से बर्छे, भाले, कटार, कुल्हाड़ी, मूसल, हथौड़ा आदि औजार बनाये जाने लगे और बाद में हड्डियाँ, सींग तथा हाथी दाँत के हथियार बनाये जाने लगे। आगे चलकर बढ़ईगीरी की कला विकसित हुई। रस्सी तथा टोकरियाँ बनाने के प्रमाण भी मिलते हैं। इस युग में मनुष्य तीर-धनुष का प्रयोग भी करने लगा था।

इसी काल में मनुष्य ने अग्नि का आविष्कार और प्रयोग किया। यह इस युग का सबसे महत्वपूर्ण आविष्कार था। अग्नि के प्रयोग से मनुष्य की अनेक समस्याओं का निवारण हुआ। घनी झाड़ियाँ जलाई जाने लगीं। अग्नि से भयानक जंगली जानवर भाग खड़े हुए। अग्नि का ज्ञान होने पर मनुष्य अपना शिकार भूनकर खाने लगा। साथ ही इसके द्वारा कड़ी ठंड से वह अपनी रक्षा भी करने लगा।

क्या आप जानते हैं पूर्व-पाषाण युग में मानव ने अग्नि का आविष्कार तथा प्रयोग किया।

सामाजिक संगठन–प्रारम्भ में मनुष्य अकेला रहता था। समाज संगठित नहीं था। सामाजिक बंधन ढीले-ढाले थे। विवाह संस्कार का प्रारम्भ नहीं हुआ था। पति-पत्नी के सम्बन्ध की चेतना भी अभी नहीं आयी थी। समाज में स्त्री का महत्त्व बहुत अधिक था। बच्चों पर माँ का ही अधिकार रहता था। मानव विज्ञान-शास्त्रियों ने इस आदिम समाज को नारी-प्रधान अथवा मातृ-सत्तात्मक समाज माना है।

कालान्तर में मानव ने समूह एवं संगठन का महत्त्व समझा। गिरोह अथवा झुण्डों में रहने से आदि मानव का अस्तित्व अधिक सुरक्षित दिखलाई पड़ने लगा। धीरे-धीरे परिवार, विवाह-संस्कार आदि संस्थाओं का जन्म हुआ।

आर्थिक संगठन–इस युग में भी मानव समाज में कोई आर्थिक संगठन नहीं था। व्यक्तिगत सम्पत्ति का विकास अभी नहीं हुआ था। जंगलों और जानवरों पर किसी व्यक्ति अथवा परिवार-विशेष का अधिकार नहीं था। इसलिए इसे आदिम साम्यवाद का युग भी कहा जाता है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि पूर्व-पाषाण युग के मनुष्य असभ्य एवं बर्बर थे। कृषि, पशुपालन अथवा एक स्थान पर रहना वे नहीं जानते थे। शिक्षा, साहित्य, कला-कौशल, धर्म आदि से उन्हें दूर का भी लगाव नहीं था। फिर भी यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि मनुष्य के रूप में सर्वप्रथम प्रकृति के विरुद्ध इन्हीं लोगों ने संघर्ष प्रारम्भ किया, जो आज भी चल रहा है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. आदि-मानव का मुख्य भोजन .... था।
2. आदि-मानव .... में रहता था।
3. पूर्व-पाषाण युग के अवशेष जर्मनी, फ्रांस इंग्लैंड के अलावा .... में मिले हैं।

नोट

1.3 सारांश (Summary)

- आज तो हम सभ्यता की बहुत ऊँची मंजिल पर पहुँच गये हैं, किन्तु इस मंजिल की सीढ़ियों का निर्माण आदि-मानव ने सहस्राब्दियों पूर्व सुदूर अतीत में किया था।
- सभ्यता के प्रथम सोपान पर मनुष्य और पशु में कोई विशेष अन्तर नहीं था। दोनों लगभग एक ही तरह का जीवन व्यतीत करते थे।
- प्रारम्भ में मनुष्य को प्राकृतिक प्रकोपों और जंगली जानवरों के साथ हमेशा संघर्ष करना पड़ता था। इसके लिए उसने अनेक हथियारों और औजारों का आविष्कार किया।
- प्रारम्भ में मनुष्य नंगा ही रहता होगा। झाड़ियों, खाड़ियों और गुफाओं में लुक-छिपकर वह प्रतिकूल मौसम से अपनी रक्षा करता था।
- पूर्व-पाषाण युग के मानव ने आवश्यकतानुसार अनेक प्रकार के औजारों तथा हथियारों का आविष्कार किया।
- यह कहा जा सकता है कि पूर्व-पाषाण युग के मनुष्य असभ्य एवं बर्बर थे। कृषि, पशुपालन अथवा एक स्थान पर रहना वे नहीं जानते थे।

1.4 शब्दकोश (Keywords)

- **ऐतिहासिक चेतना**—इतिहास की चेतना, इतिहास की समझ।
- **पूर्व-पाषाण युग**—जब आदि-मानव ने पत्थर का हथियार बनाना शुरू किया उससे पूर्व का समय।

1.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. प्राक-ऐतिहासिक काल के मानव की विशेषताएँ बताइए।
2. भोजन संग्राहक के रूप में मानव के क्या कार्य थे ?
3. पूर्व-पाषाण युग की विशेषताएँ क्या थीं ?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. कन्दमूल व कच्चा मांस 2. कन्दरा, झाड़ी, व गुफा आदि में 3. भारत और जावा

1.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–2: ग्राम्य खानाबदोशी (Pastoral Nomadism)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
2.1 पूर्व पाषाण काल (Pre-Paleolithic Period)
2.2 सारांश (Summary)
2.3 शब्दकोश (Keywords)
2.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
2.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पूर्व पाषाण काल को जानने में।
- पूर्व पाषाण काल के मानव की दिनचर्या व रहन-सहन को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

इस समय से हमें मनुष्य के हाथों द्वारा निर्मित पत्थर के तथा अन्य प्रकार के बहुत से औजार मिलते हैं, जो हमें पृथ्वी के तत्कालीन स्वामी अर्थात् हमारे पूर्वजों की क्षमता तथा उनके जीवन के सम्बन्ध में प्रचुर प्रकाश डालते हैं।

पृथ्वी पर अधिकाधिक विकसित मस्तिष्क वाले मनुष्य पैदा हो रहे थे। जावा का मनुष्य, पेकिंग का मनुष्य, हाइडलबर्ग का मनुष्य, पिल्टडाउन का मनुष्य, निअण्डर्थल का मनुष्य, क्रोमोग्नन मानव और रोडेशियन मानव का इतिहास इस बात की पुष्टि करता है कि इस काल में मनुष्य धीरे-धीरे अधिकाधिक बुद्धि सम्पन्न होता जा रहा था।

प्राचीन मानव की सभ्यता और उसके इतिहास का काल विभाजन उनके औजारों के आधार पर किया जाता है। प्राचीन काल में मनुष्य पत्थर के औजार बनाता था, अत: इतिहास के इस काल को पाषाण-काल कहा जाता है। इस काल में आरम्भ में जो पत्थर के औजार बनते थे, उनको न ठीक से काटा-छाँटा जाता था और न उन्हें चिकना किया जाता था। इस काल के अनगढ़ औजारों के आधार पर ही इसे पूर्व पाषाण काल (Palesolithic Age) कहा जाता है। किन्तु धीरे-धीरे अच्छे किस्म के औजार बनने लगे। इनको रगड़ या घिस कर पैना कर लिया जाता था और उनका रूप भी औजार जैसा दिखाई पड़ता था। इसी आधार पर इस काल को नव पाषाण काल (Neolithic Age) कहा जाता है। सम्पूर्ण पाषाण काल सामान्यतया लगभग पाँच लाख वर्ष ई. पू. से लगभग 5000 वर्ष ई. पू. तक माना जाता है।

नोट

नोट्स प्राचीन मानव की सभ्यता और उनके इतिहास का काल विभाजन उनके औजारों के आधार पर किया जाता है।

2.1 पूर्व पाषाण काल (Pre-Paleolithic Period)

अवधि

पूर्व पाषाण काल बहुत लम्बा था। मानव जातियों के अवशेष पाँच लाख वर्ष पुराने भी पाये गए हैं। इन अवशेषों में उषा-पाषाण (Eoliths) भी मिलते हैं, जो बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। यह काल एक नाटक के समान था जिसमें बार-बार पर्दा गिरता और उठता था और हर नवीन दृश्य में नवीन पात्र उपस्थित होते थे। ये अवशेष हमें यह बतलाते हैं कि मानव की शुरू की जातियाँ उत्पन्न हो रही थीं, बढ़ रही थीं तथा नष्ट हो जाती थीं। इस काल के अन्त में सपिअन मानव रंगमंच पर आया। यह उन्नति करता गया। धीरे-धीरे उसकी उन्नति इतनी अधिक हो गई कि वह पाषाण के हथियारों और औजारों पर निर्भर न रहा। उसने खेती, कपड़ा बुनना आदि ऐसे नये काम आरम्भ कर दिये कि पूर्व पाषाण काल ही समाप्त हो गया और नव पाषाण काल आरम्भ हो गया। यह घटना दस-बारह हजार वर्ष पहले की है। इस प्रकार पूर्व पाषाण काल अब से लगभग पाँच लाख वर्ष पहले आरम्भ हुआ और लगभग दस-बारह हजार वर्ष पहले समाप्त हो गया।

पूर्व पाषाण काल के औजार

हाइडलबर्ग मानव के हथियार और औजार पहले के मानव के औजारों से कहीं अधिक विशाल थे। इस मानव के समय का एक विचित्र औजार मिला है; यह है एक हाथी की छेददार हड्डी जिसको घिसकर बल्ले के समान बनाया गया है।

इंग्लैंड में पिल्टडाउन में जिस मानव की खोपड़ी तथा जबड़े की हड्डी मिली थी उसके हथियार पहले के हथियारों से अच्छे, भली प्रकार घिसे हुए और चिकने हैं। इस मानव के अवशेषों के साथ गेंडे के दाँत, हिप्पों की अस्थियाँ और हिरन की टाँगों की हड्डियाँ भी मिलीं जिनसे इस 'उषा मानव' (Dawn Man) के जीवन की झाँकी दिखलाई पड़ती है।

इस उषा मानव के पश्चात् का कोई और मानव-अवशेष हमें सहस्त्रों वर्ष तक नहीं प्राप्त होता, परन्तु हथियारों—औजारों के अवशेष प्राप्त होते हैं जिनमें क्रमशः होती हुई उन्नति स्पष्ट है। ये सब अवशेष पाषाण ही के हैं। इन औजारों में पत्थर के चाकू, छेद करने व खुरचने के औजार, फेंककर मारने के पत्थर आदि स्पष्ट और सुघड़ दिखाई पड़ने लगते हैं।

इस प्रकार अब हम 50,000 या 60,000 वर्ष पहले मानव के हथियारों और अवशेषों तक आ पहुंचते हैं। यह काल नेअण्डर्थल मानव (Homo Neanderthalensis) का काल है। इस समय मानव गुफाओं में निवास करने लगा था जहाँ इसके और इसकी वस्तुओं के अनेक अवशेष मिले हैं। इस काल के मानव को अग्नि जलाना और उसकी रक्षा करना आता था।

केवल नेअण्डर्थल मानव ही गुफाओं में रहने वाला प्राणी नहीं था। उस काल के शेर, रीछ, बाघ आदि भी गुफाओं में घुस कर विश्राम करना चाहते थे। परन्तु मानव के पास सबसे बड़ा शस्त्र था आग। इस आग से डराकर वह इन पशुओं को सरलता से गुफाओं से निकाल बाहर कर सकता था तथा फिर उन्हें बाहर ही रहने पर बाध्य कर सकता था। गुफाओं के भीतर प्रकाश करने के लिए मशालें थीं। उस काल का मनुष्य गुफा के द्वारों पर लकड़ी आदि से रोक लगा लेता था जिससे भयानक पशु बाहर ही रहें। गुफा के द्वार पर भी आग जला देता था ताकि जंगली पशु गुफा में न घुसें। गुफा में वह अपने काम के औजार, ईंधन और भोजन एकत्रित रखता था। इन औजारों में लकड़ी

के भाले, मुग्दर और पाषाण के नुकीले टुकड़े थे। ऐसा प्रतीत होता है कि वह पत्थर की कुल्हाड़ियों का भी प्रयोग करता था।

टास्क 'उषा मानव' (Dawn Man) के बारे में अधिक जानकारी एकत्रित करें।

नेअण्डर्थल मानव के लगभग साथ ही साथ सपिअन मानव का विकास हो रहा था। सपिअन मानव के शस्त्रास्त्र और औजार आदि अधिक सुघड़ थे। वे पाषाण के बने हुए, परन्तु बड़े चिकने थे। हड्डिओं की बनी सुइयाँ, पिन, भाले, हारपून, फेंकने के दंड, बूमरेंग जैसे प्रारम्भिक अस्त्र आदि अद्भुत कारीगरी से युक्त थे। इन औजारों तथा गुफाओं की दीवारों पर चित्रकला का समारम्भ दिखाई पड़ता है।

सपिअन मानव के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इसने धनुष-बाण भी बना लिए थे। अनुमान है कि पूर्व पाषाण काल के लगभग अन्त में धनुष-बाण का प्रयोग आरम्भ हुआ होगा। कुल्हाड़ी का प्रयोग होता था, इस बात के प्रमाण हैं। इस समय मानव को पत्थरों व हड्डियों में छेद करने की विधि का भी ज्ञान हो चुका था। कोमाग्नान मानव तो औजार बनाने की कला में काफी दक्ष हो गया था। उसने कुछ ऐसे औजार बना लिए थे जिनकी मदद से वह पत्थरों को घिस कर उन्हें चिकना और पैना बना लेता था या पत्थरों में छेद कर लेता था।

औजारों के विकास के दूसरे चरण में बड़े नुकीले, कई-कई नोक वाले, लम्बे, बड़े और तेज धार वाले औजार बनने लगे। भाले, बर्छी आदि ऐसे ही औजार थे। इन औजारों से जहाँ मानव को अपनी रक्षा करने में अधिक सामर्थ्य प्राप्त हो गया वहीं उसे शिकार में भी अधिक सुविधा प्राप्त हो गई।

पूर्व पाषाण काल के मानव की दिनचर्या—विद्वानों ने तत्कालीन मानव के अनेक अवशेषों और शस्त्रास्त्रों-औजारों को देखकर उसके जीवन के विषय में अनुमान लगाकर उसका सजीव वर्णन किया है। इस वर्णन से हमें मानव-जीवन के आरम्भिक रूप का पता चलता है और हम यह समझ सकते हैं मानव के सामने उन्नति का कितना लम्बा मार्ग था, जो उसे तय करना था।

तत्कालीन मानव घड़े या मिट्टी के अन्य बर्तन बना नहीं सकता था। अत: वह पानी भर कर नहीं रख सकता था। इसलिए पानी पीने के लिए उसे नदी या झरने पर जाना पड़ता था। ऐसी स्थिति में उसने नदी या झरने के आस-पास ही अपने रहने या उठने-बैठने के स्थान बनाये थे। वह घर बनाना भी नहीं जानता था। अत: गुफाओं में रहता था। बैठने या रहने के स्थान के बीच अग्नि जला देता था क्योंकि उन दिनों ठंडी हवा चलती रहती थी और रात को पाला पड़ता था। अग्नि ही उसे भयानक जीवों से बचा सकती थी। मानव-झुण्ड के सब सदस्य-बच्चे, स्त्रियाँ और झुण्ड का पुरुष नेता—पत्तों और बारीक टहनियों के बने फर्श पर अग्नि के समीप बैठकर काम करते थे। स्त्रियाँ खालों से मांस साफ करती थीं, पुरुष पाषाण के टुकड़ों को नुकीला बनाते थे। स्त्रियाँ और बच्चे मिलकर ईंधन इकट्ठा करते थे।

झुण्ड का नेता केवल पुरुष होता था, शेष स्त्रियाँ, कन्याएँ और बालक होते थे। जैसे ही कोई बालक बड़ा हो जाता था, पुरुष नेता उसे मार डालता था या झुण्ड से निकाल देता था। ऐसे निकाले हुए पुरुषों के साथ कभी-कभी कन्याएँ भी चली जाती थीं। जब पुरुष नेता चालीस वर्ष या उससे अधिक अवस्था तक पहुंच कर दुर्बल हो जाता था तो झुंड का कोई नवयुवक उसको मारकर स्वयं झुंड का नेता बन जाता था।

भोजन—आदिम काल का मानव पहले शाकाहारी था। अनेक प्रकार के वृक्षों के फल-फूल और कंद आदि खाकर वह गुजारा करता था। कुछ पौधों की जड़ें नरम तथा स्वादिष्ट होती थीं। अत: इनके प्रति उसका विशेष अनुराग था। वह शहद की मक्खियों के छत्ते तोड़ कर उनमें से शहद खा जाता था। शहद उसका सुस्वाद भोजन था। इस प्रकार वह पूर्णत: शाकाहारी था। किन्तु आगे चलकर वह पक्षियों के अंडे, घोंघे, मेंढक, केकड़े और मछलियों को पकड़ कर खाने लगा। ये चीजें उसे थोड़ा परिश्रम करने के बाद मिल जाया करती थीं।

शिकार—धीरे-धीरे मनुष्य पत्थर के औजार बनाने तथा उनका इस्तेमाल करने लगा। इन औजारों का इस्तेमाल वह अपनी रक्षा के अलावा शिकार के लिए भी करता था। अपने पत्थर के औजारों से वह छोटे-बड़े पक्षियों और जानवरों

नोट

को मार कर खा लेता था। बड़े पक्षियों के शिकार में कई मनुष्यों की जरूरत पड़ती थी। ऐसे अवसर पर वे एक साथ मिलकर शिकार करते व बाद में उसे बाँटकर अपना पेट भरते थे। अब मनुष्य शिकारी जीवन व्यतीत करने लगा। शिकार के काम में रुचि बढ़ने पर मनुष्य ने अच्छे, बड़े, तेज धार वाले और अधिकाधिक सुधरे औजार बनाने आरंभ कर दिये। प्राय: ऐसा होता था कि दिन भर तलाश करने के बाद कोई शिकार हाथ न आता था, या जो शिकार मिलता था, उससे पेट न भरता था, ऐसी स्थिति में मनुष्य मरे हुए पशुओं के सड़े-गले शव भी खा जाता था। कभी-कभी भूख में वह हड्डियों को भी चबा जाता था।

अभी तक मनुष्य अपना भोजन एकत्र करके नहीं रखता था क्योंकि वह बर्तन वगैरह नहीं बना पाया था। रोज शिकार करना और पेट भर लेना उसका नियम था।

आग का ज्ञान–आरम्भ में आदिम मानव को आग का ज्ञान नहीं था। ज्वालामुखी पर्वतों से निकलते हुए लावे को देखकर डर जाता था। जंगल में आग लग जाने पर वह भौचक्का हो जाता था। वह समझ नहीं पाता था कि यह सब क्या है। किन्तु कालान्तर में वह आग के उपयोग को समझ गया। आग के उपयोग ने उसके जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया, किन्तु सबसे पहले आग की उपयोगिता का ज्ञान उसे कैसे हुआ? हो सकता है कि कभी अनायास ही उसने दो पत्थरों को आपस में रगड़ दिया हो और उसमें से निकली चिंगारी ने उसे आग पैदा करने की कला सिखा दी हो। या ऐसा भी हो सकता है कि जंगल में लगी आग में जले हुए किसी पक्षी या जीव को मनुष्य ने खाया हो और वह उसे बहुत स्वादिष्ट लगा हो। अत: वह जंगल की आग में से कुछ जलता भाग उठाकर अपने रहने की गुफा में ले आया हो।

आग मनुष्य के जीवन में बड़ी उपयोगी थी। मनुष्य अपनी गुफा में और गुफा के बाहर भी आग जलाये रहता था। गुफा के भीतर आग से उसे प्रकाश मिलता था और गर्मी मिलती थी, जो उसे ठंड से बचाती थी। गुफा के बाहर आग होने से वहाँ जंगली जानवर नहीं आते थे। इस प्रकार मनुष्य की जंगली जानवरों से भी रक्षा हो जाती थी। इसके अतिरिक्त आग का ज्ञान हो जाने के कुछ समय बाद मनुष्य ने अपना भोजन आग में पकाकर खाना शुरू कर दिया। आग का ज्ञान मनुष्य के विकास में अत्यन्त उपयोगी तथा महत्त्वपूर्ण चरण था।

निवास स्थान–पूर्व पाषाण काल का मनुष्य मकान नहीं बना सकता था। उसे प्रकृति की शक्तियों से भय लगता था। जंगली जानवरों से उसे अपनी जान का खतरा था। शीत की मार उसे बहुत तकलीफ देती थी। अत: आरम्भ में मनुष्य ने गुफाओं में रहना उपयुक्त समझा। गुफाओं में भी वह बहुत अन्दर की ओर नहीं जाता था क्योंकि वहाँ घना अंधेरा रहता था। गुफा-जीवन में भी उसे जंगली जानवरों का खतरा रहता था क्योंकि सर्दी से बचने के लिए जंगली जानवर भी गुफा में चले जाते थे। अत: मनुष्य गुफा के द्वार पर लकड़ी के टुकड़े या बड़ी-बड़ी डालें लगा देता था ताकि जंगली जानवर अन्दर न घुस सकें। फिर भी उसे हमेशा भय ही रहता था।

आग का ज्ञान होने के बाद उसे बड़ी सुविधा हो गई। अब उसकी गुफा में प्रकाश हो गया। जंगली जानवर भी आग के डर के मारे गुफा के पास नहीं जाते थे। मनुष्य को शीत से बचने का उपाय भी मालूम हो गया। अब मनुष्य गुफा से बाहर भी रहने लगा। प्राय: किसी पानी वाले स्थान के पास भी वे खुले में आग जलाकर रहने लगते थे। यहाँ भी आग उन्हें सर्दी और जंगली जानवरों से बचाती थी।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. आग मानव को ………… से बचाती थी।
2. खाली समय में मानव गुफा की दीवारों पर ………… बनाता था।
3. तन ढकने के लिए मानव ने पशुओं की ………… का प्रयोग किया।

वस्त्र–उस समय मनुष्य को कपड़े का ज्ञान होने का प्रश्न ही नहीं पैदा होता। मनुष्य एकदम नंगा रहता था। आगे चलकर उसने पेड़ों की पत्तियों और छाल से अपने शरीर को ढकना शुरू किया। अभी उसकी शीत की समस्या हल

नहीं हुई थी। तभी मनुष्य ने पशुओं की खाल को अपने शरीर पर लपेटना शुरू किया। कुछ समय बाद उसने खाल को सीने के लिए सुई जैसा एक औजार भी बनाया। इस प्रकार वह खाल के कपड़े पहनने लगा।

आदिम मानव की चित्रकारी–पूर्व पाषाण काल का मानव कला के प्रति भी रुचि रखता था। उसकी कला के दो उद्देश्य हो सकते हैं। कुछ विद्वानों की राय है कि वह प्राय: ऐसे जानवरों के चित्र बनाता था, जिनका वह शिकार करता था। इस काल के मानव का विश्वास था कि चित्र बनाने से उसे अधिकाधिक शिकार मिलने लगेगा। कुछ विद्वानों की राय है कि इन चित्रों के पीछे कोई प्रयोजन नहीं होता था। अपने खाली समय में वह ऐसे पशुओं के चित्र खींच डालता था, जो उसके जाने-पहचाने होते थे। उनके चित्र उस जमाने को देखते हुए बड़े सुन्दर थे। क्रोमाग्नन मानव द्वारा बनाए गए चित्र गुफाओं में पाये गए हैं। मीरा की गुफाओं में आदिम मानव द्वारा बनाए गए बैल, घोड़े, सुअर आदि के चित्र मिले हैं। इनमें कुछ चित्रों में रंग भी भरे हुए हैं। कुछ चित्र (Sketch) मात्र हैं और कुछ पूरे हैं। पेड़-पौधों के भी कुछ चित्र हैं। इसके अतिरिक्त इस काल के मनुष्य ने अपने भालों में भी उन पशुओं के चित्र बनाए हैं जिनका वह शिकार करता था। पशुओं की हड्डियों और उनके सींगों पर भी अंकित चित्र मिले हैं। जॉन एस. हालैण्ड नामक इतिहासकार का कहना है कि 'अनेक चित्र, जो गुफाओं के तीसरे भाग में पाये गए हैं, शायद धार्मिक प्रेरणा से बनाये गए हों, बहुत सुन्दर ढंग से बने हैं। उनमें रंग भरे हुए हैं और बड़े सजीव हैं।'

पूर्व पाषाण युग का मनुष्य शायद यह भी मानता रहा होगा कि जिस औजार पर वह पशुओं के चित्र बनाएगा, उस औजार से वह अधिकाधिक शिकार कर पायेगा।

मूर्तियाँ–तत्कालीन मानव द्वारा बनाई हुई मिट्टी, पत्थर और हाथी के दाँत की कुछ मूर्तियाँ भी मिली हैं। इन मूर्तियों या प्रतिमाओं के रूप-नक्श तो साफ नहीं हैं लेकिन अनुमान है कि ये मूर्तियाँ ही हैं। ये सब बातें तत्कालीन मानव की कलाप्रियता का प्रमाण हैं।

आभूषण–अपने को सजाने और सँवारने की प्रवृत्ति मनुष्य में जन्मजात होती है। आदिम मानव में भी यह प्रवृत्ति थी। अपने साधनों से वह अपने को सजाता-सँवारता था। पत्थर, हड्डियाँ, सीपियाँ, घोंघे, शंख और सींग ही उन दिनों उपलब्ध थे। इन्हीं से वह अपने को सजाता था। अस्त्र-शस्त्र भी एक प्रकार से उसके आभूषण ही थे। सीपियों, घोघों, शंख और सींगों को वह कभी-कभी पिरो कर उनकी माला भी बना लेता था। सुई की शक्ल जैसा उसका एक औजार होता था, जो उसके खाल के कपड़े सीने के साथ ही माला बनाने के काम भी आता रहा होगा।

धर्म और विश्वास–धर्म की भावना का सम्बन्ध ईश्वर से होता है। पूर्व पाषाण काल का मनुष्य ईश्वर के बारे में न कुछ जानता था और न समझता था। किन्तु प्रकृति के कार्यों को देखकर उसे आश्चर्य और विस्मय अवश्य होता था। बिजली की कड़क, आँधी-तूफान, भीषण पशु, वन की आग, प्रकाश और अंधकार उसे भय और आशंका से भर देते थे। वह ईश्वर की बात तो सोच नहीं सकता था, अत: प्रकृति के इन कार्यों को देखकर किसी अज्ञात शक्ति से भयभीत हो उठता था।

आदिम मानव में धर्म और विश्वास जैसी कोई चीज नहीं थी। किन्तु प्रकृति के प्रति जिज्ञासा तथा आतंक की भावना उसमें अवश्य थी। वह जादू-टोने में विश्वास करता था। लोगों का ख्याल है कि वह चित्र और मूर्तियाँ भी टोने के रूप में ही बनाता था। आदिम मानव के चित्रों में किसी देवी या देवता के चित्र नहीं मिले हैं। इन चित्रों के संबंध में उसका विश्वास था कि उसे शिकार करने में अधिकाधिक सफलता मिलेगी। शिकार ही उसका एकमात्र आर्थिक कार्य था। अत: उसमें सफलता प्राप्त करने के लिए बनाए गये चित्रों को हम जादू-टोने या अन्धविश्वास वाले चित्र ही कह सकते हैं।

इसी प्रकार का एक अन्य अन्धविश्वास उनमें यह था कि वे मरे हुए व्यक्ति के शरीर पर एक लाल रंग का पाउडर-सा छिड़कते थे। शायद उनका यह विश्वास था कि इस पाउडर के छिड़कने से मृतक फिर से जीवित हो जाएगा। ये अपने मृतक को बड़ी अच्छी तरह से दफनाते थे। मृतक के शव के साथ भोजन की वस्तुएँ और अस्त्र-शस्त्र भी रख देते थे। शव के साथ इन वस्तुओं के रखने के पीछे क्या उद्देश्य था, यह बता सकना कठिन है। किन्तु वे शायद यह विश्वास करते होंगे कि ये वस्तुएँ मृतक के अगले जन्म में काम आयेंगी। वे सम्भवत: पुनर्जन्म में विश्वास करते रहे होंगे।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

4. आदि-मानव में भी खुद को सजाने-सँवारने की प्रवृत्ति थी।
5. आदि-मानव की धर्म और विश्वास में आस्था थी।
6. अपनी सुरक्षा की दृष्टि से मनुष्य समूह में रहने लगा।

सामुदायिक भावना–इस काल में मनुष्य समूह या समुदाय में रहता था। समूह या समुदाय में रहने का कारण यह नहीं था कि इस काल में मनुष्य बड़ा सभ्य और सुसंस्कृत हो गया था। वास्तव में अकेले रहने में उसे डर लगता था। मुख्यत: विशालकाय जंगली जानवरों से उसे अपनी जान का खतरा रहता था। ये जंगली जानवर प्राय: झुण्डों में रहते थे। हो सकता है कि उन्हीं की देखा-देखी मनुष्य भी समूह में रहने लगे हों। वैसे भी अकेले रहने की अपेक्षा समूह में रहकर वे अपने को अधिक सुरक्षित समझते रहे होंगे। इसके अतिरिक्त इन विशाल जानवरों का शिकार भी कोई अकेला मनुष्य नहीं कर सकता था। कुछ व्यक्तियों का समूह ही चारों तरफ से आक्रमण करके उनका शिकार कर सकता था। इसलिए भी समूह में रहना आवश्यक था। यही नहीं यदि उनकी गुफा में कोई जंगली पशु घुस आता था, तो उसे भगाने के लिए भी कई व्यक्तियों की आवश्यकता होती थी। इन सब बातों के परिणामस्वरूप उन्होंने समूह में रहना अपने लिए अच्छा समझा। अपने मारे हुए शिकार को वे बाँट कर खाते थे। बस यहीं तक उनमें सामुदायिक भावना थी।

पूर्व पाषाण काल में मनुष्य का कोई घर, परिवार या उनकी कोई सम्पत्ति नहीं होती थी। गुफायें ही उनके मिले-जुले घर थे। समूह ही उनका परिवार था। पत्थर, हाथीदाँत या सींग की वस्तुएँ ही उनकी सम्पत्ति थीं। उनमें विवाह आदि की भी कोई प्रथा नहीं थी। उस काल में मनुष्य को बोलना नहीं आता था। कई बार वे चिल्ला उठते थे किन्तु उसका कोई अर्थ किसी की समझ में नहीं आता था। शायद इशारे या संकेत से वे अपने बीच बातचीत करते रहे हों या अपनी बात दूसरों को समझाते रहे हों।

2.2 सारांश (Summary)

- प्राचीन मानव की सभ्यता और उसके इतिहास का काल विभाजन उनके औजारों के आधार पर किया जाता है।
- पूर्व पाषाण काल अब से लगभग पाँच लाख वर्ष पहले आरम्भ हुआ और लगभग दस-बारह हजार वर्ष पहले समाप्त हो गया।
- इस समय मानव गुफाओं में निवास करने लगा था जहाँ इसके और इसकी वस्तुओं के अनेक अवशेष मिले हैं। इस काल के मानव को अग्नि जलाना और उसकी रक्षा करना आता था।
- सपिअन मानव के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इसने धनुष-बाण भी बना लिए थे। अनुमान है कि पूर्व पाषाण काल के लगभग अन्त में धनुष-बाण का प्रयोग आरम्भ हुआ होगा।
- तत्कालीन मानव घड़े या मिट्टी के अन्य बर्तन बना नहीं सकता था। अत: वह पानी भर कर नहीं रख सकता था। इसलिए पानी पीने के लिए उसे नदी या झरने पर जाना पड़ता था।
- आदिम काल का मानव पहले शाकाहारी था। अनेक प्रकार के वृक्षों के फल-फूल और कंद आदि खाकर वह गुजारा करता था।
- मनुष्य अपना भोजन एकत्र करके नहीं रखता था क्योंकि वह बर्तन वगैरह नहीं बना पाया था। रोज शिकार करना और पेट भर लेना उसका नियम था।
- आग का ज्ञान मनुष्य के विकास में अत्यन्त उपयोगी तथा महत्त्वपूर्ण चरण था।

नोट

2.3 शब्दकोश (Keywords)

- **नेअण्डर्थल मानव**—गुफाओं में रहने वाला मानव।
- **हारपून**—मछली के शिकार का औजार, बर्छी।

2.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पूर्व पाषाण काल के मानव द्वारा बनाए गए औजारों के बारे में बताइए।
2. पूर्व पाषाण काल के मानव की दिनचर्या क्या थी ?
3. धर्म और विश्वास से जुड़ी पूर्व पाषाण काल के मानव की आस्था क्या थी ?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सर्दी तथा हिंसक पशुओं	2. चित्रकारी	3. खाल	4. सत्य
5. असत्य	6. सत्य।		

2.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–3: कृषि में परिवर्तन (Transition to Agriculture)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
3.1 कृषि का आरम्भ (Beginning of Agriculture)
3.2 सारांश (Summary)
3.3 शब्दकोश (Keywords)
3.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
3.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मानव ने कृषि करना कब सीखा, यह जानने में।
- मानव जाति के आरम्भिक पेशों को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

नव पाषाण शुरू होने तक मनुष्य ने कुछ अहिंसक पशुओं की पहचान कर ली थी। वह उन पशुओं को अपने फायदे के लिए अपने साथ ही रखने लगा। भेड़, बकरी, गाय आदि का पालन शुरू हो गया। पशु पालन का एक उद्देश्य पशुओं का मांस भी था। इस काल में मानव ने खेती भी आरम्भ कर दी। खेती का कोई अनुभव तो था नहीं इसलिए इस काल की खेती भी अन्धविश्वासों पर आधारित थी।

3.1 कृषि का आरम्भ (Beginning of Agriculture)

नव पाषाण काल का मनुष्य खेती करना सीख गया था। कृषि ने उसके जीवन में महान् परिवर्तन का श्री गणेश कर दिया। उस समय खेती के लिए किसी के पास कोई निश्चित खेत न होते थे। लोग किसी की भूमि पर खेती कर लेते थे। खेतों को जोतने के लिए पत्थर के औजार व सींगों का प्रयोग किया जाता था। हल से खेतों को जोतने की प्रणाली का विकास बाद में हुआ। मुख्यत: गेहूँ, जौ और मटर की खेती की जाती थी। खेती का काम आरम्भ करने के बाद मनुष्य को जगह-जगह घूमने की जरूरत नहीं रह गई। अब वह एक स्थान पर झोपड़ी बना कर रहने लगा। खेती से पशुओं के लिए भी चारा पैदा होने लगा। इस प्रकार मकान और गाँव बसे। पारिवारिक और सामाजिक जीवन की नींव पड़ी।

कृषि का आरम्भ बलिदान के साथ होता था। बीज बोने के समय उस काल में किसी युवक व युवती का बलिदान देना आवश्यक माना जाता था। उस काल का मनुष्य यह समझता था कि बिना बलिदान दिये फसल ठीक नहीं हो सकती। लगभग प्रत्येक मानव-समूह में एक पुजारी होता था।

नोट

नोट्स नव पाषाण काल का मानव कृषि करना सीख गया था।

गाँवों का बसना—नव पाषाण काल में कृषि का आरम्भ हो जाने का परिणाम यह हुआ कि मानव समूह उन सब भागों में बस गये, जहाँ जल प्राप्त था। इस प्रकार ग्राम बस गए तथा ग्राम-समूहों के बीच में प्राचीरों से घिरे हुए नगर बसने लगे। इन नगरों और ग्रामों के चारों ओर दूर-दूर तक खेत बन गए।

उद्योग धन्धे—जैसा कि उल्लेख किया गया है कि कृषि एक क्रान्तिकारी परिवर्तन था। दूसरा महान् परिवर्तन उद्योग-धन्धे थे। कृषि एक ऐसा धन्धा है जिसमें किसान अकेले ही सब कुछ नहीं कर सकता। उसे दूसरों का सहयोग चाहिए। हल बनाने, बर्तन बनाने और कपड़े बनाने में दूसरे लोग उनकी सहायता करते थे। इसी से बढ़ई, कुम्हार, जुलाहे आदि के पेशे आरम्भ हो गये। वास्तव में कृषि और उद्योग-धन्धों से मानव के सामाजिक जीवन की नींव पड़ी। हम स्वयं विचार कर सकते हैं कि यह कितनी बड़ी उन्नति थी। मानव को पहले-पहल अपनी स्थायी सम्पत्ति और भूमि से प्रेम हो गया। उसका व्यक्तित्व अब शरीर तक सीमित नहीं रहा, सम्पत्ति और निवास-स्थान उसके व्यक्तित्व के भाग हो गये।

3.2 सारांश (Summary)

- खेती का काम आरम्भ करने के बाद मनुष्य को जगह-जगह घूमने की जरूरत नहीं रह गई।
- कृषि का आरम्भ बलिदान के साथ होता था।
- नव पाषाण काल में कृषि का आरम्भ हो जाने का परिणाम यह हुआ कि मानव समूह उन सब भागों में बस गये, जहाँ जल प्राप्त था।
- वास्तव में कृषि और उद्योग-धन्धों से मानव के सामाजिक जीवन की नींव पड़ी।

3.3 शब्दकोश (Keywords)

- **कृषि**—जमीन में बीज बो कर फसल प्राप्त करने की सम्पूर्ण क्रिया।
- **पशु पालन**—जानवरों को मानव लाभ के लिए पालना।

3.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. नव पाषाण काल में मानव किन औजारों की मदद से खेती करता था ?
2. कृषि के बाद मानव विकास में आया दूसरा महत्त्वपूर्ण परिवर्तन क्या था ?

3.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–4: नवपाषाण क्रांति (The Neolithic Revolution)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

4.1 नये मानव समूहों का उद्भव (Rise of New Human Groups)

4.2 नवपाषाण काल का मानव जीवन (Human Life in Neolithic Age)

4.3 सारांश (Summary)

4.4 शब्दकोश (Keywords)

4.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

4.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- नव-मानव समूहों के विकास को समझने में;
- नव-पाषाण काल के मानवीय जीवन को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

उत्तर-पाषाण काल का मनुष्य अपने पूर्वजों की तुलना में अधिक बुद्धिमान था। उनके हथियार और औजार अधिक नुकीले और तेज धार के होते थे। अब पेड़ों का स्थान गुफाओं ने ले लिया था, फिर भी स्थायी आवास का निर्माण करना नहीं सीखा था। काफी लम्बे समय बाद झोंपड़ियों का निर्माण तथा उसमें निवास करने की आदत मनुष्य ने सीखी थी। अब वे लोग अपना शरीर भी ढकने लगे थे। इसी युग में किसी बुद्धिमान व्यक्ति ने पहिये का आविष्कार किया और यह आविष्कार मानव सभ्यता की समृद्धि का सबसे बड़ा कारण बन गया। इससे यातायात के साधनों का विकास हुआ।

4.1 नये मानव समूहों का उद्भव (Rise of New Human Groups)

पूर्व-पाषाण काल के अन्तिम समय में तीसरा हिमावर्तन हुआ, जिसके परिणामस्वरूप एशिया और यूरोप के विस्तृत इलाकों में जलवायु अति शीतल बन गई और अनेक जीवधारियों की नस्लें विलुप्त हो गईं। सम्भवत: निन्डरथल जाति अचानक लोप हो गई। परन्तु अग्नि के आविष्कार से मनुष्य जीवित रह गया और निन्डरथल मानव के स्थान पर पूर्ण मानव की कुछ नई जातियों-क्रोमेग्नोन, ग्रिमाल्डी, कोवकोपेल और शॉसलाद आदि का उद्भव हुआ।

क्रोमेग्नोन अथवा क्रोमान्यो मानव के अवशेष 1866 में दक्षिणी फ्राँस की क्रोमन्यो गुफाओं में मिले। इनके आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि क्रोमेग्नोन मानव उन्नत कपाल, चौड़ी मुखाकृति और ठोढ़ी तथा नुकीली नाक वाला रहा होगा। ग्रिमाल्डी मानव के अवशेष फ्रांस के भूमध्यसागरीय तट पर स्थित ग्रिमाल्डी गुफाओं में मिले हैं। इनका सिर गोल, नाक चौड़ी, जबड़ा छोटा और ठोढ़ी विकसित थी। परन्तु इनका कद अधिक लम्बा नहीं था। विद्वानों का मानना है कि ये आधुनिक नीग्रो जाति के लोगों से मिलते-जुलते रहे होंगे। कोवकोपेल और शॉसलाद जातियों के अवशेष भी फ्रांस में ही मिले हैं।

क्या आप जानते हैं पूर्व पाषाण काल के अन्तिम समय में तीसरा हिमावर्तन हुआ जिससे अनेक जीवधारियों की नस्लें विलुप्त हो गईं।

सामान्य जीवन–उत्तर-पाषाण काल का मनुष्य अपने पूर्वजों की तुलना में अधिक बुद्धिमान था। उनके हथियार और औजार अधिक नुकीले और तेज धार के होते थे। अब पेड़ों का स्थान गुफाओं ने ले लिया था, फिर भी स्थायी आवास का निर्माण करना नहीं सीखा था। काफी लम्बे समय बाद झोंपड़ियों का निर्माण तथा उसमें निवास करने की आदत मनुष्य ने सीखी थी। अब वे लोग अपना शरीर भी ढकने लगे थे। उनके द्वारा निर्मित सुइयों से यह अनुमान लगाया जाता है कि वे जानवरों की खाल को सिलकर शरीर को ढकने की अनेक प्रकार की वस्तुयें बनाना जानते थे। अपने विकास की इस अवस्था में मनुष्य का मुख्य उद्यम हिरन और मैमथ (महागज) जैसे बड़े जानवरों का शिकार करना था। इसके लिए उन्होंने धनुष-बाण बना लिया था। इस युग में भी वह कन्द-मूल, फल आदि खाद्य पदार्थों का संग्रह करता था।

कलात्मक प्रतिभा का विकास–उत्तर-पाषाणकाल के मानव की एक विशेषता है, उसकी कलात्मक प्रतिभा का विकास। अब वह अस्थियों और सींगों से बनाये गये हथियारों पर नक्काशी का काम करने लगा था। हाथीदाँत और मिट्टी की मूर्तियाँ बनाने लगा। सम्भवत: वे लोग मातृशक्ति के उपासक रहे होंगे, इसलिए नारी मूर्तियाँ अधिक बनाते थे। भित्ति-चित्रकला की शुरुआत भी इन्हीं लोगों ने की थी। उनकी चित्रकला के सर्वोत्तम नमूने उत्तरी स्पेन में अल्तमीरा की गुफाओं की छतों और दीवारों पर मिले हैं। बारहसिंगा, भालू, अश्व आदि पशुओं के चित्रों में जो रंग भरे गये हैं, उनका रंग अभी तक वैसा ही है।

परलोक सम्बन्धी विश्वास–उत्तर-पाषाण काल के लोगों के परलोक सम्बन्धी विश्वास काफी परिपक्व हो गये थे। वे अपने मृतकों को दफनाते समय उनके साथ आभूषण, हथियार और खाद्य पदार्थ भी रखते थे। उन लोगों में अपने मृतकों के शरीर को लाल रंग से रंगने की विचित्र प्रथा प्रचलित थी। वे लोग प्राकृतिक शक्तियों एवं पशुओं की उपासना भी करते थे।

सामाजिक संरचना–इस युग की सामाजिक संरचना की मुख्य विशेषता थी–मातृक सगोत्रता (फीमेल किनशिप)। उस समय समूह-विवाहों का ही चलन था, जिसकी वजह से बच्चे अपने पिताओं के स्थान पर अपनी माताओं को ही जानते थे। मातृतन्त्रात्मक पद्धति पर आधारित समाज कई हजार वर्ष तक अस्तित्व में बना रहा।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. नवपाषाण काल का समाज .... पद्धति पर आधारित था।
2. नवपाषाण काल का समय .... तक माना जाता है।
3. ग्रिमाण्डी मानव आधुनिक .... जाति के लोगों से मिलते-जुलते रहे होंगे।

नोट

4.2 नवपाषाण काल का मानव जीवन (Human Life in Neolithic Age)

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव—नव-पाषाण काल को मानव सभ्यता के विकास क्रम में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ बिन्दु माना जाता है। विद्वानों ने इसका समय 10,000 ई. पू. से 3000 ई. पू. तक माना है। इस काल की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता जलवायु का उष्णतर होना था जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी के अनेक भागों में जंगलों का विकास हुआ। परन्तु उष्ण जलवायु ने एशिया और उत्तरी अफ्रीका के अनेक हरे-भरे क्षेत्रों को रेगिस्तान में परिवर्तित कर दिया। नतीजा यह निकला कि इन क्षेत्रों में विचरण करने वाले लोगों के लिए शिकार तथा कन्द-मूल और फलों से जीविका चलाना कठिन हो गया, क्योंकि इस समय तक मानव जाति की आबादी काफी बढ़ चुकी थी।

कृषि का आविष्कार—इन्हीं परिस्थितियों में कृषि और पशुपालन के आदिम रूपों का आविर्भाव हुआ। किसी ने यह खोज की कि सूखे बीजों को गीली मिट्टी में दबा दिया जाए तो कुछ महीनों के बाद उन बीजों से कई गुना अधिक बीज उपलब्ध हो सकते हैं। इस रहस्य ने कृषि की आधारशिला रख दी। इस खोज ने मनुष्य की भ्रमणशीलता का अन्त कर दिया। अब वह घर बनाकर रहने लगा और इसी के साथ मनुष्य में व्यक्तिगत सम्पत्ति तथा अपने स्थान के प्रति निष्ठा की भावना का उदय हुआ। इसके परिणामस्वरूप सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता अनुभव हुई और कई सामाजिक संस्थाओं का उद्‌भव हुआ। इस प्रकार, कृषि का आविष्कार मानव-जीवन में प्रथम औद्योगिक क्रान्ति थी, जिसने आजीविका का एक नियमित एवं स्थायी साधन प्रदान किया तथा सामाजिक संस्थाओं की आधारशिला रखी।

कृषि में पहले-पहल काम में लाये जाने वाले औजार-खंतियाँ और कुदालें बेहद अपरिष्कृत थे। पैदा की जाने वाली फसलें थीं—जौ, गेहूँ, बाजरा और मटर जैसे अनाज तथा कुछ साग-सब्जियाँ।

नोट्स 'कुम्हार के चाक' का आविष्कार इसी युग में हुआ, जिससे मिट्टी के बर्तन बनने शुरू हो गए।

पशुपालन—नवपाषाण काल की दूसरी मुख्य विशेषता है-पशुपालन। शायद आखेट के अनुभव ने पशुपालन की प्रवृत्ति को जन्म दिया हो। उस समय तक लोग हॉका करके अथवा शिकार को चारों ओर से घेर करके शिकार करना सीख चुके थे और इस काम में कुत्तों का सहयोग भी लिया जाने लगा। अर्थात् मनुष्य ने सर्वप्रथम कुत्तों को पालतू बनाया होगा। इसके बाद गधा, बकरी, भेड़, गाय, भैंस और अन्त में घोड़े को पालतू बनाया होगा। अब वह पशुओं की सहायता से कृषि करने लगा। इससे पशुपालन का महत्त्व और भी अधिक बढ़ गया।

मिट्टी के बर्तन बनाने की कला—कृषि कर्म और पशुपालन से मनुष्य को खाने-पीने की समस्या से मुक्ति मिल गई परन्तु खाद्य सामग्री को सुरक्षित रखने की समस्या उत्पन्न हो गई। इसका समाधान उसने मिट्टी के बड़े-बड़े बर्तन बनाने की कला का आविष्कार करके किया। इसी समय 'कुम्हार के चाक' का भी आविष्कार हुआ जिससे दैनिक जीवन में काम आने वाले मिट्टी के बर्तन बनने शुरू हो गये।

पहिये का आविष्कार—इसी युग में किसी बुद्धिमान व्यक्ति ने पहिये का आविष्कार किया और यह आविष्कार मानव सभ्यता की समृद्धि का सबसे बड़ा कारण बन गया। इससे यातायात के साधनों का विकास हुआ। लोगों ने घोड़ों या बैलों से खींची जानेवाली गाड़ियाँ बनाईं। पहियेदार गाड़ियों ने विभिन्न दूरी पर बसी मानव-बस्तियों को एक-दूसरे के समीप ला दिया। अब लोग अपने अतिरिक्त सामान का विनिमय करने लगे जिससे व्यापार-वाणिज्य का आद्य युग शुरू हुआ।

कातने और बुनने की कला—इस युग में मनुष्य ने एक और उपलब्धि प्राप्त की। वह थी-कातने और बुनने की कला का विकास। इसके लिए करघा और चरखा बनाया गया। बुनने की कला ने मानव जीवन को सभ्यता के ढाँचे में ढालना शुरू कर दिया। अब वह सूत, पटसन और ऊन से वस्त्र बनाना सीख गया और इन वस्त्रों से अपने शरीर को ढकने लगा।

नोट

प्रगति के नये कदम–एक स्थान पर बस जाने से जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि होने लगी और धीरे-धीरे मनुष्य नये-नये क्षेत्रों को आबाद करने लगा। वनों को काटने और लकड़ी को चीरने-फाड़ने वाले औजार बनाये गये जिससे काष्ठ कला का विकास हुआ। मिट्टी से ईंटें बनाना और ईंटों से रहने के आवास बनाने की कला का विकास हुआ। व्यापक पैमाने पर कृषि कर्म के लिए खुर्पी, कुदाल, हल, हँसिया और चक्की का प्रयोग शुरू हुआ। झीलों और नदियों को पार करने के लिये नावों का निर्माण किया गया। उपर्युक्त सभी आविष्कारों के फलस्वरूप नव पाषाण के मानव इतिहास को 'प्रगति का प्रथम महान् युग' कहा जाता है, जिसने मानव जीवन में एक क्रान्ति ला दी।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

4. नव-पाषाण काल की मुख्य विशेषता कृषि है।
5. नव-पाषाण काल में स्त्रियों की दशा अत्यन्त दयनीय थी।
6. नव-पाषाण काल में तीसरे हिमावर्तन की वजह से सम्पूर्ण मानव जाति नष्ट हो गई।
7. नव-पाषाण युग में पहिए का आविष्कार हुआ।

स्त्रियों का स्थान–इस नये युग के निर्माण की प्रारम्भिक अवस्था में स्त्रियों की भूमिका अधिक महत्त्वपूर्ण रही। खेती का बहुत-सा काम, गेहूँ पीसने का काम, खाना बनाना, सूत कातना, कपड़ा बुनना तथा बर्तन बनाना आदि अधिकांश कार्यों का दायित्व स्त्रियों का ही रहा होगा। अत: समाज में उनकी स्थिति काफी महत्त्वपूर्ण बनी रही। पुरुषों का मुख्य दायित्व फसलों की रक्षा, शिकार और पशुपालन रहा। औजार तथा हथियार बनाना भी उन्हीं का काम था। परन्तु बाद में कृषि और पशुपालन के क्षेत्र में पुरुषों का वर्चस्व कायम हो गया। हल के आविष्कार और जुताई में पशुओं की सहायता से कृषि कर्म स्त्रियों के लिए अधिक श्रम साध्य सिद्ध हुआ। अत: स्त्रियों को अब घरेलू कामों को सँभालने की नई भूमिका प्रदान कर दी गई।

सामाजिक संस्थाओं और मुखिया का आविर्भाव–नवपाषाण काल में सामाजिक तथा आर्थिक जीवन की मुख्य निदेशक शक्ति क्या थी, इसका उत्तर सरल नहीं है। इसी प्रकार, इस समय के पारिवारिक सम्बन्धों के बारे में भी निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। वैसे विद्वानों की मान्यता है कि इस युग में भी मातृसत्तात्मक परिवार प्रथा का प्रचलन रहा होगा। शायद इस युग के अन्तिम काल में विवाह की नियमित प्रथा का सूत्रपात हो गया था। संभवत: 'कबिला' उसकी सामाजिक इकाई था जिसके अन्तर्गत अनेक परिवार होते थे और सभी लोग कबीले के मुखिया के प्रति निष्ठा की भावना रखते थे। कृषि कर्म से मनुष्य में समृद्धि की भावना जागृत हुई और अब वह अपनी सन्तान के लिए विविध सामग्रियाँ जमा करने लगा। इससे सम्पत्ति और परिवार के प्रति ममता उत्पन्न हुई और मनुष्यों में व्यक्तिगत सम्पत्ति की भावना का विकास हुआ। इसी के साथ कृषि और सम्पत्ति की सुरक्षा की आवश्यकता अनुभव हुई और 'मुखिया' का आविर्भाव हुआ। इसी से कालान्तर में राज्य और राजा की भावना का उदय हुआ। इस प्रकार नव पाषाण काल में मानव सभ्यता के कुछ मुख्य आधारों की स्थापना हुई; फिर भी, इस युग के मनुष्य को पूर्ण सभ्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सभ्यता के अन्य आवश्यक मूल तत्त्वों का विकास अभी तक नहीं हो पाया था।

4.3 सारांश (Summary)

- उत्तर-पाषाणकाल के मानव की एक विशेषता है, उसकी कलात्मक प्रतिभा का विकास।
- उत्तर-पाषाण काल के लोगों के परलोक सम्बन्धी विश्वास काफी परिपक्व हो गये थे। वे अपने मृतकों को दफनाते समय उनके साथ आभूषण, हथियार और खाद्य पदार्थ भी रखते थे।

नोट

- नव-पाषाण काल को मानव सभ्यता के विकास क्रम में एक महत्त्वपूर्ण मोड़ बिन्दु माना जाता है। विद्वानों ने इसका समय 10,000 ई. पू. से 3000 ई. पू. तक माना है।
- कृषि कर्म और पशुपालन से मनुष्य को खाने-पीने की समस्या से मुक्ति मिल गई परन्तु खाद्य सामग्री को सुरक्षित रखने की समस्या उत्पन्न हो गई। इसका समाधान उसने मिट्टी के बड़े-बड़े बर्तन बनाने की कला का आविष्कार करके किया।
- इस युग में मनुष्य ने एक और उपलब्धि प्राप्त की। वह थी-कातने और बुनने की कला का विकास। इसके लिए करघा और चरखा बनाया गया।
- इस नये युग के निर्माण की प्रारम्भिक अवस्था में स्त्रियों की भूमिका अधिक महत्त्वपूर्ण रही। खेती का बहुत-सा काम, गेहूँ पीसने का काम, खाना बनाना, सूत कातना, कपड़ा बुनना तथा बर्तन बनाना आदि अधिकांश कार्यों का दायित्व स्त्रियों का ही रहा होगा।
- नवपाषाण काल की दूसरी मुख्य विशेषता है-पशुपालन। शायद आखेट के अनुभव ने पशुपालन की प्रवृत्ति को जन्म दिया हो।

4.4 शब्दकोश (Keywords)

- **कन्द-मूल**–जंगली वनस्पति, आदि-मानव का मुख्य भोजन।
- **हॉका**–शिकार को चारों ओर से घेर कर शिकार करने की विधि।

4.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. नवपाषाण काल में हुए प्रमुख आविष्कार क्या थे ?
2. नवपाषाण काल में स्त्रियों की भूमिका का वर्णन करें।
3. इस युग को 'प्रगति का प्रथम महान युग' कहा जाता है। स्पष्ट करें।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. मातृतन्त्रात्मक	2. 10,000 ई.पू. से 3000 ई.पू.		3. नीग्रो
4. सत्य	5. असत्य	6. असत्य	7. सत्य।

4.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–5: दुनिया के उलझाव
(Implication for the World)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
5.1 माया सभ्यता (Maya Civilization)
5.2 अजटेक सभ्यता (Aztek Civilization)
5.3 इन्का सभ्यता (Inka Civilization)
5.4 सारांश (Summary)
5.5 शब्दकोश (Keywords)
5.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
5.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- माया सभ्यता को समझने में।
- अजटेक और इन्का सभ्यता को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

अमरीकी महाद्वीपों अर्थात् नई दुनिया की नव पाषाण काल की सभ्यताओं के अन्तर्गत कई सभ्यताएँ मिली हैं। नई दुनिया में तीन मुख्य सभ्यताएँ मिली हैं–**माया, अजटेक तथा इन्का।** अमरीका की सभी प्राचीन सभ्यताओं में पुजारियों की शक्ति बढ़ी हुई थी। उनके बनाये नियम और शकुनों का पालन सब लोग करते थे। इन पुजारियों ने पंचांग निर्माण में तथा उससे सम्बन्धित ज्योतिष में बड़ी उन्नति की थी। वे देवताओं को प्रसन्न करने के लिए नर-नारियों का बलिदान भी करते थे। कृषि सम्बन्धी नर-बलि की प्रथा को इन सभ्यताओं में बड़ा महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था।

5.1 माया सभ्यता (Maya Civilization)

माया सभ्यता का विकास यूकेटन प्रायद्वीप में हुआ था। माया सभ्यता के पुरोहितों ने एक अत्यन्त व्यवस्थित और सुन्दर पंचांग बनाया जिसे वे क्रमशः, उन्नति करते-करते उसे सर्वोत्तम पंचांग का रूप दे सके। यह पंचांग इतना चतुराईपूर्ण है कि सैकड़ों वर्षों तक के दिनों का पता लगा सकते हैं। वर्ष में 365 दिन होते थे तथा 20 वर्षों का

नोट

एक युग होता था। कदाचित् ये लोग शून्य का प्रयोग जानते थे। पंचांग का प्रयोग कृषि की ऋतुओं, त्योहारों एवं पवित्र दिनों को जानने के लिये किया जाता था। इन अवसरों पर नर-बलि दी जाती थी। माया जाति ने कोई चित्रलिपि भी निकाली थी जिसका अधिकतर प्रयोग पंचाँग लिखने में होता था। उनकी लिपि अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है।

माया सभ्यता की कला भी अपने ढंग की तथा विचित्र थी। मूर्ति-कला और पाषाण में खुदाई के काम विचित्र, सुन्दर एवं कलापूर्ण हैं। पत्थरों पर बनी बेलों एवं गुच्छकों में सर्प तथा पंखों की आकृतियाँ गुँथी हुई मिलती हैं। कुछ हद तक ये पाषाण-चित्रक भारत के अत्यन्त प्राचीन शिला-चित्रकों से मिलते हैं। उन्होंने जो मूर्तियाँ बनाईं वे उनके देवताओं की हैं, जिनकी आकृति अर्द्ध पशु एवं अर्द्ध-मानवों की सी हैं। सूर्य देवता की मूर्तियाँ बहुत हैं।

क्या आप जानते हैं माया सभ्यता के एक वर्ष में 365 दिन होते थे और 20 वर्षों का एक युग होता था।

5.2 अजटेक सभ्यता (Aztek Civilization)

अजटेक सभ्यता की वास्तुकला इतनी सुघड़ एवं उन्नतिशील थी कि इनके मन्दिरों को देखकर तो यही कहना पड़ेगा कि ये लोग बड़े सभ्य थे। माया एवं अजटेक मन्दिर ऊँची कुर्सियों पर बनाये जाते थे और पाषाण की मूर्तियों और बेलों आदि की खुदाई से युक्त होते थे। इनके प्रसिद्ध भवन 'सैनिकों का मन्दिर' तथा 'सूर्य का पिरामिड' हैं। पुजारियों, सामन्तों और राजाओं के भवन भी बड़े विशाल और सुन्दर होते थे। देश के बीच में बसी राजधानी सुन्दर तालाबों से घिरी हुई थी जिनमें होकर प्रवेश मार्ग बने हुये थे। स्वर्ण-जड़ित मन्दिरों और महलों से यह नगर भरपूर था। फिर भी साधारण लोग बाँस के बने घरों में रहते थे।

हर वर्ष मन्दिरों में सहस्रों मानवों की बलि दी जाती थी। बड़े पुरोहित या 'अहकिन भाई' का यह कार्य था कि वह बलि दिये हुये मानव का जीवित और फड़कता हुआ हृदय निकाल कर देवता को समर्पित करता था। फसल बोने के समय भी नर बलि दी जाती थी। उस समय नर बलि विशाल संख्या में दी जाती थी। इनके पुजारियों ने पंचांग की उन्नति करके अलग-अलग देवताओं की पूजा तथा उनकी प्रसन्नता के लिए नर-बलि की तिथियाँ, ऋतु आदि निश्चित कर डाले थे। पृथ्वी माता, सूर्य, पितृ रूपी आकाश, सिंह, वर्षा देव आदि इनके मुख्य देवता थे।

5.3 इन्का सभ्यता (Inka Civilization)

दक्षिणी अमरीका की **इन्का सभ्यता** का विकास पीरू, बोलिविया तथा इक्वेडोर में हुआ था। उन्नति करने पर टीटीकाका झील का प्रदेश इस सभ्यता का बड़ा केन्द्र बन गया था। यहाँ भी पुरोहितों का बोलबाला था।

5.4 सारांश (Summary)

- अमरीका की सभी प्राचीन सभ्यताओं में पुजारियों की शक्ति बढ़ी हुई थी। उनके बनाये नियम और शकुनों का पालन सब लोग करते थे।
- माया सभ्यता की कला भी अपने ढंग की तथा विचित्र थी। मूर्ति-कला और पाषाण में खुदाई के काम विचित्र, सुन्दर एवं कलापूर्ण हैं।
- अजटेक सभ्यता की वास्तुकला इतनी सुघड़ एवं उन्नतिशील थी कि इनके मन्दिरों को देखकर तो यही कहना पड़ेगा कि ये लोग बड़े सभ्य थे।

5.5 शब्दकोश (Keywords)

- **पुरोहित**—पूजा-पाठ आदि की कार्रवाई करने वाला व्यक्ति।
- **पंचांग**—वर्ष, तिथियाँ, त्योहार, ग्रहण, पूर्णमासी आदि बताने वाला कैलेण्डर।

नोट

5.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. माया सभ्यता की विशेषताएँ बताइए।
2. अजटेक सभ्यता के मन्दिरों की क्या खासियत थी ?
3. अजटेक सभ्यता में प्रचलित नर बलि का वर्णन करो।

5.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–6: काँस्य-युग की सभ्यताएँ (Bronze Age Civilizations)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
6.1 ताँबा युग (Copper Age)
6.2 काँस्य-युग (Bronze Age)
6.3 सारांश (Summary)
6.4 शब्दकोश (Keywords)
6.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
6.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- काँस्य युग को जानने में।
- ताँबा युग को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मानव को धातुओं का ज्ञान कैसे हुआ और किस प्रकार मानव ने धातु को अनेक प्रकार के कामों में इस्तेमाल किया, यह बता पाना एक कठिन काम है। कुछ विद्वानों की राय है कि मनुष्य को सबसे पहले सोने की धातु का पता लगा। सोना एक सुन्दर धातु है और मूल्यवान भी है लेकिन यह धातु बहुत नरम है, अतः इससे हथियार-औजार नहीं बन सकते थे। अतः तत्कालीन मनुष्य के लिए यह धातु अधिक उपयोगी नहीं थी।

6.1 ताँबा युग (Copper Age)

सोने के बाद मनुष्य को ताँबे की धातु का पता लगा। यह धातु मनुष्य के लिए बड़ी उपयोगी थी। कहा जाता है कि साइप्रस द्वीप और सिनाई रेगिस्तान नामक स्थान के लोगों ने सबसे पहले इस धातु का प्रयोग करना सीखा। यह लगभग ई. पूर्व से 7000 वर्ष पहले की बात है। उसके बाद मिस्र के लोगों तथा बेबीलोनिया व मेसोपोटामिया के लोगों ने भी ताँबे का प्रयोग सीखा। मिस्र में नील नदी की घाटी में ताँबे की धातु मिलती थी। ताँबे को पिघलाने तथा फिर उसे बड़े-बड़े हथौड़ों से पीटकर आवश्यक वस्तुएँ बनाने का काम मिस्र और बेबीलोनिया में खूब होता था। ताँबे की धातु से बनी वस्तुएँ पत्थर की बनी वस्तुओं से अधिक मज़बूत तथा सुडौल होती थीं। लेकिन ताँबे के साथ-साथ पत्थर का प्रयोग भी चालू रहा। ताँबे की धातु से बर्तन तथा औजार बनाये जाते थे।

नोट

क्या आप जानते हैं ताँबे को पिघलाने तथा फिर उसे बड़े-बड़े हथौड़ों से पीटकर आवश्यक वस्तुएँ बनाने का काम मिस्र और बेबीलोनिया में खूब होता था।

6.2 काँस्य-युग (Bronze Age)

अनुभव के आधार पर मनुष्य को पता लगा कि ताँबा भी एक नरम धातु है। इसी बीच उन्हें टिन धातु का पता लग गया था और उन्होंने देखा कि यदि ताँबे और टिन को मिला दिया जाये, तो जो धातु बनती है, वह अधिक कड़ी होती है और उससे बने सामान और औजार अधिक टिकाऊ व मजबूत होते हैं। ताँबे और टिन को मिलाकर बनाई गई धातु का नाम काँसा था। काँसा बनाने की यह कला कब, किसने और कैसे प्रचलित की, यह बताना कठिन है किन्तु यह बात सत्य है कि लगभग 3000 वर्ष ई. पू. यह धातु मिस्र, क्रीट और साइप्रस में प्रयोग में लाई जाती थी।

काँस्य-युग के आगमन से मानव की सभ्यता को एक नई दिशा मिली। मानव की गतिविधियाँ बहुत बढ़ गईं और उनके कार्यों के लिए काँसे का प्रयोग होने लगा।

काँसे और टिन की खुदाई और गलाने के लिए यह आवश्यक था कि बहुत से लोग एक ही स्थान पर और एक साथ मिलकर कार्य करें। जंगलों में पेड़ों को काटने तथा खानों की खुदाई के लिए काँसे के बने औजारों का प्रयोग बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ। लकड़ी को काँसे के औजारों से काटना सरल हो गया। अनेक प्रकार की पहिएदार गाड़ियाँ बनने लगीं। काँसे से भाले, तलवार और कटारें भी बनने लगीं। खेतों को जोतने तथा फसल को काटने के लिए काँसे के औजार अधिक उपयुक्त सिद्ध हुये।

इस प्रकार काँस्य-युग में मानव की सभ्यता, उसके कारोबार, उसकी सुविधाओं तथा उसकी शक्ति में वृद्धि हुई।

6.3 सारांश (Summary)

- सोने के बाद मनुष्य को ताँबे की धातु का पता लगा। यह धातु मनुष्य के लिए बड़ी उपयोगी थी।
- काँस्य-युग के आगमन से मानव की सभ्यता को एक नई दिशा मिली। मानव की गतिविधियाँ बहुत बढ़ गईं और उनके कार्यों के लिए काँसे का प्रयोग होने लगा।
- अनेक प्रकार की पहिएदार गाड़ियाँ बनने लगीं। काँसे से भाले, तलवार और कटारें भी बनने लगीं।

6.4 शब्दकोश (Keywords)

- **काँस्य**–ताँबे और टिन को मिला कर बनी धातु।

6.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. ताँबे का प्रयोग सबसे पहले कहाँ हुआ?
2. काँस्य का प्रयोग कैसे शुरू हुआ?

6.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।

नोट

इकाई–7: लौह-युग
(Iron Age)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
7.1 लौह-युग (Iron Age)
7.2 सारांश (Summary)
7.3 शब्दकोश (Keywords)
7.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
7.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- लौह-युग की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

काँसे के युग के मनुष्य ने एक और छलांग लगाई और उसने लोहे की धातु का पता लगाया। काले सागर के किनारे एशिया माइनर के उत्तरी भाग में शायद सबसे पहले लोहे की खानों का पता लगाया गया। यह ई. पू. से लगभग 2000 वर्ष पहले की बात है। लगभग 1300 वर्ष ई. पू. मिस्र में लोहे के प्रयोग के प्रमाण मिलते हैं। इंग्लैंड के लोगों को ई. स. से 1000 वर्ष पहले लोहे का पता लगा और आयरलैंड के लोगों को तो पहली शताब्दी के अन्त में इस धातु का ज्ञान हुआ।

7.1 लौह-युग (Iron Age)

लोहे की धातु काँसे की धातु की अपेक्षा अधिक मजबूत और उपयोगी थी। इससे अच्छे हथियार-औजार और चीजें बनती थीं। लोहे के बने अस्त्र-शस्त्र अधिक मजबूत होते थे, उनकी धार अपेक्षाकृत अधिक तेज होती थी और वे जल्दी टूटते भी नहीं थे। असीरिया की सेना विश्व की पहली सेना थी जिसके पास लोहे के बने अस्त्र-शस्त्र उपलब्ध थे। उस सेना ने लोहे के शस्त्रों के बल पर अपना आतंक जमा रखा था।

मानव सभ्यता के विकास में धातुओं का बड़ा महत्त्वपूर्ण हाथ रहा। इन धातुओं के ज्ञान ने सभ्यता की गाड़ी को गति प्रदान की तथा मानव को अपनी बुद्धि का सर्वोत्तम प्रयोग करने की सुविधा प्रदान की।

नोट

आर्थिक व्यवस्था–नये आविष्कारों के इस युग में मनुष्य का आर्थिक जीवन सुदृढ़ हो गया। कृषि की जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद मनुष्य बड़े पैमाने पर वस्तुएं पैदा करने लगा। सम्पत्ति और परिवार के प्रति अब ममता उत्पन्न हो चुकी थी। अत: व्यक्ति अपनी सन्तान के लिए उपभोग तथा उत्पादन की सामग्री जमा करने लगा। इस प्रकार मनुष्य में व्यक्तिगत सम्पत्ति की भावना आयी।

राजनीतिक व्यवस्था–धन-जन और उपार्जन की सुरक्षा ने परिवार, कबीले और गोत्र में सामाजिक सुरक्षा और व्यवस्था को जन्म दिया। इस कारण समाज में मुखिया भी होने लगे। परिवार, समाज, ग्राम और नगर की सुरक्षा ने राज्य और राजा जैसी संस्थाओं को जन्म दिया।

7.2 सारांश (Summary)

- लोहे की धातु काँसे की धातु की अपेक्षा अधिक मजबूत और उपयोगी थी।
- असीरिया की सेना विश्व की पहली सेना थी जिसके पास लोहे के बने अस्त्र-शस्त्र उपलब्ध थे। उस सेना ने लोहे के शस्त्रों के बल पर अपना आतंक जमा रखा था।
- धन-जन और उपार्जन की सुरक्षा ने परिवार, कबीले और गोत्र में सामाजिक सुरक्षा और व्यवस्था को जन्म दिया। इस कारण समाज में मुखिया भी होने लगे।

7.3 शब्दकोश (Keywords)

- **लौह-युग**–मानव विकास का वह काल जिसमें लोहे की खोज हुई।

7.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मानव ने लौह धातु का पता कब लगाया ?
2. इस काल की राजनीतिक व्यवस्था कैसी थी ?

7.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–8: लेखन एवं कलात्मक प्रभाव (Writing and Artistic Expression)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

8.1 बौद्धिक विकास (Intellectual Development)

8.2 प्राचीन नदी-घाटी सभ्यताएँ (Ancient River-Valley Civilization)

8.3 नदी घाटी सभ्यताओं की विशेषताएँ (Features of River-Valley Civilization)

8.4 सारांश (Summary)

8.5 शब्दकोश (Keywords)

8.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

8.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मानव के बौद्धिक विकास के समझने में;
- प्राचीन नदी-घाटी सभ्यताओं को जानने में;
- नदी-घाटी सभ्यताओं की विशेषताएँ जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

नव-पाषाण काल सचमुच ही एक युगान्तकारी काल था। इसे 'प्रगति का प्रथम महान युग' कहा जाता है। इस युग में बड़े ही क्रान्तिकारी आविष्कार हुए। सच पूछा जाय तो अठारवीं शताब्दी की औद्योगिक क्रान्ति के पहले तक मानव सभ्यता इन्हीं आविष्कारों पर आधारित रही। प्रकृति पर विजय प्राप्त करने के लिए आदि मानव ने इस युग में अनवरत प्रयास किये। मनुष्य ने प्राकृतिक साधन का समुचित उपयोग इसी काल में सीखा। उसमें नयी आशा, उत्साह, आकांक्षा और उपलब्धि का संचार हुआ। सचमुच ही इस काल में मानव-सभ्यता का आधार स्थापित हो चुका था।

8.1 बौद्धिक विकास (Intellectual Development)

नव-पाषाण युग में मनुष्य की चिंतन-शक्ति भी बढ़ी। वस्तुत: इस काल में जो विभिन्न आविष्कार हुए वे इसी के परिणाम थे। किन्तु भावों को व्यक्त करने के लिए भाषा तथा लिपि का विकास अभी तक नहीं हो पाया। कला-कौशल के विकास की दिशा में भी उत्तर नव-पाषाण काल में ही प्रगति हुई।

नोट

इतिहासकार विलडुराँ ने नव-पाषाण युग को मानव-सभ्यता के विकास का प्रथम क्रान्तिकारी सोपान माना है। मनुष्य में मनुष्यता और विवेक जागृति इस काल में हुई। किन्तु, अभी भी उसे सभ्य नहीं कहा जा सकता था। कारण, सभ्यता के तीन मुख्य तत्व-राज्य की स्थापना, धातुओं का प्रयोग एवं लेखन-कला की उत्पत्ति अभी तक नहीं हो पायी थी, किन्तु जल्द ही धातु युग में आदि-मानव ने इन कमियों को भी पूरा कर लिया और वह सभ्यता के प्रथम सोपान पर आ खड़ा हुआ।

नव-पाषाण युग के अन्त में धातु-युग का प्रादुर्भाव हुआ। इस काल में पृथ्वी के गर्भ में छिपी हुई धातुओं को खोजकर मानव ने जीवन के एक नये आयाम में प्रवेश किया। अनुमानत: मनुष्य को सबसे पहले सोना और चांदी का पता लगा। चूँकि इन धातुओं का प्रयोग केवल आभूषण निर्माण में ही हो सकता था, अत: सभ्यता के विकास में इनसे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। कालान्तर में ताँबा, लोहा आदि महत्त्वपूर्ण धातुओं की खोज मानव ने की।

ताम्र-युग—धातु युग में पहला चरण ताम्र-युग के नाम से विख्यात हुआ। धातुओं में सर्वप्रथम मनुष्य ने ताँबे की खोज की। तांबा मजबूत, सुन्दर और सुदृढ़ साबित हुआ। इसकी खोज से नये और विकसित औजारों का निर्माण प्रारम्भ हुआ।

काँस्य-युग—ताम्र-युग के बाद काँस्य-युग का आविर्भाव हुआ। ताँबा और टीन को एक साथ मिलाकर काँसा बनाया जाने लगा। काँसे के निर्माण में पहली बार मनुष्य की बुद्धि में विज्ञान का अभ्युदय हुआ। काँसा का आविष्कार होते ही मनुष्य अपने औजार तथा हथियार इसी मिश्रित धातु से बनाने लगे। काँसे के औजार पत्थर तथा ताँबे के औजार से अधिक तेज, मजबूत और टिकाऊ होते थे। काँसे के आगमन से नये ढंग के अस्त्र-शस्त्र बनने शुरू हो गये। इस काल में जहाज निर्माण, औजारों का निर्माण तथा बढ़ईगीरी आदि में काफी प्रगति हुई।

लौह-युग—धातु युग का तीसरा और सबसे महत्त्वपूर्ण चरण लौह-युग के नाम से मशहूर है। लोहे की खोज से औजारों के निर्माण तथा कृषि से सम्बन्धित औजारों के निर्माण की दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन आये। अनुमानत: एक हजार ई. पूर्व के बाद से ही आदि मानव ने लोहे का प्रयोग शुरू कर दिया था। लोहा सभी धातुओं से मजबूत, तेज, स्थायी और उपयोगी सिद्ध हुआ। अब मनुष्य लोहे से भारी अस्त्र-शस्त्र, कृषि-औजार तथा जीवनोपयोगी, सामान बनाने लगे। वस्तुत: लोहे की खोज ने संसार के सारे उद्योगों और विज्ञान को विकसित करने में काफी सहायता की है।

धातु-युग में वास्तविक अर्थ में मनुष्य सभ्य बना। इस काल में मानव की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अवस्था में परिपक्वता आयी। राज्य, राजा और शासन का इसी काल में उद्भव हुआ। समाज में श्रम-विभाजन के कारण जातियां और उपजातियाँ भी बनीं। लेखन-कला का प्रारम्भ भी इसी युग में हुआ। इस प्रकार सभ्यता के निर्माण के सभी तत्व इकट्ठे हो गये। ज्ञान-विज्ञान की दिशा में भी मनुष्य ने प्रगति की।

क्या आप जानते हैं धातु-युग में लेखनकला प्रारम्भ हुई। सभ्यता निर्माण के सभी तत्व इस युग में इकट्ठे हो गए।

8.2 प्राचीन नदी-घाटी सभ्यताएँ (Ancient River-Valley Civilization)

प्राक् ऐतिहासिक काल में मनुष्य ने जिस सभ्यता का विकास किया, उसे हम आदिकाल की सभ्यता अथवा आदिम सभ्यता के नाम से जानते हैं। यद्यपि इस सभ्यता का काल निश्चित करना कठिन है, किन्तु विद्वानों ने अपने अथक प्रयास से प्राक् ऐतिहासिक काल के मानव जीवन की एक रूपरेखा प्रस्तुत करने की चेष्टा की है। इस काल के लिखित ऐतिहासिक ग्रन्थ नहीं हैं, अत: इस संदर्भ में विद्वानों ने जो कुछ भी कहा है उन्हें पूर्ण सत्य नहीं माना जा सकता है। पूर्व-पाषाण काल और नव-पाषाण में व्यवस्थाओं में स्पष्ट परिवर्तन देखने को मिलते हैं। नव-पाषाण युग के क्रम में मानव ने कृषि कार्यों का श्रीगणेश किया। परिणामस्वरूप मानव-जीवन अपेक्षाकृत अधिक व्यवस्थित हो गया। इस काल में मानव ने पिछले हजारों वर्षों के संचित ज्ञान तथा अन्य नूतन आविष्कारों के कारण सभ्यता के चरण में प्रवेश किया।

नोट

धातुओं की खोज और उनके प्रयोग ने मानव जाति के इतिहास को गहरे रूप से प्रभावित किया। मानव सभ्यता के इतिहास में यह एक विभाजक रेखा सा प्रमाणित हुआ। धातुओं से मानव को एक ऐसी सामग्री मिल गयी जो पत्थर की अपेक्षा अधिक मजबूत थी। साथ ही, धातुओं का उपयोग नाना प्रकार के उपकरणों, औजारों तथा हथियारों के निर्माण में किया जा सकता था। मनुष्य को जिस धातु की पहली जानकारी हुई, वह ताँबा थी। सदियों से मनुष्य ने पत्थरों के साथ ताँबे का प्रयोग हथियार, औजार तथा अन्य उपकरणों के निर्माण में किया। इस युग को विद्वानों ने ताम्र-पाषाणिक काल (Chalcolithic Age) के नाम से पुकारा है। प्रारम्भ में ताँबा खानों से खोद कर नहीं निकाला जाता था। मनुष्य उस प्राकृतिक तांबे का प्रयोग करता था जिसे नदियाँ अपने तटों पर जमा करती थीं। अनुमानतः तांबे का प्रयोग पाँच हजार ई. पू. में हुआ। बाद में मनुष्य खानों से ताँबे निकालने लगा। तीन हजार ई. पूर्व तक एशिया, अफ्रीका तथा यूरोप के अनेक क्षेत्रों में ताँबे का व्यापक प्रयोग होने लगा। ऐसे कई देश थे जहाँ प्राचीन सभ्यता का विकास हुआ, किन्तु वहाँ ताँबा उपलब्ध नहीं था। वे अन्य देशों से जाकर ताँबा लाते थे। इनके परिणामस्वरूप वाणिज्य-व्यापार का प्रारम्भ हुआ। जल्द ही मनुष्य ने ताँबे के साथ टीन अथवा जस्ते को मिलाकर काँसा नामक मिश्रित धातु बनाना प्रारम्भ किया। तांबे की अपेक्षा काँसे से निर्मित हथियार, औजार अथवा अन्य उपकरण अधिक मजबूत एव टिकाऊ होते थे। काँसे से निर्मित औजारों के प्रयोग से कृषि के साथ-साथ काष्ठ शिल्प की काफी उन्नति हुई। अब मनुष्य ने पहिए का आविष्कार कर लिया। मानव सभ्यता के विकास में पहिए का आविष्कार क्रांतिकारी सिद्ध हुआ।

नोट्स मानव सभ्यता के इतिहास में पहिए का आविष्कार क्रान्तिकारी सिद्ध हुआ।

इस युग को इतिहास में काँस्य-युग (Bronze Age) के नाम से पुकारा गया है। काँस्य-युग में विकसित सभ्यता को हम काँस्य-युगीन सभ्यता के नाम से जानते हैं। मिस्र, चीन, मेसोपोटामिया तथा हड़प्पा (अथवा सिन्धु नदी-घाटी की सभ्यता) की प्रारम्भिक सभ्यताएँ काँस्य-युगीन सभ्यताएँ ही हैं। कालान्तर में इन देशों के लोगों ने लोहे की जानकारी भी प्राप्त कर ली और वहाँ लौह-युगीन सभ्यता की स्थापना हुई। धातुओं के प्रयोग से मनुष्य अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार के औजारों का निर्माण करने में समर्थ हुआ। नये औजारों के प्रयोग से कृषि के अतिरिक्त विभिन्न शिल्प-कलाओं की व्यापक उन्नति हुई। मनुष्य सही अर्थ में सभ्य कहलाने का हकदार हुआ। इस काल में मानव की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्थाओं में परिपक्वता आयी। राज्य, राजा और व्यवस्थित शासन का इसी काल में उदय हुआ। समाज में श्रम-विभाजन के कारण जातियाँ और उपजातियाँ भी बनीं। लेखन-कला का प्रारम्भ भी इसी युग में हुआ। इस प्रकार सभ्यता के निर्माण के अब सभी तत्व इकट्ठे हो गये। ज्ञान-विज्ञान की दिशा में भी मनुष्य ने प्रगति की।

नदी-घाटी सभ्यताओं के केन्द्र–धातु-युग की सभ्यताओं का विकास प्रधानतः नदी-घाटियों में हुआ। अतः इन्हें हम नदी-घाटी सभ्यता (River Valley Civilization) के नाम से जानते हैं। नदी-घाटी सभ्यताओं के मुख्य केन्द्र थे-सिन्धु नदी-घाटी में सैन्धव अथवा हड़प्पा की सभ्यता, नील नदी घाटी में मिस्र की सभ्यता, दजला-फरात की घाटियों में मेसोपोटामिया की सभ्यता तथा ह्वांग-हो, यांगटिंसी और सिकियांग घाटियों में चीन की सभ्यता।

प्राचीन सभ्यताओं का विकास-नदी–घाटियों में ही क्यों? बड़े ही महत्व का प्रश्न है कि प्राचीन सभ्यताएँ नदी घाटियों में ही क्यों पनपी अथवा विकसित हुईं। हम कह सकते हैं कि ऐसा इसलिए हुआ कि इन क्षेत्रों में स्थितियाँ सभ्यता के विकास के अनुकूल थीं। भोजन, वस्त्र तथा आवास मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएँ हैं। इनके अभाव में मनुष्य का जिन्दा रहना असंभव है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मनुष्य को अनिवार्यतः उद्योग करना पड़ता है। इसी क्रम में मनुष्य ने कृषि और पशुपालन का ज्ञान प्राप्त किया। धातु-युगीन सभ्यताएँ कृषि पर आधारित थीं। कृषि के लिए उर्वर-भूमि, उसकी सिंचाई के लिए जल और पशुओं के लिए चारागाह चाहिए।

नदी-घाटियों में प्रचुर मात्रा में उपजाऊ भूमि प्राप्त थी जिस पर आसानी से खेती की जा सकती थी। नदियाँ अपने दोनों किनारों पर उर्वर एवं मुलायम मिट्टी (सिल्ट) बिछा देती हैं जिससे उनके तट-प्रदेश की भूमि बहुत उपजाऊ

नोट

हो जाती है। नव-पाषाण युग में मनुष्य को कृषि के लिए ऐसी ही उपजाऊ और मुलायम भूमि की आवश्यकता पड़ी। नदी-घाटियों में ऐसी भूमि सहज ही प्राप्त थी। अतः मनुष्य नदी-घाटियों में बसने लगा और उसने प्राचीन सभ्यताओं का विकास किया।

कृषि-कार्य सिंचाई पर निर्भर करता है। सिंचाई के मुख्य साधन हैं—वर्षा या नदी का जल। निःसन्देह नदियों से मनुष्य को कृषि के लिए जल उपलब्ध हुआ। उस जल को वह सहज ही अपने खेतों की सिंचाई के लिए प्रयोग में ला सकता था। खेती-बाड़ी के लिए आवश्यक जल नदी-घाटियों में विपुल मात्रा में उपलब्ध था। अतः मनुष्य को नदी-घाटियों में बसने की प्रेरणा प्राप्त हुई।

कृषि-कार्य के साथ-साथ मनुष्य पशुपालन भी करने लगा। पशु कृषि-कार्यों में सहायक होते थे तथा साथ-ही-साथ उनसे दूध, मांस और चमड़े की भी प्राप्ति होती थी। पशुओं को जीवित रखने के लिए चारागाह और जल अनिवार्य था। नदी-घाटियों में इनकी प्रचुरता थी।

नदी-घाटियों की जलवायु सामान्यतः समशीतोष्ण होती है। समशीतोष्ण जलवायु स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद और अधिक परिश्रम के लिए उपयोगी है। अतः, मनुष्यों ने नदी-घाटियों में बसना उचित समझा।

नदियों के पास मनुष्य को मुलायम मिट्टी मिल गयी। ऐसी मिट्टी से वह सहज ही अपने रहने के लिए झोपड़ियों का निर्माण कर सकता था। मुलायम मिट्टी से ईंटों का निर्माण कर वह बड़े भवन भी बना सकता था। दूसरे शब्दों में, नदी-घाटियों में मनुष्य सहज ही अपनी आवासीय समस्या का समाधान कर सकता था। पुनः, नदी-घाटियों में प्राप्त मुलायम मिट्टी से वह बरतन, खपड़े, खिलौने आदि भी बना सकता था।

नदी-घाटियों में प्राकृतिक धातु भी सुलभ थी। जैसा कि उल्लेख किया गया है, प्रारम्भ में मनुष्य को खानों से प्राप्त धातु अयस्कों की जानकारी नहीं थी। वह केवल प्राकृतिक धातुओं का प्रयोग करता था। जिसे नदियों के तटों से जमा किया जाता था। धातुओं के प्रयोग से मानव-सभ्यता के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। इस दृष्टि से भी मनुष्य नदी-घाटियों में बसने के लिए प्रेरित हुआ।

इस संदर्भ में कुछ अन्य कारणों की चर्चा भी की जा सकती है। नदियों के किनारे रहते हुए मनुष्य मछली तथा जल में रहने वाले अन्य जीवों का शिकार भी कर सकता था। नदी तट पर पानी पीने के लिए आने वाले जंगली पशुओं का शिकार करना आसान था। ये सुविधाएँ अन्यत्र उसे कहाँ प्राप्त होतीं?

प्राचीन काल में आज की भांति यातायात के समुन्नत साधनों की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। किन्तु जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उन दिनों भी मनुष्य को एक स्थान से दूसरे स्थान पर आना-जाना अनिवार्य था। नदियां इस दृष्टि से मनुष्यों के लिए बड़ी सहायक थीं। उसने लकड़ी की नाव बनाने की कला सीख ली थी। नदी-मार्ग से वह नाव पर चढ़ कर आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक आ-जा सकता था। भारी वस्तुओं को लाना ले जाना भी नदी मार्ग से अपेक्षाकृत अधिक सहज होता है।

टास्क सिन्धु घाटी, दजला-फरात की घाटी, नील नदी घाटी तथा सिकियांग घाटी सभ्यताओं से जुड़ी अन्य जानकारियाँ प्राप्त कीजिए।

उपर्युक्त कारणों से मनुष्य को नदी-घाटियों में बसने की प्रेरणा मिली। जल्दी ही नदी-घाटियों में उसने उच्च कोटि की सभ्यताओं को जन्म दिया। अब मनुष्य का जीवन व्यवस्थित हो गया था। लोगों को अपनी सारी शक्ति भोजन उत्पन्न करने में नहीं लगानी पड़ती थी। अतः कुछ लोगों ने स्वयं को गणित, धातु—विज्ञान, कला—कौशल तथा ज्ञान—विज्ञान की अन्य शाखाओं के व्यवस्थित अध्ययन और विकास में लगाया। कच्चे मालों की खोज तथा वस्तुओं के विनिमय के लिए अन्य लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित किये गये। इसी क्रम में वाणिज्य—व्यापार का विकास हुआ। लोगों को पानी के समुचित उपयोग के लिए एक साथ मिलकर काम करना पड़ता था। बाढ़ के पानी की निकासी, बाँधों का निर्माण तथा नहरें बनाना आदि कुछ ऐसे कार्य थे जिन्होंने सहकारिता और उन्नत संगठन का पाठ मनुष्य को पढ़ाया।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. मिस्र, चीन, मेसोपोटामिया तथा हड़प्पा सभ्यताएँ ………… सभ्यताएँ थीं।
2. मनुष्य को जिस धातु की पहली जानकारी हुई वह ………… थी।
3. दजला-फरात की घाटी में ………… सभ्यता विकसित हुई।
4. धातु-युग का तीसरा सबसे महत्त्वपूर्ण चरण ………… है।

8.3 नदी-घाटी सभ्यताओं की विशेषताएँ (Features of River-Valley Civilization)

नदी-घाटियों में आज से लगभग छ: हजार वर्ष पूर्व अर्थात् चार हजार ई. पू. के आसपास प्रारम्भिक सभ्यताओं का उदय होने लगा था। ऐसी सभ्यताओं की जानकारी हमें विद्वानों तथा पुरातत्वविदों ने सदियों परिश्रम के बाद दी है। आज भी उनका प्रयास जारी है और भविष्य में हम उनके माध्यम से अनेक नयी बातों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। लगभग पच्चीस सौ ई. पू. भूमध्य सागर और एजियन सागर के आस-पास के क्षेत्र, सिन्धु घाटी, इराक में दजला-फरात की घाटी, चीन में ह्वांग–हो, यांगटिसी और सिकियांग घाटियों तथा मिस्र में नील नदी घाटी में विश्व की प्राथमिक सभ्यताओं का जन्म हुआ। यद्यपि इन सभ्यताओं की अपनी-अपनी अलग विशेषताएँ थीं, किन्तु कुछ बातों में समानता भी देखने को मिलती है। इनमें से प्रत्येक ने संगठित राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्थाओं का विकास किया। धीरे-धीरे कृषि-कार्य संगठित तथा समुन्नत होते गये। सिंचाई की आवश्यकताओं के कारण भी सभ्यता के विकास को सहारा मिला। कृषि योग्य भूमि के निर्माण, बाँध तथा नहरों की व्यवस्था, बाढ़ आदि को नियंत्रित करने का प्रयास, इन सभी कार्यों के लिए बड़े स्तर पर सहकारिता की आवश्यकता हुई। थोड़े से लोग इन कार्यों को सम्पन्न नहीं कर सकते थे। अत: बहुत-से समुदायों ने एक साथ मिलकर एक ऐसी शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता का आधिपत्य स्वीकार किया, जो सहज ही लोगों से अपना आधिपत्य स्वीकार करा सकती थी। इस प्रकार शक्तिशाली राजनीतिक एवं प्रशासनिक संगठनों का जन्म हुआ। साथ ही नगरों का उदय संभव हो पाया। इस प्रकार 'शहरी क्रान्ति' ने मानव जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाए। नगर और गाँवों के जीवन में बड़ा ही फर्क होता है। प्राचीन काल में भी नगरों की विशेषताएँ आज-कल के नगरों की भाँति ही थीं। वे अनाज का उत्पादन नहीं करते थे और गाँव वाले ही उनकी इस कमी को पूरा किया करते थे। नगर के लोगों ने विभिन्न व्यवसायों तथा शिल्पों में निपुणता प्राप्त की। इस प्रकार नगरों में शिल्पियों, व्यापारियों, सैनिकों तथा अधिकारी वर्ग के लोगों का उदय हुआ। विभिन्न पेशे के लोगों ने अपने-अपने कार्यों में दक्षता प्राप्त कर ली। इस प्रकार समाज में श्रम-विभाजन का प्रारम्भ हुआ। नगर का जीवन जटिल होता गया। अत: सार्वजनिक जीवन के नियम के लिए संगठन का जन्म हुआ। कालक्रम में सरकार जैसी संस्था का उदय हुआ। प्रशासनिक कार्यों के संचालन के लिए किसी-न-किसी प्रकार की लिपि का होना अनिवार्य हो जाता है। इस प्रकार लगभग सभी प्राथमिक सभ्यताओं में हम लिपि का विकास पाते हैं। वस्तुत: लिपि से ही ऐतिहासिक युग का प्रारम्भ माना जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

5. नदी घाटियों की जलवायु सामान्यत: समशीतोष्ण होती है।
6. मनुष्य प्रारम्भ से ही खानों से धातु-अयस्क प्राप्त करता था।
7. नदी घाटियों के किनारे बसी सभ्यताएँ उच्च कोटि की थीं।
8. प्राचीन काल में यातायात के समुन्नत साधन मौजूद थे।

नोट

8.4 सारांश (Summary)

- नव-पाषाण युग के अन्त में धातु-युग का प्रादुर्भाव हुआ। इस काल में पृथ्वी के गर्भ में छिपी हुई धातुओं को खोजकर मानव ने जीवन के एक नये आयाम में प्रवेश किया।
- काँसे के निर्माण में पहली बार मनुष्य की बुद्धि में विज्ञान का अभ्युदय हुआ। काँसा का आविष्कार होते ही मनुष्य अपने औजार तथा हथियार इसी मिश्रित धातु से बनाने लगे।
- धातु-युग का तीसरा और सबसे महत्त्वपूर्ण चरण लौह-युग के नाम से मशहूर है।
- धातु-युग में वास्तविक अर्थ में मनुष्य सभ्य बना। इस काल में मानव की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अवस्था में परिपक्वता आयी।
- धातुओं से मानव को एक ऐसी सामग्री मिल गयी जो पत्थर की अपेक्षा अधिक मजबूत थी।
- धातु-युग की सभ्यताओं का विकास प्रधानतः नदी-घाटियों में हुआ। अतः इन्हें हम नदी-घाटी सभ्यता (River Valley Civilization) के नाम से जानते हैं।
- इस काल में मानव की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्थाओं में परिपक्वता आयी। राज्य, राजा और व्यवस्थित शासन का इसी काल में उदय हुआ।
- नव-पाषाण युग में मनुष्य को कृषि के लिए ऐसी ही उपजाऊ और मुलायम भूमि की आवश्यकता पड़ी। नदी-घाटियों में ऐसी भूमि सहज ही प्राप्त थी।
- नदियों के पास मनुष्य को मुलायम मिट्टी मिल गयी। ऐसी मिट्टी से वह सहज ही अपने रहने के लिए झोपड़ियों का निर्माण कर सकता था। मुलायम मिट्टी से ईंटों का निर्माण कर वह बड़े भवन भी बना सकता था।
- कच्चे मालों की खोज तथा वस्तुओं के विनिमय के लिए अन्य लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित किये गये। इसी क्रम में वाणिज्य–व्यापार का विकास हुआ।
- प्राचीन काल में भी नगरों की विशेषताएँ आज-कल के नगरों की भाँति ही थीं। वे अनाज का उत्पादन नहीं करते थे और गाँव वाले ही उनकी इस कमी को पूरा किया करते थे।

8.5 शब्दकोश (Keywords)

- **ताम्र-पाषाणिक काल**—वह युग जिसमें ताँबे की खोज हुई व उसका प्रयोग हुआ।
- **नदी-घाटी सभ्यता**—नदी के दोनों किनारों की उर्वरक व उपजाऊ जमीन पर बसी सभ्यता।

8.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. धातु-युग से आप क्या समझते हैं ? इसके विभिन्न चरणों को बताइए।
2. प्राचीन सभ्यताओं का विकास नदी-घाटी में ही क्यों हुआ ?
3. नदी-घाटी सभ्यताओं की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
4. विभिन्न धातुओं की खोज ने मानव जीवन को कैसे प्रभावित किया ?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. काँस्य युगीन सभ्यताएँ	2. ताँबा	3. मेसोपोटामिया	4. लौह-युग
5. सत्य	6. असत्य	7. सत्य	8. असत्य

नोट

8.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–9: सामाजिक ढाँचे का पुनर्गठन
(The Social Structure Reconstructed)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
9.1 कृषि के क्षेत्र में प्रभाव (Effects in the Field of Agriculture)
9.2 सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र में परिणाम (Effect in Social and Economic Field)
9.3 सारांश (Summary)
9.4 शब्दकोश (Keywords)
9.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
9.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- कृषि के क्षेत्र में आए परिणामों को समझने में।
- सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में आए बदलावों को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

ताँबा, काँस्य और लोहे की खोज ने पाषाण कालीन युग का अन्त कर दिया। इन धातुओं की खोज मानव जाति के लिए इतनी उपयोगी सिद्ध हुई कि इसने मानव जीवन के रहन-सहन के ढंग को ही बदल दिया।

इन खोजों ने मानव जीवन से जुड़े सभी पहलुओं को प्रभावित किया। मानव की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ। कृषि-उपज बढ़ने से जीवन स्तर उच्च हुआ। सामाजिक और आर्थिक जीवन में आधारभूत बदलाव आए। सम्पत्ति का उदय हुआ। जिसके पास अधिक खेत, पशु व उन्नत औजार आदि थे, उन्होंने अपेक्षाकृत गरीब लोगों पर अपना आधिपत्य जमाना शुरू कर दिया।

9.1 कृषि के क्षेत्र में प्रभाव (Effects in the Field of Agriculture)

धातु के नये उपकरणों के दूरगामी परिणाम निकले। सर्वप्रथम, कृषि के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। अब नये प्रकार के हल बनाये गये जिनके निचले हिस्से में धातु की सख्त और नुकीली 'हलवानी' लगाई जाने लगी। इससे भूमि को गहराई तक जोतना सम्भव हो सका। हल के लिए "जूए" (योक) का आविष्कार हुआ जिसमें बैलों को जोता जाने लगा और बैलों की सहायता से हल खिंचवाये जाने लगे। इससे बैलों का महत्त्व बढ़ा। पशुओं के गोबर का खाद के रूप में प्रयोग किया जाने लगा जिससे उत्पादन में वृद्धि हुई।

नोट

क्या आप जानते हैं बैलों का महत्त्व तब बढ़ा, जब हल के लिए 'जूए' (योक) का आविष्कार हुआ।

9.2 सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्र में परिणाम (Effect in Social and Economic Field)

(*i*) **विशिष्ट वर्गों का विकास**–धातु के क्षेत्र में होने वाले नवीन आविष्कारों ने सामाजिक, आर्थिक और अन्य क्षेत्रों को भी प्रभावित किया। इन आविष्कारों ने समाज में बहुत से विशिष्ट वर्गों को विकसित किया जिनमें लुहार, बढ़ई, कुम्हार, सुनार, ठठेरे आदि मुख्य थे। इन वर्गों के सदस्यों ने खाद्यान्न उत्पादन पर अधिक ध्यान न देकर अपनी विशिष्ट सेवाओं का लाभ उठाने के लिये उन्हें अपनी जीविका का मुख्य साधन बना लिया। सामान्य किसान को उनकी सेवाओं का लाभ उठाने के लिए उन्हें पारिश्रमिक देना पड़ा जिसके लिए उसे अधिक उत्पादन करना पड़ा। अर्थात् अब मानव श्रम का विभाजन हो गया। परिणामस्वरूप समाज में जातियाँ और उपजातियाँ अस्तित्व में आने लगीं।

(*ii*) **निजी सम्पत्ति की वृद्धि**–इस युग की एक सबसे महत्त्वपूर्ण घटना थी निजी सम्पत्ति की वृद्धि। निजी सम्पत्ति के सर्वप्रथम रूप पशु, दास, जमीन और काश्त करने के औजार थे। इन पर अपना स्वामित्व प्रकट करने के लिए मुद्राएँ (सील्स) अस्तित्व में आईं और सम्पत्ति की रक्षा के लिए नियम, कानून आदि की आवश्यकता अनुभव हुई।

(*iii*) **शासक वर्ग का उदय**–नियम एवं कानून बनाने तथा उनका पालन करवाने की आवश्यकता ने शासकों और योद्धाओं के वर्ग को विकसित किया। इससे राज्य निर्माण का मार्ग प्रशस्त हो गया। सर्वाधिक सम्पत्ति और दासों का स्वामी अपने समूह का मुखिया बन बैठा और कालान्तर में मुखिया लोग राजा बन गये।

(*iv*) **लेखन कला का आविष्कार**–संभवत: नियमों एवं कानूनों तथा मानव अनुभव को संचित करने तथा आने वाली पीढ़ी को उसे प्रदान करने के लिए लेखन का आविष्कार हुआ। इससे आने वाली पीढ़ियों को काफी लाभ पहुँचा।

(*v*) **स्त्रियों की स्थिति**–इस युग में स्त्रियों की स्थिति को भारी धक्का लगा। धातु से सम्बन्धित आविष्कार पुरुष वर्ग की देन थी जिससे स्त्रियों की तुलना में उसकी अवस्था अच्छी हो गई। अब समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था कायम हो गई। पुरुष परिवार का मुखिया अथवा स्वामी बन गया। परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर उसका स्वामित्व कायम हो गया। इसी के साथ पैतृक वंशानुगत उत्तराधिकार की परम्परा भी चल पड़ी।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. समाज में विभन्न वर्गों के उदय से मानव श्रम का ………… हुआ।
2. सर्वाधिक सम्पत्ति का मालिक अपने समूह का ………… बन गया।
3. धातु युग में स्त्रियों की स्थिति को भारी ………… लगा।

9.3 सारांश (Summary)

- धातु के क्षेत्र में होने वाले नवीन आविष्कारों ने सामाजिक, आर्थिक और अन्य क्षेत्रों को भी प्रभावित किया।
- इस युग की एक सबसे महत्त्वपूर्ण घटना थी निजी सम्पत्ति की वृद्धि।
- सर्वाधिक सम्पत्ति और दासों का स्वामी अपने समूह का मुखिया बन बैठा और कालान्तर में मुखिया लोग राजा बन गये।

नोट

- इस युग में स्त्रियों की स्थिति को भारी धक्का लगा। धातु से सम्बन्धित आविष्कार पुरुष वर्ग की देन थी जिससे स्त्रियों की तुलना में उसकी अवस्था अच्छी हो गई।

9.4 शब्दकोश (Keywords)

- **जुए**–बैलों के कन्धों पर रखकर जोतने के काम आने वाले औजार।

9.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. धातु युग में आए सामाजिक और आर्थिक बदलावों का वर्णन करें।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. विभाजन 2. मुखिया 3. धक्का

9.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–10: राज्य और साम्राज्यों का निर्माण : एक सामान्य परिचय (Formation of States and Empires : A General Introduction)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
10.1 राज्यों का उदय (Rise of State)
10.2 यूनान में नगर-राज्यों का उत्कर्ष (Rise of Urban-State in Athens)
10.3 यूनानी उपनिवेशों की स्थापना (Establishment of Athens's Colony)
10.4 स्पार्टा तथा एथेन्स राज्यों का उत्कर्ष (Rise of State of Sparta and Athens)
10.5 स्पार्टा का नगर-राज्य (Urban-State of Sparta)
10.6 एथेन्स का नगर राज्य (Urban-State of Athens)
10.7 सारांश (Summary)
10.8 शब्दकोश (Keywords)
10.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
10.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- यूनान में नगर-राज्यों के विकास को जानने में।
- स्पार्टा और यूनान में राज्यों के उत्कर्ष को समझने में।
- एथेन्स और स्पार्टा के नगर-राज्यों की व्यवस्था जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

यूनान एक पहाड़ी प्रदेश है। यह अनेक छोटे-छोटे टापुओं में बिखरा पड़ा है। साथ ही इनके बीच आवागमन की कठिनाइयाँ भी रही है। यही कारण है कि प्रारम्भ में छोटे-छोटे नगर-राज्यों की स्थापना हुई। नगर राज्यों के उत्कर्ष के कुछ और भी कारण थे।

नोट

यूनान में आकर बसने वाले आर्यों की अनेक उप-शाखाएँ थी। सबसे पहले **एकीयन** (Achean) जाति के लोग आए। इसके बाद क्रमश: **आयोनियन** (Ionian), **डोरियन** (Dorian) तथा **स्पार्टन** (Spartan) कबीले के लोग आए। धीरे-धीरे यूनान में आर्यों की संख्या बढ़ती गयी। एक समय वह भी आया जब उन्होंने यूनान के मूल निवासी, जो भूमध्यसागरीय अथवा माईसीनियन (Mycenean) जाति के थे, को परास्त कर सम्पूर्ण यूनान पर अपना अधिकार कर लिया। जल्द ही यूनान की मूल जातियों को आर्यों ने आत्मसात कर लिया।

10.1 राज्यों का उदय (Rise of State)

प्राचीन यूनान निवासी आर्य जाति के थे। ये भारतीय-यूरोपीय कुल की एक भाषा बोलते थे। प्रारम्भ में ये दक्षिण-पूर्वी यूरोप के चारागाहों में रहते थे। ये उपयुक्त वास स्थान की खोज में इधर-उधर भटक रहे थे। लगभग दो हजार ई. पू. और पन्द्रह सौ ई. पू. के बीच इनके अनेक कबीले ईजियन क्षेत्र में आकर बस गये। इस प्रकार यूनान में आर्यों का आगमन हुआ, परन्तु उनका यह आगमन किसी आक्रमण के रूप में नहीं हुआ। वस्तुत: वे काफी कम संख्या में थे और धीरे-धीरे यूनान में आकर बस रहे थे। यूनान में आकर बसने वाले आर्यों की अनेक उप-शाखाएँ थीं। सबसे पहले **एकीयन** (Achean) जाति के लोग आए। इसके बाद क्रमश: **आयोनियन** (Ionian), **डोरियन** (Dorian) तथा **स्पार्टन** (Spartan) कबीले के लोग आए। धीरे-धीरे यूनान में आर्यों की संख्या बढ़ती गयी। एक समय वह भी आया जब उन्होंने यूनान के मूल निवासी, जो भूमध्यसागरीय अथवा माईसीनियन (Mycenean) जाति के थे, को परास्त कर सम्पूर्ण यूनान पर अपना अधिकार कर लिया। जल्द ही यूनान की मूल जातियों को आर्यों ने आत्मसात कर लिया। कालान्तर में यूनान की सभी जाति के लोग अपने को हैलेन कहने लगे। हैलेन का अर्थ यूनानी होता था। आज भी यूनानियों के लिए यूनानी शब्द के स्थान पर हैलेन शब्द का व्यवहार अनेक रूपों में किया जाता है।

आर्यों के आगमन का प्रभाव—यद्यपि यूनान में आर्यों की अनेक उपजातियाँ आईं, परन्तु इनमें एकीयन तथा डोरियन जाति का विशेष महत्त्व रहा। एकीयन लोगों ने एथेन्स में अपना प्रभुत्व स्थापित किया और डोरियन जाति ने स्पार्टा को अपने कार्यकलापों का मुख्य केन्द्र बनाया। यूनान में आर्यों के आगमन का सबसे महत्त्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि इस क्षेत्र की प्राचीन ईजियन सभ्यता का अन्त हो गया और पुरानी सभ्यता की समाधि पर एक नयी सभ्यता के भव्य-भवन का निर्माण हुआ। किन्तु इस सम्बंध में इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि केवल भाषा को छोड़कर आर्यों ने अन्य बातों में यूनान के पुराने निवासियों के साथ वैवाहिक सम्बंध भी स्थापित कर लिए। इस प्रकार अब दोनों के बीच कोई अन्तर नहीं रह गया।

क्या आप जानते हैं प्राचीन यूनान वासी आर्य जाति के थे और वे भारतीय-यूरोपीय कुल की एक भाषा बोलते थे।

10.2 यूनान में नगर-राज्यों का उत्कर्ष (Rise of Urban-State in Athens)

नगर-राज्यों की स्थापना के कारण—यूनान एक पहाड़ी प्रदेश है। यह अनेक छोटे-छोटे टापुओं में बिखरा पड़ा है। साथ ही इनके बीच आवागमन की कठिनाइयाँ भी रही है। यही कारण है कि प्रारम्भ में छोटे-छोटे नगर-राज्यों की स्थापना हुई। नगर राज्यों के उत्कर्ष के कुछ और भी कारण थे। प्रारम्भ में यूनानी आर्यों का जीवन भ्रमणशील ढंग का था। किन्तु बाद में लोग गाँव में जाकर स्थायी रूप से बस गये। यद्यपि वे मूलत: पशुपालक थे, परन्तु अब वे कृषि कार्यों में भी दिलचस्पी लेने लगे। प्रारम्भ में इनका कोई कानून नहीं था। कानून का आधार इनकी प्रथाएँ एवं परम्पराएँ थीं। शासन वृद्धों की समिति (Council of Elders) और योद्धाओं की एसेम्बली के द्वारा चलाया जाता था। कुछ शताब्दियों के बाद (1000 ई. पू. से 600 ई. पू. के बीच) गाँवों को मिलाकर नगर-राज्य स्थापित किये गये। इस प्रकार यूनान में अनेक नगरों की स्थापना हुई। इन नगरों में स्वतंत्र शासन की व्यवस्था थी। पहले लोग अपनी

नोट

रक्षा के लिए किलाबन्दी किया करते थे, किन्तु धीरे-धीरे नगरों ने शक्तिशाली राज्यों का रूप धारण कर लिया। इन राज्यों में किले, नगर और आस-पास के गांव भी सम्मिलित थे। ये राज्य **पोलिस** अथवा **नगर-राज्य** कहलाए।

नगर-राज्यों का शासन—नगर-राज्यों की स्थापना प्राचीन यूनान की एक महत्त्वपूर्ण देन मानी जाती है। ये नगर-राज्य एक-दूसरे से पूर्णतः स्वतंत्र थे। प्रत्येक नगर-राज्य की स्वतंत्र शासन व्यवस्था थी। कबीले का सरदार इनका राजा होता था। नगर-राज्यों की शासन पद्धति लोकतंत्रात्मक थी। नगर के बीच में राजा का दुर्ग होता था। उसके आस-पास अन्य नागरिकों के मकान होते थे। राजा एक समिति (Council) तथा एक सभा (Assembly) की सहायता से शासन का संचालन करता था। प्रशासन में कौन्सिल अथवा समिति की प्रधानता थी। बड़े भूपति, सैनिक तथा कृषक समिति के सदस्य होते थे। राजा समिति के परामर्श से ही कार्य करता था। इसकी अनुमति के बिना वह कोई काम नहीं कर सकता था। समिति के पास राजा को पदच्युत करने का भी अधिकार था। नगर रक्षा का भार भी समिति पर रहता था। सभा के सदस्य सभी नागरिक होते थे। यह समिति की भाँति शक्तिशाली संस्था नहीं थी।

> *नोट्स* यूनान के नगर-राज्यों के सभी नागरिक सभा के सदस्य होते थे, लेकिन सभा समिति की भांति शक्तिशाली संस्था नहीं थी।

राष्ट्रीयता की भावना—यूनान में नगर-राज्यों की संख्या कोई डेढ़ सौ की थी। प्रत्येक नगर-राज्य एक-दूसरे से स्वतंत्र था। लोग अपने राज्य को काफी प्रेम करते थे। इसकी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए वे सदा तत्पर रहते थे। नगर-राज्यों के निवासियों को अपनी स्वतंत्रता इतनी प्रिय थी कि इनमें कभी सम्पूर्ण देश की एकता की भावना अथवा शक्तिशाली साम्राज्य की इच्छा उत्पन्न नहीं हुई। फिर भी उनके बीच सम्पर्क के अनेक साधन थे। उनके पूर्वज एक कुल के थे। उनमें भाषाई समानता भी थी। ट्रोजन का युद्ध यूनानियों की कीर्ति समझी जाती थी। **इलियड** तथा **ओडीसी** महाकाव्य उनके राष्ट्रीय साहित्य माने जाते थे। सभी यूनानी होमर को श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। यद्यपि यूनानी अनेक शाखाओं में विभक्त थे फिर भी इनके रहन-सहन, खान-पान, पोशाक, धर्म आदि में समानता भी थी। इनमें एक ही धार्मिक विचार और एक ही देवी-देवताओं की मान्यता, पूजा तथा प्रथा प्रचलित थी। कभी-कभी सम्मिलित रूप से ये धार्मिक अनुष्ठान करते थे। खेल-कूद के माध्यम से भी यूनानियों के बीच एकता का बीजारोपण हुआ। यूनानी प्रत्येक चौथे वर्ष डेलफी में **एपोलो** के मन्दिर के निकट खेल-कूद, दौड़, नाटक इत्यादि के लिए एकत्रित होते थे, जिन्हें ओलम्पिक खेल कहा जाता था। कभी-कभी किसी विशेष प्रयोजन में अनेक नगर-राज्य अपना संघ भी संगठित कर लेते थे। विदेशी शत्रुओं से मुकाबला करने में यूनानी नगर-राज्यों ने बड़ी एकता का परिचय दिया। यूनान के नगर-राज्यों में **एथेन्स** एवं **स्पार्टा** के नगर-राज्य विशेष रूप से उल्लेखनीय थे। भविष्य में इनके नेतृत्व में ही यूनान की सभ्यता का वांछित विकास हुआ।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)—

1. प्राचीन यूनान निवासी द्रविड़ जाति के थे।
2. यूनान की आर्य जाति मूलतः पशुपालक थी।
3. यूनान के नगर-राज्य एक-दूसरे के गुलाम थे।
4. ट्रोजन का युद्ध यूनानियों के लिए कीर्ति समझा जाता है।

10.3 यूनानी उपनिवेशों की स्थापना (Establishment of Athens's Colony)

उपनिवेशों की स्थापना के कारण—800 ई. पू. से 600 ई. पू. के बीच यूनानी नगर-राज्यों की आर्थिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जिनका यूनान के इतिहास एवं सभ्यता पर गहरा प्रभाव पड़ा। यूनानी समाज दो वर्गों में बँट गया। बड़े-बड़े भूपतियों का वर्ग तथा छोटे किसानों का वर्ग। साधारण किसानों की स्थिति असंतोष जनक थी। वे छोटे-छोटे क्षेत्रों में खेती करते थे। कठोर परिश्रम के बावजूद उन्हें जीवन-यापन में काफी कठिनाई उठानी पड़ती थी। बाहरी लोग नगर में जमीन खरीद सकते थे। उनकी कुछ सामाजिक प्रथाएँ ऐसी थी कि चाह कर भी बड़े कुलीन तथा सरदारों के बेटे अपना अलग घर नहीं बसा सकते थे और न ही जमीन-जायदाद खरीद सकते थे। नगर-राज्यों में एक ओर गरीबी बढ़ रही थी और दूसरी ओर प्रजा शासकों की निरंकुशता से पीड़ित थी। अतः सम्पन्न तथा साधन युक्त वर्ग के लोगों ने आजीविका की खोज में तथा अपना पृथक परिवार बसाने के उद्देश्य से पड़ोसी देशों में जाकर यूनानी उपनिवेशों की स्थापना की इस प्रकार एशिया माईनर, उत्तर अफ्रीका, इटली, दक्षिणी फ्रांस आदि देशों में यूनानियों के उपनिवेश स्थापित हो गए। उपनिवेशों की स्थापना के कारणों का विश्लेषण करते हुए **टर्नर** ने लिखा है, "उपनिवेश बसाने का प्रधान कारण व्यापार नहीं, वरन इसमें सामरिक और राजनीतिक प्रवृत्तियाँ सर्वप्रधान थीं। जोखिम उठाने की इच्छा एवं साहसपूर्ण कार्यों के प्रति आकर्षण भी उपनिवेश स्थापित करने का कारण कहा जा सकता है।"

टास्क उन कारणों को खोज कर लिखें जिसके चलते यूनानी लोगों ने उपनिवेश स्थापित किए।

उपनिवेशों की स्थापना के प्रभाव—नव स्थापित उपनिवेश यूनानी सभ्यता एवं संस्कृति के केन्द्र बन गये। उपनिवेशों में यूनानी साहित्य, कला, विधि आदि का व्यापक प्रचार हुआ। इसके अलावा उपनिवेशों की स्थापना से यूनान की व्यावसायिक प्रगति हुई तथा यूनानियों के भौगोलिक ज्ञान का विस्तार हुआ। यूनान के अनेक शहर उद्योगों के प्रधान केंद्र बन गये। जहाज के निर्माण का कार्य तेजी से शुरू हुआ। मुद्रा का प्रचलन भी यूनान में शुरू हो गया। अब वस्तुओं का क्रय-विक्रय वस्तु-विनिमय के माध्यम से नहीं बल्कि मुद्रा के माध्यम से किया जाने लगा। मुद्रा-संग्रह की होड़ शुरू हो गयी। सूद पर ऋण लेने-देने की प्रथा भी चल पड़ी। आन्तरिक तथा विदेशी व्यापार के क्षेत्र में काफी उन्नति हुई। किन्तु इसके कुछ बुरे परिणाम भी हुए। किसान तथा मजदूरों की आर्थिक स्थिति में और गिरावट आयी। समाज में वर्ग-विभेद बढ़ गया। इसके कुछ राजनीतिक परिणाम भी हुए। इस प्रकार उपनिवेशवाद के परिणाम बड़े ही महत्त्वपूर्ण साबित हुए।

धनतंत्र का उदय और सरदारतंत्र का पतन—उपनिवेशों की स्थापना के कारण उद्योग तथा वाणिज्य-व्यवसाय में अभूतपूर्व उन्नति हुई। इस कारण यूनानी समाज में धनतंत्र का उदय हुआ। दास प्रथा को प्रोत्साहन मिला। सिक्कों के प्रचलन से वस्तुओं के क्रय-विक्रय में सुगमता हुई। धनी-वर्ग के लोग मुद्रा-संग्रह करने लगे और सूद पर ऋण देने लगे। उनकी सम्पन्नता और बढ़ गयी। समाज में धनी-मानियों की प्रतिष्ठा और भी बढ़ गयी। अब धनी-वर्ग के लोग राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए बेचैन हो उठे। दूसरी ओर अपनी गरीबी से तंग आकर किसान तथा मजदूर वर्ग के लोग भी तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था में परिवर्तन की मांग करने लगे थे। पुरानी व्यवस्था में वंशानुगत अधिकारों तथा नगरों की रक्षा करने में सामर्थ्य रखने के कारण सरदार वर्ग का बोलबाला था। वे काँस्य निर्मित अस्त्र-शस्त्रों से नगरों की रक्षा करते थे, परन्तु सातवीं शताब्दी ई. पू. तक यूनान में लोहे का प्रयोग होने लगा। लोहा काँसे की अपेक्षा सस्ता और अधिक मजबूत होता है। अब लौह-अस्त्र तथा शस्त्रों की सहायता से साधारण सैनिक भी नगरों की रक्षा कर सकते थे। **लिले** के शब्दों में, "जिस प्रकार काँसा कुलीनतांत्रिक धातु था, उसी प्रकार लोहा जनतांत्रिक धातु सिद्ध हुई।" इन्हीं कारणों से यूनान में जनतांत्रिक शासन का विकास हुआ। अब यूनानी समाज तथा राजनीति में सरदारतंत्र का महत्त्व घट गया और उनका स्थान धनतंत्र ने ले लिया।

यूनान में आततायी युग—धनतंत्र का चरम विकास यूनानियों के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ। समाज में अमीरों और गरीबों के बीच की खाई काफी गहरी हो गयी। अमीर लोग बड़े ही स्वार्थी तथा असीम महत्त्वाकांक्षी होते थे। अपने

नोट

स्वार्थों की पूर्ति तथा हितों की रक्षा के लिए वे शासन-सूत्र पर अपना कठोर नियंत्रण स्थापित रखना चाहते थे। वे निरंकुश तथा प्रजापीड़क बन गये। इस प्रकार यूनान में प्रजापीड़न अथवा आततायी युग का प्रारंभ हुआ। आततायी शासक सर्वथा निरंकुश थे। प्रजा उनके विरुद्ध चूं तक नहीं कर सकती थी। आततायी युग में प्रजा को तरह-तरह की कठिनाइयों और दुखों का सामना करना पड़ा, किन्तु यह सोचना गलत होगा कि इस काल के सभी शासक प्रजापीड़क थे। कुछ ऐसे शासकों का उल्लेख भी मिलता है जिन्होंने हृदय से प्रजा की भलाई की कामना की और इसके लिए प्रयास किया। ऐसे शासकों में **कोरिंथ** का **पेरीयान्डर** तथा **एथेन्स** का **पीसिसट्रैट्स** विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

सावधानी यह सोचना गलत होगा कि आततायी युग के सभी शासक अत्याचारी थे। पेरीयान्डर और पीसिसट्रैट्स ने प्रजा की भलाई के लिए कार्य किया।

लोकहित के कार्य–आततायी युग के अनेक शासकों ने जनहित के महत्त्वपूर्ण कार्य भी किये। भूमि का नये सिरे से बँटवारा किया गया। नए दासों की नियुक्ति पर प्रतिबन्ध लगाकर गरीब यूनानियों को रोजगार दिया गया। गरीब प्रजा को महाजनों के चंगुल से बचाने के लिए नए कानून पास किए गये। अनेक सार्वजनिक संस्थानों की स्थापना की गयी। देश में अनेक महल, दुर्ग, मंदिर, नहर आदि बनाए गए। इस युग में सरदारों की शक्ति बहुत कम कर दी गयी। इन कार्यों के द्वारा यूनान के तथाकथित आततायी शासकों ने यूनान में प्रजातंत्र की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। इस युग में यूनानी साहित्य, कला, धर्म, व्यापार, आदि में व्यापक प्रगति हुई।

आततायी युग का महत्त्व–इतिहासकार **ब्रेस्टेड** के शब्दों में "संसार के इतिहास में अत्याचारियों का युग महान् अध्यायों में से है। समाज, व्यापार और शासन का नेतृत्व करने के लिए परस्पर जो संघर्ष हुआ उससे एक प्रोत्साहन प्राप्त हुआ और युग के योग्यतम व्यक्तियों के मस्तिष्क आश्चर्यजनक रूप से विकसित हुए। उन्होंने परम्परा के बोझ को उतार फेंका तथा विज्ञान और दर्शन के क्षेत्र में प्रवेश किया। यूनान के इस नए शक्तिशाली जीवन की आन्तरिक शक्ति राजनीति, साहित्य और धर्म, स्थापत्य और चित्र-कला, वस्तु-कला, तथा भवन-निर्माण में प्रवाहित हुई।" इस प्रकार अनेक दृष्टिकोणों से यूनान के इतिहास में यह युग महत्त्वपूर्ण है, फिर भी इस युग की त्रुटियों को आंखों से ओझल नहीं किया जा सकता है। लोगों में राष्ट्रीय भावना अथवा देश-प्रेम नहीं था। उदाहरण के तौर पर कहा जा सकता है कि इस भावना की कमी के कारण ही स्पार्टा के लोगों ने फारस के लोगों को एथेन्स पर आक्रमण करने का निमंत्रण दिया और उनकी सहायता से **एगोस्पोटामी** के युद्ध में फारस ने **एथेन्स** को परास्त किया।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

5. नव स्थापित उपनिवेश यूनानी सभ्यता एवं संस्कृति के ············ बन गए।
6. काँसा कुलीन तांत्रिक धातु था लेकिन ············ जनतांत्रिक धातु सिद्ध हुआ।
7. यूनान के तथाकथित आततायी शासकों ने यूनान में ············ की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।
8. उपनिवेश बसाने का प्रमुख कारण ············ नहीं था।

10.4 स्पार्टा तथा एथेन्स राज्यों का उत्कर्ष (Rise of State of Sparta and Athens)

अभी हमने पढ़ा कि किस तरह से धनतंत्र तथा आततायी युग ने यूनान में प्रजातंत्र के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। परन्तु, ऐसा सोचना हमारे लिए भूल होगी कि सारे यूनान में एक तरह की विचारधारा का जन्म हुआ। जहाँ तक प्रजातंत्र के विकास का प्रश्न है, निःसंदेह एथेन्स में हमें इसका चर्मोत्कर्ष देखने को मिलता है, किन्तु दूसरी ओर स्पार्टा में हम घोर निरंकुशवाद को फलते-फूलते देखते हैं। वस्तुतः इस काल में स्पार्टा तथा एथेन्स के नगर-राज्यों

नोट

में दो विरोधी विचारधाराओं का उदय हुआ। दोनों के आदर्श और दृष्टिकोण एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न थे। स्पार्टा ने दैहिक बल, सैनिक शक्ति तथा सार्वजनिक प्रमुख में अटूट विश्वास व्यक्त किया। दूसरी ओर, एथेन्स ने कला कमनीयता तथा सुन्दरता को अपना आदर्श बनाया। स्पार्टा ने सैनिकतंत्र का और एथेन्स ने लोकतंत्र के पथ का आलिंगन किया। स्वाभाविक था कि एथेन्स की शक्ति एवं समृद्धि अपेक्षाकृत अधिक बढ़ी।

सावधानी यह सोचना कि पूरे यूनान में प्रजातांत्रिक विचारधारा फैली थी, एक भूल होगी। क्योंकि स्पार्टा में घोर निरंकुशवाद फल-फूल रहा था।

10.5 स्पार्टा का नगर-राज्य (Urban-State of Sparta)

भौगोलिक प्रभाव—स्पार्टा का नगर-राज्य यूनान के प्रायः सभी नगर राज्यों से भिन्न था। इसका एक कारण यह था कि इसकी भौगोलिक स्थिति ही ऐसी थी। स्पार्टा दक्षिण यूनान में स्थित है। पर्वत-श्रेणियाँ इसे अन्य राज्यों से अलग करती हैं। यहाँ के निवासी यूनानी आर्यों के डोरियन शाखा के लोग थे। स्पार्टा का नगर-राज्य चारों ओर से शत्रु नगर-राज्यों से घिरा हुआ था। इसलिए स्पार्टावासियों को असीरिया के लोगों की तरह अपनी रक्षा के लिए सैनिक शक्ति को बढ़ाना आवश्यक था। वे इस बात को छोड़कर दूसरी ओर ध्यान देने में असमर्थ रहे।

स्पार्टा के लोगों के सैनिक जीवन का स्वरूप—स्पार्टा एक सैनिक राज्य था। स्पार्टा के निवासियों की सबसे अधिक अभिरुचि सैन्यवाद और युद्ध में थी। राज्य के सभी नागरिक सैनिक होते थे। स्पार्टा का सारा समाज एक सेना थी। प्रत्येक स्पार्टी को बाल्यावस्था से ही अनिवार्य रूप से सैनिक शिक्षा दी जाती थी। कभी-कभी तो लड़कियों को भी ऐसी शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती थी। देश की सुरक्षा के उद्देश्य से नागरिकों के शारीरिक विकास पर विशेष ध्यान दिया जाता था। ज्ञान-विज्ञान, साहित्य तथा कला-सम्बन्धी बातें उनके लिए व्यर्थ थीं। इसी कारण वे सात वर्ष की अवस्था से ही अपने बच्चों को कठिनाइयाँ और कष्ट सहन करने का अभ्यास कराते और उन्हें कुशल योद्धा बनाने के लिए प्रशिक्षण देते थे। यही उनकी शिक्षा थी। बच्चों के स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। दुर्बल और रोगी बच्चों को जीने का कोई अधिकार नहीं था। बच्चों के पालन-पोषण के लिए सरकार की ओर से व्यवस्था थी। सात वर्ष की उम्र से बच्चों को सरकारी संरक्षण में रहना पड़ता था। साठ वर्ष के बाद ही लोगों को स्वतंत्र रूप से पारिवारिक जीवन व्यतीत करने की अनुमति दी जाती थी। सात से साठ वर्ष की उम्र के सभी नागरिकों को अपना सारा जीवन सैनिक बैरकों में व्यतीत करना पड़ता था। उनका जीवन अत्यन्त अनुशासित एवं नियन्त्रित था। राज्य में भोग-विलास को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था। वाणिज्य-व्यवसाय पर प्रतिबन्ध लगे हुए थे। ऐसा इसलिए कि इसके चलते धन-दौलत में वृद्धि होती है और समाज में विलासिता आती है। सोना और चाँदी के सिक्के भी वर्जित थे। स्पार्टा में लोहे के सिक्कों का प्रचलन था जिससे लोग बड़ी संख्या में सिक्के संग्रहीत न कर सकें। विवाह आदि में भी कड़ाई बरती जाती थी जिससे नस्ल और रक्त की शुद्धता बनी रहे।

शासन-व्यवस्था—स्पार्टा में शासन-सत्ता कुछ थोड़े-से लोगों के हाथों में केंद्रीभूत थी। प्रजा के ऊपर इनका पूरा अधिकार और कठोर नियंत्रण था। नागरिक के खाने-पीने की व्यवस्था, हेलोट्स (Heloots) लोगों के द्वारा की जाती थी, जो केवल शारीरिक श्रम करते थे वे गैर-नागरिक लोग थे और उन्हें किसी प्रकार का नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं था। आर्थिक दृष्टि से उनकी हालत दयनीय थी।

राजा—शासन का प्रधान राजा होता था। स्पार्टा में दो राजा होते थे जिससे राजतंत्र निरंकुश नहीं बन सकता था और सामन्तों का प्रभुत्व सदा बना रहता था। इन दोनों राजाओं को समान अधिकार प्राप्त थे और वे एक-दूसरे पर नियंत्रण स्थापित रखते थे। स्पार्टा के राजाओं का मुख्य कार्य सेना का नेतृत्व करना था। राजा मुख्य पुरोहित भी हुआ करते थे।

जेरूसिया, अपीला और एफर्स—वस्तुतः स्पार्टा की शासन-प्रणाली कुलीनतंत्र थी। कुलीन व्यक्तियों की एक परिषद् और एक सभा शासन-कार्य में राजा को सहयोग देती थी। कुलीनों की सभा **जेरूसिया** (Gerusia) कहलाती थी। इनमें 28 सदस्य होते थे। समिति को **अपीला** (Appela) कहा जाता था। स्पार्टा के सभी साधारण नागरिक जो 30

नोट

वर्ष की उम्र पार कर गये हों, इसके सदस्य होते थे। इसके अलावा नागरिकों द्वारा चुने हुए पाँच मजिस्ट्रेट होते थे जिन्हें एफर्स (Ephors) कहा जाता था। राज्य का शासन चलाने का वास्तविक उत्तरदायित्व इन्ही पर था। स्पार्टा का कोई भी नागरिक एफर्स के पद पर नियुक्त किया जा सकता था। एफर्स के अधिकार अत्यन्त व्यापक थे। वे राज्य तथा नागरिक संस्थाओं के संरक्षक होते थे। जेरूसिया के सदस्यों का चुनाव अपीला करती थी।

शासन का स्वरूप—स्पष्ट है कि स्पार्टा के शासन का स्वरूप मिश्रित था। न तो यह पूरी तरह से राजतन्त्रात्मक थी, न कुलीनतंत्र और न ही गणतान्त्रिक। फिर भी एक बात सत्य है कि शासन सेना द्वारा सेना के हितों को ध्यान में रखकर ही चलाया जाता था।

लाइकरगस के सुधार—नवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध (825 ई. पू.) स्पार्टा में लाइकरगस (Lycurgus) नाम का एक प्रसिद्ध विद्वान हुआ, जो स्पार्टा का प्रमुख व्यवस्थापक और विधि-निर्माता था। नगर राज्य में सुरक्षा स्थापित करने तथा अनुशासन लाने के लिए उसने अनेक सुधार किए। उसी ने स्पार्टा में एक साथ दो राजाओं का शासन किया। ये दोनों राजा जेरूसिया के अधीन थे। एक तीसरी सभा की व्यवस्था की गयी जिसमें तीस वर्ष और अधिक उम्र के सभी नागरिक सदस्य होते थे। यही सभा एफर्स तथा जेरूसिया के सदस्यों का चुनाव करती थी।

स्पार्टा की उपलब्धियों का मूल्यांकन—इस प्रकार हम देखते हैं कि लाइकरगस की प्रणाली में राजतंत्र, कुलीनतंत्र और गणतंत्र तीनों का समावेश था। यह प्रणाली अवरोध और संतुलन के सिद्धान्त पर आधारित थी, परन्तु अत्यन्त कठोर अनुशासन एवं नियंत्रण ने स्पार्टावासियों की आत्मा और मस्तिष्क के उन उच्चतर गुणों से वंचित रखा जो मनुष्य को पशुओं से ऊँचा उठाते हैं। निःसंदेह स्पार्टा के लोगों की शारीरिक शक्ति अतुल्य थी, उनकी सैनिक व्यवस्था अद्वितीय थी, लोग राजभक्ति, देश-प्रेम तथा आत्मविश्वास की भावनाओं से ओतप्रोत थे, परन्तु सभ्यता-संस्कृति के अन्य क्षेत्रों में उनकी प्रगति गौण रही। यूनान की संस्कृति के निर्माण में उनका योगदान नगण्य रहा है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

9. ज्ञान-विज्ञान, साहित्य और कला की बातें स्पार्टा के लोगों के लिए ·········· थी।
   (क) लाभदायक (ख) व्यर्थ
   (ग) उच्च (घ) सामान्य
10. सात से साठ वर्ष का जीवन नागरिकों को ·········· में व्यतीत करना पड़ता था।
   (क) जेल (ख) घर
   (ग) सैनिक बैरक (घ) विदेश
11. स्पार्टा में ·········· राजा होते थे।
   (क) तीन (ख) पाँच
   (ग) एक (घ) दो
12. समिति (अपीला) के सदस्यों की उम्र ·········· वर्ष या ऊपर होती थी।
   (क) 30 (ख) 20
   (ग) 18 (घ) 25

10.6 एथेन्स का नगर राज्य (Urban-State of Athens)

एथेन्स एवं स्पार्टा में भिन्नता—एथेन्स का उत्कर्ष स्पार्टा से सर्वथा भिन्न था। यूनानी आर्यों की आयोनियन शाखा के लोग एथेन्स के नगर राज्य के संस्थापक थे। स्पार्टा और एथेन्स के आदर्शों में जमीन-आसमान का अन्तर था। यदि स्पार्टा एक विशाल सैनिक शिविर था तो एथेन्स मनीषियों और विचारकों का एक महान् शिक्षालय। स्पार्टा ने अपनी स्थल सेना की शक्ति का अद्वितीय विस्तार किया तो एथेन्स ने नौ-सैनिक शक्ति का।

एथेन्स के राज्य का उत्कर्ष–एथेन्स के नगर राज्य का विकास शांतिपूर्वक तरीके से धीरे-धीरे हुआ। एथेन्स एटिका प्रांत में स्थित है। तेरहवीं शताब्दी ई. पू. में थिसियस नामक शासक ने एरिका क्षेत्र के बारह छोटे राज्यों को संगठित कर एथेन्स के नगर-राज्य की स्थापना की। इस राज्य की राजधानी एथेन्स थी।

एथेन्स की शासन प्रणाली–एथेन्स नगर **आक्रोपौलिस** दुर्ग के चारों ओर बसा हुआ था। आक्रोपोलिस में एथेन्स का मुख्य बाजार तथा **देवी-एथेनी** का मंदिर स्थित था। आरंभ में एथेन्स में राजाओं का बोलबाला था। आठवीं से छठी शताब्दी ई. पू. तक वहाँ सरदारतंत्र स्थापित रहा।

बाउल एवं अगोरा–सरदार दो संस्थाओं की सहायता से शासन चलाते थे–**'बाउल'** तथा **'अगोरा'**। बाउल एक उच्च समिति थी जिसमें प्रत्येक कबीला अपने मुखिया को सदस्य के रूप में भेजता था। बाउल प्रशासन में सर्व-शक्तिशाली 'अगोरा' लोकसभा की तरह दूसरी प्रसिद्ध संस्था थी। एथेन्स के सभी नागरिक अगोरा के सदस्य होते थे। अगोरा का काम केवल बाउल के निर्णयों का अनुमोदन करना था।

10.7 सारांश (Summary)

- नगर-राज्यों की स्थापना प्राचीन यूनान की एक महत्त्वपूर्ण देन मानी जाती है। ये नगर-राज्य एक-दूसरे से पूर्णत: स्वतंत्र थे।
- यूनान में नगर-राज्यों की संख्या कोई डेढ़ सौ की थी। प्रत्येक नगर-राज्य एक-दूसरे से स्वतंत्र था। लोग अपने राज्य को काफी प्रेम करते थे। इसकी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए वे सदा तत्पर रहते थे।
- यूनानी प्रत्येक चौथे वर्ष डेलफी में **एपोलो** के मन्दिर के निकट खेल-कूद, दौड़, नाटक इत्यादि के लिए एकत्रित होते थे, जिन्हें ओलम्पिक खेल कहा जाता था।
- सम्पन्न तथा साधन युक्त वर्ग के लोगों ने आजीविका की खोज में तथा अपना पृथक परिवार बसाने के उद्देश्य से पड़ोसी देशों में जाकर यूनानी उपनिवेशों की स्थापना की।
- धनतंत्र का चरम विकास यूनानियों के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ। समाज में अमीरों और गरीबों के बीच की खाई काफी गहरी हो गयी।
- स्पार्टा का नगर-राज्य यूनान के प्राय: सभी नगर राज्यों से भिन्न था। इसका एक कारण यह था कि इसकी भौगोलिक स्थिति ही ऐसी थी। स्पार्टा दक्षिण यूनान में स्थित है।
- स्पार्टा एक सैनिक राज्य था। स्पार्टा के निवासियों की सबसे अधिक अभिरुचि सैन्यवाद और युद्ध में थी। राज्य के सभी नागरिक सैनिक होते थे। स्पार्टा का सारा समाज एक सेना थी।
- स्पार्टा में शासन-सत्ता कुछ थोड़े-से लोगों के हाथों में केंद्रीभूत थी। प्रजा के ऊपर इनका पूरा अधिकार और कठोर नियंत्रण था।
- स्पार्टा के शासन का स्वरूप मिश्रित था। न तो यह पूरी तरह से राजतन्त्रात्मक थी, न कुलीनतंत्र और न ही गणतान्त्रिक। फिर भी एक बात सत्य है कि शासन सेना द्वारा सेना के हितों को ध्यान में रखकर ही चलाया जाता था।
- एथेन्स का उत्कर्ष स्पार्टा से सर्वथा भिन्न था। यूनानी आर्यों की आयोनियन शाखा के लोग एथेन्स के नगर राज्य के संस्थापक थे।
- एथेन्स के नगर राज्य का विकास शांतिपूर्वक तरीके से धीरे-धीरे हुआ। एथेन्स एटिका प्रांत में स्थित है।
- आरंभ में एथेन्स में राजाओं का बोलबाला था। आठवीं से छठी शताब्दी ई. पू. तक वहाँ सरदारतंत्र स्थापित रहा।

10.8 शब्दकोश (Keywords)

- **आततायी**–तानाशाह, मनमाने व निरंकुश ढंग से शासन चलाने वाला।

नोट

- **उत्कर्ष**–उन्नति, विकास की प्रक्रिया।
- **उपनिवेश**–आर्थिक, व्यापारिक कारणों के चलते अपने देश से निकल दूसरी जगह में बसना या कब्जाना।

10.9 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. प्राचीन यूनान के नगर-राज्यों की शासन व्यवस्था कैसी थी ?
2. यूनानी उपनिवेशों की स्थापना के पीछे क्या कारण था ?
3. आततायी युग यूनान के विकास के लिए हानिकारक था, कैसे ?
4. स्पार्टा के नगर-राज्य की विशेषताएँ बताइए।
5. स्पार्टा और एथेन्स के नगर-राज्यों में मुख्य अन्तर क्या थे ?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. असत्य	2. सत्य	3. असत्य	4. सत्य
5. केन्द्र	6. लोहा	7. प्रजातंत्र	8. व्यापार
9. (ख)	10. (ग)	11. (घ)	12. (क)

10.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–11: पर्शिया (ईरान) का साम्राज्य
(The Persian Empire)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
11.1 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)
11.2 शासन-व्यवस्था (Governing System)
11.3 सामाजिक अवस्था (Social Condition)
11.4 आर्थिक अवस्था (Economic Condition)
11.5 सांस्कृतिक अवस्था (Cultural Condition)
11.6 सारांश (Summary)
11.7 शब्दकोश (Keywords)
11.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
11.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पर्शिया (ईरान) की शासन व्यवस्था को जानने में।
- पर्शिया साम्राज्य की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अवस्था को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पश्चिमी एशिया के जिन देशों में सभ्यता-संस्कृति के आरम्भिक चरण के दर्शन हुए हैं, इनमें ईरान को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। विश्व इतिहास के साथ-साथ मानव सभ्यता के इतिहास में ईरान की सभ्यता, जिसे पर्शिया की सभ्यता (Persian Civilization) भी कहते हैं, अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है। आज भी 'पैसारगेड' या 'पर्सीपोलिस' के खंडहर उनके वैभव तथा महान सम्राटों का गुणगान करते प्रतीत होते हैं। अभी तक हम सेमेटिक जातियों के नेतृत्व में अनेक सभ्यताओं का विकास पाते हैं लेकिन ईरान की सभ्यता ने आर्य जाति के नेतृत्व में एक नया कीर्तिमान भी स्थापित किया।

11.1 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)

ईरान का भूगोल–ईरान का मूल वास्तविक नाम 'एर्यान' है जिसका अर्थ आर्यों की भूमि है। ईरान का प्राच्य नाम 'पर्शिया' भी है जो प्राचीन शब्द 'पार्स' तथा फार्स (Fars) से बना है। इसी शब्द से पर्सिस शब्द भी बना है जो

नोट

बाद में 'फारसी' हो गया। ईरान को भौगोलिक दृष्टि से तीन भागों में बाँटा गया है–(*i*) उत्तरी ईरान, (*ii*) मध्यवर्ती ईरान और (*iii*) पश्चिमी तथा दक्षिणी ईरान।

उत्तरी ईरान–पूर्व में सिन्धु नदी घाटी से लेकर दजला नदी की घाटी तक का फैला हुआ पठारी भाग उत्तरी ईरान के नाम से जाना जाता है। इसके उत्तर में कैस्पियन सागर, एलबुर्ज और कुपेहदाध का पर्वत, दक्षिण पूर्व में फारसी बलूचिस्तान, अफगानिस्तान तथा हेलमंडन स्थित है। यहाँ का प्रसिद्ध नगर 'मेशेद' है जो ईरान का धार्मिक स्थल है।

मध्यवर्ती ईरान–मध्यवर्ती ईरान के उत्तर में नमक तथा दक्षिण में लूट का रेगिस्तान है। यह संसार का सबसे बड़ा सूखा प्रदेश माना जाता है, किंतु यहाँ की जमीन अधिक कृषि योग्य है। यहाँ रेगिस्तान के बावजूद कृत्रिम सिंचाई की समुचित व्यवस्था है। इसके प्रमुख शहरों में तेहरान, इस्फहान और हमादान आदि का नाम आता है।

पश्चिमी तथा दक्षिणी ईरान–ईरान के पश्चिम में दक्षिण की ओर 'जगरोश पर्वत' और 'मकरान' पर्वत है। दक्षिण-पश्चिम का भाग 'करूथ' नदी से सिंचित प्रदेश है। ईरान के दक्षिण की ओर फारस की खाड़ी और अरब सागर है। प्राचीनकाल में यहाँ 'एलम' या 'सूसियाना' का प्रदेश था जिसकी राजधानी 'सूसा' ईरान की सभ्य और वैभवपूर्ण नगरी थी।

ईरान की आदि जातियाँ–विद्वानों का मत है कि अति प्राचीन काल में ईरान में द्रविड़ जातियाँ निवास करती थीं। दूसरी सहस्त्राब्दी ई. पू. में ईरान पर आर्य इरानियों ने आक्रमण किया और वहीं बस गये, जो इन्डो-यूरोपियन परिवार की शाखा के सदस्य थे। 3000 ई. पू. के अन्त में भारत से लेकर यूरोप तक इंडो-यूरोपियन परिवार अथवा आर्य जाति के सदस्य निवास करते थे। एकरिल, डोरियन, रोमन, केल्ट आदि इसी परिवार की शाखाएँ थीं। पश्चिमी एशिया के हित्ती, कस्साइट और मितान्नी जातियों के शासक भी आर्य ही थे। उस समय ईरान में दो जातियाँ निवास करती थीं–पूर्वी भाग में ईरानी लोग यानि आर्य और उत्तर पश्चिम में मीड जाति के लोग। इस प्रकार हम देखते हैं कि अति प्राचीनकाल में ईरान में आर्य लोग ही निवास करते थे।

ईरानी इतिहास जानने के साधन–ईरानियों के इतिहास एवं सभ्यता-संस्कृति पर प्रकाश डालने वाले साक्ष्य बहुत कम हैं। उनके हरवामशी युग के पूर्व अभिलेख अभी तक अनुपलब्ध हैं, इसलिये प्राचीनतम युग के इतिहास को जानने के लिए मुख्यत: इतिहास पर निर्भर रहना होता है। साहित्यिक ग्रन्थों के रूप में 'अवेस्ता' का नाम लिया जाता है। इसका उनके इतिहास में वही स्थान है जो भारत में वेदों का है। इसके अलावा 'यस्न' नामक ग्रन्थों से भी हमें अत्यल्प ही सही जानकारी मिलती है, साथ ही साथ हेरोडोटस की 'हिस्ट्री' तथा अन्य यूनानी लेखकों के वर्णन से भी हमें ईरानी इतिहास को जानने में सहायता मिलती है।

क्या आप जानते हैं भारत के इतिहास में जो महत्त्व वेदों का है वही महत्त्व ईरान में 'अवेस्ता' का है।

ईरान का राजनीतिक इतिहास–प्राचीन ईरानी इतिहास को अध्ययन की सुविधा की दृष्टिकोण से सात भागों में विभाजित किया जा सकता है, यथा–

(1) पिशदादिकाल–(4000-2000 ई. पू. तक)

(2) किमानी काल–(2000-1000 ई. पू. तक)

(3) मादिया (मीडियन) काल–(850-600 ई. पू. तक)

(4) हरवामशी काल–(600-325 ई. पू. तक)

(5) यूनानी काल–(355-120 ई. पू. तक)

(6) पार्थियन काल–(125-229 ई. तक)

(7) ससैनियन काल–(625-651 ई. तक)

पिशद्वादि तथा किमानी काल–4000 ई. पू. से लेकर 2000 ई. पू. तक का काल इस युग के अन्तर्गत आता है। इसके विषय में हमें अत्यल्प जानकारी है। दूसरी सहस्त्राब्दी ई. पू. की आरम्भिक शताब्दियों तक ईरानी आर्य उपनिवेश

नोट

बसाने में संलग्न रहे। इस कार्य हेतु उन्होंने अपने को कई शाखाओं में बाँट लिया। जिनमें मीडियन्स, जिकीर्ज, पर्सियन्स, अबस्ती, ड्रेजन, बैक्ट्रीयन, मारजियन, कस्साइट आदि की जातियाँ आती हैं। ये समस्त जातियाँ अपनी प्रभुता के लिए संघर्षरत रहती थी। इस प्रकार अन्त में पिशदादि और किमानी जाति ने अपने को सुदृढ़ किया।

मादिया (मीडियन) काल—ईरान के इतिहास में मीडियन का बहुत अधिक महत्त्व है। मीडिया ईरान का उत्तरी पश्चिमी भाग था जिसकी राजधानी 'हगमतान' जिसे आजकल 'हमदन' कहते हैं, थीं। इसका क्षेत्र 80 वर्ग मील था। इसमें अनेक प्रतिभाशाली शासक हुए जिनमें डियोकीज (Deioces), सायाजरस (Cyaxaras), अष्टागीज (Astyagees) का नाम प्रमुख है। इस युग का अंतिम शासक अष्टागीज अधिक विलासी था। उसके शासनकाल में सात प्रान्त के शासक कैम्बीसस प्रथम ने अपनी शक्ति और प्रभुता बढ़ा ली, जिससे प्रभावित होकर अष्टागीज ने अपनी पुत्री से उसका विवाह कर दिया। परन्तु कैम्बीसस प्रथम के पुत्र कुरुष द्वितीय (साइरस) ने अपने असंतुष्ट सामन्तों से मिलकर 553 ई. पू. में विद्रोह कर दिया तथा 500 ई. पू. के आस-पास मीडिया को अपने अधीन कर लिया।

हरवामशी काल—हरवामशी काल का आरम्भ विद्वानों ने 650 ई. पूं. के लगभग माना है 'हरवामश' इस वंश का संस्थापक था। हरवामश ने अपनी प्रतिभा और शौर्य से एक उच्च कोटि का साम्राज्य स्थापित किया। उसके बाद उसका पुत्र 'तिशपीज' (Tispes) गद्दी पर बैठा। उसके बाद उसके दो पुत्रों के कारण राज्य दो भागों में विभक्त हो गया। साइरस प्रथम को 'अन्सार' और 'पशुमय' तथा दूसरे पुत्र 'अरिम्यान' को फार्स का राज्य मिला। यहीं से हरवामशी की दो शाखाएँ प्रचलित हो गईं। साइरस प्रथम के पुत्र कैम्बीसस प्रथम ने अपनी दूसरी शाखा पर विजय प्राप्त कर ली और वहाँ के राजा की पुत्री से शादी की। उसके बाद उसका पुत्र कुरुष या साइरस द्वितीय ने गद्दी प्राप्त की और हरवामशी साम्राज्य के वैभव को बढ़ाया। उसका शासनकाल 558 ई. पू. से 529 ई. पू. तक माना जाता है। उसने अपने राज्यकाल में मीडिया, यूनानी, उपनिवेश, उत्तरपूर्व और पूर्व प्रदेश, बेबीलोन, सीरिया, फिनिसिया आदि प्रदेशों पर विजय प्राप्त की। उसका ईरानी इतिहास में वही स्थान है जो भारत के इतिहास में चन्द्रगुप्त मौर्य का है।

> *नोट्स* प्राचीन ईरान के शासक साइरस को ईरानी इतिहास में वही स्थान प्राप्त है, जो भारतीय इतिहास में चन्द्रगुप्त मौर्य को है।

साइरस द्वितीय के बाद उसका पुत्र कैम्बीसस द्वितीय गद्दी पर आसीन हुआ। उसका एक छोटा भाई था जिसकी हत्या उसने गुप्त रूप से करवा दी ताकि राज्य का सम्पूर्ण हिस्सा उसे ही प्राप्त हो। उसके उदासीन तथा जन-विरोधी व्यवहार से जनता ने विद्रोह कर दिया और उसे 522 ई. पू. में आत्महत्या करनी पड़ी। उसकी मृत्यु के बाद सात अमीरों ने मिलकर 'डेरियस' (दारा) को गद्दी पर बैठाया। डेरियस की गणना विश्व के महान शासकों में की जाती है। वह 521 ई. पू. में गद्दी पर बैठा। उसने मिस्र, लीडिया, सुसियाना, मीडिया, बेबीलोनिया, असीरिया आदि से भीषण युद्ध करके विशाल साम्राज्य का निर्माण किया था। 512 ई. पू. उसने थ्रेस और मेसीडोन पर, 510 ई. पू. में भारत के पंजाब और सिन्ध प्रान्त पर आधिपत्य स्थापित किया था। 490 ई. पू. में वह मरेथान के युद्ध में पराजित भी हुआ था। 468 ई. पू. के मिस्र विद्रोह को दबाने के क्रम में उसकी मृत्यु हो गई।

ईरान का पतन—डेरियस की मृत्यु के बाद उसका पुत्र क्षयार्ष गद्दी पर बैठा, लेकिन 466 ई. पू. के आस-पास उसकी हत्या कर दी गई। क्षयार्ष के बाद उसके छोटे पुत्र जरेक्सीज ने 466-425 ई. पू. तक शासन किया। 425 ई. पू. से साम्राज्य के पतन 336 ई. पू. के बीच में डेरियस द्वितीय, कुरुष, जरेक्सीज द्वितीय तथा डेरियस तृतीय ने शासन किया। लेकिन 336 ई. पू. के आस-पास ही अलेक्जेण्डर (सिकन्दर महान) ने हरवामशी वंश और साम्राज्य का अन्त किया। इस प्रकार सिकन्दर महान के द्वारा हरवामशी काल का पतन हो गया। एक इतिहासकार के शब्दों—"साइरस और डेरियस ने फारस (ईरान) को बनाया, जरेक्सीज ने उसे चलाया और उसके उत्तराधिकारियों ने उसे नष्ट कर दिया।"

नोट

11.2 शासन-व्यवस्था (Governing System)

विशाल साम्राज्य–हरवामशी साम्राज्य की शासन-व्यवस्था काफी सुदृढ़ थी। इस साम्राज्य की स्थापना विश्व साम्राज्य की स्थापना का महान प्रयत्न थी। इस साम्राज्य के अन्तर्गत ईरान, बेबीलोनिया, मीडिया, फिनिशिया, फिलीस्तीन, सीरिया, मिस्र, एशियामाइनर, भारतीय और यूनानी संस्कृति का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। केवल चीन को छोड़कर विश्व के समस्त सांस्कृतिक देशों का कुछ भाग इसमें अवश्य सम्मिलित था। इस प्रकार हरवामशी वंश के शासकों ने अपने शौर्य और प्रताप से इस विशाल साम्राज्य की स्थापना कर ली थी। इस साम्राज्य का शासन दो भागों में विभक्त था–केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शासन।

केन्द्रीय शासन

सम्राट–ईरान के साम्राज्य का सबसे बड़ा पदाधिकारी सम्राट होता था। वह सर्वोच्च सत्ता सम्पन्न होता था। उसका प्रत्येक शब्द कानून था। वह बिना वजह किसी को दण्ड भी दे सकता था तथा किसी को उच्च पद पर बैठा भी सकता था। उनकी आज्ञा का उल्लंघन निषेध था। उसके अधिकार विस्तृत थे। हालाँकि वह स्वेच्छाचारी होता था। बावजूद इसके उसे विधि निषेधों, कौटम्बिक प्रथाओं और परम्पराओं का पालन करना पड़ता था। अपने द्वारा दिये वचनों का पालन उसे करना पड़ता था। उसे राजकीय कार्यों के सम्पादन हेतु सामन्त से परामर्श भी लेना होता था, लेकिन वे सामन्त के परामर्श को अस्वीकार भी कर सकते थे।

राज्य सभा–हरवामश वंश के शासकों ने एक विशाल राज्य सभा का प्रबन्ध भी किया था, जिसका मुख्य उद्देश्य शासन-सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करना था। राज्य सभा का अध्यक्ष राजा होता था। उसकी राज्यसभा में सामन्त, अंगरक्षक, गुप्तचर, प्रतिहार तथा दूत आदि सदस्य होते थे। राज्यसभा का खर्च राजकोष से दिया जाता था, परन्तु ये राज्यसभा कुछ विशेष अवसर पर ही आयोजित होती थी।

सामन्त समुदाय–फारस की सामन्तवादी व्यवस्था राज्य की शासन-व्यवस्था का मूलाधार थी। राज्य में छः सामन्त वंश मुख्य थे। ये सामन्त राजा को परामर्श एवं सहयोग दिया करते थे। इन सामन्तों को राज्य की ओर से विशेषाधिकार भी प्रदान किया गया था। ये बड़े-बड़े भूमि के स्वामी थे तथा छोटे राजाओं की तरह अपने क्षेत्र पर शासन करते थे। इन्हें कर लगाने तथा न्याय करने का भी अधिकार प्राप्त था। इन सामन्तों के पास निजी सेवाएँ भी होती थीं।

सैन्य-व्यवस्था–ईरानी सेना साम्राज्य के मूलाधार के रूप में जानी जाती थी। सेना का केन्द्रबिन्दु सम्राट होता था। राजा की रक्षा हेतु 2000 पदाति, 2000 घुड़सवार सैनिक नियुक्त थे। इसके अलावा 10000 मीडो और ईरानियों का 'अमरदल' था जो किसी भी समय युद्ध के लिए तत्पर रहता था। इस प्रकार फारस की सेना के दो दल थे–अंगरक्षक दल तथा अमर दल।

युद्ध के समय राजा प्रान्तीय सेना भी बुला सकता था। इस अवसर पर राज्य के 15 वर्ष की आयु वाले प्रत्येक व्यक्ति को अनिवार्य सैनिक शिक्षा दी जाती थी ताकि आवश्यकता पड़ने पर उससे सैनिक का काम लिया जा सके। नियम का उल्लंघन करने पर मृत्युदण्ड दिया जाता था। यद्यपि हरवामशी नरेशों के पास विशाल सेना थी परन्तु फिर भी वे अपेक्षाकृत सबल नहीं थे। इसके अलावा ईरानी सम्राट के पास विशाल जलपोत भी था जिसका युद्ध और व्यापार दोनों के काम में प्रयोग किया जाता था।

कानून एवं न्याय–पारसी लोग अपने राजा को देवता 'अहुर-मज्दा' का प्रतिनिधि मानते थे। सम्राट समस्त देश का सर्वोच्च न्यायाधीश होता था तथा उसका राजदरबार ही न्यायालय था। राज्य का प्रत्येक व्यक्ति उसकी दया का भूखा रहता था।

राजा के नीचे के न्यायालय में सात न्यायाधीश होते थे। विभिन्न प्रान्तों में स्थानीय न्यायालय होते थे। जमानत की प्रथा प्रचलित थी। न्यायालय न्याय के लिए पंच भी नियुक्त करते जाते थे। शपथ ग्रहण की भी प्रथा प्रचलित थी। कानूनवक्ता (आधुनिक वकील) भी होते थे जो अधिकतर पैरवी करते थे। मुकदमें के निर्णय में समय का निर्धारण किया जाता था। आरम्भ में न्यायाधीश का पद पुरोहित के लिए आरक्षित होता था किन्तु बाद में इसका सामान्यीकरण हो गया। महिलाएँ भी इस पद पर बहाल हो सकती थीं। न्याय-व्यवस्था काफी कठोर थी। छोटे-छोटे अपराधों में कोड़े

मरवाना, जुर्माना किया जाना, देश से बाहर किया जाना आदि मुख्य थे। हत्या और बलात्कार के लिए मृत्युदण्ड दिया जाता था।

गुप्तचर विभाग–सम्राट का गुप्तचर विभाग अच्छा था। उसे सम्राट की आँख और कान माना जाता था। समस्त साम्राज्य में इसका जाल सा बिछा था। ये प्रान्तों, कार्यालयों की जाँच भी करते थे तथा सम्राट को सूचित करते थे। सम्राट गुप्तचरों की जाँच के आधार पर फैसला करते थे तथा दोषी व्यक्ति के दण्ड का निर्धारण करते थे।

कर संग्रह (राजस्व-आय)–ईरानी सम्राट को अपने विशाल राज्य से अधिक राजस्व (धन) की आय होती थी। विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न कर निर्धारित थे। सम्राट प्रान्त की आय या पैदावार के अनुसार कर तय करते थे। प्रान्त से प्राप्त आय का आधा केन्द्र तथा आधा क्षत्रप प्रयोग करते थे। छोटे कर्मचारी जनता से अधिक कर लेते थे। प्राप्त आय से ईरानी शासकों के पास अपार धन एकत्र हो गया था। यही कारण है कि इस युग में सोने, चाँदी, काँसे के सिक्के ढलवाये गये थे। साथ ही साम्राज्य के सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए विशाल इमारतें बनवायी गयी थीं।

प्रान्तीय शासन–ईरानी नरेशों ने शासन-व्यवस्था के लिए प्रान्तीय शासन-प्रणाली को अपनाया था। समस्त राज्यों को प्रान्तों में विभक्त किया गया था। इन प्रान्तों की संख्या 20-25 तक होती थी। प्रत्येक प्रान्त के लिए अलग-अलग कर निर्धारित थे जो प्रान्त के उपज के आधार पर निर्धारित किया जाता था। मिस्र का कर 770 टैलेन्ट, बेबीलोन का 1000 टैलेण्ट, बलूचिस्तान का 179 टैलेण्ट, भारत का 4,580 टैलेण्ट स्वर्ण था। प्रान्तों में विद्रोह नहीं हो इसके लिए भी वे लोग उपाय करते थे जैसे–असीरियन राज्य के लोगों के साथ प्रेम व्यवहार करना, बेबीलोनिया के लोगों के साथ उदार व्यवहार करना, यहूदियों को स्वदेश लौटाना, भेद करो की नीति को अपनाया, प्रान्तों के लिए निरीक्षक दल को बहाल करना, प्रान्तों से राज्यों को जोड़ने के लिए सड़क का निर्माण करना आदि।

इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं कि हरवामशी नरेशों की शासन व्यवस्था बड़ी सुदृढ़ थी। इतनी अच्छी शासन प्रणाली रोमन साम्राज्य के पहले कभी नहीं देखने को मिलती है। इनकी शासन व्यवस्था से प्रभावित होकर **जेम्स** ने लिखा है–"वे निर्दयी किन्तु बहादुर अपने साम्राज्य की शासन व्यवस्था के पूर्ण ज्ञाता थे। उनका प्रशासन अति सुन्दर था जिसका श्रेय डेरियस महान को है।"

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. ईरानी सामाज्य का सबसे बड़ा पदाधिकारी .... होता था।
2. डेरियस की गणना विश्व के .... शासकों में की जाती है।
3. आरम्भ में न्यायाधीश का पद .... के लिए आरक्षित होता था।
4. पारसी लोग अपने राजा को देवता .... का प्रतिनिधि मानते थे।

11.3 सामाजिक अवस्था (Social Condition)

ईरान के लोग अधिक सुन्दर और बलिष्ठ होते थे। वे वस्त्रों और आभूषणों के बहुत अधिक शौकीन होते थे। पुरुष दाढ़ी और मूँछ रखते थे बाद में सिर में विग धारण करने लगे। स्त्रियों और पुरुषों के वस्त्रों में विशेष अन्तर नहीं था। ईरानी समाज का संगठन काफी अच्छा था जिसे हम निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा अध्ययन कर सकते हैं–

कौटाम्बिक प्रणाली–समाज में कुटुम्ब को पवित्र माना जाता था। जिसके अधिक पुत्र होते थे उसे भाग्यवान माना जाता था। अधिक पुत्र वाले को राज्य की ओर से पुरस्कृत किया जाता था। प्राण हत्या अपराध माना जाता था। विवाह को पवित्र सम्बन्ध का दर्जा प्राप्त था। जिसे माता-पिता के द्वारा ही सम्पन्न किया जाता था। कहीं पर पिता-पुत्री, भाई-बहन आदि के पारस्परिक विवाह की प्रथा प्रचलित थी। बहु-विवाह या रखैल रखने का प्रचलन था। घर बसाना और सुखमय जीवन व्यतीत करना जीवन का आवश्यक अंग माना जाता था।

नोट

रहन-सहन एवं खान-पान—ईरानवासियों का रहन-सहन बहुत सुन्दर था। वे बड़े उदार, सचरित्र, स्पष्ट वक्ता और आतिथ्य प्रवृत्ति के होते थे। आचार-व्यवहार में वे काफी कुशल थे। आपस में मिलने पर वे गले मिलते थे तथा होंठों का चुम्बन करते थे। वृद्ध के प्रति समाज में श्रद्धा का भाव रखा जाता था। वे दिन में एक बार भोजन करते थे। उनका रहन-सहन सुन्दर और सौन्दर्य-प्रसाधनयुक्त था। शरीर की स्वच्छता पर वे बल देते थे। उनका विश्वास था कि स्वच्छ शरीर में ही देवदूत प्रवेश और निवास करते हैं। उत्सव के अवसर पर के सफेद वस्त्र धारण करते थे।

आमोद-प्रमोद—समाज में मनोरंजन का काफी महत्त्व था। उच्च वर्ग के लोगों का मुख्य मनोरंजन आखेट था। सम्राट एवं सामन्त के लिए युद्ध और शिकार ही मुख्य कार्य समझे जाते थे। शिकार के लिए शिकारी कुत्ते भी होते थे। इसके अतिरिक्त ताश खेलना, चित्र खींचना, लकड़ी पर खुदाई करना, रखैल रखना आदि प्रमुख मनोरंजन के साधन थे। रखैलों को वर्ष में एक बार सम्राट के साथ रात्रि-यापन करना पड़ता था।

अस्त्र-शस्त्र—आम ईरानी अपने साथ अस्त्र-शस्त्र रखते थे। उनके मुख्य अस्त्र-शस्त्र नालीदार ढाला, तरकश, बल्लम, भाला, तीर-धनुष तथा छुरा थे।

क्या आप जानते हैं ईरानी समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी थी। उन्हें माता के रूप में विशेष सम्मान प्राप्त था।

स्त्रियों की स्थिति—ईरानी समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी थी। उसे माता के रूप में विशेष सम्मान प्राप्त था। जरथ्रुष्ट और डेरियस के समय में स्त्रियों की स्थिति काफी अच्छी थी। अधिक पुत्रों को जन्म देने वाली माता को विशेष महत्त्व मिलता था। यद्यपि रखैल प्रथा प्रचलित थी, किन्तु वेश्यावृत्ति का प्रचलन समाज में नहीं था। स्त्रियाँ सम्पत्ति की मालकिन समझी जाती थीं। उसे पुरुषों के साथ समस्त कार्य सम्पादित करने का अधिकार प्राप्त था। विधवा-विवाह की प्रथा प्रचलित नहीं थी। पर्दे की प्रथा का कठोरता के साथ पालन किया जाता था। भ्रूण-हत्या को वे लोग घोर पाप मानते थे। डेरियस के बाद स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आने लगी थी।

11.4 आर्थिक अवस्था (Economic Condition)

कृषि—ईरानी समाज की आर्थिक अवस्था काफी उन्नत और उत्तम थी। अधिकतर लोग स्वयं ही खेती करते थे। संयुक्त खेती को वहाँ के लोग अधिक महत्त्व देते थे। किसान मजदूरों से अपने खेतों को जुतवाता था। इसके अतिरिक्त वे इस कार्य के लिए विदेशी गुलामों को रखते थे। किसान का जमीन पर कोई अधिकार नहीं था। उनके मेहनताना के रूप में उपज का एक भाग प्राप्त होता था। खेती के लिए लकड़ी के हलों का प्रयोग किया जाता था जिसमें धातु का फाल लगा होता था। दूर-दूर के पहाड़ों से पानी लाया जाता था। उनके धर्म-ग्रन्थों में कृषि को अधिक महत्त्व प्रदान किया गया है।

पशुपालन—ईरानी लोग अपने घरों में जानवरों को भी पालते थे। जानवरों में कुत्तों को विशेष महत्त्व प्राप्त था। कुत्तों के द्वारा वे शिकार भी करते थे। इसके अतिरिक्त गाय, बैल, भैंस आदि को वे लोग पालते थे। कुत्ते को गर्म खाना खिलाना अपराध माना जाता था। वे लोग घरों में चिड़ियों तथा उदबिलाव को पालते थे।

उद्योग-धन्धा—ईरानी समाज के आर्थिक आधार का ढाँचा उद्योग पर भी निर्भर रहता था। वस्त्र उद्योग, धातु उद्योग, शराब उद्योग, काष्ठ उद्योग आदि के धन्धे में वे काफी निपुण थे। उद्योग-धन्धों ने व्यापार को प्रोत्साहन दिया। उनके यहाँ व्यापार बेबीलोनिया, फिनिशिया, यहूदी आदि विदेशी जाति के लोग ही करते थे। व्यापार थल और जल दोनों मार्गों से किया जाता था।

मुद्रा का प्रचलन—ईरानियों का विनिमय गल्ला एवं मवेशियों के माध्यम से होता था। प्रारम्भ में किसी भी प्रकार की मुद्रा का प्रचलन नहीं था। सर्वप्रथम उन्होंने लीडिया से इसका ज्ञान सीखा और डेरियस महान ने 'डेरिक' नाम से मुद्राएँ चलायीं। डेरिक का अर्थ होता है—सोने का टुकड़ा। मुद्रा सोने और चाँदी दोनों धातु की बनती थी। सोने

की डेरिक का मूल्य लगभग 25 रुपया जो चाँदी की मुद्रा से 13.5 गुणा अधिक था। डेरियस के इन सिक्कों का प्रचलन सिन्धु नदी के प्रदेश में भी हुआ और इन्हीं के द्वारा भारतीय मुद्रा प्रणाली का विकास हुआ।

टास्क पता लगाइए कि ईरानी सभ्यता की समकालीन सभ्यताओं में किन मुद्राओं का प्रचलन था।

हरवामशी वंश के शासकों ने आर्थिक अवस्था को सुधारने हेतु विभिन्न प्रान्तों से कर-संग्रह करने का आदेश दिया था। विभिन्न प्रान्तों के भिन्न-भिन्न कर निर्धारित थे। कहा जाता है कि डेरियस महान का शासनकाल आर्थिक दृष्टि से काफी सम्पन्न था और राजकोष सदैव भरा-पूरा रहता था। आर्थिक सम्पन्नता से साम्राज्य का चतुर्दिक विकास हुआ था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

5. ईरान के लोग वस्त्र और आभूषण के शौकीन थे। वे अधिक सुन्दर और बलिष्ठ होते थे।
6. ईरानी समाज में चौतरफा वेश्यावृत्ति व्याप्त थी।
7. ईरान के लोग संयुक्त कृषि करते थे। उनकी आर्थिक व्यवस्था उन्नत और उत्तम थी।
8. ईरानी लोगों का खान-पान निम्न स्तर का था, वे गन्दे कपड़े पहनते थे।

11.5 सांस्कृतिक अवस्था (Cultural Condition)

अति प्राचीनकाल में ईरान की महत्ता उसकी सांस्कृतिक विकास के कारण भी मानी जाती थी। उसने सांस्कृतिक क्षेत्र, कला तथा धर्म के क्षेत्र में विशेष रूप से विकास किया था। साहित्य और विज्ञान के क्षेत्र में उनकी अभिरुचि नहीं के बराबर थी। ईरानियों के सांस्कृतिक अवस्था का अध्ययन निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा किया जा सकता है–

शिक्षा–ईरानी लोग पुस्तकों की शिक्षक की अपेक्षा युद्ध की शिक्षा अधिक प्राप्त करते थे। युवकों को धनुष-बाण चलाने, घुड़सवारी करने, बर्छी-भाले का प्रयोग करने आदि की शिक्षा देते थे। धर्म तथा कानून पढ़ने वालों के लिए भी सैनिक शिक्षा अनिवार्य थी। शिक्षा अधिकतर उच्चवर्ग के लोगों तक ही सीमित थी। अधिकतर शिक्षा 14 वर्ष की आयु तक समाप्त कर दी जाती थी। यहाँ शारीरिक श्रम पर अधिक बल दिया जाता था। गुरु पद पर सर्वगुण सम्पन्न व्यक्ति नियुक्त होता था। अधिकतर शिक्षक धार्मिक ही होते थे। अवेस्ता को याद करना जरूरी था। शिक्षा का स्वरूप मौखिक था तथा विद्यालय एकान्त में बनाये जाते थे। कुछ विद्यार्थियों को शासन-व्यवस्था (प्रबन्ध) की भी शिक्षा दी जाती थी।

साहित्य–युद्ध में अधिक संलग्न रहने के कारण पारसी साहित्य का विकास नहीं कर पाए थे। मात्र कुछ धार्मिक कहानी और गीतों की रचना तक ही उनका साहित्य सीमित था।

लिपि–ईरान में प्राचीनकाल में तीन प्रकार की लिपि का प्रचलन था–प्राचीन फारसी, बेबीलोनिया और अंश नाइट या सूसियन। यहाँ की भाषा जेन्द सुसियन, फारसी तथा ईरानी के साथ बेबीलोनियन आदि थी। भाषाओं को लिखने में कीलाक्षर लिपि का प्रयोग किया जाता था। लेकिन यहाँ इसकी 300 अक्षर के बदले मात्र 36 का ही प्रयोग किया जाता था।

विज्ञान–वैज्ञानिक क्षेत्र में ईरानियों की कोई विशेष अभिरुचि नहीं थी क्योंकि ये लोग शुरू से अंधविश्वासी थे। इनका विश्वास था कि दानवीय शक्तियों के द्वारा 9999 रोग उत्पन्न होते हैं जिनका निदान जंतर-मंतर के द्वारा किया जा सकता है। जन्तर-मन्तर का काम पुरोहित करते थे। धीरे-धीरे चिकित्साशास्त्र का विकास हुआ तथा चिकित्सा के शुल्क निर्धारित किये गये।

नोट

धर्म—इस युग में ईरान में तीन प्रकार के धर्मों का प्रचलन था। पहले धर्म में जरथ्रुष्ट का धर्म था जिसका अनुयायी सम्राट था। जरथ्रुष्ट धर्म की स्थापना दारा (डेरियस) महान से कई सदियों पहले हुई थी। इस काल में 'अहुर-मज्दा' देवता प्रमुख थे तथा अन्य देवताओं के अस्तित्व को भी स्वीकृत किया गया था।

कालान्तर में सूर्य की उपासना पर बल दिया गया और 25 दिसम्बर प्रमुख पर्व माना गया। इस तरह यहाँ एकेश्वरवाद के साथ-साथ द्वैतवाद का भी प्रचलन हुआ। फारसी धर्म ने यहूदी धर्म को भी प्रभावित किया। दूसरा धर्म जनसाधारण का धर्म था जिसके विषय में पर्याप्त जानकारी का अभाव है। तीसरा धर्म मार्गी (Manichurcisur) था। यह धर्म एलम के लोगों का भी धर्म था जिस पर सेमेटिक धर्म का प्रभाव था।

कला—ईरानी कला का विकास अपने-आप में अद्वितीय है। इसकी कला में विभिन्न कलाओं का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। धातु, स्वर्ण, शिल्प, पाषाणकला के उत्तम उदाहरण यहाँ देखने को मिलते हैं, जैसे—वहाँ की समाधियों पर लीडिया की कला का प्रभाव, पर्सीपोलिस और सूसा के भवनों पर मिस्र की कला का प्रभाव, कृत्रिम चबूतरों और सीढ़ियों पर असीरियन कला का प्रभाव, ईंटों के निर्माण में मेसोपोटामिया की कला का प्रभाव तथा स्तम्भों के अलंकरण में यूनानी कला का प्रभाव देखने को मिलता है। अत: हम कह सकते हैं कि विभिन्न कलाओं का सम्मिश्रित रूप ही ईरान की राष्ट्रीय सम्पत्ति बन गया। ईरानी कला का सुन्दर रूप हमें उसकी वास्तुकला में देखने को मिलता है। जिसे साइरस, डेरियस आदि सम्राटों ने अनेक महलों, राजप्रासादों और समाधियों का निर्माण कराकर पूर्णता प्रदान की थी।

पेसरगेड—पेसरगेड में उत्खनन के द्वारा सम्राट साइरस की एक समाधि प्राप्त हुई है। सात चबूतरों पर 140 फीट लम्बा, 16 फीट चौड़ा और 35 फीट ऊँचा निर्मित यह भवन जिसको पत्थर के टुकड़ों से बनाया गया था। इसके चारों तरफ ऊँचे-ऊँचे खम्भे थे जो अब नष्ट हो चुके हैं। फारस के लोग इसे 'मशदाद ई-महार सुलेमान' के नाम से पुकारते थे। इसके अतिरिक्त 300 फीट लंबा चबूतरा मिला है जो 'तख्ते सुलेमान' के नाम से जाना जाता था। साइरस की एक पंख वाली मूर्ति भी यहाँ से प्राप्त हुई जिस पर विभिन्न कलाओं की छाप स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

पर्सीपोलिस—पर्सीपोलिस के खंडहर भी ईरानी कला के उदाहरण हैं। इसका सबसे प्रसिद्ध भवन 'तख्ते जमद' है जो चूने और पत्थर से बना था। सम्राट जरेक्सीज का एक विशाल महल मिला है जिसका क्षेत्रफल 150 वर्गफीट है। इस महल में 62 खम्भे थे जिसके 13 खम्भे आज भी प्राप्त हैं। 'चेल्सी मीनार' नामक 100 खम्भों वाला एक विशाल भवन भी पाया गया है। कहा जाता है कि सिकन्दर महान ने अपने आक्रमण के समय इस महल में भोजन किया था। यहीं पर सिंहासनारूढ़ डेरियस की एक मूर्ति मिली है जो मूर्तिकला का उत्कृष्ट नमूना है।

सूसा और एकबटना—ईरानी शासकों ने एकबटना में एक काठ का महल बनवाया था जो काफी सुन्दर था लेकिन इसके अवशेष प्राप्त नहीं हैं। सूसा का सम्राट जरेक्सीज का महल भी काफी सुन्दर था। इस महल में दो चित्र बने हुए थे। एक चित्र 5 फीट ऊँचा है जिसमें सैनिकों के बीच सम्राट को चित्रित किया गया है। दूसरा चित्र एक शिकारी सिंह का है। दोनों चित्र पेरिस संग्रहालय में देखे जा सकते हैं। इसके अलावा डेरियस महान का मकबरा जो 60 × 20 फीट लम्बा-चौड़ा है, अधिक प्रसिद्ध है। ईरानी लोगों ने मुहरों की निर्माण कला का भी विकास किया था।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि प्राचीन ईरान की सभ्यता चतुर्दिक विकास की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण थी, जिसका श्रेय पूर्णरूपेण हरवामशी युग के शासकों को प्राप्त था।

ईरानी (पर्शिया) सभ्यता की देन—ईरान की सभ्यता कला-कौशल, साहित्य आदि के क्षेत्र में दूसरों को प्रभावित करने की बजाय स्वयं ही दूसरों से अधिक प्रभावित हुई। जिन-जिन सभ्यताओं के सम्पर्क में ईरानी लोग आये उन सभी का प्रभाव इन पर दिखाई पड़ता है।

उनकी भाषा जेन्द पर वैदिक साहित्य का प्रभाव दिखाई पड़ता है। धर्म के क्षेत्र में उनके देवता, रीति-रिवाज, व्यवहार और उनके धार्मिक आचरण पर भारत का बहुत प्रभाव देखने को मिलता है।

कला के क्षेत्र में ईरान की कला पर यूनान, मिस्र, असीरिया, बेबीलोनिया, मेसोपोटामिया, लीडिया आदि की कलाओं का प्रभाव देखने को मिलता है।

सैनिक संगठन एवं राज्य व्यवस्था में इसने अवश्य ही अन्य देशों को प्रभावित किया। इसका शासन-प्रबन्ध बहुत ही उच्चकोटि का था। इनकी शांति एवं सुव्यवस्था ने रोमन जैसी उन्नत जाति को प्रभावित किया। प्रान्तों की रचना, स्वतंत्र अधिकारियों की नियुक्ति करना, सेना का समुचित संगठन एवं उसकी रचना, राज्य संचालन में धर्म का महत्त्व और उदारता तथा न्याय का आधार अवश्य ही विश्व को प्रभावित करने वाली तकनीकें हैं।

फिर भी ईरान ने देने की बजाय अनुकरण पर अधिक बल दिया था। लेकिन इसका गौरव इस बात से बढ़ जाता है कि इसने संसार को एक सुव्यवस्थित और सुरक्षित शासन प्रणाली प्रदान की, साथ ही उच्च नैतिक सिद्धान्तों पर आधारित एक धार्मिक विचारधारा का भी प्रादुर्भाव किया। भारत में महात्मा बुद्ध, चीन में कन्फ्यूशियस की भाँति ईरान ने जरथ्रुष्ट नामक उपदेशक को जन्म दिया।

ईरान की सभ्यता की एक महत्त्वपूर्ण देन यह भी मानी जा सकती है कि इसने सभ्यता के विभिन्न केन्द्रों को एक ही शासन के अधीन रखा और उनकी सभ्यताओं से उन्होंने एक मिली-जुली सभ्यता-संस्कृति का विकास किया तथा इसे मानवता के लिए छोड़ गये। अत: ईरान की देन को बहुत मायनो में महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

9. ईरानी लोग पुस्तकों की शिक्षा की अपेक्षा .... की शिक्षा पर अधिक बल देते थे।

   (क) विज्ञान (ख) युद्ध

   (ग) समाजशास्त्र (घ) साहित्य

10. ईरानियों की विज्ञान के क्षेत्र में रुचि नहीं थी क्योंकि ये लोग शुरू से .... थे।

   (क) उन्नत (ख) वैज्ञानिक

   (ग) अंधविश्वासी (घ) धार्मिक

11. ईरानी सभ्यता से सम्बन्धित 300 फीट लम्बा चबूतरा मिला है, जिसे .... के नाम से जाना जाता है।

   (क) तख्ते सुलेमान (ख) आसन

   (ग) चेल्सी मीनार (घ) सिंहासन

12. ईरानियों की सैनिक संगठन और राज्य-व्यवस्था .... कोटि की थी।

   (क) निम्न (ख) औसत

   (ग) सामान्य (घ) उच्च

11.6 सारांश (Summary)

- पश्चिमी एशिया के जिन देशों में सभ्यता-संस्कृति के आरम्भिक चरण के दर्शन हुए हैं, इनमें ईरान को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।
- विद्वानों का मत है कि अति प्राचीन काल में ईरान में द्रविड़ जातियाँ निवास करती थीं। दूसरी सहस्त्राब्दी ई. पू. में ईरान पर आर्य इरानियों ने आक्रमण किया और वहीं बस गये, जो इन्डो-यूरोपियन परिवार की शाखा के सदस्य थे।
- हरवामशी साम्राज्य की शासन-व्यवस्था काफी सुदृढ़ थी। इस साम्राज्य की स्थापना विश्व साम्राज्य की स्थापना का महान प्रयत्न थी।
- फारस की सामन्तवादी व्यवस्था राज्य की शासन-व्यवस्था का मूलाधार थी। राज्य में छ: सामन्त वंश मुख्य थे। ये सामन्त राजा को परामर्श एवं सहयोग दिया करते थे।
- ईरानी सेना साम्राज्य के मूलाधार के रूप में जानी जाती थी। सेना का केन्द्रबिन्दु सम्राट होता था।

नोट

- ईरानी सम्राट को अपने विशाल राज्य से अधिक राजस्व (धन) की आय होती थी। विभिन्न प्रान्तों में भिन्न-भिन्न कर निर्धारित थे।
- ईरानी नरेशों ने शासन-व्यवस्था के लिए प्रान्तीय शासन-प्रणाली को अपनाया था। समस्त राज्यों को प्रान्तों में विभक्त किया गया था।
- ईरानी समाज की आर्थिक अवस्था काफी उन्नत और उत्तम थी। अधिकतर लोग स्वयं ही खेती करते थे।
- ईरानी लोग पुस्तकों की शिक्षक की अपेक्षा युद्ध की शिक्षा अधिक प्राप्त करते थे। युवकों को धनुष-बाण चलाने, घुड़सवारी करने, बर्छी-भाले का प्रयोग करने आदि की शिक्षा देते थे।
- ईरानी कला का विकास अपने-आप में अद्वितीय है। इसकी कला में विभिन्न कलाओं का सम्मिश्रण देखने को मिलता है। धातु, स्वर्ण, शिल्प, पाषाणकला के उत्तम उदाहरण यहाँ देखने को मिलते हैं।

11.7 शब्दकोश (Keywords)

- **कौटाम्बिक प्रणाली**–परिवार बना कर जीवन यापन करना जिसमें माता-पिता, पत्नी, पुत्र-पुत्रियाँ आदि हो। समाज की एक सशक्त इकाई।
- **मुद्रा**–विनिमय के लिए प्रचलित सोने-चाँदी के सिक्के, जिसके बदले में वस्तु आदि खरीदी जाती थी।

11.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. प्राचीन ईरान की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त वर्णन करें।
2. हरवामशी काल और हरवामशी वंश दोनों पर्शिया के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। विवेचन करें।
3. हरवामशी नरेशों की शासन व्यवस्था और सैन्य व्यवस्था की व्याख्या करें।
4. ईरान की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था कैसी थी ?
5. 'साहित्य और विज्ञान में पिछड़े रहने के बावजूद ईरानी कला, धर्म और सैन्य संगठन में आगे थे'। विवेचन करो।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सम्राट	2. महान	3. पुरोहित	4. 'अहुरमज्दा'
5. सत्य	6. असत्य	7. सत्य	8. असत्य
9. (ख) युद्ध	10. (ग) अंधविश्वासी	11. (क) तख्ते सुलेमान	12. (घ) उच्च

11.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–12: प्राचीन यूनान
(Ancient Greece)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
12.1 भौगोलिक परिधि (Geographical Circumference)
12.2 राजनीतिक जीवन (Political Life)
12.3 सामाजिक जीवन (Social Life)
12.4 आर्थिक जीवन (Economic Life)
12.5 धार्मिक जीवन (Religious Life)
12.6 साहित्य और कला (Art and Literature)
12.7 यूनानी सभ्यता का पेरिक्लीज युग (Pericleage Age of Greek Civilization)
12.8 एथेन्स का सर्वांगीण विकास (Complete Development of Athens)
12.9 सारांश (Summary)
12.10 शब्दकोश (Keywords)
12.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
12.12 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्राचीन यूनान की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक जीवन को समझने में।
- धार्मिक जीवन और यूनानी साहित्य-कला को जानने में।
- पेरिक्लीज युग और एथेन्स के विकास को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

यूनान की सभ्यता विश्व इतिहास की प्राचीनतम सभ्यताओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यह सभ्यता यूरोपीय सभ्यता की जननी है। प्राचीन विश्व के इतिहास में कला, साहित्य एवं दर्शन के क्षेत्र में प्राचीन यूनान की अद्वितीय देन है। स्वतंत्रता एवं गणतंत्र, विचार स्वातंत्र्य तथा बौद्धिक अनुसंधान, वैधानिक शासन एवं अनुशासन, ये सारे आदर्श प्राचीन यूनान के नागरिकों ने प्रारम्भ किया तथा अपनी भावी पीढ़ियों को सिखलाया। प्राचीन यूनान ने बड़े-बड़े साहित्यकारों, नाटककारों, दार्शनिकों तथा लेखकों को जन्म दिया जिनकी रचनाएँ आज भी विश्व में आदर्श प्रसिद्ध है। बहुत मायने

नोट

में आधुनिक यूरोप की सभ्यता एवं संस्कृति, विचारधारा एवं चिन्तन शैली प्राचीन यूनान की संस्कृति पर आधारित है। रोम की मशहूर सभ्यता यूनानी सभ्यता की पूर्णतया ऋणी है।

12.1 भौगोलिक परिधि (Geographical Circumference)

विद्वानों एवं इतिहासकारों ने सही लिखा है कि किसी देश की प्रगति में उसके भौगोलिक परिधि का योगदान महत्त्वपूर्ण माना जाता है। यह कथन यूनान के लिए अक्षरश: चरितार्थ होता है। यूनान का प्रायद्वीप तीन ओर भूमध्य सागर से घिरा हुआ है। उत्तरी और दक्षिणी यूनान के मध्य कोरिन्थ की खाड़ी स्थित है। यूनान और एशिया माइनर के बीच इजियन सागर लहराता है। इस सागर में अनेक द्वीप हैं, जहाँ यूनान और एशिया की सभ्यताओं का संगम हुआ। यूनान के चारों तरफ प्राचीन देश हैं। पश्चिमी सीमा पर अफ्रीका है जिसके उत्तरी समुद्री तट पर कार्थेज की सभ्यता करवट लेकर पल्लवित तथा पुष्पित हुई थी। कार्थेज के पूर्व में मिस्र देश है जिसकी सभ्यता विश्व की प्राच्य सभ्यता मानी जाती है। इसके साथ ही फिनिशिया, असीरिया, बेबीलोनिया, लीडिया, मेसीडोनिया आदि देश थे इन्होंने भी यूनान की सभ्यता को प्रभावित किया था।

पर्वतीय प्रदेशों की आधिक्यता के कारण भी यूनान प्रसिद्ध है, जहाँ की जलवायु अनेकता में एकता का रूप लेकर समशीतोष्ण है। प्राकृतिक विभाजनोपरान्त यूनान के तीन रूप दृष्टिगोचर होते हैं।

(1) उत्तरी यूनान, (2) मध्य यूनान तथा (3) दक्षिणी यूनान।

उत्तरी यूनान के प्रमुख प्रान्तों में थेसली और एपरस थे। मध्य यूनान अपने 9 राज्यों से युक्त था जिनमें एटिया सबसे प्रसिद्ध राज्य था जिसकी राजधानी एथेन्स थी। दक्षिणी यूनान में 7 राज्य थे, इन राज्यों में लकोनिया सबसे अधिक प्रमुख तथा शक्तिशाली था जिसकी राजधानी स्पार्टा थी।

यूनानी सभ्यता का उद्‌भव—विद्वानों का मत है कि इजियन सागर में स्थित क्रीट की सभ्यता प्राचीन-यूनानी-सभ्यता की जननी है। इजियन समुद्र में स्थित कितने ही द्वीपों में एक समूह सभ्यता का उदय हुआ। यूनान में ग्रीक जाति के आने के पूर्व इस सभ्यता का विकास हो चुका था। इस सभ्यता को इजियन सभ्यता भी कहते हैं। जिसके प्रमुख केन्द्र थे—क्रीट तथा मेलोस। क्रीट में जिस सभ्यता का अभ्युदय हुआ उसे मिनोअन की सभ्यता भी कहते हैं जहाँ 'माइनोस' नामक राजा हुए थे। लगभग 1400 ई. पू. में इस सभ्यता का विनाश हुआ। कहा जाता है कि आक्रमणकारियों ने इस सभ्यता का विनाश किया और वहीं बस गये तथा एक नवीन सभ्यता का विकास किया जिसे 'माइसीनियन सभ्यता' कहते हैं। इसका प्रमुख केन्द्र यूनान की भूमि पर माईसीन (Mycenae) नगर था। अत: माईसीन सभ्यता को क्रीट की सभ्यता का प्रसार तथा इजियन सभ्यता का अंग माना जाता है। यह सभ्यता 1600-1200 ई. पू. तक जीवित रही। तत्पश्चात् 120 ई. पू. में यूनान की सभ्यता का उदय हुआ। यूनान की सभ्यता को क्रीट सभ्यता का प्रसार तथा इजियन सभ्यता का अंग माना जा सकता है। संभवत: होमर नामक कवि ने 8वीं शताब्दी ई. पू. में इस युग को एक सूत्र में आबद्ध करके व्यवस्थित रूप प्रदान किया था। इसलिये इस युग का नाम होमर युग पड़ा।

> *टास्क* पता लगाइए कि यूनान की सभ्यता से पूर्व किन सभ्यताओं का विकास हुआ था।

यूनान की आदि जातियाँ—यूनान के आदि निवास स्थान तथा जातियों के विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। बावजूद इसके वह बालकन प्रायद्वीप के उत्तर-पश्चिम में रहते थे। ये आर्य और अनार्य की मिश्रित जाति थे। जो चार उपशाखाओं में विभक्त थे। यथा—

(1) एकीनन, (2) आयोनियन, (3) आयोसियन और (4) डोरियन।

यूनानी इतिहास का वर्गीकरण—अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से हम यूनान के प्राचीन इतिहास को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(1) होमर युग (अन्धकार युग)

नोट

(2) क्लासिकल युग (आरम्भिक काल)

(3) पेरिक्लीज युग और यूनान का अन्त।

इसके अतिरिक्त कुछ विद्वान सिकन्दर महान के काल को भी यूनानी सभ्यता के अन्तर्गत रखते हैं, परन्तु सही अर्थ में उस युग को हेलनेस्टिक युग के नाम से पुकारा जाना श्रेयस्कर होगा क्योंकि इस युग की सभ्यता यूनानी सभ्यता से बिल्कुल भिन्न थी।

होमर : यूनान का गुरु–होमर और उसके द्वारा प्रणीत किये जाने वाले 'महाकाव्यों' 'इलियड तथा ओडसी' को यूनानी सभ्यता में वही स्थान प्राप्त है जो भारत के इतिहास में रामायण और महाभारत तथा यहूदियों के इतिहास में पवित्र 'बाइबिल' को प्राप्त है। होमर ने इस महाकाव्य की रचना की या नहीं, यह प्रश्न पिछले सौ वर्षों से विद्वानों को आकूल करता आ रहा है, लेकिन चाहे ये ग्रन्थ एक व्यक्ति ने लिखे थे या अनेक ने, प्राचीन यूनानी इसे एक व्यक्ति की कृति मानते थे और इसे अपने देश का गुरु स्वीकृत करते थे। जब यूनानियों के सामने कोई नैतिक समस्या आती थी तो होमर का वचन निर्णायक माना जाता था। इस प्रकार होमर की सार्वजनिक प्रतिष्ठा यूनानियों की सांस्कृतिक एकता का आधार बनी।

होमर युग–यह काल काफी विवादास्पद होते हुए भी 1200 ई. पू. से 800 ई. पू. तक माना जाता है। हेरोडोटस ने होमर को 9 वीं शताब्दी ई. पू. में रखा है। लेकिन आधुनिक विद्वान इसे 8वीं शताब्दी ई. पू. में आविर्भूत हुए मानते हैं। महाकाव्यों के आधार पर इस काल को 'वीरगाथा काल' के नाम से भी पुकारा गया है। इसे महाकाव्यों का युग भी मानते हैं क्योंकि यूनान में सर्वप्रथम कवि होमर ने ओडसी और इलियड नामक दो महाकाव्यों की रचना की जिसमें यूनान के वीरों की गौरव गाथाएँ अंकित की गई हैं। इन काव्यों का यूनानी जनता पर इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि इस काल को होमर युग भी कहा जाता है।

डोरियन जाति के आगमन के फलस्वरूप यूनान में अशांति, अव्यवस्था एवं अराजकता की स्थिति हो गई थी। क्योंकि इनकी नीतियाँ दमनकारी एवं विध्वंसक थीं। जिसके कारण यूनान के 300 वर्षों का इतिहास अंधकार में विलीन हो गया। इसलिये इतिहासकार इस युग को अंधकार काल या संक्रमण काल के नाम से पुकारते हैं। बावजूद इसके होमर काल यूनानी सभ्यता का उषाकाल है और इस काल की झाँकी हमें होमर के महाकाव्यों में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। यद्यपि इन महाकाव्यों में वर्णित घटनाओं की ऐतिहासिकता पर संदेह किया जा सकता है तथापि इसमें वर्णित यूनान की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक आदि स्थितियों के महत्त्व की अवहेलना नहीं की जा सकती। वस्तुत: यह महाकाव्य यूनानी सभ्यता के उषाकाल पर प्रकाश डालने वाले प्रथम लिखित स्रोत हैं।

12.2 राजनीतिक जीवन (Political Life)

राजा–इस युग में यूनान छोटे-छोटे और स्वतंत्र राज्यों में विभक्त था। इन राज्यों का शासक राजा कहलाता था। राजा शासन का सर्वोच्च अधिकारी कहलाता था। न्याय का वह मूल स्रोत तथा उसे ही राज्य का वास्तविक पुरोहित माना जाता था। तथ्यों से ऐसा प्रतीत होता था कि वह बिल्कुल ही निरंकुश था परन्तु राजा किसी व्यक्ति पर अत्याचार करने का अधिकारी नहीं था। सैद्धान्तिक रूप से वह राज्य का प्रधान न्यायाधीश था। परन्तु व्यवहारत: वह मात्र मध्यस्थ का ही कार्य करता था। इसका कारण यह था कि वहाँ कोई सुसंगठित विधान नहीं था। परम्पराओं के आधार पर ही न्याय सम्पादित किये जाते थे। सच तो यह है कि प्रजा अपना निर्णय स्वयं करती थी और राजा को बहुत कम कार्य करना पड़ता था।

ब्यूल (काउन्सिल)–राजा को शासनतंत्र चलाने के लिए तथा राजा को स्वेच्छाचारी बनने से रोकने के लिए विशिष्ट लोगों की एक काउन्सिल होती थी जिसे ब्यूल (Bule) कहा जाता था। राजा बिना काउन्सिल के परामर्श से कुछ भी नहीं कर सकता था। आगे चलकर विकसित होने वाले कुलीनतंत्र का बीज हमें इसी ब्यूल में दृष्टिगोचर होता है। वीरगाथा काल में राज्य की इकाई समाज और समाज की इकाई परिवार थी। प्रत्येक परिवार में फ्रैन्ट बनता था। हर फ्रैन्ट का एक सामन्त होता था और सामन्त ही अपने बीच में सबसे अधिक सम्पन्न सामन्त को राजा बना देते थे।

नोट

एगोरा–राजा तथा काउन्सिल (ब्यूल) के बाद जो राजनैतिक संस्था थी वह एगोरा कहलाती थी। एगोरा स्वतंत्र नागरिकों की सभा थी। यह संस्था राजा के समस्त कार्यों पर विचार करने का अधिकार रखती थी, परन्तु इसके अधिकार और कर्त्तव्यों को निश्चित रूप प्रदान नहीं किया गया था। एगोरा के सदस्यों को राजा तथा काउन्सिल द्वारा आमंत्रित किया जाता था तथा एक स्थान पर एकत्रित होकर राजा तथा काउन्सिल के प्रस्तावित विषयों पर अपनी सहमति प्रदान करते थे। इस संस्था के सम्बन्ध में दिलचस्प बात यह है कि इसे न तो अपनी ओर से प्रस्ताव पारित करने का अधिकार था और न ही विवाद करने का। सच तो यह है कि इस युग में राजनीतिक चेतना का अभाव था और इसी कारण साम्राज्य की अधिक उन्नति नहीं हो सकी। इस सम्बन्ध में बर्न्स का मत है कि–"होमर काल में ग्रीक लोगों की संस्थाएँ अत्यन्त आरम्भिक थीं। सभी छोटी-छोटी जातियाँ बाह्य नियंत्रण से स्वतंत्र थीं। राजनीतिक शक्ति इतनी क्षीण थी कि राज्य की संज्ञा देना ही कठिन है।"

बावजूद इसके तत्कालीन राजनीतिक ढाँचे में इसकी अहम् भूमिका थी। इसी से कालान्तर में प्रजातंत्र की आधारशिला तैयार हुई। सूक्ष्मता से देखा जाए तो एगोरा तत्कालीन यूनानी सेना से पृथक् नहीं थी। यूनानी सेना युद्ध क्षेत्र में राजा का नेतृत्व तो स्वीकारती ही थी, साथ ही एगोरा में उपस्थित होकर उसके निर्णय को भी अनुमोदन प्रदान करती थी। इस संस्था की तुलना वैदिककालीन सभा समिति से की जा सकती है। इतिहासकार ब्यूरी महोदय का विचार है कि यूनानी सेना ही एसम्बली थी।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. सैद्धान्तिक रूप से राजा यूनान का प्रधान .... था।
2. राजा को शासनतन्त्र चलाने के लिए तथा स्वेच्छाचारी बनने से रोकने के लिए एक काउन्सिल थी जिसे .... कहते थे।
3. होमर काल को यूनानी इतिहास का .... भी कहा जाता है।
4. एगोरा स्वतंत्र .... की सभा थी।

12.3 सामाजिक जीवन (Social Life)

परिवार–परिवार ही समाज की न्यूनतम इकाई थी। अनेक परिवार एक ही समूह में रहते थे। प्रत्येक सदस्य को परिवार में पिता की आज्ञा का पालन करना पड़ता था। पिता परिवार के किसी भी सदस्य को दण्ड दे सकता था। तत्कालीन भूमि सम्बन्धी प्रथाओं के अनुसार भूमि का स्वामी परिवार ही होता था। परिवार के मृत व्यक्तियों को भूमि में दफनाया जाता था। तत्कालीन धार्मिक विश्वासों के कारण व्यक्ति को जिस 'भूमि में दफनाया जाता था वह भूमि सदा के लिए उन्हीं की हो जाती थी। परिवार के समूह को बिरादरी कहा जाता था।

वर्ग विभाजन–होमरकालीन समाज चार वर्गों में विभक्त था। सबसे अधिक सम्मानित कुलीन वर्ग था। उसके बाद स्वतंत्र खेतिहर (कृषक) थे, तीसरा वर्ग स्वतंत्र श्रमिकों का था जो अपनी मेहनत के द्वारा जीविकोपार्जन करते थे। इनको 'थीट्स' (Thetes) कहा जाता था। समाज में निम्नतम वर्ग दासों का था जो या तो युद्ध बन्दी होते थे या समुद्री लुटेरों से खरीदे जाते थे।

कुलीन वर्ग के पास बहुत बड़ी मात्रा में भूसम्पत्ति होती थी तथा उनके पास गुलामों की संख्या बहुत बड़ी होती थी। युद्ध के समय यह वर्ग नेतृत्व करता था और अपनी वीरता एवं शौर्य के लिए जग प्रसिद्ध था। समाज का दूसरा वर्ग कृषकों का था जो अपनी सीमित भूमि पर कृषि कर्म करके जीवन व्यतीत करता था। दासों के साथ भी सद्व्यवहार किया जाता था।

स्त्रियों की स्थिति–होमरयुगीन यूनानी समाज में स्त्रियों की स्थिति काफी अच्छी थी। उनका मुख्य कार्य बच्चों का लालन-पालन करना था किन्तु समाज के प्रत्येक अंग में वह अपना दखल रखती थीं। गृह लक्ष्मी के रूप में उनका

आदर तो था ही साथ ही सार्वजनिक कार्यों में भी वह भाग लेती थी। नारी ही इस युग के पुरुषों की प्रेरणा स्रोत थी। इस युग में बड़े-बड़े संघर्ष स्त्रियों के कारण ही हुए थे। ट्राम का युद्ध इसका सबल उदाहरण है।

विवाह-प्रथा—होमरकालीन समाज में विवाह स्त्री-पुरुष द्वारा तय न होकर युवती के पिता और होनेवाले दामाद के द्वारा तय किये जाते थे। उस समय समाज में स्त्रियाँ खरीदी-बेची जाती थीं। कोई पुरुष कन्या के पिता को तय की हुई राशि देकर उसकी पुत्री से विवाह कर सकता था।

आभूषण—होमर काल में आभूषण धारण करने की प्रथा का प्रचलन समाज में हो गया था। स्त्री एवं पुरुष दोनों ही आभूषण-प्रेमी थे। होमरयुगीन चित्रों में स्त्रियों एवं पुरुषों को आभूषण धारण किये हुए चित्रित किया गया है जिससे उनके आभूषण-प्रेमी होने का संकेत मिलता है।

क्या आप जानते हैं होमरयुगीन स्त्रियों की समाज में अच्छी स्थिति थी। वे समाज के हर कार्य में अपना दखल रखती थीं।

रहन-सहन—होमरयुगीन समाज में लोगों का रहन-सहन बड़ा सादगी भरा था। पुरुष अपने शरीर के ऊपरी भाग पर एक बिना सिला हुआ वस्त्र डाल लेते थे। उसी वस्त्र के द्वारा नीचे के हिस्से को भी ढँकते थे। लंगोट का भी प्रचलन था। पुरुष बड़े-बड़े बाल और दाढ़ी-मूँछ रखते थे तथा स्त्रियों के समान ही आभूषणों को धारण करते थे।

मृतक-संस्कार—शव संस्कार के क्षेत्र में इस युग में शव जलाने तथा दफनाने की दोनों ही प्रथाएँ प्रचलित थीं तथा कालान्तर में भी यही प्रथाएँ चलती रहीं।

खान-पान—यहाँ के निवासियों का मुख्य भोजन अन्न, तरकारी और मछली आदि था। परन्तु निर्धन एवं धनियों के भोजन में अन्तर था। परन्तु इस वर्ग व्यवस्था की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि परिश्रम का महत्त्व सभी वर्गों के लिए अधिक था। अभिजात वर्ग के लोग निम्नवर्ग के लोगों की नियुक्ति करते थे परन्तु अपना कार्य स्वयं भी करते थे। मदिरा पान की प्रथा का प्रचलन था, किन्तु अधिक मदिरापान करना निंदनीय माना जाता था। समय-समय पर संभवत: विशेष अवसर पर वे प्रीतिभोज का आयोजन भी करते थे जहाँ ऊँच-नीच का भेदभाव नहीं रहता था।

मनोरंजन—आमोद-प्रमोद यानि मनोरंजन का मुख्य साधन उस समय आखेट था। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के दौड़ों का भी प्रचलन था। विशेष अवसर पर नृत्य-संगीत का भी आयोजन करके वे लोग अपना मनोरंजन करते थे।

12.4 आर्थिक जीवन (Economic Life)

कृषि—होमरकालीन समाज में आर्थिक जीवन का आधार कृषि कर्म था। किन्तु वहाँ की सभ्यता ग्राम्य सभ्यता थी तथा युद्ध प्रधान थी। अत: कृषि कर्म की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जाता था। प्रत्येक परिवार को आवश्यकता का खाद्यान्न स्वयं उपजाना पड़ता था। जौ, गेहूँ, खजूर, अंगूर, एवं फल-फूल तथा साग-सब्जी वहाँ की मुख्य फसलें थीं।

पशुपालन—इस युग की अर्थव्यवस्था का दूसरा आधार पशुपालन था। व्यक्तिगत सम्पत्ति का मूल्यांकन पशुओं की संख्या से होता था। ये लोग अधिकतर गाय, भैंस, बकरी, घोड़े, बैल, भेड़, सूअर आदि पालते थे। पशुओं का मांस खाने की प्रथा का प्रचलन था।

उद्योग-धन्धे—समाज में छोटे-मोटे उद्योग-धन्धे भी प्रचलित थे। स्मरणीय है कि होमर युग के लोग आवश्यकता की सभी वस्तुओं का उत्पादन स्वयं करते थे। दैनिक जीवन के वस्त्रों, बर्तनों आदि का निर्माण वे स्वयं करते थे। इस तरह उस समाज में छोटे-छोटे कुटीर उद्योग-धन्धों का प्रचलन था। समाज में तलवार बनाने वाले, सुनारों, कुम्भकारों, को अच्छी दृष्टि से देखा जाता था। विनिमय प्रणाली का प्रचलन था लेकिन मुद्रा का भी प्रचलन था। इस सम्बन्ध में बर्न्स महोदय लिखते हैं—"अधिकतर प्रत्येक घर अपने औजार स्वयं बनाता था, अपने बनाये कपड़े ही पहनता था और अपना खाद्यान्न स्वयं उत्पन्न करता था।"

नोट

व्यापार–होमरयुगीन यूनानी व्यापार शब्द से अनभिज्ञ थे। सामान्य व्यवसाय विनिमय द्वारा ही होता था। व्यापार करने की प्रथा नहीं थी। उस समय जो भी व्यापार था उस पर फिनिशिया के लोगों का एकाधिपत्य था। यूनान प्राकृतिक बन्दरगाहों से युक्त होने के कारण विदेशी व्यापार का केन्द्र था। मुद्रा सोने, काँसे तथा लौह पिन्डों में होती थी। उस समय टैलेण्ट का मूल्य अधिक होता था। एक टैलेण्ट का भार 57 पौण्ड के लगभग होता था। जल दस्युओं की अधिकता थी। शासन द्वारा भी जल दस्युओं का निर्माण किया जाता था।

नोट्स प्राचीन यूनानी समाज में कुटीर उद्योग-धन्धों का प्रचलन था। सुनारों, लुहारों और कुम्भकारों को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

12.5 धार्मिक जीवन (Religious Life)

होमर के महाकाव्यों से ज्ञात होता है कि उनका धार्मिक जीवन का चरित्र सुस्पष्ट तथा आदर्श था। महाकाव्य में जिन देवी-देवताओं का जिक्र किया गया है, वे विशिष्ट गुणों एवं क्षेत्रों का अधिष्ठाता माना गया है। जियुज (Zeus) देवों और मनुष्यों का सर्वोच्च देवता एवं नियंता था। एथेना (Athena) देवी चिरपवित्र कुमारी थी तथा सभी कलाओं की अधिष्ठास्त्री थी। अपोलो देवता सूर्य देवता था तथा स्वभाव से अधिष्ठाता था। ये सभी देवता मानव के शुभेच्छु तथा हितैषी माने जाते थे। उनकी कृपा से सभी रोग दूर हो जाते थे। ओलम्पिया में 'जियुज' देवता के मंदिर का निर्माण किया गया था जहाँ प्रत्येक वर्ष धार्मिक मेला लगता था। मंदिर के पुजारी भविष्यवक्ता का काम करते थे।

होमरयुगीन धर्म स्वभाव से प्रसन्न तथा आशावाद से परिपूर्ण था। आत्मा, परमात्मा अथवा पाप-पुण्य के विश्लेषण पर अधिक जोर नहीं दिया गया था, परन्तु मानव जीवन को खुशी एवं प्रसन्न बनाने पर अधिक जोर दिया गया था। उन लोगों ने जिन देवी-देवताओं की कल्पना की थी, वे मनुष्य के शत्रु नहीं वरन् हितैषी एवं मित्र थे। उनका स्वरूप मानव का था तथा वे मानवोचित गुणों से युक्त थे। पुराने धर्म में भूत-प्रेत के तत्व भी विद्यमान थे। कुछ पुराने अंधविश्वास भी बने रहे। पुराने धर्म और अंधविश्वास के तहत वे लोग भूत-प्रेत तथा मृतात्माओं की पूजा भी किया करते थे।

यह ठीक है कि होमर युग में वहाँ के लोग यथार्थवादी थे परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि उनमें नैतिक भावना की कमी थी। वे माता-पिता, गुरुजनों आदि के प्रति बड़े ही विनम्र थे। परोपकार को महत्त्व प्रदान करते थे परन्तु शत्रुओं के प्रति किसी भी प्रकार की दया उनमें नहीं थी।

12.6 साहित्य और कला (Art and Literature)

होमरकाल यूनानी इतिहास में संघर्षकाल के नाम से प्रसिद्ध है। संघर्ष के मध्य साहित्य और कला की उन्नति की कल्पना नहीं की जा सकती है। यही कारण है कि इस युग में साहित्य और कला की बहुत कम उन्नति हुई। इस युग में कारणों द्वारा गाये गीत ही उनका काव्य, इतिहास तथा साहित्य था।

कुछ इतिहासकारों का मानना है कि होमर काल में लेखनकला का प्रचलन था तो कुछ इसे तर्कसंगत नहीं मानते हैं। बहुत दिनों तक यह विषय विवादों के घेरे में रहा लेकिन अब यह बात मान ली गई है कि होमरयुगीन निवासी लिखना-पढ़ना भी जानते थे।

कला के क्षेत्र में भी महाकाव्य द्वारा कुछ प्रकाश नहीं डाला गया है। कला के क्षेत्र में यूनानियों ने थोड़ी-बहुत उन्नति जरूर की थी। वे मकानों का निर्माण पक्की ईंटों के द्वारा करते थे। कला की दृष्टि से उनके घर सुन्दर नहीं कहे जा सकते थे। उपयोगिता की ओर भी विशेष ध्यान दिया गया था। साधारण घरों में किसी भी स्नानागार का वर्णन नहीं मिलता है। इस युग में कुछ राजभवन तथा मंदिर बनाये गये जो अपेक्षाकृत सुन्दर थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यूनानी संस्कृति की आधारशिला होमर युग में प्रतिष्ठित की गई थी। यह वास्तव में यूनानी सभ्यता का उषाकाल था अर्थात् इस युग की सभ्यता यूनान की आरंभिक सभ्यता के नाम से पुकारी जाती है। अतः

नोट

इस बात की अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि इस युग में यूनान ने वैसी ही उन्नति की होगी जैसा कि उसके आने वाले कालों में हुई।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

5. होमर युग के यूनानी लोग व्यापार शब्द से अन्जान थे। वे सामान्य व्यवसाय विनिमय द्वारा करते थे।
6. प्राचीन यूनानी लोग बेहद धार्मिक थे तथा पाप-पुण्य, आत्मा-परमात्मा पर ज्यादा जोर देते थे।
7. यूनानी लोगों के मनोरंजन का मुख्य साधन दंगल, कुश्ती और कबड्डी थे।
8. होमर काल संघर्षकाल के नाम से भी प्रसिद्ध है। संघर्ष के कारण ही साहित्य और कला के क्षेत्र में उन्नति कम हुई।

12.7 यूनानी सभ्यता का पेरिक्लीज युग (Pericleage Age of Greek Civilization)

यूनान का ऐतिहासिक महत्त्व–पेरिक्लीज का युग एथेन्स तथा यूनान के इतिहास का एक गौरवशाली युग था। इस युग का प्रारम्भ 443 ई. पू. तथा अन्त 429 ई. पू. में हुआ था। यूनान जैसी रत्नगर्भा वसुंधरा प्रदेश कुछ ऐसे महान नायकों को अवतरित करती है जो उस देश के राजनीतिक रंगमंच पर अपनी बहुमुखी प्रतिभा से अभिनय अभिनीत करता हुआ देश का सम्यक् पथ-प्रदर्शित करता हुआ नवजीवन का संचार करता है। जिसके नाम से ही युग विशेष की अभिव्यक्ति की जाती है। प्राचीन यूनान और एथेन्स के इतिहास में पेरिक्लीज भी इन्हीं महानायकों में से एक था जिसका व्यक्तित्व यूनानी विचारधारा को प्रभावित, प्रेरित, परिवर्तित एवं सम्बोधित करता रहा, जिसके परिणामस्वरूप उनका नाम 'पेरिक्लीज युग' बन गया। चूँकि इस युग में एथेन्स का गणतांत्रिक संविधान जिसे सोलन तथा क्लेस्थनिज ने जन्म दिया था, पूर्णता को प्राप्त हुआ और एथेन्स में एक सफल गणतांत्रिक पद्धति का विकास हुआ। इस युग में एथेन्स ने न केवल कला-कौशल, साहित्य, ज्ञान-विज्ञान और दर्शन के क्षेत्र में प्रगति की तथा अपनी चमत्कारिता को प्रदर्शित किया वरन् विश्व इतिहास में अमरत्व को प्राप्त कर लिया और यूरोपीय इतिहास में सर्वोपरि हो गया। सौन्दर्य एवं सजावट के कारण एथेन्स नगरी समस्त यूनान की रानी प्रतीत होती थी। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण पेरिक्लीज का काल 'स्वर्ण युग' के नाम से जाना जाता है।

पूर्व का इतिहास–होमर युग के अंतिम समय में यूनान में डोरियन (ग्रीक) जातियों के प्रादुर्भाव ने ही होमर सभ्यता का अन्त करने के पश्चात् जिस नवीन सभ्यता को जन्म दिया उसे नगर-राज्यों का युग या क्लासिकल युग के नाम से जाना जाता है। चूँकि होमर काल की सभ्यता ग्राम्य सभ्यता थी, लेकिन ग्रीक जातियों के आने के साथ ही नगर राज्य बसने शुरू हो गये। नगर राज्यों के उदय का मुख्य कारण यह था कि प्राचीन कालीन सभ्यता में सामन्तों की शक्ति में अत्यधिक वृद्धि हो गई थी। केन्द्रीय शक्ति के अभाव में ये नगर राज्य प्रायः नगर तक ही सीमित रहते थे। ये नगर राज्य 'पोलिस' कहलाते थे। नगर राज्यों का शासन सामन्त के पास सुरक्षित था। ये नगर राज्य आपस में प्रभुता के लिए संघर्षरत् रहते थे जिस कारण अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी। कालान्तर में 'टिरिस' ने कुलीनतंत्रीय या सामन्तवादी व्यवस्था का अन्त करके नवीन व्यवस्था को जन्म दिया जिससे जनतंत्रात्मक शासन पनपा। अनेक छोटे-छोटे नगर राज्य स्थापित किये गये तथा इनमें जनतंत्रात्मक शासन प्रणाली को अपनाया गया। इन नगर राज्यों में एथेन्स, थीविज, मोगरा, कोरिन्थ, मिलिटस और स्पार्टा विशेष रूप से उल्लेखनीय थे।

क्या आप जानते हैं टिरिस ने यूनान में कुलीनतन्त्र और सामन्तवादी व्यवस्था का अन्त करके जिस व्यवस्था को जन्म दिया, उससे जनतन्त्रात्मक शासन पनपने लगा।

नोट

जहाँ एक तरफ स्पार्टा में लाइकगर्स के संविधान को स्वीकारा गया था वहीं दूसरी तरफ एथेन्स में सोलन के सुधार को वास्तविक रूप प्रदान किया गया। इस तरह यूनान के ये दो प्रमुख नगर एथेन्स और स्पार्टा अपने अलग-अलग अस्तित्व के साथ विश्व के सामने आये। पेरिक्लीज का अस्तित्व एथेन्स के साथ ही जुड़ा हुआ है। यूनान के अस्तित्व की रक्षार्थ अनेक युद्धों का सृजन हुआ जिसमें ईरान-यूनान संघर्ष, मेराथोन का युद्ध, थर्मोपाइलेई का युद्ध, सेलामिस का युद्ध, प्लेटो का युद्ध, माइकेल का युद्ध आदि प्रमुख हैं। कालान्तर में डेलोस संघ के निर्माण के साथ एथेन्स साम्राज्य का उदय हुआ। डेलोस संघ की स्थापना का श्रेय मुख्यत: थेमिस्टोक्लीज तथा कुलीन दल के नेता साईमन को दिया जाना चाहिये, जिसने एथेन्स के अस्तित्व के लिए महान कार्य किये। पेरिक्लीज से पूर्व सोलन,क्लैस्थनीज, थेमिस्टोक्लीज आदि सुधारक यूनान में हुए।

पेरिक्लीज का व्यक्तित्व—जनतांत्रिक दल का नया युग पुरुष पेरिक्लीज पाँचवीं शताब्दी ई. पू. का महानतम राजनीतिज्ञ और सफल नेता सिद्ध हुआ। पेरिक्लीज का जन्म 493 ई. पू. में एक कुलीन वंश में हुआ था। उसकी माँ सुप्रसिद्ध सुधारक क्लैस्थनीज की पुत्री थी। उसका पिता एथेन्स का भूतपूर्व जल सेनापति था जिसने साल्मिस युद्ध में भाग लिया था। माइकेल युद्ध में यूनानी जलवाहिनी का नेतृत्व किया था और तदन्तर हेलेस्पोंट को ईरानियों से छीनने में सफलता पायी थी। पेरिक्लीज ने अपने समय के सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ डेमोनिडिज और साहित्याचार्य 'पाइथोक्लीडिज' से शिक्षा पायी थी और दार्शनिक मित्र 'एनेक्जेगोरास' के संसर्ग में अंधविश्वासों से मुक्त होकर वैज्ञानिक रूप से चिन्तन करना सीखा था। उसकी प्रतिभा बहुमुखी थी। वह जिन गुणों से विभूषित था, वे गुण एक साथ विश्व के इतिहास में विरले मनुष्यों तथा राजनीतिज्ञों में मिलते हैं। वह एक कुशल शासक था जो अर्थ नीति का पूर्ण व्यावहारिक ज्ञान रखता था। उसने तत्कालीन दर्शन एवं विज्ञान का गंभीर अनुशीलन किया था तथा कला का पुजारी था। उसके व्यक्तित्व का सबसे सम्मोहक अंग थी उसकी अद्वितीय वक्तव्य कला। वह अपनी वाणी के अपूर्व प्रभाव से जनता को मंत्र-मुग्ध कर देता था। व्यक्तिगत रूप से वह भ्रष्टाचार से मुक्त था। थेमिस्टोक्लीज अपना राजनैतिक जीवन शुरू करते समय गरीब था परन्तु शीघ्र ही धनी बन गया। पेरिक्लीज ने अपने पद से ऐसा कोई लाभ नहीं उठाया और उसने 30 वर्षों तक एथेन्स की राजनीति का संचालन किया। वह शुरू में दस सेनापतियों में एक चुना गया था तथा उसके बाद वह लगातार 15 वर्षों तक सेनापति चुना गया था जो एथेन्स के इतिहास की एक अभूतपूर्व घटना थी। इसके पहले या उसके बाद कोई भी ऐसा नेता इतना लोकप्रिय नहीं हुआ जो 15 बार जनरल चुना जा सके। इन 15 वर्षों में वह वस्तुत: जनता का हृदय सम्राट तथा बेताज बादशाह था। इन्हीं 15 वर्षों में उसने उन कार्यों को अंजाम दिया जिसके कारण वह विश्व इतिहास में अमर हो गया। अपनी मृत्यु तक एथेन्स गणतंत्र की वास्तविक कार्यपालिका शक्ति उसी के हाथ में केन्द्रित रही, हालाँकि राजनीतिक जीवन में वह बहुत आदर्शवादी नहीं था और सामूहिक कल्याण के लिए हीनतर साधनों का आश्रय लेने में भी नहीं हिचकता था जिसके कारण दो वर्ष के लघु अंतराल में वह अपने प्रभाव से विमुख रहा तथापि अपने जीवन के अंतिम समय तक वह एथेन्स का भाग्य विधाता बना रहा।

पेरिक्लीज राजनीति को मात्र एक रंगमंच समझता था जिस पर सम्पूर्ण समाज का कल्याण आधृत था। उसकी मान्यता थी कि राजनीतिज्ञों को समयानुसार सत्य, असत्य, दया और कठोरता आदि का आश्रय लेना पड़ता था। उसका व्यक्तिगत जीवन शुद्ध था। वह सदैव एथेन्स के निवासियों को शिष्ट जीवन निर्वाह की सलाह देता था यद्यपि उसका जन्म उच्च वर्ग में हुआ था परन्तु राजनीतिक क्षेत्र में उसने जनता के आन्दोलन का साथ दिया और एथेन्स में जनतंत्र का विकास किया।

पेरिक्लीज की विदेशनीति—पेरिक्लीज राज्य का विस्तार चाहता था। उसकी यह इच्छा सदैव रहती थी कि एथेन्स संसार की रानी बन जाये। उसे यह ज्ञात था कि विकास की इस योजना में स्पार्टा उसका प्रतिद्वन्द्वी होगा। इसलिये उसने स्पार्टा को अलग कर देने की योजना बनाई। उसने आर्गेत, हेसली और मोगरा आदि नगरों से सन्धि की और शक्ति संचय के लिए डलोस संघ को भी अपने अधीन कर लिया। ईजिना, ट्रायजेन और एशिया से भी मित्रता की गई। ईरान से उसने केरियन की सन्धि की। एराने से उसने केरियन के सम्बन्ध में वचन दिया। स्पार्टा से जो 30 वर्षीय सन्धि की गई थी उसमें दोनों ने समझौता किया था कि वे एक-दूसरे के मित्र देशों से सन्धि नहीं करेंगे, किन्तु एथेन्स ने संधि की शर्त को तोड़ दिया।

नोट

फारस का सामना करने के लिए यूनान और इजियन सागर के तटवर्ती देशों ने एक संघ का निर्माण किया था जिसका नेता एथेन्स था। पेरिक्लीज ने अपने पद का लाभ उठाकर 'नेक्साज' थेसाज को अपने अधीन कर लिया तथा कैरिस्टल नामक नगर को संघ में सम्मिलित होने के लिए बाध्य किया। इस संघ में एक यह भी शर्त थी कि सभी सदस्य नगर राज्य को जहाज देंगे। किन्तु आगे चलकर जहाजों के स्थान पर नगर राज्य संघ को धन देने लगे। इस धन का संग्रह भी एथेन्स के अधीन था। पेरिक्लीज ने संघ के धन का उपयोग अपनी शक्ति बढ़ाने में किया। जिन नगरों ने पेरिक्लीज का विरोध किया, उसे उसने पराजित किया। डेलोस संघ समुद्र के मार्गों की रक्षा करता था। अत: पेरिक्लीज ने स्थल मार्गों से अपने देश की रक्षा के लिए दोनों ओर मजबूत दीवारों का निर्माण करवाया। इतना ही नहीं एथेन्स के नेतृत्व में उपनिवेश बसाये गये जिससे उसे कर प्राप्त होता था। इस प्रकार पेरिक्लीज ने अपनी विदेश नीति के सहारे एथेन्स की प्रभुता में वृद्धि की।

टास्क एथेन्स के पतन के लिए जिम्मेदार बाह्य कारणों का पता लगाइए।

पेलोपोनेसियन युद्ध :

एथेन्स का पतन—पेरिक्लीज की विस्तारवादी नीति से जहाँ एथेन्स की प्रभुता में बेतहाशा वृद्धि हुई, वहीं उसके अधीन राज्यों को शांति और सुरक्षा जैसे लाभ भी मिले परन्तु उनकी स्वतंत्रता नष्ट हो गई। इससे उनमें घोर असंतोष उत्पन्न होने लगा। दूसरी ओर मोगरा, कोरिन्थ और स्पार्टा आदि राज्य एथेन्स के उत्कर्ष से जलने लगे और अवसर की ताक में रहने लगे कि कैसे एथेन्स को नीचा दिखाया जा सके। 435 ई. पू. में एथेन्स ने कोरिन्थ के उपनिवेश कोरसियारा को संघ का सदस्य बना लिया। इससे क्रोधित होकर कोरिन्थ ने उसके एक अधीन राज्य पोर्न्टडाई को विद्रोह करने के लिए आन्तरिक रूप से भड़का दिया तथा स्पार्टा से एथेन्स के विरुद्ध सहायता माँगी। स्पार्टा मौके की तलाश में था ही, उसने पेलोपोनिसियन संघ की सभा बुलाई और एथेन्स से माँग की कि वह सभी यूनानी राज्यों को स्वतंत्र कर दे। लेकिन एथेन्स ने इस माँग को ठुकरा दिया जिससे 431 ई. पू. में युद्ध छिड़ गया। इस युद्ध में एक पक्ष का नेतृत्व जहाँ स्पार्टा कर रहा था वहीं दूसरी ओर एथेन्स उसका करारा जवाब दे रहा था।

एथेन्स और स्पार्टा का युद्ध दो ऐसी शक्तियों का युद्ध था जो परस्पर प्रकृत्या भिन्न थीं। इस युद्ध में यूनान के लगभग सभी राज्यों ने भाग लिया था। मोगरा, कोरिन्थ, वायोतियन संघ, फोसिस, लोक्रिस तथा आर्गोस और एकिया को छोड़कर सम्पूर्ण पेलोपोनेसियस ने स्पार्टा का साथ दिया और ईजियन द्वीपों, थ्रेस, थेसली, कोरसियारा तथा एशिया माइनर के राज्यों ने एथेन्स का साथ दिया लेकिन स्पार्टा के साथियों में एकता की भावना का प्रबल समावेश था। यह युद्ध 431 ई. पू. से 404 ई. पू. तक चला और एथेन्स के लिए काफी घातक सिद्ध हुआ। 429 ई. पू. में पेरिक्लीज की मृत्यु हो जाने से राजसत्ता सामान्य प्रतिभा वाले व्यक्तियों के हाथ में चली गई जिसके कारण एथेन्स को 404 ई. पू. में स्पार्टा के आगे आत्मसमर्पण करना पड़ा। एथेन्स की सारी शक्ति क्षीण कर दी गई। उसके सारे जलपोत छीन लिये गये तथा उसे स्पार्टा के अधीन रहने के लिए बाध्य होना पड़ा। इस धक्के से एथेन्स कभी भी उबर नहीं पाया। इस प्रकार जहाँ फारस ने अपनी बदले की भावना से प्रेरित होकर स्पार्टा के द्वारा एथेन्स को पराजित करवाया वहीं 336 ई. पू. में मेसीडोनिया के शासक फिलिप ने एथेन्स पर आधिपत्य स्थापित कर लिया तथा यूनान के सभी राज्यों को पराजित कर अपना स्वतंत्र शासन स्थापित किया।

एथेन्स के बहुमुखी विकास में पेरिक्लीज का योगदान सदा स्मरणीय रहेगा यद्यपि साम्राज्यवादी नीति में उसे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई।

गृहनीति :

संवैधानिक सुधार—जब पेरिक्लीज के हाथ में एथेन्स की बागडोर आयी, उस समय एथेन्स का समाज दो परस्पर विरोधी वर्गों में विभाजित था। पहली श्रेणी में सामन्त और उच्चवर्ग लोग थे, जिनके हाथ में शासन की बागडोर थी और यह वर्ग जनता के शोषण में अधिक अभिरुचि रखता था। ऐरियोपैगस इस वर्ग की प्रतिनिधि संस्था थी, जिसके

नोट

द्वारा राज्य का संचालन धनी वर्ग करना चाहता था। दूसरा वर्ग प्रगतिवादियों का था जिसमें गरीब और अपने अधिकारों से हीन व्यक्ति सम्मिलित थे। इन लोगों की संख्या अधिक थी। इनमें राजनीतिक चेतना का विकास हो चुका था। ये लोग अपनी प्रतिनिधि संस्था असेम्बली द्वारा शासन सूत्र को अपने हाथ में लेना चाहते थे। इस प्रकार ऐरियोपैगस तथा असेम्बली के प्रतिनिधियों के बीच अपनी प्रभुता के लिए संघर्ष जारी था।

पेरिक्लीज ने प्रगतिवादी दल का साथ दिया जिसके कारण जनतांत्रिक प्रणाली पनपने लगी। पेरिक्लीज ने कानून पारित करवाकर ऐरियोपैगस के पास मात्र धार्मिक मामले तथा हिंसा सम्बन्धी मुकदमों पर निर्णय करने का अधिकार रहने दिया, बाकी राजनीतिक शासन, निरीक्षण का अधिकार और उच्च पदाधिकारियों पर नियंत्रण रखने का अधिकार जनता की सभा को दे दिया। इससे जनतांत्रिक संविधान में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। जैसा कि **बर्न्स** ने कहा है–"पेरिक्लीज के काल में एथेन्स के लोकतंत्र को अपनी प्रवीणता प्राप्त हुई।"

पेरिक्लीज ने असेम्बली की सदस्यता प्रत्येक वर्ग के लिए खुलवा दी। फलस्वरूप लोहार, सोनार तथा मोची आदि सभी असेम्बली में बैठने लगे। शुरू में आर्कन पद केवल कुलीन वर्ग के लिए सुरक्षित समझा जाता था किन्तु पेरिक्लीज ने 457 ई. पू. में यह अधिकार सभी वर्गों के सदस्यों को प्रदान कर दिया। अधिकार देने के साथ यह भी प्रतिबन्ध लगा दिया कि एथेन्स की नागरिकता केवल उसी को दी जा सकती है जिसके माता-पिता दोनों ही एथेन्स के निवासी हों। शासन के किसी भी पद पर किसी भी व्यक्ति को नियुक्त किया जा सकता था। इसके लिये विशेष योग्यता की जरूरत नहीं थी।

असेम्बली–यह सभा जनता की मध्य श्रेणी एवं निम्न श्रेणी के व्यक्तियों की प्रतिनिधि सभा थी। पेरिक्लीज के समय में प्रत्येक स्वतंत्र नागरिक इस सभा का सदस्य हो सकता था और उसे मतदान का अधिकार प्राप्त था। इस सभा के अधिवेशन प्राय: प्रति सप्ताह होते थे और प्रत्येक सदस्य को कोई भी बिल पेश करने का अधिकार प्राप्त था। परन्तु यदि एक वर्ष के अनुभव के बाद उस बिल पर बने हुए नियम में दोष निकलता था, तो प्रस्तावक को दण्ड दिया जाता था। इसलिये लोग बहुत जल्दबाजी में और बिना सोचे-समझे बिल पेश नहीं करते थे। प्रत्येक बिल लोक सभा में पास होने के बाद ब्यूल नामक संस्था में भेजा जाता था।

ब्यूल–ब्यूल में प्रत्येक जाति के 50 सदस्य होते थे और इसके कुल सदस्यों की संख्या 500 होती थी। इन सदस्यों का कार्यकाल एक वर्ष का होता था। सदस्य बारी-बारी से सभापति होते थे। प्रशासन के कार्यों के लिए 50-50 सदस्यों की 10 उपसमितियाँ बनाई जाती थीं जो सार्वजनिक निर्माण, पदाधिकारियों पर नियंत्रण, वैदेशिक नीति और अर्थ परीक्षा आदि के कार्य करती थी। ब्यूल को लोक सभा के किसी बिल को अस्वीकार करने का अधिकार नहीं था। यह केवल पुनर्विचार के लिए अपनी सहमति के साथ बिल को लोक सभा को वापस कर सकती थी। पहले यह पद अवैतनिक था लेकिन पेरिक्लीज ने इस पद को वैतनिक कर दिया।

क्या आप जानते हैं 'ब्यूल' का स्वरूप आधुनिक लोकसभा से मिलता-जुलता था। इसमें हर जाति के 50 सदस्य होते थे और कुल सदस्य 500 थे।

दस सेनापति–इसके अतिरिक्त कार्यपालिका शक्ति के दृष्टिकोण से सर्वोच्च पदाधिकारी दस सेनापति थे, जिनकी तुलना आधुनिक संसदीय प्रणाली के अंतर्गत मंत्रिपरिषद् से की जा सकती है। ये दस सेनापति समाज की दस जातियों में से एक-एक सेनापति निर्वाचित किये जाते थे। साधारणतया ये सभी जातियों के सर्वाधिक लोकप्रिय नेता होते थे। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से ये सैनिक पदाधिकारी थे, जो युद्ध के समय प्रत्येक जाति की सेनाओं का संचालन करते थे, किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से यह पद सर्वाधिक महत्त्व और शक्ति का था। ये एथेन्स के भाग्य विधाता एवं कर्णधार थे। ये एथेन्स में सबसे शक्तिशाली मजिस्ट्रेट थे। इन्हें नीति-निर्धारण एवं उन्हें क्रियान्वयन की पूरी स्वतंत्रता थी। इस पद का महत्त्व इस बात से भी समझा जा सकता है कि पेरिक्लीज जैसे सुयोग्य और लोकप्रिय नेता ने एक सेनापति की हैसियत से ही 15 वर्षों तक एथेन्स के गणतंत्र का नेतृत्व किया।

सेना—एथेन्स का सैनिक संगठन भी जनतांत्रिक था। नागरिकों को युवावस्था से ही सैनिक शिक्षा दी जाती थी। प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य था कि वह खबर पाते ही देश की रक्षा के लिए हथियार उठाकर मैदान में आ डटे। साधारणतया सभी वर्गों की सेना को मिलाकर राष्ट्र सेना का निर्माण किया जाता था जिसका नेतृत्व सेनापति करते थे। सेनापति के आदेश का पालन सैनिकों के लिए विशेष महत्त्व रखता था। जल, थल दो प्रकार के सैनिक होते थे। सेना पर पूर्णतया एथेन्स सरकार का नियंत्रण रहता था।

न्याय व्यवस्था—पेरिक्लीज के पूर्व ऐरियोपैगस देश का प्रमुख न्यायालय था, परन्तु पेरिक्लीज ने एक सार्वजनिक न्यायालय का गठन किया। जिसे 'हेलियो' कहा जाता था। पेरिक्लीज ने ऐरियोपैगस के सभी अधिकार छीनकर हेलियो को दे दिया। इस न्यायालय में 6000 जज होते थे जिनकी नियुक्ति क्रमानुसार नागरिकों में से होती थी। इन्हें 'जूरर' कहा जाता था। समस्त 'जूरर' 500 की दस समितियों में बँटे हुए थे। इसके अतिरिक्त 30 न्यायाधीश विभिन्न प्रदेशों में घूम-घूमकर तत्कालिक न्याय करते थे। पेरिक्लीज ने जजों को भी वेतन सार्वजनिक रूप से देना शुरू किया। ऐरियोपैगस के अधीन चार अन्य न्यायालय थे और ऐरियोपैगस हत्या, हिंसा के मुकदमों का फैसला करता था। इस काल में दीवानी और फौजदारी कानून एक से थे। दासों को यह अधिकार था कि भ्रष्ट आचरण करने वाली अपनी माता-बहन, पुत्र और पुत्री की हत्या कर सके। दीवानी के मुकदमों में जिन लोगों को डिक्री मिलती थी स्वयं प्रतिवादी को उसका पालन करने के लिए बाध्य करते थे।

शासन की समालोचना—पेरिक्लीज के शासनकाल में सभी पदों पर केवल एथेन्स के ही नागरिकों की बहाली की जाती थी, योग्यता या शिक्षा का कोई विशेष महत्त्व नहीं था। जैसा **विलड्यूरॉन्ट** ने लिखा है—"एथेन्सवासियों का विशेषज्ञों की सरकार में विश्वास नहीं था।" नागरिकों का जनतंत्र में विश्वास था। केवल वही व्यक्ति नागरिक हो सकता था जिसके माता-पिता एथेन्स के निवासी होते थे। एथेन्स के नागरिकों पर आगे चलकर विदेश में शादी करने पर भी रोक लगा दी गई। इस नीति से सभी को समान अधिकार तो प्राप्त हुए परन्तु प्रशासन में शिथिलता आ गई क्योंकि कभी-कभी अयोग्य और अकर्मण्य व्यक्तियों की नियुक्ति महत्त्वपूर्ण पदों पर हो जाती थी। जनतंत्रवाद की इस नीति से केवल कुछ ही लोग एथेन्स के नागरिक हो सकते थे। दासों, स्त्रियों तथा विदेशियों को नागरिकता के अधिकार प्राप्त नहीं थे जिसके कारण उन पर घोर अत्याचार किये जाते थे।

एथेन्स में आम लोगों को अपने विचारों को प्रकट करने की स्वतंत्रता बहुत कम थी। परम्पराओं और पशुओं की आलोचना करने वालों को अपराधी समझा जाता था। एथेन्सवासी केवल उन्हीं देवताओं की पूजा कर सकते थे जिनको राजसत्ता द्वारा मान्यता दी जाती थी। इतना ही नहीं पेरिक्लीज के बाद जनतंत्र भीड़तंत्र बनकर रह गया और सुकरात जैसे व्यक्तियों को मृत्युदण्ड दिया जाना संभव हो गया।

बावजूद इसके, इसको नकारा नहीं जा सकता है कि समानता के सिद्धान्त ने प्रत्येक नागरिक को अपनी बात कहने की स्वतंत्रता दी थी। एथेन्स की राजनीति में सामन्तों की वर्चस्वता को समाप्त किया गया तथा जनसाधारण को शासन कार्य में सहभागी बनाया गया था।

सामाजिक संगठन—पेरिक्लीज युग में (यूनान) एथेन्स का समाज मुख्यत: दो भागों में विभक्त था—नागरिक और गैर नागरिक। प्रारम्भ में नागरिक को यानि उच्चवर्ग के ही हाथों में राजनीतिक अधिकार था, किन्तु पेरिक्लीज युग में जनसाधारण यानि किसान वर्ग जिसे गैर नागरिक वर्ग कहा जाता था, को सत्ता में भागीदारी मिलने लगी। पेरिक्लीज ने नागरिकता सम्बन्धी अलग से नियम ही बना दिया कि वही व्यक्ति एथेन्स का नागरिक हो सकता है जिनके माता-पिता दोनों एथेन्स के निवासी होंगे।

नोट्स शासन के पदों पर केवल नागरिक बहाल होते थे। नागरिकता उसे ही मिलती थी जिसके माता-पिता एथेन्स के निवासी थे।

समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं थी। कानूनी दृष्टि से उनका कोई अस्तित्व नहीं था। उन्हें किसी प्रकार का नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं था। उन्हें पुरुषों के अधीन रहना पड़ता था। वे सार्वजनिक कार्यों में भाग भी नहीं ले सकती थीं तथा उनका कार्य क्षेत्र घर तक ही सीमित था।

नोट

गुलाम रखने की प्रथा का प्रचलन एथेन्स में था। यूनान में बहुत बड़ी संख्या में दास रखे जाते थे। उन्हें भी नागरिकता सम्बन्धी कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं था, साथ ही वे सामाजिक अधिकार से भी वंचित रहते थे। दासों पर उसके मालिकों का पूरा हक और वर्चस्व रहता था, किन्तु यदि वे चाहते तो ऋण चुकाकर दासत्व से मुक्ति पा सकते थे।

आर्थिक विकास–पेरिक्लीज युग में अधिकांश लोग उपनिवेश बसाने तथा व्यापार करने में लगे थे। उनके आर्थिक जीवन का मुख्य उद्देश्य उपनिवेश बसाना था। इसका मतलब यह नहीं कि कृषि, पशुपालन तथा उद्योग-धन्धों का प्रचलन नहीं था। सच तो यह है कि कृषि उनका मुख्य आर्थिक कर्म था। कृषि के साथ वे पशुपालन भी करते थे। उद्योग-धन्धों का पूर्णरूप से विकास हो चुका था। छठी शताब्दी के बाद तो व्यापार का अधिक प्रचलन हो गया। विकसित देश की भाँति एथेन्स का अस्तित्व सामने आ गया था। वे व्यापार के उद्देश्य से ही उपनिवेश का निर्माण करते थे। आर्थिक सम्पन्नता के कारण ही तो इस युग को स्वर्ण युग की संज्ञा दी गई थी।

धार्मिक उन्नति–धर्म के क्षेत्र में विकास के लिए पेरिक्लीज युग अपनी उपलब्धि के लिए विशेष प्रसिद्ध है। साधारणतया धर्म का अर्थ होता था कि कोई वर्ग कुछ ऐसे सिद्धान्त को स्वीकार कर लेता है जिनके द्वारा आत्मा और परमात्मा का सम्बन्ध संभव हो जाता है। धार्मिक संस्थाओं में मंदिर और पुरोहितों का संगठन आवश्यक होता है, परन्तु यूनान में न कोई मत था और न कोई मंदिर ही। पुरोहितों को मात्र धार्मिक क्रियाओं को कराने का अधिकार था। एक वैज्ञानिक ने लिखा है कि यूनान में प्रकृति के विभिन्न रूपों को देखकर और समझकर देवी-देवताओं के रूप में प्रतिष्ठित किया गया और इस बाह्य जगत तथा अन्तर्जगत के साथ सम्बन्ध स्थापित किया गया। यूनानियों ने काम, क्रोध, मद, लोभ, घृणा आदि मनोवृत्तियों को भी देवी-देवताओं के रूप में प्रतिष्ठित किया और इस प्रकार यूनान में भी देवी-देवताओं की बाढ़-सी आ गयी।

क्या आप जानते हैं समय के साथ यूनानी लोग अंधविश्वासी हो गए। शकुन-अपशकुन मानने लगे तथा पशु-बलि देने लगे।

यूनानी लोगों की कल्पना में व्यवहार की मान्यता इतनी अधिक बढ़ गई कि लोग धन का आदान-प्रदान, सेनाओं का संचालन आदि सब देव वन्दना के बाद ही करते थे। सभी जातियों और वर्गों के लोग किसी न किसी देवी-देवता से संरक्षित थे। इस प्रकार धर्म व्यावहारिक जीवन से घुल-मिल गया था और इसलिये यूनानियों ने कभी मंदिर या धार्मिक संस्था अलग से स्थापित करने की चेष्टा नहीं की। यूनानियों के सभी देवी-देवताओं की प्रकृति मनुष्यों के समान थी केवल उनमें सौन्दर्य और अमरत्व का दैवीय गुण था।

कालान्तर में यूनानी लोग अंध-विश्वासों, भविष्यवाणियों तथा शकुन-अपशकुनों में अधिक विश्वास करने लगे और दैवीय शक्ति को संतुष्ट करने के लिए पशुओं की बलि दी जाने लगी। धार्मिक उत्सवों को भी देवताओं को प्रसन्न करने के लिए मनाया जाने लगा। इन उत्सवों में आमोद-प्रमोद, कला-प्रदर्शन, नृत्य-संगीत और रास-रंग को महत्त्व दिया जाता था। कुछ स्थानों में देव-मंदिरों का निर्माण भी कालान्तर में किया जाने लगा जहाँ भक्तजन उपहार और दान आदि देवता को प्रसन्न करने के लिये चढ़ाते थे तथा इच्छित फल की याचना करते थे।

उदाहरण– भारत, ईरान आदि देशों में जिस प्रकार धार्मिक क्रांतियाँ हुईं उसी प्रकार एथेन्स में भी उपर्युक्त कृत्यों के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ हुए।

सबसे पहले पिण्डार ने साहित्य रचना द्वारा जनता का ध्यान अंधविश्वासों के विरुद्ध दिलाया। इसी प्रकार यूरोपियन ने नाटक रचना करके धार्मिक कथाओं में बताए हुए देवताओं के न्याय की अराजकता पर क्षोभ प्रकट किया। एक्कोइलस और साफोक्लीज ने यूनान के बहुदेववाद पर प्रहार किया और एकेश्वरवाद का प्रतिपादन किया तथा 'जियुज' को देवताओं के सम्राट के रूप में प्रतिष्ठित किया।

नोट

12.8 एथेन्स का सर्वांगीण विकास (Complete Development of Athens)

पेरिक्लीज एथेन्स को यूनान का हृदयस्थली बनाना चाहता था। उसके कुशल नेतृत्व में एथेन्स का सर्वांगीण विकास हुआ और सांस्कृतिक उपलब्धि इस युग की विशेष उपलब्धि थी। पेरिक्लीज के नेतृत्व में जहाँ लोगों ने गणतांत्रिक जीवन का आनन्द उठाया वहीं सांस्कृतिक विकास से लाभ। इस युग में साहित्य, दर्शन, विज्ञान, कला की उन्नति पराकाष्ठा पर पहुँच गई। सभी को स्वतंत्र, सुरुचिपूर्ण एवं सुन्दर जीवन की सुविधा प्राप्त थी। इन्हीं उपलब्धियों को देखकर इस युग को यूनान का स्वर्णयुग कहा जाता था।

नगर सौन्दर्यता–पेरिक्लीज के संरक्षण में एथेन्स नगर सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बन गया था। नगर में पक्की और चौड़ी सड़कें थीं जो एक-दूसरे को समकोण बनाकर काटती थीं। भवन सीधी पंक्ति में बनाये गये थे। पेरिक्लीज द्वारा निर्मित नगर के दोनों ओर प्राचीर तथा पेरुष का बन्दरगाह सौन्दर्य के दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण थे। उसने नगर की सफाई का भी समुचित प्रबन्ध किया।

वास्तुकला–पेरिक्लीज का काल एथेन्स में स्थापत्य कला के विकास के लिए भी प्रसिद्धि रखता है। उसके द्वारा निर्मित भवनों में सभाभवन, संगीत भवन और पार्थेनीन, नाम का देवालय अत्यन्त प्रसिद्ध है, जहाँ सम्राट स्वयं जाया करते थे और वककृताएँ देते थे अर्थात् संगीत तथा नृत्य प्रतियोगिता आयोजित करवाते थे। पार्थेनीन के देवालय को सफेद संगमरमर से बनाया गया था और टुकड़ों को इस प्रकार जोड़ा गया था कि कहीं जोड़ का निशान मालूम नहीं होता था। पार्थेनीन के मंदिर में 46 खम्भे थे जिसकी ऊँचाई 34 फीट थी। इस मंदिर का निर्माण 432 ई.पू. में किया गया था। पेरिक्लीज के समय में यूनान की डोरिक और आयोनिक शैली का पूर्ण विकास हुआ जो कालान्तर में अत्यन्त लोकप्रिय हुई।

मूर्तिकला–पेरिक्लीज युग मूर्तिकला के लिए भी प्रसिद्ध है। इस युग के कारीगरों ने सोने, काँसे, हाथी के दाँत की उतनी ही सुन्दर मूर्तियों का निर्माण किया जितनी संगमरमर की मूर्तियों का। आगोस के कलाकारों में सबसे अधिक पोलिक्लीट्स प्रसिद्ध है। उसने डेरा की स्वर्ण और हाथी दाँत की मूर्तियाँ इतनी सुन्दर बनाई थीं कि उसकी तुलना अनुकरणीय मानी जाने लगी। इस युग का प्रसिद्ध मूर्तिकार फीडियस (Phidias) था जिसने एथेना देवी की अत्यन्त सुन्दर एवं विशाल मूर्ति का निर्माण किया था। यह मूर्ति काँसे से बनी थी। एथेना देवी की मूर्ति मंदिर के बीच में मुस्कुराती प्रतीत होती थी।

टास्क एथेन्स में 'एथेना देवी' की मूर्तियाँ थीं। यूनान के अन्य राज्यों में किन देवी-देवताओं की मूर्तियाँ थीं, इसका पता लगाइए।

चित्रकला–वास्तुकला तथा मूर्तिकला के अलावा चित्रकला के क्षेत्र में भी पेरिक्लीज युग ने पराकाष्ठा को प्राप्त किया था। इस युग में चित्रकला की तीन शैलियाँ प्रचलित थीं–

(*i*) फ्रेस्को विधि में ताजे प्लास्टर पर चित्र बनाये जाते थे।

(*ii*) टेम्परा विधि में अण्डे की सफेदी मिलाकर गीले रंगों के कपड़े या बोर्ड पर चित्र बनाये जाते थे।

(*iii*) एन्कास्टिक विधि में मोम मिलाकर रंगों का प्रयोग किया जाता था। इस काल की चित्रकला वास्तुकला की अधिक सहायक थी। इस युग के प्रमुख चित्रकारों में 'पोली ग्नोट्स' और 'परेसियन' आदि प्रमुख हैं। चित्रकार अपनी कल्पना को यथार्थता की कसौटी पर कसकर ही चित्रण करते थे। पार्थेनीन की दीवारों पर अनेक चित्रों का अवलोकन किया जा सकता है जो काफी सजीव और सुन्दर प्रतीत होते हैं।

साहित्य–पेरिक्लीज युग में साहित्य भी अपने विकास के चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया था। जिस प्रकार गुप्त युग के कवि कोकिल कालिदास, विशाखदत्त एवं अमर सिंह, हर्षवर्धन के काल में बाणभट्ट, चारण, दिवाकर तथा मयूर जैसे कवियों, नाटककारों, विचारकों एवं लेखकों का प्रादुर्भाव हुआ, जिन्होंने अपनी लेखनी से भारतीय साहित्य भंडार को परिपूर्ण कर दिया तथा अपना नाम अमर कर लिया ठीक उसी प्रकार इडीज, डेशेलस, सोफोक्लीज, एरिस्टोकेनीज,

नोट

दार्शनिक हेराक्लीट्स, वैज्ञानिक नक्सागोरस, इतिहासकार हेरोडोटस एवं थ्यूसीडाइडीज आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

नाटक–पेरिक्लीज युग में नाटक लिखने का सर्वाधिक कार्य किया गया। इस युग में दुखान्त और सुखान्त दोनों प्रकार के नाटकों का सृजन किया गया। इस युग के दुखान्त नाटकों में एथेन्सवासियों के साहित्यिक गुणों की छटा मिलती है। यूनान का नाटक अन्य देशों की तुलना में भिन्न था। यहाँ के नाटकों की आधारभूत कथाएँ धार्मिक थीं तथा रंगमंच पर बहुत कम दृश्य दिखाये जाते थे। इन नाटकों में नारी-प्रेम का अभाव होता था तथा ये नाटक अधिकतर दुखान्त होते थे।

नाटकों का प्रारम्भ डायोनाइसस के सम्मान में उत्सव से आरम्भ होता था। इस उत्सव में कुछ लोग बकरे का रूप बनाकर एक वेदी के चारों तरफ नाचते और गाते थे तथा घटनाओं का गीतों में वर्णन कर गाते थे। आगे चलकर नाच-गाना कम हो गया और संवाद के रूप में कथा का विकास होने लगा जो बाद में नाटक के रूप में प्रस्तुत हुआ। 'दुखान्त' नाटकों का संस्थापक एस्काइलस था जिसने 80 नाटकों को लिखा था। उसके नाटकों में रूढ़िवादी भावनाओं की अधिकता है। वह स्वयं भाग्यवादी और आस्तिक था और सांसारिक जीवन की सत्यता में विश्वास नहीं करता था। दूसरा नाटककार सोफोक्लिस था। उसकी रचनाओं में संसार के प्रति अविश्वास और जीवन की क्षणभंगुरता के प्रति क्षोभ प्रकट किया गया है। यूरोपीडिज ने धार्मिक कुरीतियों तथा स्त्रियों, दासों पर किये गये अत्याचारों की कड़ी आलोचना की। उसने नारी जाति का प्राणदायक चरित्र प्रस्तुत किया।

सुखान्त नाटककारों में ऐरिस्टोफेनिज का नाम अधिक प्रसिद्ध है। उसने जीवन की साधारण घटनाओं को लेकर धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक कुरीतियों पर आक्रमण किया तथा राजनीतिज्ञों की जमकर खिल्ली उड़ाई है। उसके विषय में एक इतिहासकार ने लिखा है–"जिसने एरिस्टोफेनिज का अध्ययन नहीं किया वह एथेन्सवासियों को नहीं जान सकता।"[1]

काव्य–पेरिक्लीज युगीन यूनान का सबसे बड़ा कवि पिण्डार को माना जाता है। वह यूनान के कई राजदरबारों में बतौर कवि नियुक्त हुआ और अत्यन्त कुशल वीणावादक था। उसकी रचनाओं में आकूलता, श्रद्धा, देशभक्ति भावना कूट-कूटकर भरी थी। राजनीतिक क्षेत्र में यह कुलीन वर्ग का समर्थक था। एथेन्सवासियों ने इसी कारण उसकी एक मूर्ति स्थापित की थी। सिकन्दर महान ने जब थीबिज का नाश किया तो उसने पिण्डार के निवास स्थान को छोड़ दिया।

इतिहास–हेरोडोटस तथा थ्यूसीडाइडिज इस युग के प्रमुख इतिहासकार हुए। थ्यूसीडाइडिज को वैज्ञानिक इतिहास का जन्मदाता कहते हैं। हेरोडोटस ने मुख्य रूप से ईरान और यूनान के संघर्ष की कथा लिखी, परन्तु राजनीतिक घटनाओं के साथ साहित्य, कला, वेश-भूषा धर्म और श्रृंगार के साधनों आदि का विस्तृत वर्णन किया है। अत: उसके ग्रन्थ राजनीतिक कम और साहित्यिक अधिक हैं। थ्यूसीडाइडिज कुशल सेनानी और योग्य सेनापति था। उसने एथेन्स और स्पार्टा के संघर्ष का वर्णन किया है। उसने अपने लेखन में सत्यता को अधिक महत्त्व दिया। यही कारण है कि मैकाले ने उसे महानतम इतिहासकार माना है। अपने ग्रन्थ में उसने राजनीतिक पक्ष पर अधिक बल दिया है उसने एथेन्स साम्राज्य के पतन के इतिहास को बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से लिखा है।

विज्ञान–प्राय: लोगों का मानना है कि यूनानी लोग विज्ञान के बहुत बड़े ज्ञाता थे। परन्तु वास्तव में यह धारणा गलत है। विज्ञान एवं दर्शन एशिया की देन है, यूनान वालों ने उससे घनिष्टता दिखलायी है।

यूनान के वैज्ञानिक 'थेलिज' ने प्रारम्भ में बीजगणित की खोजें कीं। पैथागोरस की खोजें उससे अधिक महत्त्वपूर्ण थीं। हिप्पोक्रेटिज और डिमोक्रेटिज ने इस विज्ञान को अधिक विकसित किया। कृप्पोक्रेटि ने रेखा गणित की प्रथम पुस्तक का निर्माण किया।

पेरिक्लीज युग के वैज्ञानिकों ने चिकित्सा शास्त्र में काफी प्रगति की थी। एम्पिडोक्लीज ने यह सिद्ध कर दिया था कि रक्त हृदय से प्रभावित होता है और शरीर के छोटे-छोटे छिद्र स्वास्थ्य प्रक्रिया में सहायक होते हैं। 'अल्वमेयन'

नोट

ने यह बतलाया था कि विचारों का केन्द्रबिन्दु मस्तिष्क है उसने पशुओं की शल्य चिकित्सा प्रारम्भ की। निद्रा प्रक्रिया का अनुसंधान किया और आप्टिव नर्व (Optive Nerve) का ज्ञान प्राप्त किया। इसी काल में 'यूराईफोन' ने प्यूरिसो को फेफड़ों की बीमारी बताया और यह भी बताया कि कब्ज अनेक रोगों का कारण होती है। 'हिप्पोक्रेटिज' ने चिकित्साशास्त्र को धर्म और दर्शन शास्त्र से अलग करके संक्रामक रोगों का पता लगाया और बतलाया कि रोग प्राकृतिक कारणों से होते हैं न कि दैवीय शक्ति के प्रकोप से।

ज्योतिष–ज्योतिष के क्षेत्र में 'एम्पिडीक्लीज' पामेनिडिज और काइलोसीस तथा डिमोक्रेटीज के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्होंने कई महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों की खोज की।

- विश्व का निर्माण चार तत्व–क्षिति, जल, पावक और हवा से हुआ है।
- प्रकाश एक जगह से दूसरी जगह तक जाने में समय लेता है।
- पृथ्वी गोल है।
- चन्द्रमा को सूर्य से प्रकाश मिलता है।
- पृथ्वी सूर्यमण्डल में एक ग्रह मात्र है।
- चन्द्रमा पृथ्वी का निकटतम ग्रह है।
- ग्रहण का कारण चन्द्रमा और सूर्य हैं।

इस क्रांतिकारी वैज्ञानिक आविष्कार ने एथेन्स में बहुत हलचल मचायी और धर्म गुरु विशेष रूप से 'याकेनिडिज' की हत्या के लिए छटपटाने लगे। एनेक्सागोरस को एथेन्स भागकर अपनी जान बचानी पड़ी।

दर्शन–यूनान की स्वतंत्र विचारधारा को दर्शन ने सबसे अधिक प्रोत्साहित किया। यूनानी दर्शन का प्रारम्भ 600 ई. पू. में हुआ और नित्य तथा अनित्यवादी सम्प्रदायों का जन्म हुआ 15वीं सदी ई.पू. में अणुवादियों ने दोनों में मेल कराने का असफल प्रयास किया कि विश्व निर्माण करने वाले तत्व असंख्य और अनश्वर हैं। यद्यपि इनके आकार में भिन्नता है फिर भी इनके गुणों में समानता है। पेरिक्लीज का मित्र 'एनेक्सागोरस' इस विचार से पूर्णरूप से सहमत नहीं था। उसने चेतन और अचेतन में भेद किया और यह माना कि विभिन्न तत्वों के संगठन और विघटन से ही चेतन और अचेतन वस्तुओं का निर्माण होता है।

इसी युग में विदेशियों ने एथेन्स में नये सिद्धान्तों का प्रचार किया जिसे सोफिस्ट कहा गया। इन विचारकों में सर्वप्रथम सोफिस्ट 'गोरस' था जिसने यह सिद्धान्त निकाला कि मनुष्य ही सब वस्तुओं का मापदण्ड है। वैज्ञानिकों ने 'गोरस' के इस सिद्धान्त को शंकावाद कहा और 'जिनियस' ने इसको दूसरे रूप में समझाया। उसने कहा कि ज्ञान की प्राप्ति बिल्कुल असंभव होती है क्योंकि किसी वस्तु का अस्तित्व है ही नहीं, इसलिये मनुष्य उसे जान नहीं सकता और अगर जान भी गया तो प्रकाशित नहीं कर सकता।

थ्रेसीमेकस ने यह सिद्धान्त रखा कि व्यक्तियों के आचरण के समस्त नियमों का निर्माण शक्तिवान अपने हित में करते हैं। न्याय नाम की कोई वस्तु संसार में नहीं है, इसलिये चतुर मनुष्य वही है जो अपने शक्ति बल से अपना हित पूरा कर सके। सोफिस्टों ने सामान्य जनों के अधिकारों का समर्थन किया और दास प्रथा एवं युद्धों का विरोध किया।

इसी समय यूनान में एक ऐसे विचारक का जन्म हुआ जिसने सत्य को स्थायित्व और आदर्शों को दृढ़ता प्रदान की। इस महावीर का नाम सुकरात था। **सुकरात** एथेन्स का रहने वाला था, इसलिये यूनानी दर्शन सुकरात के कारण एथेन्स का बनकर रह गया। वह सोफिस्टों के सिद्धान्त का विरोधी था। यद्यपि उसने स्वयं कुछ नहीं लिखा परन्तु उसके शिष्यों के लेखों से उनकी भावनाएँ ज्ञात होती हैं। वह न तो विशुद्ध दर्शन के अध्ययन में, न क्लिष्ट धार्मिक समस्याओं के समाधान में विश्वास करता था। उसका मुख्य विषय आचारशास्त्र था। वह कहा करता था कि देवता देखे नहीं जा सकते। यदि मनुष्य सच्चाई के साथ काम करे तो सत्य का दर्शन कर सकता है। उसने अपने जीवन का लक्ष्य सत्य की खोज बतलाया था। सुकरात के विचार अत्यन्त प्रगतिशील थे जिसके कारण एथेन्स सरकार ने उस पर अनेक दोष लगाये तथा विषपान करके शरीर को त्यागने के लिए बाध्य किया। जिस वर्ष सुकरात मरा था उस वर्ष पेरिक्लीज की भी मौत हुई थी।

नोट

सुकरात के दो शिष्य प्लेटो और अरस्तू पेरिक्लीज युग के बाद आते हैं जिन्होंने एथेन्स के सामाजिक जीवन में क्रांति पैदा कर दी। प्लेटो के अनुसार मनुष्य में सत, रज और तम गुण प्रधान होते हैं। वह मनुष्य को राजनीतिक जीव मानता था।

अरस्तू के विषय में कहा जाता है कि वह अपने समय का प्रकाण्ड विद्वान था और उसने कई शास्त्रों और विधाओं का गूढ़ अध्ययन किया था। शासनतंत्र को वह मध्यम वर्ग के हाथ में रखना ज्यादा उचित समझता था। उसके अनुसार संसार में दो ही तत्व हैं और दोनों एक-दूसरे पर आश्रित हैं। इन दोनों तत्वों के संयोग से ही सृष्टि का निर्माण होता है। वह वैराग्य तथा तप का पक्षपाती नहीं था, बल्कि समुचित जीवन व्यतीत करने का उपदेश देता था।

> *क्या आप जानते हैं* अरस्तू अपने समय का प्रकाण्ड विद्वान था उसने कई शास्त्रों और विद्याओं का गूढ़ अध्ययन किया था।

धार्मिक जागृति–भारत, ईरान आदि देशों में जिस प्रकार धार्मिक क्रांतियाँ हुईं, उसी प्रकार एथेन्स में भी प्राचीन धार्मिक कृत्यों के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ हुए। सबसे पहले पिण्डार की साहित्यिक रचना के द्वारा जन सामान्य का ध्यान अंधविश्वासों के विरुद्ध गया। इसी प्रकार यूरीपिडिज ने नाटक रचना करके धार्मिक कथाओं में बताई हुई देवी-देवताओं के न्याय की अराजकता पर क्षोभ प्रकट किया। एम्कोलेइलस और सोफोक्लीज ने यूनान के बहुदेववाद पर प्रहार किया। इन लोगों की साहित्यिक कृति तथा विचारधाराओं से जन सामान्य में धार्मिक जागृति आई और उन्होंने प्राचीन धर्म की मान्यताओं को तिलांजलि दे दी।

मूल्यांकन–सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यूनान ने सदा अमरत्व को प्राप्त कर पेरिक्लीज युग को स्वर्ण युग सदृश्य साबित कर दिया परन्तु राजनीतिक दृष्टि से उसकी विशेष ख्याति नहीं मानी जा सकती। मात्र पेरिक्लीज के कुछ संवैधानिक सुधार देखे जा सकते हैं वो भी जनहित से परे। बावजूद इसके पेरिक्लीज ने जनतंत्र का अत्यधिक विकास किया और निम्नकोटि के व्यक्तियों को ऊँचे पद प्राप्त करने का सुअवसर प्रदान किया। यही कारण है कि स्पार्टा के लोग एथेन्स से जलते थे। **विल ड्यूरान्ट** ने लिखा है कि–"स्पार्टा से जो भी व्यक्ति एथेन्स जाते थे उन्हें ऐसा लगता था जैसे वे किसी सैनिक-शिविर से निकलकर क्रीड़ास्थल पर आ गये हों।"

यूनान की सांस्कृतिक निधि पाश्चात्य सभ्यता से स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। इसी कारण बर्न्स ने लिखा है–"यूनानी लोग उन आदर्शों के जन्मदाता थे जो आधुनिक युग में पश्चिम की देन मानी जाती है।"

राजनीतिक चेतना का सर्वप्रथम प्रसूतिगृह यूनान को ही कहा जाता है, जहाँ जनतंत्र के विविध उपकरणों का प्रचुर मात्रा में उपयोग किया गया। यूनानियों ने सांसारिक जीवन को सुखी बनाने का सदा प्रयास किया। उन लोगों ने यथार्थवाद और आदर्शवाद से समन्वय स्थापित किया। आर्थिक जीवन में भी उनकी संतुलन भावना महान थी।

यूनान की इन सभी विचारधाराओं ने मानव जाति के सांस्कृतिक और बौद्धिक विकास में जो योगदान दिया वह चिरंतर और चिरकालीन है। यूनानी दर्शन बहुमुखी है जिसके अन्तर्गत भौतिकवाद, अध्यात्मवाद, आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, आत्मदर्शन, आचारशास्त्र, समाजशास्त्र, चिकित्साशास्त्र और मनोविज्ञान आदि पर समान रूप से सफलतापूर्वक कार्य किया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पेरिक्लीज का युग विश्व इतिहास में, विशेषत: बौद्धिक विकास एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों के लिए प्रसिद्ध है। इस युग की तुलना हम भारतीय इतिहास के सर्वगुण सम्पन्न गुप्त युग तथा इंग्लैंड के इतिहास के एलिजाबेथ के युग से कर सकते हैं। इन्हीं गुणों की भाँति पेरिक्लीज युग में यूनान का चतुर्दिक विकास हुआ तथा यूनान विश्व का सांस्कृतिक केन्द्र बन गया जिसका सारा का सारा श्रेय पेरिक्लीज के व्यक्तित्व एवं नेतृत्व को दिया जा सकता है।

विश्व सभ्यता को यूनान की देन–प्रसिद्ध विद्वान **'सर हेनरीमैन'** का विचार है कि आधुनिक युग में हम जिन-जिन चीजों को देखते हैं, उन सबकी उतपत्ति प्राचीन यूनानी सभ्यता से हुई है। उनका उक्त विचार बहुत अंशों में सटीक और अक्षरशः सही बैठता है। वास्तव में आधुनिक विचारों, सिद्धान्तों, प्रणालियों (टेक्नोलॉजी), कला के मूल परिनियमों में यूनान की प्राचीन सभ्यता की जीवनधारा मिली है। यदि आधुनिक यूरोप का पिता या जनक प्राचीन यूनान को कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आज विश्व इतिहास के पन्नों से यूनानी प्रतिभा की कृतियों को हटा लिया जाये तो विश्व संस्कृति निर्धन तथा निर्जीव हो जायेगी। तात्पर्य यह कि यूनानी सभ्यता की विश्व सभ्यता को अनेक महत्त्वपूर्ण देन है जिनमें कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं–

राजनीति के क्षेत्र में–राजनीति के क्षेत्र में यूनान ने विश्व सभ्यता को काफी प्रभावित किया। जहाँ स्पार्टा में कुलीनतंत्र था, वहीं एथेन्स में स्वतंत्रता और समानता पर जोर देकर एक नये अध्याय का सृजन किया जो मानव सभ्यता के लिए अमूल्य देन है। मताधिकार का प्रयोग विश्व सभ्यता के प्रति चिरस्थायी देन है। राजनीति शास्त्र की प्रसिद्ध पुस्तक 'रिपब्लिक' जिसे प्लेटो ने लिखा था तथा अरस्तु की 'पोलिटिक्स' पुस्तक राजनीति के क्षेत्र को प्रभावित करती है। उक्त कृति आज भी विश्व के सामने एक आदर्श को प्रस्तुत करता नजर आता है।

साहित्य के क्षेत्र में–प्राचीन यूनान अपने उच्चकोटि के साहित्य के लिए भी विश्वविख्यात है। प्राचीन यूनान के सबसे प्रसिद्ध महाकाव्यों का लेखक होमर नामक कवि था। इसके अतिरिक्त सुखान्त और दुखान्त नाटक लिखने का पहला प्रयोग यूनान में ही हुआ जो विश्व के लिए आदर्श बन गया। गीतिकाव्य का प्रचलन भी यूनान की देन है। यूनानी भाषा और साहित्य का प्रभाव यूरोपीय साहित्य पर दृष्टिगोचर होता है। परवर्ती यूरोपीय लोकभाषाओं का साहित्य यूनानी काव्यों का चिरऋणी है।

इतिहास के क्षेत्र में–इतिहास लेखन में इतिहास का पिता 'हेरोडोटस' तथा 'थ्यूसीडाइडिज' ने यूनान में ही अपना प्रथम इतिहास लेखन का प्रयोग किया था। जिसका अनुकरण विश्व के अन्य देशों ने किया तथा इतिहास लेखन की कला का विकास तथा प्रचलन हुआ। इतिहास को वैज्ञानिक ढंग से सीखने की कला का प्रचलन यूनान से ही शुरू हुआ था।

दर्शन के क्षेत्र में–दर्शन के क्षेत्र में यूनान की देन अद्वितीय है। दार्शनिक चिन्तन-मनन का श्रीगणेश यूनान में ही हुआ और उसे शुरू करने वालों में सुकरात, प्लेटो और अरस्तू का नाम प्रमुख है। विश्व में पहली बार 'सिनिकमत' का प्रचलन यूनान ने किया तथा इससे सम्बन्धित पुस्तक 'यूटोपिया' को डायोजिनीज ने लिखा है। इसके साथ ही जेनों के 'स्टोइकमट' का प्रचलन भी हुआ।

विज्ञान के क्षेत्र में–विज्ञान के क्षेत्र में तो यूनान की देन महत्त्वपूर्ण कही जा सकती है। यूनान में ही सर्वप्रथम रेखागणित, पदार्थ विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, शल्य चिकित्सा, आविष्कार, ज्योतिष आदि का विकास हुआ। प्रकृति के अध्ययन सम्बन्धी कई सिद्धान्तों का प्रचलन हुआ। आकर्षण-विकर्षण की शक्तियों द्वारा प्रकृति के चार तत्वों का विश्लेषण किया गया। 'डेमोक्रिट्स' ने अणु सिद्धान्त का प्रवर्तन किया जिसे रोम ने सीखा। रक्त संचालन सम्बन्धी नियमों का प्रतिपादन 'एम्पिडोक्लीज' ने किया। फेकर की बीमारी का ज्ञान प्राप्त करना, सूर्यग्रहण, ग्रह ज्ञान, प्रकाश परावर्तन आदि का ज्ञान सर्वप्रथम यूनान ने ही प्राप्त किया तथा विश्व को सिखलाया। अतः विज्ञान सम्बन्धी देन में यूनान की अद्वितीय भूमिका मानी जायेगी।

टेक्नोलॉजी (प्रणालियाँ)–विश्व सभ्यता को विशिष्ट प्रणाली (टेक्नोलॉजी) देने का भी काम सर्वप्रथम यूनान ने ही किया। इस सन्दर्भ में उसकी देन महान है। कुछ ही अंशों में सही यूनान ने गणतंत्र की स्थापना कर विश्व को समानता और भाईचारा का संदेश दिया। आज विश्व में अनेकता में एकता की प्रणाली का विकास किया जा रहा है, यह टेक्नोलॉजी यूनान ने ही विश्व को दी है।

प्राचीन यूनान की आर्कन, ब्यूल जैसी संस्था ने आधुनिक प्रजातंत्र प्रणाली को विकसित रूप दिया है और उसी प्रणाली के अन्तर्गत आज लोक सभा, राज्य सभा और विधान सभा आदि का विकास हुआ है। अतः यह टेक्नोलॉजी भी यूनान ने ही विश्व को दिया है।

नोट

पेरिक्लीज के व्यवहार और नीति ने हमें नवीन पद्धति का ज्ञान दिया कि शांति स्थापना के उद्देश्य से कई राज्य मिलकर संघ का निर्माण करके अपना-अपना विकास कर सकते हैं। आज उसी टेक्नोलॉजी का परिणाम है कि विश्व में संयुक्त राष्ट्रसंघ का निर्माण विश्व शांति के उद्देश्य से किया गया है।

यूनान के 10 सेनापति सभा सम्बन्धी संस्था ने हमें नवीन पद्धति दी जिसके आधार पर आज शासनार्थ मंत्री परिषद् का गठन किया जा रहा है।

उपनिवेश स्थापना की पद्धति ने विश्व के अनेक देशों को इसके प्रति उकसाया जिसे व्यावहारिक रूप अंग्रेजों ने भारत में उपनिवेश बसाकर दिया तथा भारत का शासक बनकर दिखलाया।

यूनानी साहित्यकार ने धर्म के प्रति क्षोभ प्रकट करते हुए अपनी लेखनी को आगे बढ़ाया। उसकी विकसित प्रणाली ने विश्व में धार्मिक क्रांति लाने का काम किया जिससे सामाजिक और धार्मिक ढाँचे में परिवर्तन लाया जा सका।

यूनानी कला के विकास ने नवीन शैली को जन्म दिया जिसे हम 'कलात्मक पद्धति' कह सकते हैं। आज विश्व स्तर पर मधुबनी पेन्टिंग, अमेरिकन पेन्टिंग विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इन पेन्टिंग का जन्मदाता यूनानी चित्रकला को ही मानना श्रेयस्कर होगा।

आज के वैज्ञानिक युग में चिकित्सा विज्ञान ने काफी तरक्की कर ली है। हर रोग का इलाज संभव होने लगा है। ऑपरेशन की प्रक्रिया से लाइलाज रोगों पर भी काबू पाया जा रहा है, किन्तु सही मायने में देखा जाये तो सर्जरी प्रक्रिया की नींव यूनानी लोगों ने ही पशु चिकित्सा के द्वारा डाली थी जिसकी "विकसित प्रणाली" आज के वैज्ञानिक युग में हमें देखने को मिलती है।

कला—कला के क्षेत्र में भी यूनानियों की कम महत्त्वपूर्ण देन नहीं है। स्थापत्यकला, चित्रकला आदि के क्षेत्र में यूनानी कलाकारों ने अपनी दक्षता का परिचय दिया। उनकी कृतियाँ उनके द्वारा बनाये चित्रों, भवनों, प्रासादों, मूर्तियों आदि में देखने को मिलती है जो आज भी यूरोपीय संग्रहालयों की बहुमूल्य निधियाँ हैं। एथेन्स ने ही यूरोप को कला के क्षेत्र में नेतृत्व प्रदान किया।

इस तरह हम कह सकते हैं कि ज्ञान-विज्ञान, कला, साहित्य, दर्शन, राजनीति, इतिहास, टेक्नोलॉजी आदि ऐसा कोई भी क्षेत्र यूनानी प्रतिभा से अछूता नहीं था। यही कारण है कि पाश्चात्य सभ्यता का विशाल ज्ञान भंडार या आदि स्रोत यूनान को ही माना जाता है। यूरोपीय विद्वान, इतिहासकार आज गर्व के साथ घोषणा करते हैं कि प्राचीन यूनान यूरोपीय सभ्यता का पिता है। महाकवि 'शैली' तथा 'इतिहासकार' 'फिशर' ने भी इस विचार को अपनी रचनाओं में व्यक्त किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)—

9. उपनिवेश बसाने के अलावा यूनानियों का दूसरा प्रमुख कार्य .... था।

   (क) कृषि (ख) उद्योग

   (ग) मछली पालन (घ) व्यापार

10. दुखान्त नाटकों का संस्थापक .... था, जिसने 80 नाटकों को लिखा था।

   (क) प्लेटो (ख) पेरिक्लीज

   (ग) एस्काइलस (घ) इडीज

11. एथेन्स का वह महान विचारक जिसने सत्य को स्थायित्व और आदर्शों को दृढ़ता प्रदान की, ... था।

   (क) पिण्डार (ख) हिप्पोक्रेटीज

   (ग) एरिस्टोक्रीज (घ) सुकरात

12. राजनीतिशास्त्र पर लिखी प्लेटो की प्रसिद्ध पुस्तक ………… थी।
    (क) यूनियन (ख) रिपब्लिक
    (ग) डेमोक्रेट (घ) समाजशास्त्र

12.9 सारांश (Summary)

- यूनान की सभ्यता विश्व इतिहास की प्राचीनतम सभ्यताओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। यह सभ्यता यूरोपीय सभ्यता की जननी है।
- होमर और उसके द्वारा प्रणीत किये जाने वाले 'महाकाव्यों' 'इलियड तथा ओडसी' को यूनानी सभ्यता में वही स्थान प्राप्त है जो भारत के इतिहास में रामायण और महाभारत तथा यहूदियों के इतिहास में पवित्र 'बाइबिल' को प्राप्त है।
- यूनान छोटे-छोटे और स्वतंत्र राज्यों में विभक्त था। इन राज्यों का शासक राजा कहलाता था। राजा शासन का सर्वोच्च अधिकारी कहलाता था।
- राजा को शासनतंत्र चलाने के लिए तथा राजा को स्वेच्छाचारी बनने से रोकने के लिए विशिष्ट लोगों की एक काउन्सिल होती थी जिसे ब्यूल (Bule) कहा जाता था।
- होमरयुगीन यूनानी समाज में स्त्रियों की स्थिति काफी अच्छी थी। उनका मुख्य कार्य बच्चों का लालन-पालन करना था किन्तु समाज के प्रत्येक अंग में वह अपना दखल रखती थीं।
- होमरयुगीन यूनानी व्यापार शब्द से अनभिज्ञ थे। सामान्य व्यवसाय विनिमय द्वारा ही होता था। व्यापार करने की प्रथा नहीं थी। उस समय जो भी व्यापार था उस पर फिनिशिया के लोगों का एकाधिपत्य था।
- होमरयुगीन धर्म स्वभाव से प्रसन्न तथा आशावाद से परिपूर्ण था। आत्मा, परमात्मा अथवा पाप-पुण्य के विश्लेषण पर अधिक जोर नहीं दिया गया था, परन्तु मानव जीवन को खुशी एवं प्रसन्न बनाने पर अधिक जोर दिया गया था।
- पेरिक्लीज का युग एथेन्स तथा यूनान के इतिहास का एक गौरवशाली युग था। इस युग का प्रारम्भ 443 ई. पू. तथा अन्त 429 ई. पू. में हुआ था।
- जनतांत्रिक दल का नया युग पुरुष पेरिक्लीज पाँचवीं शताब्दी ई. पू. का महानतम राजनीतिज्ञ और सफल नेता सिद्ध हुआ। पेरिक्लीज का जन्म 493 ई. पू. में एक कुलीन वंश में हुआ था।
- पेरिक्लीज राज्य का विस्तार चाहता था। उसकी यह इच्छा सदैव रहती थी कि एथेन्स संसार की रानी बन जाये।
- पेरिक्लीज के संरक्षण में एथेन्स नगर सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बन गया था। नगर में पक्की और चौड़ी सड़कें थी जो एक-दूसरे को समकोण बनाकर काटती थी। भवन सीधी पंक्ति में बनाये गये थे।

12.10 शब्दकोश (Keywords)

- **ब्यूल**—कुलीन लोगों की एक काउन्सिल, जिसके परामर्श से राजा शासन करता था।
- **एथेना**—एथेन्स वासियों की इष्ट देवी, जो चिरपवित्र कुमारी थी।
- **हेलियो**—पेरिक्लीज द्वारा गठित सार्वजनिक न्यायालय जिसमें 6000 जज थे।

12.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. 'यूनान का भौगोलिक परिवेश उसके चहुमुंखी विकास में सहायक था।' विवेचन कीजिए।
2. होमर काल के सामाजिक जीवन की व्याख्या कीजिए। इस काल में स्त्रियों की स्थिति कैसी थी ?
3. होमरयुगीन धार्मिक जीवन की व्याख्या कीजिए। साहित्यिक जीवन की उपलब्धियाँ बताइए।

नोट

4. पेरिक्लीज के व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए एक महान शासक के रूप में उसकी उपलब्धियाँ बताइए।
5. 'एथेन्स का उत्कर्ष उसके पतन का कारण बना' विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. पुरोहित	2. ब्यूल (Bule)	3. उषाकाल	4. नागरिकों
5. सत्य	6. असत्य	7. असत्य	8. सत्य
9. (क) कृषि	10. (ग) एस्काइलस	11. (घ) सुकरात	12. (ख) रिपब्लिक

12.12 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–13: रोमन साम्राज्य (Roman Empire)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
13.1 चार्ल्स मारटेल (Charles Martel)
13.2 रोमन साम्राज्य की स्थापना (Establishment of Roman Empire)
13.3 रोमन साम्राज्य का विस्तार (Expansion of Roman Empire)
13.4 सारांश (Summary)
13.5 शब्दकोश (Keywords)
13.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
13.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- चार्ल्स मारटेल, पेपिन और चार्ल्स मैगने को जानने में;
- रोमन साम्राज्य के विस्तार को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पाँचवीं शताब्दी के मध्य में प्राचीन रोमन साम्राज्य नष्ट हो गया। मध्य यूरोप की बर्बर जातियों के आक्रमणों ने रोम साम्राज्य को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। इनके आक्रमणों के फलस्वरूप सम्पूर्ण यूरोप में अशान्ति व असुरक्षा की भावना व्याप्त थी। यूरोप के राजाओं और पोप का भी अस्तित्व संकट में था। राजा लोग एक ओर अपनी रक्षा चाहते थे और दूसरी ओर यह भी चाहते थे कि उनकी प्रजा उनके प्रति निष्ठावान रहे। प्रजा को निष्ठावान बनाये रखने के लिए राजा लोग पोप के प्रति निष्ठा दिखाते रहते थे। उधर पोप अपने विरोधियों तथा बर्बर जातियों के आक्रमणों से अपनी रक्षा करने हेतु राजाओं का सहयोग चाहता था। अत: राजाओं और पोप के सहयोग से इन दोनों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पवित्र रोमन साम्राज्य की स्थापना की गई।

पवित्र रोमन साम्राज्य का मुख्य केन्द्र रोमन था, किन्तु यह केन्द्र केवल नाममात्र का था। इस साम्राज्य का बड़ा भाग तो आल्प्स पर्वत के उत्तर में ही था। जर्मनी के शासक को ही पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट बनाया जाता था। इटली के ऊपर तो पवित्र रोमन सम्राट का प्राय: कोई अधिकार भी नहीं होता था।

नोट

13.1 चार्ल्स मारटेल (Charles Martel)

जिन बर्बर जातियों ने यूरोप के राज्यों में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था, उनमें फ्रांक, लम्बार्ड और गोप के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें फ्रांक जाति सबसे शक्तिशाली थी। इस जाति का एक प्रमुख शासक चार्ल्स मारटेल (Charles Martel) था। चार्ल्स मारटेल ने 732 ई. में टूर्स के युद्ध में मुसलमानों को पराजित किया था। इस प्रकार उसने स्पेन में मुसलमानों को आगे बढ़ने से रोका और बाद में भगा दिया। पश्चिमी यूरोप से मुसलमानों की शक्ति को उखाड़ फेंकने का श्रेय चार्ल्स मारटेल को ही है। चार्ल्स मारटेल एक वीर तथा विजेता शासक था। फ्रांस, जर्मनी और हालैंड का बहुत-सा भाग उसके अधीन था।

पेपिन–चार्ल्स मारटेल का पुत्र पेपिन भी एक वीर शासक था। उसने फ्रांक जाति को संगठित करके उसे शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न किया। उसने रोम को लम्बार्डों के आक्रमण से बचाया। इतना ही नहीं, उसने कुछ ऐसे प्रदेश भी जीतकर पोप को वापस किये जो लम्बार्डों के अधिकार में चले गये थे।

चार्ल्स मैगने–पेपिन का पुत्र चार्ल्स मैगने था। वह 771 ई. में गद्दी पर बैठा। वह अपने काल का एक महान शासक माना जाता है। वह सुन्दर, हृष्ट-पुष्ट और प्रभावशाली व्यक्तित्व का राजा था। अपने विजयों के द्वारा चार्ल्स मैगने ने अपने साम्राज्य का विस्तार किया। उसने लम्बार्डों को पराजित करके उत्तरी इटली को अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। मुसलमानों को भी उसने हराया। सैम्सन कबीलों को भी उसने हराया और उनका कुछ क्षेत्र भी उनसे छीन लिया। स्पष्ट है कि चार्ल्स मैगने स्पेन में मुसलमानों को दबाकर रखने वाला, इटली में लम्बार्डों को पराजित करने वाला, राइन व एल्ब नदियों के बीच बसने वाली सैक्सन जाति को अपनी अधीनता स्वीकार कराने वाला शासक एक महान् शासक था। फ्रांस, बेल्जियम, हालैंड, स्विट्जरलैंड और जर्मनी के एक बड़े भाग पर उसका अधिकार था। उसे चार्ल्स महान भी कहा जाता है।

क्या आप जानते हैं चार्ल्स मैगने एक महान प्रशासक भी था। उसने अपने साम्राज्य को सुविधा की दृष्टि से काउण्टियों में बाँट दिया था।

हर काउण्टी का प्रबन्ध एक काउण्ट करता था। चार्ल्स मैगने स्वयं काउण्टों को नियुक्त करता था। सुधार लाने के लिए वह सामन्तों और पादरियों से परामर्श लिया करता था।

वह कला व साहित्य का आश्रयदाता था। धर्म में उसे विशेष रुचि थी। वह पोप में बड़ी निष्ठा रखता था और पोप के सम्मान को बढ़ाना चाहता था। ईसाई धर्म के प्रचार में चार्ल्स मैगने ने बड़ी सहायता की। पोप के साथ उसके मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। उसने सदैव पोप की रक्षा की तथा उसके गौरव को बढ़ाया।

13.2 रोमन साम्राज्य की स्थापना (Establishment of Roman Empire)

पोप चार्ल्स मैगने की निष्ठा के कारण बहुत प्रसन्न था। वह उसकी शक्ति को भी मानता था। वह जानता था कि चार्ल्स मैगने उसकी रक्षा कर सकता है और ईसाई धर्म को फैलाने में शानदार भूमिका अदा कर सकता है। अतः 800 ई. में क्रिसमस के दिन रोम नगर में पोप लियो तृतीय (Pope Leo III) ने चार्ल्स मैगने को ताज पहनाकर रोमन सम्राट की उपाधि से विभूषित किया। इस प्रकार एक नये रोमन साम्राज्य की नींव पड़ी, जिसे पवित्र रोमन साम्राज्य कहा जाता है। इस साम्राज्य को पवित्र रोमन साम्राज्य इसलिए कहा जाता है कि इसकी स्थापना स्वयं पोप के पवित्र हाथों से हुई थी और इस साम्राज्य का लक्ष्य पोप तथा चर्च की रक्षा करना व ईसाई धर्म का प्रचार करना था।

पवित्र रोमन साम्राज्य लगभग 1000 वर्ष तक चलता रहा। 1806 ई. में नेपोलियन ने इस साम्राज्य को पूरी तरह से नष्ट कर दिया।

चार्ल्स मैगने का शासन-प्रबन्ध—चार्ल्स महान एक योग्य शासक था। उसने साम्राज्य को कई काउण्टियों में बाँटा। प्रत्येक काउण्टी का अधिकारी एक काउण्ट होता था। प्रत्येक काउण्टी का शासन तथा वहाँ की न्याय व्यवस्था काउण्ट के हाथ में होती थी। उसने काउण्टों को एक काउण्टी से दूसरी काउण्टी में तबादला करने की परिपाटी आरम्भ की। इस प्रकार उसने काउण्टों पर प्रभुत्व स्थापित किया। उसने यह भी कोशिश की कि कानूनों का ठीक ढंग से पालन हो और कानून कम-से-कम संख्या में हों। चार्ल्स मैगने हर वर्ष सामन्तों और पादरियों की सभा बुलाता था और सुधार के सम्बन्ध में उनसे विचार-विमर्श करता था।

चार्ल्स मैगने का विद्या-कला से प्रेम—चार्ल्स मैगने ने विद्या-कला को भी बड़ा प्रोत्साहन दिया। बहुत ही व्यस्त होते हुए भी वह विद्वानों से वार्तालाप करने तथा उनसे सम्पर्क स्थापित करने के लिये समय निकालता था। उसके प्रोत्साहन ही का यह फल हुआ कि ग्रीस और रोम की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की रक्षा हुई तथा उनके अनुवाद हुए। उसने बालकों की शिक्षा को भी प्रोत्साहन दिया तथा निम्न श्रेणी में उत्पन्न विद्वानों को भी आदर-सम्मान प्रदान किया।

चार्ल्स मैगने की मृत्यु के बाद उसका साम्राज्य तीन भागों में बंट गया। एक भाग में फ्रांस और बेल्जियम थे। दूसरे भाग में जर्मनी था और तीसरे भाग में इटली तथा उसके आसपास का क्षेत्र था। इन तीनों राज्यों की स्थिति बड़ी दुर्बल थी।

चार्ल्स मैगने के बाद विदेशी आक्रमण—इन तीनों राज्यों की स्थिति आपसी झगड़े के कारण बड़ी दुर्बल हो गई थी। इसी दुर्बलता का लाभ उठाकर बाहर के लोगों ने आक्रमण आरम्भ कर दिये। मुसलमानों ने सिसली पर अधिकार कर लिया और इटली एवं दक्षिणी फ्रांस में अत्याचार करने आरम्भ कर दिये। पूर्व की ओर से स्लाव और हंगेरियन जाति के लोग आक्रमण करने लगे तथा उत्तर की ओर से भयानक और निर्दय नार्समेन, डेन और वाइकिंग निरन्तर लूटपाट और मारकाट मचाने लगे। चार्ल्स मैगने की मृत्यु के बाद लगभग ढाई सौ वर्ष के समय में यूरोप की दशा बहुत ही गड़बड़ी से भरी और अराजकतापूर्ण हो गई। गिरजाघरों में प्रार्थना की गई कि भगवान हमें नार्समेनों की लूटपाट और क्रोध से बचाये। नार्समेन मठों को नष्ट करने, गिरजाघरों को गिराने तथा भिक्षु-भिक्षुणियों को बड़ी संख्या में मार डालने में कोई कसर नहीं रखते थे। परन्तु धीरे-धीरे नार्समेन ईसाई हो गये तथा इनके कबीले बसने लगे।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. यूरोप के राजा और पोप का अस्तित्व .... में था।
2. पेपिन का पुत्र .... था।
3. पश्चिमी यूरोप से मुसलमानों की शक्ति को उखाड़ फेंकने का श्रेय .... को जाता है।
4. पवित्र रोमन साम्राज्य करीब .... वर्ष तक चलता रहा।
5. चार्ल्स ने अपने साम्राज्य को कई .... में बाँटा था।

13.3 रोमन साम्राज्य का विस्तार (Expansion of Roman Empire)

आरम्भ में पवित्र रोमन साम्राज्य के अन्तर्गत सारा पश्चिमी और मध्य यूरोप माना जाता था। परन्तु स्पेन, फ्रांस और इंग्लैंड के स्वतन्त्र राज्यों का विकास होने से यह साम्राज्य केवल जर्मनी, इटली आदि तक ही सीमित रह गया। विशेष रूप से सम्राट फ्रेडरिक बारबरोसा के पश्चात् पवित्र रोमन साम्राज्य का प्रभाव केवल जर्मनी में ही रह गया। इस सम्राट ने इटली और रोम पर आधिपत्य जमाकर रोमन साम्राज्य के प्राचीन वैभव को फिर से स्थापित करने का इरादा किया। वह यह समझता था कि कम-से-कम उत्तरी इटली तो साम्राज्य का भाग है ही। परन्तु उसका यह प्रयत्न सफल न हुआ क्योंकि इस काल (1152 ई.) तक इटली के उत्तरी मैदान में कई स्वतन्त्र नगरों का विकास हो चुका था। मिलान, वेरोना, पैडुआ, यारमा, बोलोना, वेनिस आदि नगर स्वतन्त्र राज्य थे तथा इन्होंने सम्राट के चंगुल से बचने के लिये लम्बार्ड संघ (Lombard League) की स्थापना की। सम्राट की एक न चली तथा उसे इटली में साम्राज्य विस्तार का विचार त्यागना पड़ा। फिर उसने दक्षिणी इटली पर आधिपत्य जमाने की योजना बनाई तथा नेपल्स के

नोट

शासक के कुटुम्ब से अपने कुटुम्ब का वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया। पोप को सम्राट का यह आचरण अच्छा न लगा और अब वह चाहने लगा कि इटली में सम्राट का प्रभाव न रहे। अतएव जब 1211 ई. में फ्रेडरिक द्वितीय साम्राट हुआ तो पोप ने उससे यह शर्त लिखवा ली कि वह इटली के मामले में हस्तक्षेप नहीं करेगा। इस समझौते के पश्चात् तो पवित्र रोमन साम्राज्य का जर्मनी के बाहर कोई विशेष प्रभाव न रह गया। आगामी सम्राटों ने कभी प्राचीन रोमन साम्राज्य के वैभव को पुन: स्थापित करने के स्वप्न नहीं देखे।

नोट्स आरम्भ में पवित्र रोमन साम्राज्य के अन्तर्गत सारा पश्चिमी और मध्य यूरोप माना जाता था।

मंगोलों की रोकथाम–तेरहवीं शताब्दी में सम्राट फ्रेडरिक द्वितीय ने (1211-50 ई.) में यरूसलम को विजय कर लिया तथा रोमन साम्राज्य ने चंगेज खाँ (मंगोल जाति का नेता) के उत्तराधिकारियों को यूरोप में बढ़ने से रोकने का प्रयत्न किया।

धर्म-सुधार (Reformation)–सोलहवीं शताब्दी में सम्राट चार्ल्स पंचम के समय में रोमन साम्राज्य पर्याप्त शक्तिशाली हो गया था परन्तु इस समय धर्म सुधार आरम्भ हो गया था तथा कैथोलिकों और प्रोटेस्टेन्टों के मतभेद दूर करने में सम्राट को सफलता न मिली। अनेक सामन्त लगभग स्वतन्त्र राजा बन बैठे। इसी समय से पूर्व की ओर से तुर्क लोग भी साम्राज्य पर हमले करने लगे क्योंकि 1453 ई. में उन्होंने पूर्वी रोम साम्राज्य को नष्ट कर दिया था। सत्रहवीं शताब्दी में रोमन सम्राट ने भारी प्रयत्न किया कि साम्राज्य दृढ़ हो जाए। तीस वर्षीय युद्ध इसी लक्ष्य से लड़ा गया था। किन्तु यह प्रयत्न सफल न हुआ।

टास्क चार्ल्स मैगने की विदेश नीति पर टिप्पणी लिखें।

पवित्र रोमन साम्राज्य की समाप्ति–अठारहवीं शताब्दी में लगभग यह नियम हो गया कि आस्ट्रिया हंगरी का राजा ही पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट होता था तथा अपने प्रभाव को आस्ट्रिया के स्वार्थ के लिए प्रयोग करता था। जर्मन लोग इस नीति से चिढ़ते थे क्योंकि यूरोप में राष्ट्रीयता की भावना प्रबल हो गई थी और राष्ट्रीय राज्य बन चुके थे। 1789 ई. में फ्रांस की राज्य-क्रांति प्रारम्भ हुई जिसमें नेपोलियन नेता बन गया तथा फिर फ्रांस का सम्राट हो गया। उसने 1806 ई. में यह घोषणा की कि वह पवित्र रोमन साम्राज्य को मान्यता देने को तैयार नहीं है। इस पर रोमन सम्राट ने स्वयं इस साम्राज्य को समाप्त कर दिया।

पवित्र रोमन साम्राज्य का मूल्यांकन–पवित्र रोमन साम्राज्य की स्थापना पोप की इच्छा से हुई थी। आरम्भ में पवित्र रोमन साम्राज्य की बड़ी प्रतिष्ठा थी। आरम्भ में लगभग 3 शताब्दी तक पवित्र रोमन साम्राज्य का दबदबा रहा और इसने मध्य युग में उपयोगी कार्य किया। इसके माध्यम से एक ओर ईसाई धर्म का प्रचार हुआ और दूसरी ओर बाह्य आक्रमणों पर रोक लगाई जा सकी। किन्तु बाह्य आक्रमणों को बिलकुल रोक पाना उस युग में सम्भव ही नहीं था। पवित्र रोमन साम्राज्य के पीछे एक लक्ष्य यह भी था कि कम-से-कम पश्चिमी यूरोप और दक्षिणी यूरोप को संगठित करके एक सूत्र में बाँध दिया जाये ताकि शान्ति की स्थापना की जा सके। किन्तु यह लक्ष्य भी पूरा नहीं हो पाया क्योंकि सामन्तों तथा बाद में राष्ट्रीय राज्यों ने इस साम्राज्य का विरोध किया।

जब पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट कोई शक्तिशाली राजा होता था, तो वह शान्ति स्थापना के काम में सफल होता था। पवित्र रोमन सम्राटों ने जर्मनी में सामन्तवाद की बुराइयों को दूर करने में काफी सफलता प्राप्त की। इसके अतिरिक्त इन सम्राटों ने लूटपाट, हिंसा और युद्धों के ऊपर भी कुछ अंकुश रखा। यद्यपि पश्चिमी तथा दक्षिणी यूरोप को पवित्र रोमन साम्राज्य एक सूत्र में संगठित नहीं कर पाया किन्तु संगठन का आदर्श सदैव उसके समक्ष रहा। इस साम्राज्य के सम्राटों तथा रोम के पोपों के बीच बाद में संघर्ष पैदा हो गया और इस संघर्ष ने सम्राटों की प्रतिष्ठा तथा उनकी शक्ति को पंगु बना दिया। इन सब कठिनाइयों के कारण पवित्र रोमन साम्राज्य अपने लक्ष्यों की पूर्ति में सफल नहीं हो पाया।

13.4 सारांश (Summary)

- पवित्र रोमन साम्राज्य का मुख्य केन्द्र रोमन था किन्तु यह केन्द्र केवल नाममात्र का था। इस साम्राज्य का बड़ा भाग तो आल्प्स पर्वत के उत्तर में ही था। जर्मनी के शासक को ही पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट बनाया जाता था। इटली के ऊपर तो पवित्र रोमन सम्राट का प्राय: कोई अधिकार भी नहीं होता था।
- चार्ल्स मारटेल का पुत्र पेपिन भी एक वीर शासक था। उसने फ्रांक जाति को संगठित करके उसे शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न किया। उसने रोम को लम्बार्डों के आक्रमण से बचाया। इतना ही नहीं उसने कुछ ऐसे प्रदेश भी जीतकर पोप को वापस किये जो लम्बार्डों के अधिकार में चले गये थे।
- पोप चार्ल्स मैगने की निष्ठा के कारण बहुत प्रसन्न था। वह उसकी शक्ति को भी मानता था। वह जानता था कि चार्ल्स मैगने उसकी रक्षा कर सकता है और ईसाई धर्म को फैलाने में शानदार भूमिका अदा कर सकता है। अत: 800 ई. में क्रिसमस के दिन रोम नगर में पोप लियो तृतीय (Pope Leo III) ने चार्ल्स मैगने को ताज पहनाकर रोमन सम्राट की उपाधि से विभूषित किया।
- चार्ल्स मैगने की मृत्यु के बाद उसका साम्राज्य तीन भागों में बँट गया। एक भाग में फ्रांस और बेल्जियम थे। दूसरे भाग में जर्मनी था और तीसरे भाग में इटली तथा उसके आसपास का क्षेत्र था। इन तीनों राज्यों की स्थिति बड़ी दुर्बल थी।
- सम्राट फ्रेडरिक बारबरोसा के पश्चात् पवित्र रोमन साम्राज्य का प्रभाव केवल जर्मनी में ही रह गया। इस सम्राट ने इटली और रोम पर आधिपत्य जमाकर रोमन साम्राज्य के प्रचीन वैभव को फिर से स्थापित करने का इरादा किया। वह यह समझता था कि कम-से-कम उत्तरी इटली तो साम्राज्य का भाग है ही।
- सोलहवीं शताब्दी में सम्राट चार्ल्स पंचम के समय में रोमन साम्राज्य पर्याप्त शक्तिशाली हो गया था परन्तु इस समय धर्म-सुधार आरम्भ हो गया था तथा कैथोलिकों और प्रोटेस्टेन्टों के मतभेद दूर करने में सम्राट को सफलता न मिली। अनेक सामन्त लगभग स्वतन्त्र राजा बन बैठे। इसी समय से पूर्व की ओर से तुर्क लोग भी साम्राज्य पर हमले करने लगे।
- जब पवित्र रोमन साम्राज्य का सम्राट कोई शक्तिशाली राजा होता था, तो वह शान्ति स्थापना के काम में सफल होता था। पवित्र रोमन सम्राटों ने जर्मनी में सामन्तवाद की बुराइयों को दूर करने में काफी सफलता प्राप्त की।

13.5 शब्दकोश (Keywords)

- बर्बर–हिंसक, आक्रामक।
- रोमन–रोम से सम्बन्धित या रोम से जुड़ा हुआ।

13.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. रोमन साम्राज्य का परिचय दीजिए।
2. चार्ल्स मैगने की रोमन साम्राज्य की स्थापना में क्या भूमिका थी?
3. रोमन साम्राज्य गठन में चार्ल्स मारटेल के योगदान का वर्णन करें।
4. साम्राज्य विस्तार में फ्रेडरिक बारबरोसा की भूमिका का विवेचन कीजिए।
5. रोमन साम्राज्य का संक्षिप्त मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. संकट 2. चार्ल्स मैगने 3. चार्ल्स मारटेल 4. 1000
5. काउन्टियों।

नोट

13.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–14: लैटिन अमरीका
(Latin America)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

14.1 अमरीका की खोज (Discovery of America)

14.2 सारांश (Summary)

14.3 शब्दकोश (Keywords)

14.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

14.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- अमरीका की खोज एवं व्यापार आदि से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

उपनिवेशीकरण के लिए अमरीका क्यों उपयुक्त था और पूर्व क्यों नहीं था? इसका प्रमुख कारण पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में यूरोपीय लोगों के सीमित साधन थे। यद्यपि उनके जहाज और नौपरिवहन के तरीके बड़े आदिम थे, फिर भी वे एशिया, अफ्रीका और अमरीका के किसी भी भाग में पहुँच सकने में समर्थ थे। अठारहवीं शताब्दी में प्रादेशिक साम्राज्यों की स्थापना एशिया की बजाय अमरीका में इसीलिए हुई कि अमरीका यूरोपीय अधिवासियों (settlers) को अधिक आकर्षक लगता था और तकनीकी दृष्टि से भी उस पर अधिकार करना अधिक आसान था।

14.1 अमरीका की खोज (Discovery of America)

अमरीका और पूर्व की ओर सीधे सामुद्रिक मार्ग की खोजों ने यूरोप को भौगोलिक और मानसिक कैद एवं अन्वेषणों से मुक्ति दिलाई। भौगोलिक खोज, व्यापार और विजयों के बड़े लाभकारी परिणाम हुए। प्रत्येक उपनिवेश या व्यापारिक केंद्र एक नई आर्थिक चेतना का केंद्रबिन्दु था। अमरीका ने यूरोप में उत्पादित वस्तुओं और कृषि-उत्पादनों के लिए बड़े-बड़े बाज़ार प्रदान किए। अमरीकी सोने-चाँदी ने यूरोप में मुद्रा संचलन (money circulation) की आपूर्ति को बढ़ा दिया और समकालीन आर्थिक और सामाजिक विकास की गति को भी तेज़ कर दिया। एशियाई मसालों और अमरीकी किरानों ने अंत:यूरोपीय व्यापार की मात्रा और लाभांश को बढ़ा दिया। इस सुदूरस्थ व्यापारिक

नोट

माल के यातायात ने व्यापारिक जहाज़रानी और जहाज़-निर्माण को भी बहुत अधिक प्रगतिशील बनाने में योग दिया। यद्यपि पूर्व के साथ व्यापार की मात्रा कम थी पर इसका मूल्य काफी ऊँचा था। अटलांटिक व्यापार से भी लाभ की काफी संभावनाएँ थीं। पूर्व के विपरीत अमरीका अपने अधिकांश उत्पादित माल के लिए यूरोप पर आश्रित था और यूरोप के नज़दीक होने के कारण थोक माल के व्यापार में लाभ अर्जित करने की स्थिति में था। अठारहवीं शताब्दी तक अटलांटिक पार के व्यापारिक जहाज़ी बेड़े में हज़ारों जहाज़ थे जो गुलाम, शक्कर और यहाँ तक कि लकड़ी जैसे भारी माल को ले जाते थे। यद्यपि अमरीका कभी भी यूरोप के आंतरिक व्यापार का स्थान नहीं ले पाया था, पर उसे पूरी तरह से बढ़ाने में इसने पूरा योगदान दिया।

क्या आप जानते हैं अमरीका में यूरोप की ही भाँति भूमि का उतना ही महत्त्व था जितना कि उसके व्यापार का था।

यूरोप में भूमि पर जनसंख्या का दबाव अधिक नहीं था। परंतु अपने खेती के तरीकों, युद्धों और धार्मिक संघर्षों के कारण अधिक भूमि के लिए कृत्रिम माँग को पैदा किया गया। भूमि के प्रति यूरोपीय भूख के संदर्भ में अमरीका ने चार शताब्दियों तक सेफ्टी वाल्व का काम किया। वस्तुत: कोलंबस ने यूरोप को पश्चिम की ओर हज़ारों मील आगे बढ़ा दिया था। इस प्रकार यूरोप को विस्तार और उपनिवेशीकरण के ऐसे अवसर प्राप्त हो गए जैसे कि रूस में मास्को सरकार को साइबेरिया के उपनिवेशीकरण के संदर्भ में प्राप्त हुए थे।

अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में यूरोप में समुद्रपार के क्षेत्र का भौगोलिक वितरण भलीभांति स्थापित हो चुका था। उनकी स्पष्ट विशेषता यह थी कि उपनिवेश और सैनिक अड्डे विश्व के विभिन्न भागों में अत्यंत असमान रूप में बिखरे हुए थे। अमरीका धीरे-धीरे स्पेन, पुर्तगाल, इंग्लैंड, फ्रांस और हॉलैंड के प्रादेशिक प्रभुत्व के अधीन आता जा रहा था। अफ्रीका और पूर्व में यद्यपि बहुत से उपनिवेश थे, परंतु उनमें यूरोपीय बस्तियाँ बहुत थोड़ी थीं। उनके तटवर्ती नाविक अड्डों की शक्तिशाली उपनिवेशों के रूप में विकसित होने की बहुत थोड़ी संभावनाएँ थीं। यूरोप द्वारा अमरीका पर अधिकार करने के बावजूद यूरोपीय शक्तियों के अफ्रीका और एशिया के चारों ओर छाए रहने के क्या कारण थे? इस प्रश्न का उत्तर कुछ तो यूरोपीय औपनिवेशिक लक्ष्यों और कुछ-उन साधनों में निहित है जो प्रथम यूरोपीय साम्राज्य के संस्थापकों के पास थे।

उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका में पहले-पहले जो पुर्तगाली खोजें हुईं वे इस्लाम के विरुद्ध उनके धर्मयुद्धों का ही एक गौण परिणाम थीं। स्वर्णधूलि, हाथीदाँत और गुलामों की खोज उन्हें दक्षिण तक ले गई। इन्हीं खोजों के दौरान डियाज़ ने 1487 में आशा अंतरीप की खोज की और पुर्तगालियों ने इंडीज के लिए समुद्री मार्ग की भी योजना बनाई। इससे पुर्तगाली उपलब्धियाँ उनके सुचिंतित उद्देश्यों के अनुरूप रहीं। वे पूर्वी मसालों के सीधे व्यापार को प्राप्त करने के लिए निकल पड़े। धर्म प्रचार के उत्साह ने पुर्तगालियों को लाल सागर और हिंद महासागर में इस्लामी शक्तियों के विरुद्ध युद्ध करने की प्रेरणा दी। पुर्तगाल के पास विशाल उपनिवेशों का न होना व्यापारिक व्यवस्था के प्रति उसके रुझान को व्यक्त करता है। इसी कारण पुर्तगालियों ने बड़े-बड़े उपनिवेशों को प्राप्त करने की कोई कोशिश भी नहीं की। परंतु अमरीकी उपनिवेशों ने उसके अन्वेषकों के इरादों को पूरा नहीं किया और अमरीका को पूर्व के मार्ग में एक बाधा माना गया। अमरीका पर इस कारण अधिकार किया गया क्योंकि कैरेबियन, मेक्सिको और पेरू में सोने और चाँदी के होने की अनपेक्षित संभावनाएँ थीं, यह खोज और विजय के लिए प्रेरित करता था और अप्रवासियों को अपनी ओर आकर्षित करता था। इसके अतिरिक्त, पर्याप्त भूमि और उस पर काम करने के लिए विनीत स्थानीय जनसंख्या की उपलब्धि ने स्थायी उपनिवेशीकरण और विशाल अर्धसामंतीय जागीरों की स्थापना को भी प्रोत्साहित किया। गैर-ईसाइयों को ईसाई धर्म में दीक्षित करने की चुनौती ने कैथोलिक चर्च को वहाँ धर्म-प्रचारक भेजने की प्रेरणा दी। सोना-चाँदी खोजने वालों, अधिवासियों (settlers) और धर्म प्रचारकों ने अमरीका के विशाल भू-भाग पर कारगर ढंग से कब्जा कर लिया।

> *नोट्स* धर्म प्रचार के उत्साह ने पुर्तगालियों को लाल सागर और हिंद महासागर में इस्लामी शक्तियों के विरुद्ध युद्ध करने की प्रेरणा दी।

यह एक व्यक्तिगत उपनिवेशीकरण था और इसके लिए न तो कोई योजना बनाई गई थी और न स्पेनी राजा इसके लिए प्रत्यक्ष तौर पर उत्तरदायी था। ब्राज़ील को, जिसे 1500 में केब्रिल ने अपनी भारत-यात्रा के दौरान अनजाने में ही खोज निकाला था, व्यक्तिगत तौर पर पुर्तगाली लोगों ने उपनिवेश बनाया था। उन्हें इस कार्य के लिए शाही अनुमति तो दी गई थी किंतु इसके लिए साधन उन्हें अपने ही जुटाने थे। इस प्रकार जहाँ पूर्व में मूल पुर्तगाली साम्राज्य को मुख्यत: एक शाही उद्यम के रूप में नियोजित और स्थापित किया गया वहाँ स्पेन और पुर्तगाल के अमरीकी उपनिवेशों और इसी प्रकार इंग्लैंड और फ्रांस के उपनिवेशों की स्थापना में इन देशों के शासकों की प्रत्यक्ष सहायता उपलब्ध नहीं थी। अठारहवीं शताब्दी तक अमरीकी उपनिवेशों पर अधिकार कर लिया गया और उनके ऊपर यूरोपीय शासन तथा वाणिज्य के प्रतिरूपों को आरोपित कर दिया गया।

उपनिवेशीकरण के लिए अमरीका क्यों उपयुक्त था और पूर्व क्यों नहीं था? इसका प्रमुख कारण पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में यूरोपीय लोगों के सीमित साधन थे। यद्यपि उनके जहाज और नौपरिवहन के तरीके बड़े आदिम थे, फिर भी वे एशिया, अफ्रीका और अमरीका के किसी भी भाग में पहुँच सकने में समर्थ थे।

उस समय यूरोपवासी अधिकांश एशिया और इस्लाम द्वारा शासित देशों की तुलना में तकनीकी या सैनिक दृष्टि से भी विशेष आगे बढ़े हुए नहीं थे। इन सीमित साधनों के कारण वे तुर्कों या अरबों के विरुद्ध भी लाभकर (अनुकूल) स्थिति में नहीं थे। हिंद महासागर और सुदूरस्थ पूर्व में भी वे तकनीकी दृष्टि से अधिक श्रेष्ठ नहीं थे। साथ ही उनके सामने अधिक दूरी, जनसंख्या की कमी और घुड़सवार सेना का अभाव जैसी बाधाएँ भी थीं। उनके उद्देश्य चाहे जो भी हों, उस समय यूरोपीय लोग इनमें से किसी भी स्थान पर प्रादेशिक साम्राज्य (territorial empire) की स्थापना नहीं कर सकते थे।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएं–

(State whether the following statements are True/False)

1. अमरीका में भूमि और व्यापार का महत्व समान था।
2. पुर्तगालियों ने इंडीज के लिए हवाई मार्ग की योजना बनाई।
3. कैरेबिनयन, मैक्सिको और पेरू में सोने-चांदी के होने की संभावनाएं काफी कम थीं।
4. यूरोपीय व्यापार के लाभांश को अमरीकी किराने और एशियाई मसालों ने बढ़ा दिया।

इसके विपरीत अफ्रीका, सहारा के निचले प्रदेश और अमरीका के समस्त प्रदेश सैनिक और औद्योगिक तकनीकों की दृष्टि से यूरोप की तुलना में कहीं अधिक कमज़ोर थे। पुर्तगालियों ने सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभ में कांगो और ज़म्वेसी तक अपनी सत्ता की स्थापना कर ली थी। वे यहाँ या अफ्रीका में अन्यत्र प्रादेशिक साम्राज्यों की स्थापना करने में सक्षम भी थे, परंतु उन्होंने ऐसा इस कारण नहीं किया क्योंकि अफ्रीकी जलवायु यूरोपीय लोगों के लिए अनुकूल नहीं थी। पूर्वी व्यापार और अमरीका में गुलामों को ले जाना आर्थिक दृष्टि से अधिक आकर्षक था और ब्राजील में पुर्तगालियों को उपनिवेशों की स्थापना और बागों एवं खेतों से काफी लाभ मिलने की आशा थी।

अधिकांश अफ्रीका की ही भाँति अमरीका भी सुरक्षा-साधनों से हीन था। उस पर इसलिए कब्जा कर लिया गया क्योंकि अमरीका यूरोपवासियों को काफी आकर्षक लगता था। यद्यपि मैक्सिको के अज़तेक और पेरू के इन्का साम्राज्य सैनिक दृष्टि से बहुत सुसंगठित और बहुत सभ्य थे, पर उनके हथियार पाषाण-युगीन थे। अत: वे यूरोपीय युद्ध-पद्धति का मुकाबला नहीं कर सकते थे। इसी कारण मैक्सिको में कार्टेज और पेरू में पिज़ारोज़ जैसे स्पेनी

नोट

अन्वेषकों के छोटे-से समूह ने, जिनकी मुख्य पूँजी गतिशीलता, दृढ़संकल्प और अपनी सहायक सेनाओं का प्रयोग करने की कुशलता थी, उन्हें शीघ्र ही नष्ट कर डाला।

इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी में प्रादेशिक साम्राज्यों की स्थापना एशिया की बजाय अमरीका में इसीलिए हुई कि अमरीका यूरोपीय अधिवासियों (settlers) को अधिक आकर्षक लगता था और तकनीकी दृष्टि से भी उस पर अधिकार करना अधिक आसान था।

14.2 सारांश (Summary)

- अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में यूरोप में समुद्रपार के क्षेत्र का भौगोलिक वितरण भलीभांति स्थापित हो चुका था। उनकी स्पष्ट विशेषता यह थी कि उपनिवेश और सैनिक अड्डे विश्व के विभिन्न भागों में अत्यंत असमान रूप में बिखरे हुए थे। अमरीका धीरे-धीरे स्पेन, पुर्तगाल, इंग्लैंड, फ्रांस और हॉलैंड के प्रादेशिक प्रभुत्व के अधीन आता जा रहा था। अफ्रीका और पूर्व में यद्यपि बहुत से उपनिवेश थे, परंतु उनमें यूरोपीय बस्तियाँ बहुत थोड़ी थीं। उनके तटवर्ती नाविक अड्डों की शक्तिशाली उपनिवेशों के रूप में विकसित होने की बहुत थोड़ी संभावनाएँ थीं।
- अमरीका पर इस कारण अधिकार किया गया क्योंकि कैरेबियन, मेक्सिको और पेरू में सोने और चाँदी के होने की अनपेक्षित संभावनाएँ थीं, यह खोज और विजय के लिए प्रेरित करता था और अप्रवासियों को अपनी ओर आकर्षित करता था। इसके अतिरिक्त, पर्याप्त भूमि और उस पर काम करने के लिए विनीत स्थानीय जनसंख्या की उपलब्धि ने स्थायी उपनिवेशीकरण और विशाल अर्धसामंतीय जागीरों की स्थापना को भी प्रोत्साहित किया।

14.3 शब्दकोश (Keywords)

- **मानसिक कैद**–दिमागी तौर पर पिछड़ापन, संकीर्णता आदि।

14.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. अठारहवीं शताब्दी में यूरोप में समुद्रपार की भौगोलिक स्थिति का वर्णन कीजिए।
2. अमरीका पर औपनिवेशिक शक्तियों ने क्यों आधिपत्य जमाया?
3. उन कारणों का विवेचन कीजिए जिनके चलते अमरीका की खोज हुई।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. सत्य।

14.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–15: अफ्रीका
(Africa)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
15.1 पूर्व-ऐतिहासिक परिचय (Pre-Historical Introduction)
15.2 आरम्भिक सभ्यता (Early Civilization)
15.3 अफ्रीका का उपनिवेशीकरण (Colonization of Africa)
15.4 सारांश (Summary)
15.5 शब्दकोश (Keywords)
15.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
15.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पूर्व-ऐतिहासिक परिचय जानने में;
- अफ्रीका का उपनिवेशीकरण जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

दक्षिणी अफ्रीका में अंग्रेजों का उपनिवेश बसाने में सिसिल रोड्स नाम के व्यक्ति ने बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। दक्षिणी अफ्रीका में उसे ब्रिटिश उपनिवेश का निर्माता कहा जाता है। वह अपनी युवावस्था में अफ्रीका में जाकर बस गया। धीरे-धीरे वह बड़ा धनी हो गया। धीरे-धीरे उसका प्रभाव बढ़ता रहा और वह केप कॉलोनी का प्रधानमंत्री बन गया। सिसिल रोड्स ने बेचुआनालैंड पर कब्जा कर लिया। उसने उत्तमासा अन्तरीप से काहिरा तक रेल लाइन बनाने की योजना तैयार की। इसके बाद उसने केप कॉलोनी के उत्तर में एक काफी बड़े भाग पर कब्जा कर लिया। इस भाग को उसने ब्रिटिश उपनिवेश बना दिया। उसी के नाम पर इस उपनिवेश का नाम रोडेशिया रख दिया गया।

15.1 पूर्व-ऐतिहासिक परिचय (Pre-Historical Introduction)

अफ्रीका से जुड़े ऐतिहासिक रिकार्ड प्राचीन मिस्र की फारोनिक सभ्यता में मिलते हैं। अफ्रीका का अस्तित्व पेलियोलिथिक युग से माना जाता है। प्राक-ऐतिहासिक काल में अफ्रीका में भी मानव समूह बनाकर रहने लगा था। इस युग में अफ्रीकी मानव समूह में शिकार करता था।

नोट

हिम युग की समाप्ति के बाद सहारा क्षेत्र एकदम हरा-भरा और उर्वरक बन गया। इसके परिणामस्वरूप मानव समूह, जो अफ्रीका के तटीय प्रदेशों की ओर चले गये थे, अब वापस सहारा की ओर लौटने लगे। 5000 ई. पूर्व में भौगोलिक और पारिस्थितिकीय परिवर्तनों के चलते सहारा क्षेत्र सूखा मरुस्थल बन गया। यहां जीवन अत्यन्त कठिन हो गया। मानव जाति ने इस क्षेत्र से पलायन करना शुरू कर दिया। मानव समूह रूप में नील नदी घाटी की ओर बढ़ते गए। यहाँ इन्होंने स्थायी और अस्थायी रूप से बसना आरम्भ किया। तब से आज तक सूखा पूर्वी अफ्रीका में स्थायी हो गया।

नोट्स दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजों का उपनिवेश बसाने में रोड्स ने बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

6000 ई.पू. तक मानव घास-फूस की झोंपड़ियाँ बनाकर रहने लगा। उसने पशुपालन सीख लिया। अफ्रीकी मानव सम्भवत: गधे और छोटे सींग वाली बकरियां भी पालते थे। 4000 ई.पू. में सहारा प्रदेश में व्यापक जलवायु परिवर्तन हुआ। मरुस्थलीय भूमि बढ़ने लगी। कृषि की पैदावार दिन-प्रतिदिन कम होती गई। पानी के स्रोत सूखने लगे। मानव जातियाँ उत्तरी अफ्रीका की ओर पलायन करने को मजबूर हो गईं। लौह-धातु की खोज उत्तरी आफ्रीका में हुई। शीघ्र ही इसका प्रयोग सहारा सहित पूरे उत्तरी उप-अफ्रीका में भी होने लगा। 500 ई.पू. तक सम्पूर्ण अफ्रीका में लोहे के औजार, हथियार व बर्तन आदि बनने लगे थे। तांबा मिस्र से होते हुए उत्तरी अफ्रीका, न्यूबिया और इथोपिया तक पहुँचा। 500 ई.पू. तक सहारा-पार और शेष अफ्रीका में व्यापारिक सम्बन्ध कायम हो चुके थे।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. दक्षिण अफ्रीका में .... को ब्रिटिश उपनिवेश का निर्माता कहा जाता है।
2. अफ्रीका का अस्तित्व .... युग से माना जाता है।
3. अफ्रीका से जुड़े ऐतिहासिक रिकार्ड प्राचीन मिस्र की .... में मिलते हैं।
4. हिम युग की समाप्ति के बाद .... एकदम हरा-भरा और उर्वरक बन गया।

15.2 आरम्भिक सभ्यता (Early Civilization)

अफ्रीका में यूरोपीय खोजकर्ताओं का आगमन प्राचीन यूनान और रोमन सभ्यताओं के साथ शुरू हो गया। 332 ई.पू. में पर्शिया के कब्जे वाले मिस्र में सिकन्दर महान (एलेक्जेन्डर) का स्वागत मुक्तिदाता के रूप में किया गया। रोमन साम्राज्य द्वारा उत्तरी अफ्रीका के भूमध्य तट पर विजय के बाद, इस प्रदेश में रोमन आर्थिक व सांस्कृतिक प्रणाली का विस्तार किया गया। रोमन सभ्यता की झलक आधुनिक ट्यूनिशिया में भी देखने को मिली है।

ईसाई धर्म के प्रचार का प्रभाव अफ्रीकी प्रदेशों पर भी पड़ा। ईसाइयत मिस्र होते हुए अफ्रीकी क्षेत्रों (न्यूबिया) में फैली। साइरो-ग्रीक ईसाई मिशनरियों की बदौलत यह आक्सुमाइट साम्राज्य का राज्य-धर्म बन गया।

क्या आप जानते हैं अफ्रीका का अस्तित्व पेलियोलिथिक युग से माना जाता है।

7वीं शताब्दी की शुरुआत में नवगठित अरब इस्लामी साम्राज्य के खलीफा ने मिस्र में विस्तार किया। इसके बाद इस्लामी साम्राज्य विस्तार उत्तरी-अफ्रीका में फैल गया। 8वीं शताब्दी में इस्लाम का केन्द्र सीरिया से बदलकर उत्तरी अफ्रीका स्थानान्तरित हो गया। इसके परिणामस्वरूप उत्तरी अफ्रीका विभिन्न गतिविधियों का केन्द्र बन गया। विद्वानों, न्यायविदों और दार्शनिकों का प्रमुख गढ़ बन गया। इस अवधि के दौरान उप-सहारा अफ्रीकी क्षेत्र में प्रवास और व्यापार के माध्यम से इस्लाम का व्यापक प्रसार हुआ।

उपनिवेशवाद से पूर्व अफ्रीका में हजारों छोटे-बड़े साम्राज्य व राजनीतिक शक्तियों के केन्द्र थे। 9वीं शताब्दी में पश्चिमी क्षेत्र से लेकर केन्द्रीय सूडान तक तथा उप-सहारा और सवाना क्षेत्रों में भी विभिन्न छोटे-बड़े राजवंश अस्तित्व में थे। इनमें घाना, गाओ तथा कानेम-बोर्नू साम्राज्य बड़े व शक्तिशाली थे।

माली के विघटन के बाद (1464-1492) में एक स्थानीय नेता सोनी अली ने साम्राज्य पर कब्जा कर उसे संगठित किया। अली ने सोनघाई साम्राज्य की स्थापना की। मध्य नाइजर और पश्चिमी सूडान पर नियन्त्रण स्थापित किया तथा सहारा-पार के व्यापार को भी कब्जे में लिया। उसके उत्तराधिकारी असकिया मोहम्मद ने इस्लाम को राज्य धर्म बनाया, मस्जिदें बनवाईं और मुस्लिम विद्वानों की उच्च संस्थायें बनवाईं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. .... तक मानव घास-फूस की झोंपड़ियाँ बनाकर रहने लगा।
   (क) 6000 ई.पू. (ख) 3000 ई.पू.
   (ग) 2000 ई.पू. (घ) 1000 ई.पू.
6. .... तक सहारा-पार और शेष अफ्रीका में व्यापारिक संबंध कायम हो चुके थे।
   (क) 5000 ई.पू. (ख) 500 ई.पू.
   (ग) 4000 ई.पू. (घ) 400 ई.पू.
7. .... पर्शिया के कब्जे वाले मिस्र में सिकंदर महान का स्वागत मुक्तिदाता के रूप में किया गया।
   (क) 332 ई.पू. (ख) 222 ई.पू.
   (ग) 111 ई.पू. (घ) 99 ई.पू.
8. .... में पश्चिम क्षेत्र से लेकर केंद्रीय सूडान तक तथा उप-सहारा और सवाना क्षेत्रों में भी विभिन्न छोटे-बड़े राजवंश अस्तित्व में थे।
   (क) 7वीं शताब्दी (ख) 9वीं शताब्दी
   (ग) 5वीं शताब्दी (घ) 8वीं शताब्दी।

15.3 अफ्रीका का उपनिवेशीकरण (Colonization of Africa)

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यूरोपवासियों को अफ्रीका महाद्वीप के भीतरी भाग के बारे में कुछ भी मालूम नहीं था। इसके कई कारण थे। एक कारण यह था कि यहाँ की जलवायु बहुत गर्म थी। इसके अतिरिक्त अफ्रीका घने जंगलों तथा विशाल रेगिस्तान का देश है। अफ्रीका के मूल निवासियों को दास बनाकर अमेरिका ले जाया जाता था, जहाँ उनसे खेती कराई जाती थी। किन्तु 1850 ई. के बाद यूरोप के लोगों ने अफ्रीका महाद्वीप के भीतरी भागों में जाकर पता लगाने का काम शुरू किया। अफ्रीका के भीतरी भागों की खोज करने वालों में डेविड लिविंगस्टोन, स्टेनली, स्प्रीक और बेकर का नाम विख्यात है। इन लोगों के अलावा ईसाई मिशनरियों ने भी अफ्रीका के भीतरी भागों में जाकर वहाँ के लोगों की सेवा की और उन्होंने अपने काम में काफी कठिनाइयाँ झेलीं। उनके माध्यम से भी अफ्रीका के भीतरी भागों के बारे में काफी जानकारी प्राप्त हुई।

इन साहसी खोजकर्ताओं और ईसाई मिशनरियों के द्वारा जब यूरोपवासियों को पता लगा कि अफ्रीका में बहुमूल्य खनिज, रबर, सोना, हीरे-मोती और अन्य कीमती चीजें हैं, तो यूरोपवासियों के मुँह से लार टपकने लगी।

अफ्रीका में सबसे पहले बेल्जियम ने प्रवेश किया। उसने कांगो पर कब्जा किया और वहाँ के रबर का लाभ उठाने लगा। बेल्जियम की देखादेखी स्पेन, पुर्तगाल, इंग्लैण्ड, जर्मनी, फ्रांस और इटली ने भी अफ्रीका में घुसने की कोशिश की। स्पेन ने अफ्रीका के उत्तरी तट के कुछ भाग पर कब्जा कर लिया। पुर्तगाल ने पूर्वी तट का कुछ भाग हथिया

नोट

लिया। अल्जीरिया और ट्युनीशिया पर फ्रांस ने प्रभुत्व स्थापित किया। फ्रांस ने कांगो में भी अपना पैर बढ़ाना शुरू किया। किन्तु वहाँ बेल्जियम जमा हुआ था। फ्रांस व बेल्जियम में झगड़ा हो गया; अत: दोनों ने कांगो को बाँट लिया।

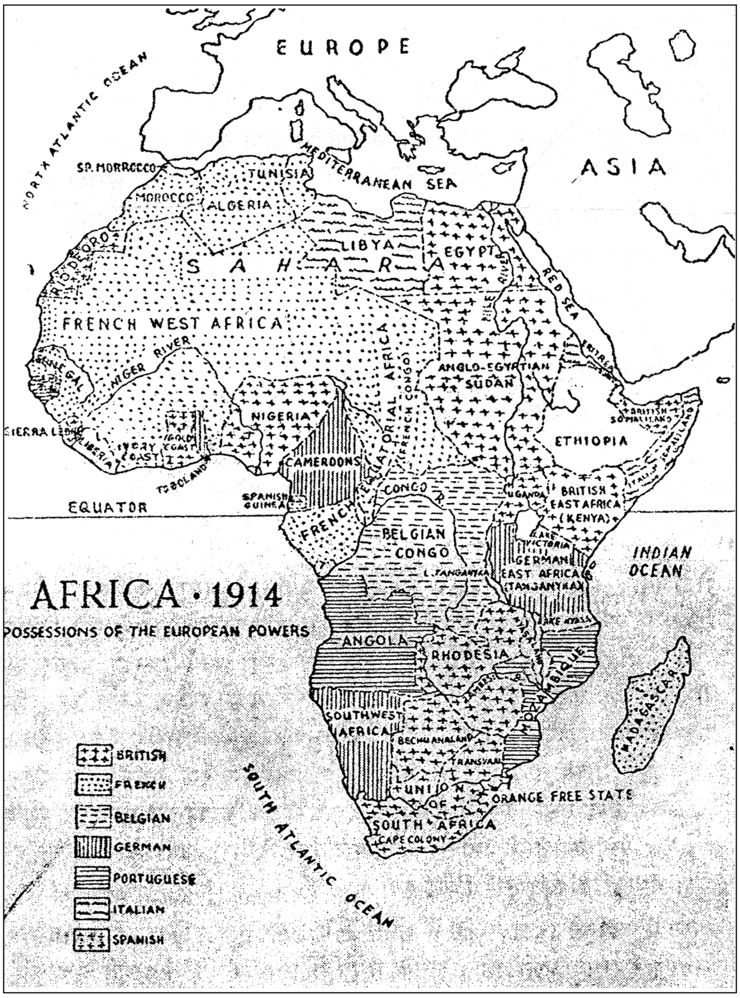

चित्र 1. अफ्रीका में यूरोपीय उपनिवेश

पूर्वी अफ्रीका का बँटवारा—पूर्वी अफ्रीका में प्रथम एक जर्मन अन्वेषक कॉर्ल पीटर्स (Karl Peters) ने प्रवेश कर वहाँ के मूल निवासियों को अपनी ओर मिलाकर उनके प्रदेश पर अधिकार कर लिया। जर्मनी की इस घुसपैठ से अंग्रेज और फ्रांसीसी चौंक गए। उन्होंने शीघ्र ही पूर्वी अफ्रीका पर अधिकार प्राप्त करने के लिए सैनिक-तैयारियाँ आरम्भ कर दीं, परन्तु युद्ध की भयंकरता से भयभीत होकर इस भाग का बँटवारा करने का निर्णय किया गया। जर्मन और अंग्रेजों ने पूर्वी भाग का बँटवारा करने का निर्णय किया। फ्रांस में मेडागास्कर (Medagascar) द्वीप पर अधिकार कर लिया। पुर्तगाल का भी पूर्वी अफ्रीका के कुछ भाग पर पहले से ही अधिकार था। इटली ने भी इस लूट में हिस्सा लिया। उसने इरीट्रिया (Eritrea) और सुमालीलैंड (Somaliland) पर अधिकार कर लिया। इटली ने सीरिया, लीबिया से लेकर इथोपिया (Ethiopia) पर भी अधिकार करने के लिए हमला किया, किन्तु उस समय उनकी वह विजय स्थायी नहीं रही। उसको वहाँ से कुछ समय बाद हटना पड़ा।

पश्चिमी अफ्रीका का बँटवारा—पश्चिमी अफ्रीका के लिए भी बड़ा संघर्ष हुआ। अन्त में 1884-85 ई. में बर्लिन सम्मेलन (Berlin Conference) में इसके बँटवारे के लिए निर्णय किया गया। इंग्लैण्ड, जर्मनी और फ्रांस ने आपस में समझौता किया। जर्मनी ने दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका, ऑरैन्ज नदी के उत्तर की ओर केमेरून्ज अपने

नोट

अधिकार में किए। कांगो नदी के मुहाने के भाग का भी बँटवारा किया गया। फ्रांस और अंग्रेजों ने अपने अधिकार क्षेत्रों को संगठित करने का कार्य शुरू किया।

उत्तरी अफ्रीका का बँटवारा–उत्तरी अफ्रीका में फ्रांस, अंग्रेज, जर्मनी और इटली सब अपना-अपना उपनिवेश स्थापित करना चाहते थे। फ्रांस ने सबसे पहले सन् 1830 ई. में अल्जीरिया (Algeria) पर कब्जा किया। फिर उसने धीरे-धीरे ट्यूनिशिया (Tunisia), सैनीगल, मोरक्को व सुमालीलैंड पर अपना अधिकार-क्षेत्र बढ़ा लिया। ग्रेट ब्रिटेन ने भी मिस्र (Egypt) और सूडान (Sudan) अपने अधिकार में किए। लीबिया (Libya) इटली का अधिकार-क्षेत्र हुआ।

दक्षिण-अफ्रीका पर अधिकार–उत्तर में जिस प्रकार फ्रांस की शक्ति व अधिकार था, दक्षिणी अफ्रीका में उसी प्रकार अंग्रेजों का अधिकार बहुत हो गया। केप कॉलोनी (Cape Colony) नैटाल, ट्रान्सवाल, ऑरैन्ज-फ्री-स्टेट (Orange-Free-State), बिचुआनालैण्ड (Bechuanaland), रोडेशिया (Rhodesia) और न्यासालैण्ड (Nyasaland) सब अंग्रेजों के अधिकार में आ गये।

टास्क फ्रांस ने सबसे पहले कब अल्जीरिया पर कब्जा किया?

रोडेशिया–दक्षिणी अफ्रीका में अंग्रेजों का उपनिवेश बसाने में सिसिल रोड्स नाम के व्यक्ति ने बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। दक्षिणी अफ्रीका में उसे ब्रिटिश उपनिवेश का निर्माता कहा जाता है। वह अपनी युवावस्था में अफ्रीका में जाकर बस गया। धीरे-धीरे वह बड़ा धनी हो गया। धीरे-धीरे उसका प्रभाव बढ़ता रहा और वह केप कॉलोनी का प्रधानमंत्री बन गया। सिसिल रोड्स ने बेचुआनालैंड पर कब्जा कर लिया। उसने उत्तमासा अन्तरीप से काहिरा तक रेल लाइन बनाने की योजना तैयार की। इसके बाद उसने केप कॉलोनी के उत्तर में एक काफी बड़े भाग पर कब्जा कर लिया। इस भाग को उसने ब्रिटिश उपनिवेश बना दिया। उसी के नाम पर इस उपनिवेश का नाम रोडेशिया रख दिया गया। 19वीं शताब्दी में मिस्र एक शक्तिशाली राज्य था। वहाँ का शासक मुहम्मद अली था। उसके समय में मिस्र की स्थिति बड़ी सुदृढ़ थी। किन्तु 1848 में मुहम्मद अली की मृत्यु के बाद मिस्र के शासक अयोग्य निकले। इस्माइल नामक शासक के समय में मिस्र ने फ्रांस व इंग्लैण्ड की सहायता से स्वेज नहर का निर्माण कराया। मुहम्मद अली की मृत्यु के बाद से ही मिस्र के शासक इंग्लैण्ड और फ्रांस के चंगुल में फंसने लगे थे। स्वेज नहर बनने के बाद तो मिस्र के शासक उनके हाथों में कठपुतली बन गए। इस्माइल के बाद तिपलिक शासक बना। उसके शासनकाल में शासन के अनेक मामलों में फ्रांसीसियों व अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया। इसी बीच इंग्लैण्ड की सरकार ने स्वेज नहर पर से मिस्र के प्रभुत्व को धन देकर खरीद लिया। मिस्र की सरकार ब्रिटिश से ऋण लेती रही थी। अत: ऋणदाता होने की हैसियत से ब्रिटेन उस पर धीरे-धीरे अपना प्रभुत्व जमाता गया।

धीरे-धीरे स्थिति वह आ गई कि मिस्र पर ब्रिटिश सरकार का प्रतिनिधि शासन करने लगा। यह उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त के लगभग की बात है। अंग्रेजों ने मिस्र का खूब शोषण किया और वहाँ की राष्ट्रीय भावनाओं को खूब निर्दयता से कुचला। अंग्रेज हमेशा यह कहते थे कि मिस्र पर उनका जो ऋण है, वह जब अदा हो जायेगा, तो वे मिस्र छोड़कर चले जायेंगे, लेकिन उनकी नीयत साफ नहीं थी। अभी तक मिस्र में फ्रांस का भी कुछ अधिकार था किन्तु 1908 में फ्रांस ने भी अपने अधिकार ब्रिटेन को सौंप दिये। अब मिस्र पर ब्रिटेन का पूर्ण अधिकार हो गया। (1922 ई. में ब्रिटेन ने एक समझौता होने पर मिस्र को छोड़ा)।

इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक लगभग सारे अफ्रीका को यूरोप के देशों ने हड़प लिया। अफ्रीका में यूरोपवासियों के उपनिवेश बनने की कहानी बड़ी दर्दनाक है।

15.4 सारांश (Summary)

- अफ्रीका में यूरोपीय खोजकर्ताओं का आगमन प्राचीन यूनान और रोमन सभ्यताओं के साथ शुरू हो गया। 332 ई.पू. में पर्शिया के कब्जे वाले मिस्र में सिकन्दर महान (एलेक्जेन्डर) का स्वागत मुक्तिदाता के रूप में किया गया।

नोट

- उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यूरोपवासियों को अफ्रीका महाद्वीप के भीतरी भाग के बारे में कुछ भी मालूम नहीं था। इसके कई कारण थे। एक कारण यह था कि यहाँ की जलवायु बहुत गर्म थी।
- पूर्वी अफ्रीका में प्रथम एक जर्मन अन्वेषक कॉर्ल पीटर्स (Karl Peters) ने प्रवेश कर वहाँ के मूल निवासियों को अपनी ओर मिलाकर उनके प्रदेश पर अधिकार कर लिया। जर्मनी की इस घुसपैठ से अंग्रेज और फ्रांसीसी चौंक गए। उन्होंने शीघ्र ही पूर्वी अफ्रीका पर अधिकार प्राप्त करने के लिए सैनिक-तैयारियाँ आरम्भ कर दीं, परन्तु युद्ध की भयंकरता से भयभीत होकर इस भाग का बँटवारा करने का निर्णय किया गया।
- पश्चिमी अफ्रीका के लिए भी बड़ा संघर्ष हुआ। अन्त में 1884-85 ई. में बर्लिन सम्मेलन (Berlin Conference) में इसके बँटवारे के लिए निर्णय किया गया।
- अंग्रेजों ने मिस्र का खूब शोषण किया और वहाँ की राष्ट्रीय भावनाओं को खूब निर्दयता से कुचला। अंग्रेज हमेशा यह कहते थे कि मिस्र पर उनका जो ऋण है, वह जब अदा हो जायेगा, तो वे मिस्र छोड़कर चले जायेंगे, लेकिन उनकी नीयत साफ नहीं थी।

15.5 शब्दकोश (Keywords)

- **ऐतिहासिक**–इतिहास-संबंधी
- **ईसाइयत**–ईसाई धर्म।

15.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. 6000 ई.पू. तक मानव का रहन-सहन कैसा था?
2. आरंभिक सभ्यता से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।
3. पूर्वी अफ्रीका का बँटवारा कैसे और कब हुआ?
4. दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजों का उपनिवेश बसाने में किसने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सिसिल रोड्स	2. पेलियोलिथिक	3. फारोनिक सभ्यता	4. सहारा क्षेत्र
5. (क)	6. (ख)	7. (क)	8. (ख)।

15.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–16: यायावर साम्राज्य
(Nomadic Empires)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

16.1 पुर्तगाली औपनिवेशिक शासन और संवैधानिक सिद्धांत (Colonial Rule of Portuguese and Constitutional Theory)

16.2 उपनिवेशों के प्रकार (Types of Colonies)

16.3 अर्थव्यवस्था के विकास के चरण (Step of Development of Economy)

16.4 अटलांटिक-पार प्रदेशों की अर्थव्यवस्था (Economy of Trans-Atlantic Regions)

16.5 अटलांटिक का मछली उद्योग (Fishing Industries of Atlantic)

16.6 अमरीकी व्यापार में हस्तक्षेप करने वाले व्यापारी (Traders Interrupting American Trade)

16.7 दास व्यापार (Slave Trade)

16.8 शक्कर उत्पादक द्वीपों में दास-व्यवस्था (Slavery in Sugar Produces Island)

16.9 सारांश (Summary)

16.10 शब्दकोश (Keywords)

16.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

16.12 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- औपनिवेशिक शासन और उपनिवेशों के प्रकार को समझेंगे;
- दास व्यापार, मछली उद्योग, अर्थव्यवस्था के विकास आदि को जानेंगे;
- अमरीकी व्यापार, शक्कर उत्पादक द्वीप आदि से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

सन् 1700 तक पुर्तगालियों को समुद्रपार के साम्राज्य पर अधिकार किए ढाई सौ वर्ष बीत चुके थे। सोलहवीं शताब्दी में उनकी प्रमुख उपलब्धि अफ्रीका (गिनी, कांगो, अंगोला और मौज़ाम्बीक) में सैनिक अड्डों की स्थापना और भारत से लेकर मकाओ द्वीपसमूह तक विस्तृत सामुद्रिक साम्राज्य की स्थापना थी। 1700 तक पुर्तगाल मुख्यत: एक

नोट

अटलांटिक शक्ति था। गोआ एवं भारत के कुछ व्यापारिक बंदरगाहों, तिमूर द्वीप और मकाओ के अतिरिक्त सारे प्रदेशों पर पूर्व में डचों या अंग्रेज़ों ने अधिकार कर लिया था। अफ्रीका में उसके पूर्वी तटवर्ती प्रदेश, कुछ तटवर्ती बंदरगाहों और अर्धस्वतंत्र स्थलीय जागीरों के रूप में सीमित होकर रह गए थे। पश्चिम में उसने केवल उन बंदरगाहों को अपने पास रखा था जहाँ से दास-व्यापार होता था। परंतु अटलांटिक में उसके पास मदीरा और आज़ोर्ज़ थे, जो अमरीका और ख़ास तौर से ब्राज़ील पर नियंत्रण की स्थापना की सीढ़ी थे। पूर्वी साम्राज्य के विघटन के बाद ब्राज़ील पुर्तगाल के वैदेशिक प्रदेशों का केंद्रबिंदु हो गया क्योंकि ब्राज़ील दासों की सप्लाई करने वाले पश्चिम अफ्रीका के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा था, जिस पर ब्राज़ीली अर्थव्यवस्था आश्रित थी। यूरोपीय उपनिवेशीकरण के सामान्य इतिहास में भी ब्राज़ील का इस कारण महत्त्वपूर्ण स्थान था कि वह खेतिहर उपनिवेश (प्लान्टेशन कॉलोनी) का आदि प्रारूप (prototype) था। स्पेन ने यूरोप को एक ऐसे सुसंगठित औपनिवेशिक साम्राज्य की स्थापना का मार्ग दिखाया जो बहुमूल्य धातुओं के उपयोग तथा विशाल प्रगतिशील स्थानीय जनसंख्या पर आधारित था। परंतु इस प्रकार की व्यवस्था अत्यधिक अनुकूल भौगोलिक एवं जनांकिकीय (demographic) परिस्थितियों पर ही निर्भर करती थी जो मुख्यत: मैक्सिको और पेरू में ही उपलब्ध थीं।

क्या आप जानते हैं ब्राजील में 1690 से आरंभ होने वाले दशक तक कोई भी बहुमूल्य धातुएँ उपलब्ध नहीं हुईं और श्रमिक शक्ति के रूप में वहाँ की स्थानीय जनसंख्या बिलकुल बेकार साबित हुई।

पुर्तगालियों ने ऐसी परिस्थितियों में सुधार लाना चाहा। इसलिए वे अटलांटिक द्वीपों से गन्ना (जिसे पहले वहाँ भूमध्यसागरीय प्रदेशों से लाकर लगाया गया था) और अफ्रीका से नीग्रो दास लाए। सत्रहवीं शताब्दी में तम्बाकू, कॉफी, कोकोआ और कपास जैसी उपजों के प्रचलन से फ्रांसीसी, ब्रिटिश, डच और यहाँ तक कि स्पेनी भी शीतोष्ण और अर्धशीतोष्ण प्रदेशों में धन अर्जित करने के सर्वोत्तम माध्यम के रूप में दास-श्रम का उपयोग कर रहे थे। इस प्रकार उक्त उपनिवेश में थोड़े-से श्वेत अल्पसंख्यक भू-स्वामियों और वर्णसंकर नीग्रो दासों (negros) के स्वामित्व वाली विशाल ग्रामीण जागीरों का उदय हुआ। इन जागीरों में नीग्रो गुलाम काम करते थे। अठारहवीं शताब्दी के प्रारंभ में मीना ज़राइस में सोने और हीरों की खोज से एक विशाल खनिज उद्योग की स्थापना हुई और इससे जनसंख्या का दक्षिण की ओर स्थानांतरण हुआ। सुदूर दक्षिण में पशुपालन उद्योग का विकास हुआ और रीओ द ज़नेरो में कॉफ़ी पैदा की जाने लगी। ब्राज़ील में अठारहवीं शताब्दी के अंत तक जनसंख्या बढ़कर 40 लाख हो गई थी। ब्राजील धीरे-धीरे समृद्ध होता जा रहा था परंतु उसकी सादगी और ग्रामीणता पहले जैसी ही बनी हुई थी। वहाँ कोई भी बहुत बड़ा नगर नहीं था और उद्योग भी थोड़े थे। शक्कर के कारखाने अर्थव्यवस्था का आधार और समाज के केंद्रबिंदु थे। यद्यपि शासक वर्ग में प्रमुखत: श्वेत लोग थे पर औपचारिक रंगभेद न होते हुए भी अफ्रीकी रक्त के लोगों के विरुद्ध प्रतिकूल भावना बनी हुई थी। मिश्र जाति के नीग्रो लोगों (mulattoes) को चर्च या राज्य के ऊँचे पदों पर पहुँचने की कोई भी आशा नहीं थी।

दक्षिणी अमरीका के उपनिवेशीकरण के पुर्तगाली तरीके स्पेनी तरीकों से भिन्न थे। कास्तीलियाई साहसिक व्यापारियों ने जान-बूझकर दक्षिणी अमरीका के उन अंदरूनी पर्वतीय प्रदेशों को चुना क्योंकि ये ऐसे प्रदेश थे जिन्हें उपनिवेश बनाने में श्वेत लोगों को आसानी थी। परंतु पुर्तगालियों ने अपनी गतिविधियों को समशीतोष्ण तटवर्ती पट्टी तक ही सीमित रखा। पुर्तगालियों ने इतने लंबे समय तक अपने उपनिवेशों को समुद्रतटवर्ती क्षेत्रों तक ही सीमित क्यों रखा, इसके प्रमुख कारण आर्थिक थे। किंतु साथ ही इसके भौगोलिक कारण भी थे। उपनिवेशवादी शीघ्र समृद्धि के लिए गन्ने को मुख्य उपज मानते थे। यह गन्ना नदियों के किनारे खेतों में उगाया जाता था क्योंकि वहाँ सिंचाई के लिए जल की सुविधा थी और गन्ना पेरने के कोल्हू और शक्कर बनाने की मिलें जलशक्ति से चलती थीं। अत: नदियों के निकट स्थित होने के कारण जलशक्ति का सुगमतापूर्वक उपयोग किया जा सकता था। इसके अतिरिक्त ब्राज़ील की लकड़ी, खालें, तम्बाकू और कपास को थोक माल के रूप में ब्राज़ील से निर्यात किया जाता था। इस माल का

नोट

सबसे सुगमतापूर्वक निर्यात केवल उस स्थिति में किया जा सकता था जब औपनिवेशिक बस्तियाँ नदियों के मुहानों के निकट या समुद्रतट के किनारे प्राकृतिक बंदरगाहों पर स्थित हों उनको अंदरूनी स्थलीय प्रदेशों की ओर स्थापित करने का कोई आधार नहीं था क्योंकि उत्तर में अमेजन और दक्षिण में रिओदला प्लांटा तक कोई भी नदी नौपरिवहन-योग्य नहीं थी। उनके मार्ग बहुत दूर-दूर तक जल-प्रपातों और बड़े-बड़े पत्थरों से अवरुद्ध थे। इन्कास और अजतेक जातियों द्वारा पेरू और मैक्सिको में बनाई गई पगडंडियों और सड़कों ने इन देशों में स्पेनी प्रवेश को और अधिक सुगम बना दिया था। परंतु ब्राज़ील में घुमक्कड़ जंगली जातियाँ रहती थीं। विभिन्न तटवर्ती औपनिवेशिक बस्तियों के साथ चूँकि थल-मार्ग से संचार एवं संपर्क अत्यंत कठिन था, अत: उनके साथ संपर्क और संचार केवल समुद्र के माध्यम से होता था। स्पेनी लोगों ने स्पेन में ही धातुओं पर काम करने का काफ़ी अनुभव प्राप्त कर लिया था। (क्योंकि विस्कयान प्रांत में लोहे की खानें थीं)। इसके विपरीत पुर्तगालियों के पास खनन इंजीनियरों का अभाव था और उनके व्यावसायिक खनिक स्पेनी या जर्मन होते थे। इन परिस्थितियों में पुर्तगालियों को केवल ब्राज़ीली कृषि-संपदा के उपभोग से ही संतुष्ट रहना पड़ा।

पुराने साम्राज्यों के अंतर्गत औपनिवेशिक सिद्धांतों और व्यवहार में काफ़ी भिन्नता थी। स्पेनी राजनीतिक केंद्रीकरण में अग्रगण्य थे जब कि पुर्तगाली आर्थिक मामलों में प्रवीण सिद्ध हुए। स्पेनी सम्राट औपनिवेशिक शासन के बारे में जरूरत से ज़्यादा तुनकमिज़ाज थे। इसके विपरीत पुर्तगालियों ने ब्राज़ील में विकेंद्रीकरण को प्रोत्साहन दिया। पुर्तगाली बड़े ही व्यापारिक प्रवृत्ति के थे जब कि स्पेनी बड़े कानूनी स्वभाव के थे।

16.1 पुर्तगाली औपनिवेशिक शासन और संवैधानिक सिद्धांत (Colonial Rule of Portuguese and Constitutional Theory)

पुर्तगाली औपनिवेशिक शासन और संवैधानिक सिद्धांत स्वयं पुर्तगाल के राजनीतिक स्वरूप के प्रतिबिंब थे। पुराने स्पेन की शासन व्यवस्था के साथ तुलना करने पर यह व्यवस्था अनगढ़ (किंतु उपयोगी) प्रतीत होती है। पुर्तगाल ने अपने उपनिवेशों और महानगरीय प्रदेशों के मध्य कोई सांविधानिक भेदभाव नहीं किया। 1604 तक उसका कोई औपनिवेशिक विभाग नहीं था, फिर भी पुर्तगाल शासन का कोई भी महानगरीय विभाग पुर्तगाली उपनिवेशों पर मनमाने ढंग से शासन करने के लिए पूर्णत: सक्षम था। 'काउंसिल ऑफ स्टेट' तथा 'काउंसिल ऑफ द इंडीज़' (विदेश के लिए) नामक संस्थाएँ कॉफी हद तक शासन के लिए जिम्मेदार थीं।

ब्राज़ील और अन्य अटलांटिक उपनिवेशों के शासन का संवैधानिक स्वरूप पूरी तरह स्पष्ट नहीं था। साथ ही स्पेन की राजधानी में इन पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करने का इरादा भी नहीं था। शाही शासन के स्थान पर धीरे-धीरे प्रदाताओं (donators) के शासन की स्थापना हुई। परिणामस्वरूप 1700 तक किसी भी उपनिवेश पर उसके स्वामी (proprietor) का शासन नहीं रह गया। सैद्धांतिक रूप से संपूर्ण ब्राज़ील वाइसराय द्वारा शासित एक छोटा प्रदेश था जिसे कैप्टन-जनरल और कैप्टन के अधीन प्रांतों में उपविभाजित किया गया था। अफ्रीका और अटलांटिक में छोटे उपनिवेशों पर केवल कैप्टनों का ही शासन था। वस्तुत: प्रांतों पर वाइसराय का नियंत्रण नाम मात्र का था। कैप्टन जनरल अपने प्रांत विशेष की शासन-व्यवस्था के संबंध में लिस्बन और पुर्तगाल सरकार से सीधा संपर्क करते थे। दोनों ही अर्थात् कैप्टन और कैप्टन-जनरल, वाइसराय की परवाह नहीं करते थे। अपीली मुकदमों की औपनिवेशिक अदालतों द्वारा सुनवाई करने के कारण यह पराश्रयता और बढ़ गई। 1751 में दो औपनिवेशिक अपीली अदालतों की स्थापना के बावजूद भी यही स्थिति विद्यमान रही।

उपनिवेशों में स्पेनी अमरीका की तुलना में शासन कम पेचीदा था। वहाँ 'ऑडियेन्सिया' (Audiencia) जैसी औपचारिक परिषदें नहीं थीं। लिस्बन सरकार द्वारा नियुक्त गवर्नर निरंकुश होते थे। इन्हें केवल न्यायाधीश ही परामर्श दे सकते थे और नियंत्रित करते थे। वहाँ कोई प्रतिनिधि संस्थाएँ भी नहीं थीं। केवल प्रांतीय राजधानियों में निर्वाचित नगरपालिका परिषदों के माध्यम से क्रिओल ही शासन पर किसी प्रभाव का प्रयोग कर सकते थे। स्पेनी परंपराओं के विपरीत लिस्बन सरकार द्वारा नियुक्ति के लिए सुरक्षित कुछ पदों के अतिरिक्त अधिकांश आधिकारिक पदों पर क्रिओलों का ही अधिकार था। चूँकि ब्राजील में कोई विश्वविद्यालय नहीं था जहाँ क्रिओल कानूनी योग्यता प्राप्त कर

नोट

सकें, अतः न्यायिक पद प्रायद्वीपीय पुर्तगालियों के हाथों में ही सीमित थे। संक्षेप में सैद्धांतिक रूप से यद्यपि पुर्तगाली औपनिवेशिक शासन निरंकुश था तथापि सार्वजनिक मामलों में उपनिवेशवादियों ने बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

पुर्तगाली व्यापारिक नीति बहुत सीमा तक स्पेन की ही भाँति थी। संभव है स्पेन ने पहले मूलतः पुर्तगाली परंपराओं का अनुसरण किया हो। औपनिवेशिक व्यापार पुर्तगाली नागरिकों के ही हाथों में सीमित था। किसी भी विदेशी जहाज़ को ब्राज़ीली या अन्य औपनिवेशिक बंदरगाहों में जाने की अनुमति नहीं थी। केवल लिस्बन से होने वाले आयात-निर्यात व्यापार को ही सीधा व्यापार करने की अनुमति थी। बाद में इस व्यापार पर और अधिक प्रतिबंध लगाए गए क्योंकि 1765 तक यह व्यापार वर्ष में एक बार जाने वाले जहाज़ी बेड़ों के द्वारा किया जाता था।

विदेश व्यापार में पुर्तगाल की स्थिति बिचौलिए की भाँति थी। उक्त स्थिति के अतिरिक्त पुर्तगाल अपने औपनिवेशिक व्यापार से अधिक लाभ अर्जित करने की स्थिति में नहीं था क्योंकि उसकी आर्थिक स्थिति बहुत कमज़ोर थी। अटलांटिक पार के देशों के लिए व्यापारिक जहाज़ों के निर्माण और उनके संचालन तथा अंगोला से गुलामों की आपूर्ति करने के अतिरिक्त किसी भी विशिष्ट आर्थिक कर्तव्य का बिना निर्वाह किए वह अपने उपनिवेशों से लाभ अर्जित करता रहा। फिर भी उसे औपनिवेशिक राजस्व रूप में अकेले ब्राज़ील से 1711 में 72,000 पौंड और शताब्दी के मध्य में 9,00,000 पौंड प्राप्त हुए।

और भी अजीब बात यह है कि पुर्तगाल की तुलना में कहीं अधिक जनसंख्या वाला और समृद्ध होने के बावजूद ब्राज़ील में किसी भी राष्ट्रीय आंदोलन का जन्म नहीं हुआ। ब्राज़ील और अटलांटिक-पार के द्वीपों ने पुर्तगाल के प्रति अभूतपूर्व निष्ठा का प्रदर्शन किया। समान भाषा, कानून, धर्म और संस्कृति उपनिवेशों एवं उनके अधिशासी राज्यों के मध्य कुछ प्रमुख संपर्क-सूत्र थे।

क्या आप जानते हैं पुर्तगाल की तुलना में कहीं अधिक जनसंख्या वाला और समृद्ध होने के बावजूद ब्राज़ील में किसी भी राष्ट्रीय आंदोलन का जन्म नहीं हुआ।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. पुर्तगाल ने पश्चिम में केवल उन बन्दरगाहों को अपने पास रखा जहाँ से ········· होता था।
2. शक्कर के कारखाने ········· का आधार और समाज का केन्द्र बिन्दु थे।
3. अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक ब्राजील की जनसंख्या बढ़कर ········· हो गई थी।
4. गन्ना पेरने के कोल्हू और शक्कर की मिलें ········· से चलती थी।
5. सम्पर्क और संचार केवल ········· के माध्यम से होता था।

16.2 उपनिवेशों के प्रकार (Types of Colonies)

यूरोप के वैदेशिक या समुद्रपार के विस्तार के प्रत्येक चरण में एक-दूसरे पर छा जाने वाली एक या एक से अधिक शक्तियाँ थीं। आधुनिक युग में ये शक्तियाँ ब्रिटिश और फ्रांसीसी थीं परंतु 1815 से पूर्व ये थीं स्पेन और पुर्तगाल। उन शक्तियों की प्रधानता केवल इस बात में निहित नहीं थी कि वे अन्वेषक थीं वरन् इस बात में थी कि उन्होंने उपनिवेशीकरण के पाँच प्रभावशाली तरीकों में से चार को अंगीकार किया था। ये तरीके प्रथम औपनिवेशिक साम्राज्य की सबसे बड़ी विशेषता थे और प्रत्येक औपनिवेशिक शक्ति ने इनका अनुसरण करने का प्रयास किया। स्पेन ने यूरोप को यह सिखाया कि नई दुनिया में प्राकृतिक उपादानों का पूरी तरह उपयोग करते हुए महान प्रादेशिक साम्राज्य की स्थापना कैसे की जाए।

मैक्सिको और पेरू में स्पेनी उपनिवेश प्रारंभ में "मिश्रित" उपनिवेश थे जिनमें अधिकांश श्वेत अल्पसंख्यक उपनिवेश बसाने वालों ने, विदेशी भूमि में, पुराने स्पेन समाज से मिलते-जुलते समाज की रचना की।

अमरीका और फिलीपीन्स के जो भाग उतने लाभप्रद नहीं थे और जहाँ भौगोलिक या जनांकिकीय परिस्थितियों के कारण पूरी तरह उपनिवेश बसाना उतना आकर्षक नहीं था वहाँ स्पेनियों ने आधिपत्य वाले उपनिवेशों (colonies of occupation) की स्थापना की। इन उपनिवेशों में उपनिवेशक थोड़े से और "सीमांत प्रणाली" (frontier system) के द्वारा लोगों पर एक शिथिल-सा नियंत्रण रखा जाता था। इसी प्रकार की शिथिल नियंत्रण की व्यवस्था का पुर्तगालियों ने अंगोला पर और मोज़ाम्बीक में भी प्रयोग किया, यद्यपि यह पुर्तगालियों की विशिष्ट व्यवस्था का अंग नहीं थी।

पुर्तगालियों ने दो प्रतिरूपों या मॉडलों को चुना था। ब्राज़ील में उन्होंने पहले "बागान" उपनिवेश की स्थापना की जिसमें केवल एक छोटा-सा यूरोपीय अल्पसंख्यक वर्ग स्थायी रूप से निवास करता था। उन्होंने इन "मिश्रित" उपनिवेशों में स्पेन की ही भाँति अपनी महानगरीय सभ्यता को विकसित किया। चूँकि ब्राज़ील में ज्ञात बहुमूल्य धातुओं और चुपचाप काम करने वाले स्थानीय श्रमिक लोगों दोनों का अभाव था, अत: पुर्तगाली अफ्रीका से गुलामों का आयात करते थे और यूरोपीय बाज़ार के लिए शक्कर जैसे विदेशी किराने के सामान (groceries) का उत्पादन करते थे।

पूर्व की सर्वथा भिन्न परिस्थितियों में पुर्तगालियों ने एक अन्य प्रवृत्ति का अनुसरण किया। उसका पूर्वी साम्राज्य छोटे-छोटे व्यापारिक उपनिवेशों का समूह था। उसके नाविक अड्डों में बहुत थोड़े प्रदेश और बहुत थोड़े स्थायी निवासी थे जिनका काम स्थानीय उत्पादनों या उपजों के लाभकारी व्यापार को संगठित करना था। अत: यह एक वाणिज्यिक साम्राज्य था, औपनिवेशिक नहीं।

1700 में उत्तरी अमरीका में ब्रिटेन तथा फ्रांस की "विशुद्ध" औपनिवेशिक बस्ती इस प्रकार के उपनिवेशीकरण का एक नमूना थी।

अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्पेनी और पुर्तगाली साम्राज्य का महान् युग समाप्त हो गया। वे दोनों पतनोन्मुख शक्तियाँ थीं और ब्राज़ील के अतिरिक्त पुर्तगाल के सारे उपनिवेश उनके हाथ से निकल गए थे। स्पेनी उन क्षेत्रों में नहीं बसे जहाँ न तो सघन जनसंख्या हो और न ही सोने-चाँदी के विपुल भंडार हों। पुर्तगाली, फ्रांसीसी, अंग्रेज़ी और डच उपनिवेशकों ने यह अनुभव किया कि भूमि पर काम करने के लिए अमरीका में श्रमिक शक्ति लाने की आवश्यकता है। इन शक्तियों द्वारा अधिकृत समशीतोष्ण प्रदेशों के समस्त निचले भागों में श्रमिक शक्ति का बसना और औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का उदय ये दोनों विकास की एक जैसी स्थितियों में होकर गुजरे।

16.3 अर्थव्यवस्था के विकास के चरण (Step of Development of Economy)

सबसे पहले जीवन की मूल आवश्यकताओं की चीज़ों का उत्पादन करने के लिए संघर्ष किया गया। संभव है कि इस मामले में अग्रणी लोगों के दिमाग में भारतीय व्यापार, ब्राज़ीली लकड़ी को काटना, पश्चिमी रास्ते की खोज करना या सामुद्रिक लूट को मदद देना रहा हो, फिर भी उन्हें मक्का-जैसी फसलों को उगाने में अपना अधिकांश ध्यान लगाना पड़ा ताकि वे अपनी मातृभूमि से अनाज की आपूर्ति की नाजुक हालत से बच सकें।

इसके बाद उपनिवेशवादियों ने ऐसी फसलें उगाने का प्रयत्न किया जिन्हें यूरोप में आसानी से बेचा जा सके, जिससे कि उनके उपनिवेश पूँजी-निवेशकों और अप्रवासियों दोनों के लिए अधिक आकर्षक बन सकें। आरंभ में तंबाकू प्रमुख वेस्ट इंडियन व्यापारिक माल था, पर 1620-30 के आस-पास उसकी कीमतें गिर जाने से वह उतनी आकर्षक नहीं रह गई थी। अत: उपनिवेशकों ने विभिन्न प्रकार की अन्य उपजों को उगाना प्रारंभ किया जिनमें कपास और अदरक बहुत महत्त्वपूर्ण थे। अत: कुछ दशाब्दियों तक द्वीपीय अर्थव्यवस्था को विविध रूपों में नियोजित किया गया।

1640 से आरंभ होने वाले दशक में द्वीपों में ईख उत्पादन के प्रचलन से उनके विकास के नए द्वार खुल गए। ईख के उत्पादन के लिए कैरीबियाई जलवायु बहुत उपयुक्त थी और इसके अधिकाधिक कुशल उत्पादन से शक्कर की

नोट

कीमतें कम हो गईं। इससे यह स्पष्ट हो गया कि यूरोप में अन्य किसी कृषि-उत्पादन की तुलना में शक्कर के विक्रय की संभावनाएँ कहीं अधिक अच्छी थीं।

अंत में शक्कर का उत्पादन एक बार प्रारंभ हो जाने के बाद एक ही फसल की खेती करने की प्रवृत्ति ने सारे द्वीपों को घेर लिया। इससे अपने प्रकार के समाज की रचना की जिसका आदि स्रोत अब भी वेस्टइंडीज के द्वीप कैरीबियन हैं। इस प्रवृत्ति के कुछ अपवाद भी थे, जैसे ग्रेनाडा और डोमिनिका में केवल कॉफ़ी पैदा होती थी, जबकि ब्राज़ील में ईख के अतिरिक्त दूसरी फसलें भी भारी मात्रा में पैदा की जाती थीं। परंतु यूरोप के कैरीबियन या वेस्टइंडीज़ के उपनिवेशों का वास्तविक महत्त्व उनके शक्कर-उत्पादन के कारण था। अत: शक्कर-उत्पादन ने ही द्वीप की अर्थव्यवस्था और समाज को सबसे अधिक प्रभावित किया। ब्राज़ील में भी इसका इतना ही महत्त्व था। यूरोपीय समशीतोष्ण उपनिवेशों की मुख्य विशेषताएँ शक्कर उत्पादन के क्रमिक विस्तार के रूप में और उत्पादन की आवश्यकताओं के अनुरूप समाज के रूपांतरण में निहित हैं। 1660 के बाद इंग्लैंड में शक्कर का आयात उसके समस्त अन्य औपनिवेशिक उत्पादनों के संयुक्त आयात से कहीं अधिक था। स्पेन के संपूर्ण औपनिवेशिक युग में उसके निर्यात योग्य माल में आधे से अधिक मात्रा शक्कर की थी।

पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शक्कर की आपूर्ति 4 हजार टन थी, जबकि इसके एक शताब्दी बाद इसकी मात्रा बढ़कर 20 हजार टन हो गई थी। शक्कर के उत्पादन ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में आमूल परिवर्तन कर दिया क्योंकि इसने एक व्यापक उत्पादक इकाई के रूप में अर्थव्यवस्था के विकास के बहुत अच्छे अवसर प्रदान किए थे। छोटे उत्पादक बड़े उत्पादकों का मुकाबला नहीं कर सकते थे और उपयुक्त भूमि में गन्ना उत्पादन सबसे अधिक लाभकारी था। जब भूमि का विशाल और अत्यधिक पूँजीकृत बागानों के रूप में विभाजन किया गया तो छोटे भूस्वामियों के लिए समृद्धि के अवसर बहुत सीमित रह गए। इसके अतिरिक्त यूरोपीय देशों से ऐच्छिक रूप से श्रमिकों के आगमन से होने वाली आपूर्ति भी समाप्त प्राय हो गई। इसके अलावा, जिस भूमि का कभी खेतों या बागानों के रूप में उपयोग किया जाता था और जिस पर विशाल दास-श्रम आश्रित था, उसे दूसरे काम के लिए प्रयुक्त नहीं किया जा सकता था। जिस प्रकार फैक्ट्री या कारखाना व्यवस्था ने अंग्रेज़ी समाज को बदल दिया उसी प्रकार गन्ने की खेती एवं शक्कर के उत्पाद ने औपनिवेशिक समाजों में परिवर्तन ला दिया था। अर्थव्यवस्था के कुशल संचालन के लिए एक निश्चित पूँजी के विशाल जमाव की आवश्यकता थी। पूँजीपति पूर्णत: अधीनस्थ और कठोर रूप से अनुशासित श्रमिक शक्ति की अपेक्षा करते थे।

अठारहवीं शताब्दी के मध्य भूमि के अतिरिक्त खेतों में लगी पूँजी का 9/10वाँ भाग गुलामों के रूप में नियोजित था।

अत: खेतिहर उपनिवेशों ने अपने साधनों को उन फ़सलों के लिए संकेंद्रित किया जो यूरोप में सबसे ज्यादा आसानी से बेची जा सकती हों। इस प्रकार अर्जित आय, द्वीपों में उनके उपयोग से संबंधित व्ययों के साथ-साथ लकड़ी, मशीनों, घोड़ों, गुलामों के खाने-पहनने और स्वयं गुलामों को खरीदने के लिए आवश्यक धन से कहीं अधिक थी। उपनिवेशकों ने अपने उपभोग के लिए विलास की चीज़ों, गुलामों के पहनने के लिए वस्त्रों पर यूरोप में खूब धन व्यय किया। परंतु यूरोप में भोजन और गुलाम दोनों ही नहीं मिल सकते थे। ब्राज़ील और स्पेनी द्वीपों में अनाज के साथ-साथ शक्कर भी पैदा होती थी परंतु गुलामों के लिए उन्हें पश्चिमी अफ्रीका पर आश्रित रहना पड़ता था।

16.4 अटलांटिक-पार प्रदेशों की अर्थव्यवस्था (Economy of Trans-Atlantic Regions)

स्पेनी नई दुनिया का प्रमुख व्यवसाय पशु-पालन था जो स्पेनी विजेताओं के स्वभाव के अनुकूल था। अत: घोड़ों, पशुओं और भेड़ों का विशाल संख्या में आयात किया गया और उनकी संख्या तेजी से बढ़ी। यूरोप में इन पशुओं के चमड़े की कीमत बहुत ऊँची थी।

सम-शीतोष्ण तटवर्ती प्रदेशों में पशु-धन का भली-भाँति फलना-फूलना संभव नहीं था, अत: प्रमुख स्पेनी उत्पादन शक्कर था जिसे इंडीज में कोलंबस ने और मैक्सिको में कोर्टेज ने प्रचलित किया था। चूँकि शक्कर-उत्पादन के लिए

नोट

व्यापक साजो-सामान की आवश्यकता थी, अत: स्पेनियों ने कैरिबियन और खाड़ी के तटवर्ती प्रदेशों में गन्ने की खेती प्रारंभ की। यूरोप में शक्कर की बहुत अधिक माँग थी, अत: अपव्ययशील और तौर-तरीक़ों और शासकीय हस्तक्षेप के बावजूद यह उद्योग समृद्ध होता गया।

सत्रहवीं शताब्दी में शक्कर एवं तंबाकू के उत्पादनों का बहुत अधिक आर्थिक महत्त्व था इनका मुख्यत: दास श्रमिकों द्वारा उत्पादन किया जाता था। इन कार्यों के लिए अफ्रीकी नीग्रो लोगों (negroes) का आयात किया जाता था। चूँकि नीग्रो लोग स्पेन के नरेशों के नहीं वरन् बर्बर अफ्रीकी नरेशों की प्रजा थे, अत: गुलामों के रूप में उनकी खरीद के लिए कोई कानूनी और मानवीय आपत्ति नहीं होती थी।

नोट्स सत्रहवीं शताब्दी में शक्कर एवं तंबाकू के उत्पादनों का बहुत अधिक आर्थिक महत्त्व था।

अधिकांश स्पेनियों को भूगर्भिक उत्पादनों (अर्थात् बहुमूल्य धातुओं) की तुलना में इंडीज़ के पशु और वानस्पतिक उत्पादन बहुत मामूली लगते थे। सोलहवीं शताब्दी के मध्य में मैक्सिको में ज़कातेकास् तथा ग्वानाह्वातो में और बोलीविआ पोतोसी में, चाँदी की उत्पादक खानों की खोज की गई। चाँदी की खानों का वास्तविक स्वामी एक पूँजीपति होता था। वह कुशल तथा अकुशल स्थानीय मज़दूरों के एक विशाल समूह का मालिक होता था। शाही ताज समस्त उत्पादित धातुओं का एक तिहाई भाग अपने हिस्से के रूप में वसूल करता था। यह सरकारी हिस्सा स्पेन के राजा के समस्त राजस्व की आय का केवल 10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत अंश होता था। चाँदी के सतत आयात का कीमतों और स्पेन की समग्र अर्थव्यवस्था पर बहुत बुरा असर पड़ा। समकालीन आर्थिक सिद्धांतों के अनुसार सोना चाँदी इंडीज़ का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं मूल्यवान उत्पादन था। सरकार सोना-चाँदी कर (bullion tax) की अदायगी को लागू करती थी और सोने एवं चाँदी के खनन को प्रोत्साहन देती थी। सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में अटलांटिक पार करते समय सोने-चाँदी के जहाज़ी माल की रक्षा के लिए 'सार्थवाह (convoy) व्यवस्था' लागू की गई। 1564 से स्पेन से प्रत्येक वर्ष दो लड़ाकू जहाज़ी बेड़े भेजे जाते थे—एक मैक्सिको और खाड़ी के बंदरगाहों को और दूसरा पनामा की थल-संधि की ओर। दोनों लड़ाकू जहाज़ी-बेड़े शरद् ऋतु में अमरीका में निवास करते थे और वापसी यात्रा के समय हवाना में पुन: इकट्ठे हो जाते थे। बिना निर्धारित लाइसेंस प्राप्त किए किसी भी जहाज़ को इनमें से किसी सार्थवाह (convoy) की छत्र-छाया के बिना अटलांटिक पार करने की अनुमति नहीं थी।

सामुद्रिक-यात्राएँ चूँकि काफ़ी नियमित होती थीं, अत: लुटेरों के जहाज़ या दस्यु-पोत उनकी ताक में रहते थे। सार्थवाह का व्यय अमरीका को जाने-आने वाले समस्त मालों पर लगने वाली एक बहुत भारी और पेचीदा चुंगी-व्यवस्था द्वारा पूरा किया जाता था।

संपूर्ण सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दियों में अपने उपनिवेशों की ओर होने वाला व्यापार एक इजारेदारी था। इस पर राजा का एकाधिकार नहीं था (जैसा कि पुर्तगाल में था) वरन् कॉन्सयूलादो (Consulado) अर्थात् कादीज़ में अपने अधीनस्थ संगठन वाले सेविल के व्यापारियों के व्यापारिक निगम का अधिकार था। सारे स्पेन के व्यापारिक संस्थान, यहाँ तक कि जर्मन, ब्रिटिश, और फ्ले तक के व्यावसायिक संघ भी, सेविल निगम की अप्रत्यक्ष सदस्यता ग्रहण कर लेते थे।

शाही व्यापार संघ (Royal House of Trade) के लाइसेंसी-संबंधी अधिनियमों ने यहूदियों और धर्म-विरोधी उत्प्रवासियों को रोकने के लिए लाइसेंस व्यवस्था को अत्यधिक कठोर बनाया। इसके लिए उन्होंने यह आदेश निकाला कि सभी जहाज़ों को उनके समुद्र में चल पाने की सक्षमता का लाइसेंस लेना आवश्यक है।

एकाधिकार एवं उपयुक्त कठोर नियमों के अतिरिक्त स्पेन के संपूर्ण आर्थिक ढाँचे में बड़ी कठोरता थी, जिसकी वजह से निर्यात व्यापार का तीव्रता से विस्तार बहुत कठिन हो गया था। मूरी युद्धों एवं यहूदियों व ईसाई बनाए गए मूर लोगों (Moriscos) के निष्कासन के कारण दस्तकारी और कृषि दोनों का पतन हुआ। खेतिहरों के हितों के स्थान पर पशु-पालन पर आधारित कृषि को अधिक महत्त्व प्रदान करके कृषि-अर्थव्यवस्था को क्षति पहुँचाई गई। भारी

नोट

कर-बोझ और सतत् यूरोपीय युद्धों ने भी अर्थव्यवस्था पर बुरा असर डाला। स्पेन के दो सर्वाधिक समृद्ध व्यापारिक केंद्र, कैटेलुना और अरेगों इंडीज व्यापार के प्रति नहीं वरन् भूमध्यसागरीय संबंधों के लिए प्रतिबद्ध थे।

कपड़ा, हथियार, औज़ार, लोहे का सामान, किताबें, कागज, तार, तेल और गुलामों को खरीदने के लिए संपूर्ण इंडीज़ उत्सुक था। स्पेनी उत्पादक या तो इन चीज़ों का स्वयं उत्पादन नहीं कर सकते थे या फिर पर्याप्त मात्रा में या प्रतिस्पर्धात्मक कीमत पर इनका निर्यात करने की स्थिति में नहीं थे। इस प्रकार इंडीज़ व्यापार सामुद्रिक लुटेरों और दस्यु-पोतों के साथ-साथ गुलामों के व्यापारियों, दस्तकारों एवं समस्त देशों के अवैध व्यापारियों के लिए आकर्षण का केंद्र बना हुआ था।

टास्क पता लगाइए कि दस्यु पोत या जहाज के लुटेरे कहाँ बसते थे?

16.5 अटलांटिक का मछली उद्योग (Fishing Industries of Atlantic)

यद्यपि खोजों में इस युग की सबसे बड़ी उपलब्धि का कारण मसालों और बहुमूल्य धातुओं की खोज था, पर इसका एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारण मत्स्य (मछली) उद्योग भी था। इससे पहले स्पेन और पुर्तगाल की सामुद्रिक शक्ति के कारण अन्य देशों के जहाज़, मसालों और बहुमूल्य धातुओं के खोजे गए स्रोतों से दूर रहते थे। चूँकि उत्तरी अटलांटिक में स्पेन या पुर्तगाली बहुत कम जाते थे, अत: हेनरी सप्तम ने केबॉट को वहाँ भेजा, जिससे न्यूफाउंडलैंड के किनारे समुद्र को मछलियों से भरपूर पाया। केबॉट के एक अन्य साथी फर्नान्डीज़ ने ग्रीनलैंड और लेब्राडोर की खोज की। बाद में कोर्ते रील्स बंधुओं ने जहाज़ों के मस्तूलों और बल्लियों के लिए उपयोगी लकड़ी के स्रोत के रूप में न्यूफ़ाउंडलैंड के महत्त्व को समझा। इन्होंने इस सारे समुद्र तट के लिए पुर्तगाल के अधिकार के दावे को पेश किया। पुर्तगाल ने शीघ्र ही इस नवीन प्रदेश से बहुत बड़ी मात्रा में कॉड मछली का आयात करना प्रारंभ कर दिया। पुर्तगाली दावे की अवहेलना करके फ्राँसीसी और अंग्रेज़ भी पुर्तगालियों की भाँति मछली का आयात करने लगे। यूरोप एवं यूरोपीय विस्तार में कॉड मछली का इतनी बड़ी मात्रा में आयात एक बहुत उल्लेखनीय आर्थिक घटना थी, क्योंकि कॉड मछली (codfish) उन लोगों के भोजन का महत्त्वपूर्ण स्रोत थी, जो सर्दी के दिनों में भुखमरी के कगार पर रहते थे। मछली उद्योग से जहाज़ों और नाविकों का भी विकास हुआ। इसने रूस के साथ ब्रिटिश व्यापार के द्वार भी उन्मुक्त कर दिए। अब अन्वेषक अभियान उत्तरी अमरीका में बस्तियाँ बसाने और उत्तरी मार्ग की खोज की ओर उन्मुख हुए।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

6. पुर्तगाली व्यापारिक नीति बहुत सीमा तक .... की भांति थी।

   (क) ब्राजील (ख) स्पेन

   (ग) अमरीका (घ) पेरू

7. ईख के उत्पादन के लिए कैरीबियाई जलवायु बहुत .... थी।

   (क) उपयुक्त (ख) सामान्य

   (ग) घातक (घ) कठिन

8. 15वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शक्कर की आपूर्ति .... टन थी।

   (क) 2 लाख (ख) 5 सौ

   (ग) 4 हजार (घ) 10 हजार

नोट

9. सत्रहवीं शताब्दी में शक्कर और .... का महत्त्व बहुत अधिक था।
   (क) खांड (ख) गुड़
   (ग) गन्ना (घ) तम्बाकू
10. फर्नान्डीज ने ग्रीनलैण्ड और .... की खोज की।
   (क) पुर्तगाल (ख) स्पेन
   (ग) लेब्राडोर (घ) अमरीका

16.6 अमरीकी व्यापार में हस्तक्षेप करने वाले व्यापारी (Traders Interrupting American Trade)

अमरीका में स्पेनी औपनिवेशिक व्यापारिक व्यवस्था का पतन लगभग तीन शताब्दियों तक यूरोप की आर्थिक स्थिति का एक स्थायी तत्त्व रहा। स्पेन केवल उपनिवेशों की आवश्यकताओं के एक बहुत अल्प अंश की भी आपूर्ति कर सकता था। इस प्रकार स्पेन में स्पेनी लोग ऊँची क़ीमतें एवं कठोर इजारेदारी बनाए रखने का प्रयास कर रहे थे। इसके विपरीत वे इन कीमतों पर उपनिवेशों में माल की आपूर्ति चाहते थे और इसके लिए वे विदेशियों से व्यापार करने को उत्सुक थे। इंडीज़ में जहाज़ों के किसी भी स्वामी के लिए एक ऐसा तैयार बाज़ार मौजूद था जो सेविल के स्थायी व्यापारियों को कम क़ीमत पर जहाज़ बेचने को उत्सुक था। ब्रिटेन व्यापार का संस्थापक सर जॉन हाकिन्स पहला विदेशी था जिसने उक्त बाजार का व्यवस्थित ढंग से शोषण किया।

इंडीज़ को कपड़े (जिसका ब्रिटेन उत्पादन करता था) और नीग्रो गुलामों (जिन्हें अँग्रेज़ पश्चिम अफ्रीका से खरीदते थे) की आवश्यकता थी। हाकिन्स गुलामों को कपड़ा बेचकर खरीदता था और उन्हें बेचकर शक्कर तथा खालों के रूप में उनका भुगतान लेता था। नीदरलैंड के विद्रोह एवं साम्राज्ञी ऐलिज़ाबेथ के धर्म बहिष्करण के उपरांत आंग्ल-स्पेनी युद्ध अवश्यंभावी प्रतीत होने लगा। उसकी पूर्ण-चेष्टा में प्रोटेस्टेंट सामुद्रिक कप्तान सामुद्रिक लुटेरों और सशस्त्र लड़ाकू (Privateers) के रूप में इंडीज़ की यात्रा करने लगे। यूरोप में चाँदी, शक्कर, चमड़ा और तंबाकू की माँग होने के कारण अँग्रेज़, फ्रांसीसी और डच व्यापारियों ने भी उनका अनुसरण किया और उनके बदले अमरीका में गुलामों एवं उत्पादित माल को लाने लगे। सामुद्रिक लूट और दस्यु-पोतों द्वारा जहाज़ों पर होने वाले डाकों को रोकने के लिए स्पेन ने सोलहवीं शताब्दी के मध्य में **सार्थवाह-व्यवस्था** (convoy system) का विकास किया।

> *नोट्स* हॉकिन्स गुलामों को कपड़ा बेचकर खरीदता था और उन्हें बेचकर शक्कर तथा खालों के रूप में उनका भुगतान लेता था।

इसी बीच 1517 में ड्रेक की सामुद्रिक यात्रा ने स्पेनी-अमरीकी समुद्रतट की दुर्बलता एवं प्रशांत महासागर के पार स्पेनियों के किसी भावी विस्तार को रोकने की आवश्यकता को स्पष्ट कर दिया।

स्पेनी जंगी जहाज़ों में बेड़े आर्मेडा की अँग्रेज़ों के हाथों पराजय के बाद से प्रत्येक सामान्य संधि का उपनिवेशीकरण एवं व्यापार पर प्रभाव पड़ा। इसके बाद जब हॉलैंड को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में स्वीकार किया गया तो कारगर आधिपत्य (effective occupation) के सिद्धांत को देशों की खोज से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय कानून का नियम मान लिया गया। यह स्पेन के लिए एक चेतावनी थी कि वह चाहे या न चाहे, अँग्रेज़ और डच, अमरीका का निश्चित रूप से उपनिवेशीकरण करेंगे।

16.7 दास-व्यापार (Slave Trade)

अमरीकी उपनिवेशों की सर्वाधिक मूल्यवान उपजों, अर्थात् शक्कर, तंबाकू और बाद में कपास के लिए भारी संख्या में अकुशल मज़दूरों की आवश्यकता थी, जो लंबे समय तक एक ऐसी जलवायु में काम कर सकें, जिसमें श्वेत

नोट

लोग काम करना पसंद नहीं करते थे। सारे उपनिवेशों में मज़दूरों का भयंकर अभाव था। श्रमिकों की अपेक्षित आपूर्ति के लिए अन्य मुक्त जातीय समूहों अर्थात् श्वेतों, भारतीयों और अर्ध-जातियों (मिश्रित वर्ण वालों) की संख्या कुछ उपनिवेशों में आवश्यकता से बहुत कम थी। श्वेत स्पेनी अमरीकी काम करने के मामले में बहुत अधिक दंभी और आलसी थे जब कि रैड इंडियन मजदूरी के मामले में बहुत अधिक उदासीन और अपनी स्वतंत्रता के अपहरण के प्रति बहुत संवेदनशील थे। उन्हें गुलामी के विरुद्ध वैधानिक रक्षा का अधिकार मिला हुआ था। इसके विपरीत गन्ने के खेतों में काम करने वाले मज़दूरों की (जो बीच-बीच में स्वदेश लौट जाते थे), लगातार लंबे समय तक, उपलब्धि बड़ी अनिश्चित थी। स्पेनी और इंडियन रक्त के मज़दूर बहुत कमज़ोर थे। इन परिस्थितियों में नीग्रो गुलाम ही स्पष्टतः एकमात्र निदान थे।

सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में अतिलेंज़ में जनसंख्या की लगातार कमी को पूरा करने के लिए अफ्रीकियों का आयात किया जाने लगा। अफ्रीकी दासों का यह आयात शाही (ताज) राजा द्वारा प्रदत्त लाइसेंस के अंतर्गत किया जाता था। सामान्यतः ईसाई धर्म-प्रचारक संघ इसका विरोध नहीं करते थे। स्पेनी राजा इंडियनों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता का बहुत बड़ा हिमायती था, पर उसे नीग्रो लोगों की गुलामी में कोई असंगति नज़र नहीं आती थी। इसका कारण यह था कि इंडियन लोग कास्तीली राजा की प्रजा होने के कारण उसकी सुरक्षा के हकदार थे, जबकि नीग्रो लोग स्वतंत्र अफ्रीकी नरेशों की प्रजा थे। यूरोपीय लोग पश्चिमी अफ्रीका में व्यापारियों के रूप में जाते थे, अधिस्वामियों (overlords) के रूप में नहीं। नीग्रो लोग स्थानीय सरदारों के युद्ध-बंदी होते थे जो उन्हें अरब या यूरोपीय दास व्यापारियों के हाथ बेच देते थे। युद्ध-बंदियों का दासीकरण विश्व के अनेक भागों में एक सामान्य पद्धति मानी जाती थी।

सोलहवीं शताब्दी में यूरोप और विशेषतः दक्षिण यूरोप में दासता एक आम संस्था थी। अमरीका की खोज बहुत पहले, उत्तरी और पश्चिमी अफ्रीका के साथ पुर्तगाली संबंधों के कारण पुर्तगाल एवं स्पेन में नीग्रो गुलाम से लोग बहुत परिचित थे। मूरी (Moorish) युद्धों के दौरान दोनों पक्षों के युद्धबंदियों को लगातार गुलाम बनाया गया और उन्हें जहाज़ों पर काम करने वाले गुलामों के रूप में नियुक्त किया गया। अमरीका की खोज ने सामान्य मजदूरी के लिए गुलामों के व्यापार को बढ़ाने में नया योगदान दिया। अठारहवीं शताब्दी तक दास-व्यापार की वैधता के संबंध में कोई संदेह व्यक्त नहीं किए गए।

क्या आप जानते हैं अमरीका की खोज ने सामान्य मजदूरी के लिए गुलामों के व्यापार को बढ़ाने में नया योगदान दिया।

स्पेन की मुख्य व्यावहारिक कठिनाई गुलामों की लगातार सप्लाई प्राप्त करना थी। चार्ल्स पंचम के शासनकाल के कुछ वर्षों के अतिरिक्त इंडीज़ के साथ दास व्यापार सेविल और क़ादिज़ तक ही सीमित था। इसे केवल सेविल काँसुलादो के सदस्य कास्तीली लोग ही कर सकते थे। अन्य लोगों को इसके लिए विशेष लाइसेंस लेने पड़ते थे। शुरू से ही स्पेन का राजा, अमरीका को जहाज़ ले जाने वाले दास व्यापारियों को, ये लाइसेंस बेच देता था। गुलामों को लेकर चलने वाले सेविल के जहाज़ों के लिए दो बातें आवश्यक थीं–निर्यात-चुंगी की अदायगी और यह प्रमाणित करना कि जहाज़ों में ले जाए जा रहे सारे गुलाम वास्तविक रूप में गुलाम हैं। उत्तरी अफ्रीका से केवल गिनी प्रांत के नीग्रो को ही गुलाम के रूप में लिया जाता था, मुस्लिमों को नहीं (क्योंकि मुस्लिम इंडियनों को भ्रष्ट कर सकने में समर्थ थे)। पश्चिमी अफ्रीका में स्पेनी और स्पेनी इंडीज़ में पुर्तगाली कानूनी ढंग से प्रवेश नहीं कर सकते थे। अतः स्पेनी गुलामों के व्यापारियों को पुर्तगाली दलालों के माध्यम से गुलाम खरीदने पड़ते थे। ये गुलामों के व्यापारी स्वतंत्र रूप से जहाजों को ले जाते थे, सार्थवाह के साथ नहीं। स्पेनी लाइसेंस व्यवस्था आवश्यक संस्था में गुलामों की आपूर्ति नहीं कर सकी। अतः जॉन हाकिंस ने इंडीज़ में गुलामों की बढ़ती हुई माँग को सामने रखकर वहाँ के लाइसेंस प्राप्त गुलामों के व्यापारियों की तुलना में कम कीमत पर गुलामों को बेचना शुरू कर दिया।

नोट

1850 में स्पेनी और पुर्तगाली राजसिंहासनों के विलय के बाद स्पेन की गुलामी-संबंधी समस्या हल हो गई। स्पेनी सरकार ने गुलामों के व्यापार के लिए व्यक्तिगत लाइसेंस पुर्तगाली व्यापारियों को बेच दिए। इसके परिणामस्वरूप स्पेनी अमरीका के शक्कर उत्पादक क्षेत्रों में नीग्रो लोगों की संख्या में तेज़ी से वृद्धि हुई। शेष स्पेनी अमरीकी व्यापार कास्तीली लोगों के अतिरिक्त अन्य सभी लोगों के लिए बंद कर दिया गया। पुर्तगालियों को अपनी राष्ट्रीय स्वतंत्रता के अपहरण के बदले क्षतिपूर्ति के रूप में केवल स्पेनी दास-व्यापार में भागीदारी ही प्राप्त हुई।

16.8 शक्कर उत्पादक द्वीपों में दास-व्यवस्था (Slavery in Sugar Produces Island)

संपूर्ण सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में शक्कर उद्योग के साथ-साथ दास व्यापार का भी विस्तार हुआ। हाकिन्स द्वारा बेचे गए नीग्रो दास अधिकांशत: स्पेनी शक्कर कारखानों और गन्ने के खेतों में काम करते थे। बाद में स्पेनियों द्वारा हाकिन्स को खदेड़ दिए जाने के बाद अँग्रेज़ अस्थायी दास-व्यापार से पीछे हट गए और उनका स्थान पुर्तगालियों ने ले लिया। परंतु सत्रहवीं शताब्दी में पुर्तगाली व्यापार का भी पतन होने लगा। डच वेस्ट इंडिया कंपनी एवं व्यक्तिगत अनधिकृत डच व्यापारियों ने दास-तट के पुर्तगालियों को निष्कासित कर दिया और उनसे एल्मीना के पुर्तगाली बंदरगाह को छीनकर पुर्तगालियों को उनके अधिकांश कारखानों से बाहर निकाल दिया। इस बीच अंग्रेज़ों को बार्बेदोस में अपने शक्कर उत्पादन के लिए डचों से गुलाम खरीदने पड़े। अब चार्ल्स द्वितीय ने रॉयल अफ्रीका कंपनी को औसतन 17 पौंड या एक टन शक्कर प्रति दास की दर से दासों की बिक्री कर, ब्रिटिश शक्कर उत्पादक उपनिवेशों में 3,000 दासों को प्रतिवर्ष सप्लाई करने का अधिकार पत्र प्रदान किया। चूँकि स्पेनी अमरीकी बंदरगाह अँग्रेज़ी जहाज़ों के लिए बंद थे, अत: स्पेनी उपनिवेशवादियों को अपने दास इंग्लिश इंडीज़ से ख़रीदने पड़ते थे और उन्हें अपने ही जहाज़ों में ले जाना पड़ता था। चार्ल्स द्वितीय ने उक्त व्यापार को सुगम बनाने के लिए जहाज़रानी अधिनियम में स्पेनी जहाज़ों को कुछ विशेष छूटें प्रदान कीं।

16.9 सारांश (Summary)

- दक्षिणी अमरीका के उपनिवेशीकरण के पुर्तगाली तरीक़े स्पेनी तरीकों से भिन्न थे। कास्तीलियाई साहसिक व्यापारियों ने जान-बूझकर दक्षिणी अमरीका के उन अंदरूनी पर्वतीय प्रदेशों को चुना क्योंकि ये ऐसे प्रदेश थे जिन्हें उपनिवेश बनाने में श्वेत लोगों को आसानी थी। परंतु पुर्तगालियों ने अपनी गतिविधियों को समशीतोष्ण तटवर्ती पट्टी तक ही सीमित रखा।
- ब्राज़ील और अन्य अटलांटिक उपनिवेशों के शासन का सांविधानिक स्वरूप पूरी तरह स्पष्ट नहीं था। साथ ही स्पेन की राजधानी में इन पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करने का इरादा भी नहीं था। शाही शासन के स्थान पर धीरे-धीरे प्रदाताओं (donators) के शासन की स्थापना हुई।
- उपनिवेशों में स्पेनी अमरीका की तुलना में शासन कम पेचीदा था। वहाँ 'ऑडियेन्सिया' (Audiencia) जैसी औपचारिक परिषदें नहीं थीं। लिस्बन सरकार द्वारा नियुक्त गवर्नर निरंकुश होते थे। इन्हें केवल न्यायाधीश ही परामर्श दे सकते थे और नियंत्रित करते थे। वहाँ कोई प्रतिनिधि संस्थाएँ भी नहीं थीं।
- यूरोप के वैदेशिक या समुद्रपार के विस्तार के प्रत्येक चरण में एक-दूसरे पर छा जाने वाली एक या एक से अधिक शक्तियाँ थीं। आधुनिक युग में ये शक्तियाँ ब्रिटिश और फ्रांसीसी थीं परंतु 1815 से पूर्व ये थीं स्पेन और पुर्तगाल। उन शक्तियों की प्रधानता केवल इस बात में निहित नहीं थी कि वे अन्वेषक थीं वरन् इस बात में थी कि उन्होंने उपनिवेशीकरण के पाँच प्रभावशाली तरीक़ों में से चार को अंगीकार किया था।
- पुर्तगालियों ने दो प्रतिरूपों या मॉडलों को चुना था। ब्राज़ील में उन्होंने पहले "बाग़ान" उपनिवेश की स्थापना की जिसमें केवल एक छोटा-सा यूरोपीय अल्पसंख्यक वर्ग स्थायी रूप से निवास करता था। उन्होंने इन "मिश्रित" उपनिवेशों में स्पेन की ही भाँति अपनी महानगरीय सभ्यता को विकसित किया।

नोट

- शक्कर का उत्पादन एक बार प्रारंभ हो जाने के बाद एक ही फसल की खेती करने की प्रवृत्ति ने सारे द्वीपों को घेर लिया। इससे अपने प्रकार के समाज की रचना की जिसका आदि स्रोत अब भी वेस्टइंडीज के द्वीप कैरीबियन हैं। इस प्रवृत्ति के कुछ अपवाद भी थे, जैसे ग्रेनाडा और डोमिनिका में केवल कॉफ़ी पैदा होती थी, जब कि ब्राज़ील में ईख के अतिरिक्त दूसरी फसलें भी भारी मात्रा में पैदा की जाती थीं।
- पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में शक्कर की आपूर्ति 4 हजार टन थी, जब कि इसके एक शताब्दी बाद इसकी मात्रा बढ़कर 20 हजार टन हो गई थी। शक्कर के उत्पादन ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में आमूल परिवर्तन कर दिया क्योंकि इसने एक व्यापक उत्पादक इकाई के रूप में अर्थव्यवस्था के विकास के बहुत अच्छे अवसर प्रदान किए थे।
- संपूर्ण सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दियों में अपने उपनिवेशों की ओर होने वाला व्यापार एक इजारेदारी था। इस पर राजा का एकाधिकार नहीं था (जैसा कि पुर्तगाल में था) वरन् कॉन्सयूलादो (Consulado) अर्थात् कादीज़ में अपने अधीनस्थ संगठन वाले सेविल के व्यापारियों के व्यापारिक निगम का अधिकार था। सारे स्पेन के व्यापारिक संस्थान, यहाँ तक कि जर्मन, ब्रिटिश, और फ्ले तक के व्यावसायिक संघ भी, सेविल निगम की अप्रत्यक्ष सदस्यता ग्रहण कर लेते थे।
- यूरोप एवं यूरोपीय विस्तार में कॉड मछली का इतनी बड़ी मात्रा में आयात एक बहुत उल्लेखनीय आर्थिक घटना थी, क्योंकि कॉड मछली (codfish) उन लोगों के भोजन का महत्त्वपूर्ण स्रोत थी, जो सर्दी के दिनों में भुखमरी के कगार पर रहते थे। मछली उद्योग से जहाज़ों और नाविकों का भी विकास हुआ। इसने रूस के साथ ब्रिटिश व्यापार के द्वार भी उन्मुक्त कर दिए। अब अन्वेषक अभियान उत्तरी अमरीका में बस्तियाँ बसाने और उत्तरी मार्ग की खोज की ओर उन्मुख हुए।
- स्पेनी जंगी जहाज़ों में बेड़े आर्मेडा की अँग्रेज़ों के हाथों पराजय के बाद से प्रत्येक सामान्य संधि का उपनिवेशीकरण एवं व्यापार पर प्रभाव पड़ा। इसके बाद जब हॉलैंड को एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में स्वीकार किया गया तो कारगर आधिपत्य (effective occupation) के सिद्धांत को देशों की खोज से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय कानून का नियम मान लिया गया।
- सोलहवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में अतिलेंज़ में जनसंख्या की लगातार कमी को पूरा करने के लिए अफ्रीकियों का आयात किया जाने लगा। अफ्रीकी दासों का यह आयात शाही (ताज) राजा द्वारा प्रदत्त लाइसेंस के अंतर्गत किया जाता था। सामान्यत: ईसाई धर्म-प्रचारक संघ इसका विरोध नहीं करते थे।

16.10 शब्दकोश (Keywords)

- **नीग्रो**–बेहद काली त्वचा के पुरुष जिन्हें गुलाम बनाया जाता था।
- **मत्स्य उद्योग**–मछलीपालन का उद्योग।

16.11 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. 'पुर्तगाल ने अपने उपनिवेशों और महानगरीय प्रदेशों के बीच कोई संवैधानिक भेदभाव नहीं किया' कथन की विवेचना कीजिए।
2. आरम्भिक उपनिवेशों के कितने प्रकार थे।
3. अर्थव्यवस्था के विकास के विभिन्न चरणों का उल्लेख कीजिए।
4. 'नई दुनिया का प्रमुख व्यवसाय पशुपालन था' इस कथन की व्याख्या अटलांटिक-पार प्रदेशों की अर्थव्यवस्था के सन्दर्भ में कीजिए।
5. शाही व्यापार संघ का परिचय दीजिए।

नोट

6. अटलान्टिक के मछली उद्योग का वर्णन कीजिए।
7. दास व्यापार क्या था। उपनिवेशों में इनकी भूमिका क्या थी?
8. शक्कर उत्पादक द्वीपों में दास-व्यवस्था की समीक्षा कीजिए।
9. अमरीकी व्यापार में हस्तक्षेप करने वाले व्यापारी कौन थे?
10. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें—

    (क) नौ-परिवहन (ख) नीग्रो (ग) मत्स्य उद्योग।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. दास व्यापार 2. अर्थव्यवस्था 3. 40 लाख 4. जलशक्ति
5. समुद्र 6. (ख) स्पेन 7. (क) उपयुक्त 8. (ग) 4 हजार
9. (घ) तम्बाकू 10. (ग) लेब्राडोर।

16.12 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–17: परवर्ती रोमन विश्व
(The Late Roman World)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
17.1 मध्यकालीन यूरोप की विशेषताएँ (Features of Middle-Age Europe)
17.2 रोमन कैथोलिक चर्च का प्रभुत्व (Supremacy of Roman Catholic Church)
17.3 पवित्र रोमन साम्राज्य का उदय (Rise of Holy Roman Empire)
17.4 सम्राटों और पोपों का आपसी संघर्ष (Conflict between King and Pope)
17.5 धर्मयुद्ध (क्रूसेड) (Crusade)
17.6 सारांश (Summary)
17.7 शब्दकोश (Keywords)
17.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
17.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मध्यकालीन यूरोप की विशेषताओं एवं रोमन कैथोलिक चर्च के प्रभुत्व को जानने में;
- पवित्र रोमन साम्राज्य के उदय एवं सम्राटों और पापों के आपसी संघर्ष को जानने में;
- धर्मयुद्ध (क्रूसेड) के विषय में जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्ययुगीन समाज पर चर्च का जितना व्यापक प्रभाव था, वैसा प्रभाव किसी समय में किसी भी संगठन का कभी नहीं रहा। चर्च अपने अनुयायियों के तन, मन एवं धन का स्वामी था। वह निर्बलों और असहायों का आश्रयदाता था। उसने असभ्य बर्बरों को ईसाई बनाकर सभ्य बनाया। उसने प्राचीन ज्ञान-विज्ञान और सांस्कृतिक पहलू को बचाये रखा। उसने युद्ध की विभीषिका को कम करके शान्ति और व्यवस्था को पुन: स्थापित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। चर्च ने यूरोप को उस समय धार्मिक एकता प्रदान की, जिस समय उसकी राजनैतिक एकता लुप्त हो चुकी थी। ऐसी स्थिति में मध्ययुगीन समाज पर उसका वर्चस्व कायम होना स्वाभाविक ही था।

17.1 मध्यकालीन यूरोप की विशेषताएँ (Features of Middle-Age Europe)

रोमन साम्राज्य के पतन से लेकर पुनर्जागरण तक का काल यूरोपीय इतिहास का मध्ययुग कहलाता है। इसकी दो मुख्य विशेषताएँ हैं–धर्म और साम्राज्य। धर्म के अन्तर्गत रोमन कैथोलिक चर्च और सर्वोच्च प्राधिकारी पोप की शक्तियों का अभूतपूर्व विकास हुआ। धर्म के नाम पर धर्मयुद्ध लड़े गये। इस्लाम के अनुयायियों ने एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की, शार्लमेन और ऑट्टो जैसे सम्राटों ने रोमन साम्राज्य को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया, नई राजसत्ताओं का जन्म हुआ, सामन्तवाद का विकास हुआ, सर्वोच्चता के प्रश्न को लेकर पोपों एवं सम्राटों के मध्य संघर्ष हुआ, परन्तु मध्य युग के पिछले दिनों सभ्यता एवं संस्कृति के अनेकों क्षेत्रों में सुधार भी हुआ। राष्ट्रीय भाषाओं का विकास हुआ, साहित्य समृद्ध हुआ, व्यापार-वाणिज्य उन्नत हुआ, नगरों का विकास हुआ, सामन्त प्रथा का अन्त हुआ और चर्च के वर्चस्व में कमी आई। सुख-सुविधाओं में वृद्धि हुई, ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति हुई और आधुनिक युग का प्रवेश-द्वार खुला।

17.2 रोमन कैथोलिक चर्च का प्रभुत्व (Supremacy of Roman Catholic Church)

चर्च का वर्चस्व–सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में लिथुआनिया से आयरलैंड तक और नार्वे तथा फिनलैण्ड से लेकर पुर्तगाल और हंगरी तक सम्पूर्ण पश्चिमी और मध्य यूरोप में रोमन कैथोलिक ईसाई चर्च का वर्चस्व था। ईसाई परिवार में उत्पन्न प्रत्येक शिशु इसका सदस्य समझा जाता था और जन्म से लेकर कब्र तक लोगों के जीवन पर चर्च का नियन्त्रण एवं प्रभुत्व था। जब रोमन साम्राज्य टूटा; तब कोई ऐसा सुदृढ़ शासन नहीं था, जो उसका स्थान ले सकता। उस समय रोमन कैथोलिक चर्च धार्मिक संगठन के साथ-साथ एक सशक्त राजनीतिक संगठन भी बन गया। उसने सांसारिक कर्तव्यों को भी अपने हाथ में ले लिया। तेरहवीं शताब्दी तक चर्च ने प्रचुर सम्पत्ति अर्जित कर ली थी। यूरोप की बीस प्रतिशत भूमि का वह स्वामी बन चुका था। उसके अपने नियम, न्यायालय एवं कारागार थे। अपने नियमों के उल्लंघन करने वालों को वह मुकदमा चलाकर दण्डित करता था। चर्च, ईसाई धर्म के परम्परागत विश्वासों तथा आस्थाओं का प्रतीक समझा जाता था। वह धार्मिक संस्कारों तथा नैतिक मापदण्डों का संरक्षक माना जाता था। किसी भी व्यक्ति में उसके विरुद्ध अँगुली उठाने का साहस नहीं था। मध्य-युग में लोगों के जीवन पर चर्च का पूर्ण एकाधिकार था और लोगों को चर्च के द्वारा निर्देशित मार्ग पर चलते हुए जीवन बिताना पड़ता था अथवा धर्मद्रोही करार दिये जाने का भय बना रहता था।

नोट्स ईसाई जगत् के इस धार्मिक साम्राज्य के संगठनात्मक ढाँचे का अध्यक्ष रोम का बिशप होता था, जिसे 'पोप' के नाम से पुकारा जाता था।

पोप की शक्तियाँ–ईसाई जगत् के इस धार्मिक साम्राज्य के संगठनात्मक ढाँचे का अध्यक्ष रोम का बिशप होता था, जिसे 'पोप' के नाम से पुकारा जाता था। प्राचीन रोम के कुछ थोड़े से ही सम्राटों के हाथ में उतनी शक्ति रही थी, जितनी की मध्यकालीन पोप के हाथ में थी। कैथोलिक जनता उसे पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि मानने लगी थी। वह चर्च का सर्वोच्च नियम-निर्माता, सर्वोच्च न्यायाधीश और चर्च की समस्त गतिविधियों का सर्वोच्च प्रशासक था। वह यूरोप के किसी भी ईसाई राज्य के शासक को पदच्युत करने की क्षमता रखता था। वह किसी भी ईसाई राज्य के किसी भी ऐसे सिविल कानून को जो उसकी निगाह में अनुचित हो, रद्द कर सकता था। विवाह, तलाक, वसीयत, उत्तराधिकार सम्बन्धी कई वैधानिक मामले अन्तिम निर्णय के लिए उसी के सामने प्रस्तुत किये जाते थे। वह विभिन्न यूरोपीय राज्यों में सर्वोच्च धर्माधिकारियों की नियुक्ति भी करता था। स्पष्ट है कि पोप के अधिकारों की कोई सीमा न थी। मध्य-युग में समय-समय पर पोप के अधिकारों को कम करने के प्रयास भी किये गये थे, परन्तु किसी भी प्रयास को सफलता न मिली और ईसाई जगत् पर पोप का वर्चस्व बना रहा।

नोट

चर्च के सांसारिक कर्तव्य–रोमन साम्राज्य के पतन के फलस्वरूप उत्पन्न अव्यवस्था और अराजकता के समय चर्च ने कई प्रकार के सांसारिक दायित्वों का भार भी उठाया। अपने नियम, न्यायालय और कारागार बनाने के साथ-साथ चर्च ने शिक्षा की व्यवस्था अपने हाथ में ली तथा बन्द पड़ी पाठशालाओं में अपने पादरी शिक्षकों को नियुक्त करके शिक्षा का काम शुरू किया। रोगियों, गरीबों, विधवाओं और अनाथों की देखभाल की व्यवस्था की। विवाहों, वसीयतों, उत्तराधिकार के मामलों, अनुबन्धों की समस्याओं आदि को सुलझाने की व्यवस्था की। धर्मद्रोहियों का दमन किया तथा बर्बर जर्मन कबीलों को ईसा का अनुयायी बनाकर उन्हें सभ्य जीवन का पाठ पढ़ाया। आधुनिक समय में धर्मद्रोहियों के साथ किये जाने वाले अमानवीय व्यवहार को बुरा समझा जा सकता है, परन्तु मध्ययुग के लोगों में धार्मिक जोश इतना तीव्र था कि वे लोग धर्मद्रोहियों को ईश्वर के विरुद्ध विद्रोह का अपराधी मानते थे। चर्च में काम करने वाले लोगों की समाज में अत्यधिक प्रतिष्ठा थी। उन्हें शक्ति और विशेषाधिकार प्राप्त थे। वे राज्य को किसी प्रकार का कर नहीं देते थे और सैनिक सेवा से भी मुक्त रखे जाते थे।

मठवासियों और मठवासिनियों के कार्य–मठों में निवास करने वाले पुरुषों को 'मोंक' और स्त्रियों को 'नन' कहा जाता था। इनके जीवन निश्चित नियमों से बँधे होते थे। इसलिए उन्हें 'नियमित पादरी' कहा जाता था। मध्य युग के मठवासियों और मठवासिनियों ने अन्धकार युग को आलोकित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अनेकों ने बर्बर लोगों को ईसाई बनाने के प्रयास में अपने प्राण गँवा दिये। बहुत से विद्वान मठवासियों ने प्राचीन विश्व की प्रसिद्ध पांडुलिपियों की प्रतिलिपियाँ हाथ से लिखकर तैयार कीं और इस प्रक्रिया में अपना समस्त जीवन बिता दिया। उन्हीं की रचनाओं के माध्यम से हमें मध्यकालीन यूरोप के इतिहास की विस्तृत जानकारी मिलती है। मध्यकालीन मठ आस-पास की बस्तियों के बालकों के लिए विद्यालयों का दायित्व भी निभाते थे और यात्रियों के लिए विश्रामगृहों का काम भी करते थे। मठवासी चिकित्सक का काम भी करते थे। कृषि, पशुपालन और उद्योग के क्षेत्र में उनका योगदान रहा, क्योंकि अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वे स्वयं कठोर शारीरिक श्रम करते थे। ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों पर चर्च तथा धर्म का प्रभाव स्थापित करने में उन्होंने सक्रिय भूमिका अदा की थी।

क्या आप जानते हैं मठों में निवास करने वाले पुरुषों को 'मोंक' और स्त्रियों को 'नन' कहा जाता था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. रोमन साम्राज्य के पतन से लेकर पुनर्जागरण तक का काल यूरोपीय इतिहास का ········ कहलाता है।
2. ········ को धार्मिक संस्कारों तथा नैतिक मापदंडों का संरक्षक माना जाता था।
3. मठों में निवास करनेवाले पुरुषों को ········ कहा जाता था।
4. कैथोलिक जनता ········ को पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि मानने लगी।

17.3 पवित्र रोमन साम्राज्य का उदय (Rise of Holy Roman Empire)

जस्टीनियन–500 ई. के आस-पास पश्चिमी रोमन साम्राज्य का पतन हो गया था, परन्तु पूर्वी रोमन साम्राज्य सुरक्षित रहा। इसे 'बाइजेन्टाइन साम्राज्य' के नाम से भी पुकारा जाता है और इसकी राजधानी कुस्तुनतुनिया थी। पूर्वी रोमन सम्राट जस्टीनियन (जुस्तिनियन) (483-565 ई.) ने पूर्वी और पश्चिमी भागों को मिलाकर फिर एक करने का यत्न किया। उसने अफ्रीका में वांडालों को और इटली में औस्ट्रोगौथों को पराजित किया तथा विसिगौथों से दक्षिणी स्पेन छीन लिया, परन्तु लोम्बार्ड लोगों ने उसे पराजित करके इटली से खदेड़ दिया। इस प्रकार, उसका स्वप्न चकनाचूर हो गया। सातवीं सदी में अरबों ने पूर्वी रोमन साम्राज्य से सीरिया, मिस्र और एशिया माइनर के अधिकांश क्षेत्र छीनकर स्वयं उसकी शक्ति को सीमित कर दिया।

क्लीविस एवं पेपिन—496 ई. में फ्रांक लोगों के नेता क्लीविस ने एक अन्य जर्मन कबीले को पराजित करके एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। अपनी ईसाई रानी के प्रभाव में आकर उसने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। इससे पोप को शक्तिशाली जर्मन कबीले (फ्रांक) का समर्थन मिल गया और फ्रांक शासकों को पोप का। क्लीविस के उत्तराधिकारी कमजोर निकले और शासन की बागडोर राजमहलों के मेयर शार्ल मार्तेल के हाथ में चली गई। 732 ई. में उसने तूर के निर्णायक युद्ध में मुसलमानों को पराजित करके प्रसिद्धि प्राप्त की। उसके पुत्र पेपिन ने पोप की सहायता से फ्रांक राजा को पदच्युत करके, स्वयं सिंहासन पर अधिकार कर लिया। पोप के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिए पेपिन ने जीते हुए लोम्बार्डी प्रदेशों को पोप को उपहार के रूप में अर्पित कर दिया। ये प्रदेश 'पैपल स्टेट्स' (पोप का राज्य) कहलाये और रोम इसकी राजधानी बना। इस प्रकार पोप रोम नगर का शासक बन गया। इस राज्य के फलस्वरूप उत्तरी इटली का दक्षिणी इटली से सम्बन्ध विच्छेद हो गया और आगे चलकर इटली के एकीकरण के मार्ग में भी सबसे बड़ा अवरोध सिद्ध हुआ।

शार्लमेन—पेपिन के बाद शार्लमैन फ्रांको का सम्राट बना। वह मध्ययुगीन यूरोप का एक महान सम्राट था और उसके साथ अनेक गाथाएँ एवं दन्तकथाएँ जुड़ी हुई हैं। शार्लमेन का उद्देश्य रोमन साम्राज्य को पुनर्जीवित करना और बर्बरों को ईसा का अनुयायी बनाना था। इसके लिए उसे मुसलमानों, स्लावों और तातारों से निरन्तर युद्ध लड़ने पड़े। समय पाकर फ्रांस, नीदरलैण्ड, बेल्जियम, आस्ट्रिया, स्विट्जरलैण्ड और जर्मनी, स्पेन, इटली, यूगोस्लाविया के कुछ भागों पर उसका अधिकार स्थापित हो गया। रोमन साम्राज्य के पतन के बाद पहली बार ईसाइयों का इतना विशाल साम्राज्य कायम हुआ था। 800 ई. में शार्लमेन रोम गया और क्रिसमस के दिन जब वह सन्त पीटर के गिरजाघर में घुटने टेक कर प्रार्थना कर रहा था, तब पोप ने उसके सिर पर एक सोने का मुकुट रख दिया और आस-पास उपस्थित लोगों ने 'रोमन सम्राट शार्लमेन' का जयघोष कर उसका अभिनन्दन किया। शार्लमेन को पोप का यह कृत्य पसन्द नहीं आया, फिर भी उसने शालीनता का त्याग नहीं किया। पोप के इस कृत्य का प्रयोजन अपने आपको सम्राटों से बड़ा सिद्ध करना था, जबकि शार्लमेन ने अपनी शक्ति के बल पर साम्राज्य प्राप्त किया था। सम्राटों और पोपों के मध्य सर्वोच्चता का दावा, मध्ययुगीन यूरोप की एक प्रमुख विशेषता रही थी। फिर भी, शार्लमेन के राज्याभिषेक का अर्थ था—पश्चिमी यूरोप में पुराने साम्राज्य की पुनः स्थापना।

सावधानी शार्लमेन को पोप का यह कृत्य पसन्द नहीं आया, फिर भी उसने शालीनता का त्याग नहीं किया। पोप के इस कृत्य का प्रायोजन अपने आपको सम्राटों से बड़ा सिद्ध करना था, जबकि शार्लमेन ने अपनी शक्ति के बल पर साम्राज्य प्राप्त किया था।

ओट्टो—रोमन साम्राज्य की खोयी हुई प्रतिष्ठा को पुन: स्थापित करने का एक और प्रयास जर्मनी के एक राजा ओट्टो ने किया। लोम्बार्डी के सरदारों का दमन करके पोप की सत्ता को सुदृढ़ बनाया। इस सहायता के बदले में पोप ने 962 ई. में उसे रोमन सम्राट का मुकुट प्रदान किया। यद्यपि ओट्टो के अधिकार में केवल जर्मनी और उत्तरी इटली के राज्य ही थे; फिर भी उसका साम्राज्य 'पवित्र रोमन साम्राज्य' कहलाया। किसी ने सत्य ही कहा था कि यह "न तो पवित्र था, न रोमन था और न साम्राज्य था" फिर भी, यह 1800 ई. तक नाम के लिए बना रहा।

17.4 सम्राटों और पोपों का आपसी संघर्ष (Conflict between King and Pope)

इस पृथ्वी पर किसकी सत्ता सर्वोच्च है—सम्राटों की अथवा पोप की? लौकिक साम्राज्य की अथवा धार्मिक शक्ति की? यह सवाल मध्यकालीन यूरोप की एक अन्य मुख्य विशेषता है। जब से ईसाई धर्म राज्य धर्म बना तभी से यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ, परन्तु अपने प्रारम्भिक विकासकाल में धर्माधिकारियों ने सार्वजनिक रूप से राजाओं अथवा सम्राटों की सर्वोच्चता को कभी चुनौती देने का साहस नहीं किया था। परन्तु जब रोमन साम्राज्य का पतन हो गया, केन्द्रीय शक्ति का लगभग लोप हो गया, चारों तरफ अव्यवस्था फैलने लगी तो चर्च ने सांसारिक कर्तव्यों का भार उठाया और दु:खी तथा भयभीत जनता को आश्रय प्रदान किया। धीरे-धीरे उसकी शक्ति बढ़ने लगी और उसकी जड़ें

नोट

अत्यधिक सुदृढ़ हो गई। ऐसी स्थिति में पोप अपने आपको सर्वोच्च शक्ति मानने लगे। राजाओं को वे अपने अधीन समझने लगे। निर्बल शासकों ने उनके वर्चस्व को स्वीकार कर लिया परन्तु शक्तिशाली शासकों ने उनकी प्रभुसत्ता का विरोध किया। यह संघर्ष शताब्दियों तक जारी रहा और मध्यकालीन यूरोपीय जीवन की एक मुख्य विशेषता बन गया।

(1) चर्च की प्रशासनिक शक्तियाँ–संघर्ष के कारण–दोनों के मध्य संघर्ष का एक मूल कारण चर्च द्वारा प्रशासनिक शक्तियों को हथियाना था। रोमन साम्राज्य के पतन के दिनों में चर्च ने अपने नियम, न्यायालय, विद्यालय, चिकित्सालय आदि बनाकर लोगों की सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक समस्याओं तथा मुकदमों की सुनवाई शुरू कर दी थी। चूँकि उन दिनों में केन्द्रीय सत्ता कमजोर हो चुकी थी, अत: विवाद नहीं उठा, परन्तु ज्यों ही राजाओं की शक्ति पुन: स्थापित हुई वे चर्च से शासन की शक्तियों को वापस लेने के लिए प्रयत्नशील हुए। कुछ महत्त्वाकांक्षी सम्राट प्राचीन रोमन साम्राज्य के गौरव को पुन: स्थापित करना चाहते थे। इसके लिए उन्हें इटली में पोप को उसकी राजनीतिक शक्तियों से वंचित करना जरूरी था विशेषकर राजधानी रोम को पोप की शासन सत्ता से मुक्त कराना।

(2) चर्च के न्यायालय–शासकों को चर्च के कानून और न्यायालय भी पसन्द न थे। विवाह, तलाक, उत्तराधिकार आदि कई मामलों का निर्णय चर्च के न्यायालय ही करते थे। राजा लोग अपने राजकीय न्यायालयों का महत्त्व कायम करना चाहते थे। क्योंकि कई बार दोनों न्यायालयों के परस्पर-विरोधी निर्णयों से स्थिति विचित्र बन जाती थी। इसके अलावा चर्च इस बात पर बल देता था कि चर्च के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के विरुद्ध अभियोगों की सुनवाई करने का अधिकार केवल चर्च के न्यायालयों को ही होना चाहिये। अर्थात् यदि वे लोग दोषी भी पाये जायें तो भी राज्य सरकारों को उन्हें दण्ड देने का अधिकार नहीं था। केवल चर्च ही उन्हें दण्डित कर सकता था। इस प्रकार की स्थिति में चर्च के अधिकारी एवं कर्मचारी राज्य प्रशासन की जरा भी परवाह नहीं करते थे और अपने आपको आम नागरिकों से पृथक् विशेषाधिकारयुक्त वर्ग के सदस्य समझने लग गये थे। इससे राजाओं के अहं तथा उनकी प्रभुसत्ता को ठेस पहुँचती थी।

(3) चर्च की धन सम्पदा–पोप और राजाओं के मध्य संघर्ष का एक मुख्य कारण चर्च की धन सम्पदा थी। चर्च के पास बहुत अधिक भूमि थी और इस भूमि से होने वाली उपज पर उसे किसी प्रकार का राजकीय कर नहीं देना पड़ता था। चर्च लोगों से धार्मिक कर भी वसूल करता था, जिससे काफी आय होती थी। धार्मिक न्यायालयों से भी चर्च को आय होती थी। श्रद्धालु ईसाइयों से भी चर्च को काफी धन-दान मिलता रहता था। कुल मिलाकर, चर्च काफी समृद्ध था और इसके पदाधिकारी राजाओं के समान ही ऐश्वर्य का जीवन बिताते थे। दूसरी तरफ नवोदित राज्यों के शासकों को शासन कार्यों तथा अपनी सैनिक शक्ति को सुदृढ़ बनाने के लिए धन की आवश्यकता थी। इस पर चर्च का यह कहना कि राजाओं को रक्तपातपूर्ण सामन्तीय युद्धों पर धन खर्च करने की अपेक्षा गिरजाघरों, मठों और सार्वजनिक निर्माण कार्यों पर खर्च करना चाहिए–राजाओं को बिलकुल पसंद न था।

(4) मानाभिषेक प्रथा–संघर्ष का एक अन्य कारण सामन्त प्रथा थी। यूरोप के अनेक बिशप सामन्तीय भूमिपति थे। कुछ बिशप राजाओं के 'वासाल' (अनुचर) थे और कुछ बिशप राजाओं के सामन्तों के अनुचर थे। दूसरी तरफ ये बिशप धर्माधिकारी होने के नाते पोप के अधीन थे। इसलिए यह सवाल उठा कि बिशप सामन्त की निष्ठा, कर्तव्यों और सेवाओं पर पहला दावा किसका है? उसकी मृत्यु के बाद उसकी 'फीफ' (पट्टे की भूमि) का क्या हो? ये और इसी प्रकार के कुछ ऐसे प्रश्न थे जिनको लेकर पोप और राजाओं के मध्य गहरे मतभेद विकसित हो उठे। बिशप सामन्त की मृत्यु के बाद कभी-कभी राजा अथवा बड़ा सामन्त कुछ धन लेकर उसकी फीफ किसी अन्य अनुचर को दे दिया करता था। इसके साथ ही वह बिशप की शक्ति और उसके प्रतीक मुद्रा (अँगूठी) और दंड, भी उस नये अनुचर को दे देता था। यह प्रथा जो 'मानाभिषेक' (ले इनवैस्तित्यूर) कहलाती थी, चर्च की निगाह में विशुद्ध धार्मिक प्रथा थी और राजा को ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं था। वस्तुत: इसका अर्थ था–चर्च के अधिकारी की राजा द्वारा नियुक्ति। राजाओं का यह कार्य चर्च के अनुसार धार्मिक मामलों में राजाओं का प्रत्यक्ष हस्तक्षेप था। इसलिए चर्च हमेशा विरोध करता रहा।

नोट

पोप और राजाओं के आपसी संघर्ष ने उस समय एक नया मोड़ ले लिया जब ग्रेगरी सप्तम पोप बना। ग्रेगरी सप्तम एक साधारण किसान के घर पैदा हुआ था। शारीरिक दृष्टि से वह दुर्बल था परन्तु मानसिक दृष्टि से बहुत बलवान था। उसने राजाओं द्वारा संपादित की जाने वाली 'मानाभिषेक' प्रथा को समाप्त करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। उसका तर्क था कि पोप होने के नाते उसे 'सम्राटों को पदच्युत' करने और 'अन्यायी शासकों के प्रजाजनों को उन शासकों के प्रति निष्ठा की शपथ से मुक्त करने' का अधिकार है। उसने यह भी घोषणा की कि पोप सभी शासकों के ऊपर है क्योंकि सभी शासक उसके चरण चूमते हैं। ग्रेगरी की घोषणा का सीधा-सादा अर्थ यह था कि वह किसी भी राजा के विरुद्ध उसकी प्रजा को विद्रोह करने तथा उस राजा को सिंहासन से उतारने का आदेश दे सकता है। परन्तु सम्राट हेनरी चतुर्थ ने 'मानाभिषेक की प्रथा को बन्द नहीं किया। उसने पोप की आज्ञा का उल्लंघन किया। पोप ने हेनरी चतुर्थ को ईसाई समाज से बहिष्कृत कर दिया और पोप के आदेशानुसार हेनरी की प्रजा उसके विरुद्ध उठ खड़ी हुई। बहुत से सामन्त जिनकी शक्ति को हेनरी ने कुचल डाला था, इस अवसर का लाभ उठाने में पीछे नहीं रहे और वे पोप से मिल गये। ऐसी स्थिति में 1077 ई. की कड़ाके की शीत ऋतु में हेनरी चतुर्थ को पोप से क्षमा माँगने इटली जाना पड़ा। पोप उस समय कोनोसा नामक स्थान पर था। हेनरी कोनोसा गया और नंगे सिर और नंगे पैर तीन दिन तक पोप के महल के सामने खड़ा रहा। तीन दिन बाद पोप ने उसे क्षमा कर दिया।

उदाहरण– धार्मिक सत्ता ने लौकिक सत्ता को अपमानित करके अपनी सर्वोच्चता का दावा सिद्ध कर दिखाया।

हेनरी चतुर्थ इस अपमान को नहीं भुला पाया। इटली से लौटने के बाद उसने 'मानाभिषेक' की प्रथा को जारी रखा। मुस्लिम वैज्ञानिकों ने यूरोप के वैज्ञानिकों का मार्ग–प्रशस्त किया। रोजर बेकन ने अन्वेषण तथा परीक्षणों पर जोर दिया। वह अपने समय का प्रसिद्ध वैज्ञानिक था, फिर भी वह अपने युग के अन्धविश्वासों से पूरी तरह से मुक्त नहीं हो पाया था। उसका भी मानना था कि सर्प दैत्यों (ड्रेगनों) का माँस खाने से अधिक ज्ञान प्राप्त होता है।

कीमियागरों तथा फलित ज्योतिषियों ने अप्रत्यक्ष रूप से विज्ञान की उन्नति में योगदान दिया। कीमियागर अन्य धातुओं से स्वर्ण बनाने में तो असफल रहे, परन्तु उनकी रासायनिक क्रियाओं से रसायन-विज्ञान के विकास में सहयोग मिला। इसी प्रकार फलित ज्योतिषियों ने ग्रहों एवं नक्षत्रों का अध्ययन कर खगोल-विज्ञान को उन्नत बनाया। काँच का सामान, ऐनकों के शीशे, यांत्रिक घड़ियाँ आदि बनाकर मध्ययुगीन वैज्ञानिकों ने नये-नये आविष्कारों की आधारशिला रखी। छापाखाना के आविष्कार ने प्रगति को बढ़ावा दिया। सचल टाइप का प्रयोग करके पहला मुद्रण-यन्त्र (छापाखाना) बनाने का श्रेय जर्मनी के जॉन गुटेनबर्ग को है जिसने 1450 ई. में बाइबिल का एक संस्करण छापा था। इससे पाठ्य पुस्तकें तथा अन्य पुस्तकें आम आदमी की पहुँच में आ गईं, क्योंकि मुद्रित पुस्तकें हस्तलिखित प्रतियों की तुलना में बहुत सस्ते दामों में मिलने लगी थीं।

आधुनिक भाषाओं का विकास–मध्यकालीन यूरोप की एक महत्त्वपूर्ण देन है–आधुनिक भाषाओं के विकास की पृष्ठभूमि तैयार करना। मध्यकाल के पूर्वार्द्ध में विद्वान लोग केवल लैटिन अथवा ग्रीक भाषा में ही अध्ययन-अध्यापन तथा लेखन का काम किया करते थे। बोलचाल की भाषाओं को असभ्य तथा पिछड़ी हुई माना जाता था और इनमें साहित्य का सृजन एक प्रकार से अपराध समझा जाता था। परन्तु रोमन साम्राज्य को नष्ट करने वाले बर्बर कबीले लैटिन अथवा ग्रीक में पारंगत नहीं हो पाये और अपनी देशी भाषा का ही प्रयोग करते रहे। धीरे-धीरे पश्चिमी यूरोप में बोलचाल की दो भाषाओं का विकास हुआ। एक थी 'रोमन्स भाषा' जिसके अन्तर्गत फ्रेंच, इटालियन, स्पेनिश और पुर्तगाली भाषाएँ आती हैं और दूसरी थी 'जर्मनिक भाषा' जिसमें जर्मन, अंग्रेजी, डच, नार्वेजियन और स्वीडिश भाषाएँ सम्मिलित थीं। तेरहवीं सदी तक यह स्पष्ट हो गया था कि लोगों की बोलचाल की भाषा विद्वानों की लिखित भाषा पर विजय प्राप्त कर लेगी। देशी भाषाओं के विकास के साथ सामान्य लोग धीरे-धीरे अपने साहित्य में अपने विचारों को अभिव्यक्त करने लगे। विद्या अथवा ज्ञान जो अब तक थोड़े से लोगों की बपौती थी, अब सामान्य लोगों के जीवन को भी आलोकित करने लगी। सामान्य लोगों की रचनाओं में कुलीन-वर्गीय महिलाएँ, घमण्डी सरदार, भिखारी, कृषक-दास आदि को अधिक महत्त्व दिया जाने लगा। उन लोगों ने मनुष्यों की समानता, श्रम की महिमा और पाखण्ड के प्रति घृणा जैसे विचारों पर अधिक जोर दिया।

नोट

मध्ययुगीन लोक-काव्य में शूरमाओं के गीत गाये गये हैं। 'बियोवुल्फ' सबसे पुराने लोक-काव्यों में है। आँग्ल-सैक्सन भाषा का है और इसमें नायक एक भयानक सर्प दैत्य पर विजय प्राप्त करता है। एक अन्य लोग काव्य में राजा आर्थर और उसके शूरमाओं के शौर्य का वर्णन है। इसी प्रकार, जर्मन लोककाव्य 'निबेलु गनलीड' में नायक सीगफ्रिड सर्प-दैत्य से संघर्ष करता है और एक सुन्दरी की प्राण रक्षा करता है। स्पेन के राष्ट्रीय महाकाव्य 'लेसिड' के नायक मूरो के विरुद्ध युद्ध करता है। फ्रांस के महाकाव्य 'रोलॉ का गीत' भी एक फ्रेंच सरदार की मूरो के साथ संघर्ष करते हुये वीर गति प्राप्त करने की गाथा है। संक्षेप में, लोक-काव्यों के माध्यम से हमें उस युग की शूरवीरता, ईसाइयत एवं देश-प्रेम की झलक दिखलाई पड़ती है।

इसी प्रकार, मध्यकालीन नाटकों में मुख्यत: धर्म और नैतिकता की शिक्षा देने का प्रयास किया गया है। ये नाटक सामान्यत: बाइबिल की कहानियों पर आधारित होते थे या चमत्कार-नाटक होते थे। नैतिक नाटकों में अच्छे और बुरे पात्रों के माध्यमों से सद्गुणों की अवगुणों पर विजय के दृश्य उपस्थित किये जाते थे। ऐसे नाटकों में 'एवरीमेन' नामक नाटक बहुत प्रसिद्ध हुआ। हास्य कथाओं की रचना भी हुई। इनमें सरदारों, पादरियों और प्रेम का मजाक उड़ाया जाता था। ऐसी रचनाओं को नवोदित व्यापारी-व्यवसाय वर्ग काफी पसन्द करता था, क्योंकि इससे उनके अहं को चैन मिलता था।

संगीत–प्राचीनकाल से ही संगीत ईश्वर आराधना तथा मनोरंजन का एक साधन रहा है। मध्ययुग के लोग भी संगीत के माध्यम से अपनी भक्ति-भावना का प्रदर्शन करते थे। पुरोहित लोग आरती (मास) का गान करते थे। मठवासी भी भक्तिगीत (भजन) बनाते थे और उन्हें गाने वाली भजन मण्डलियाँ (कोइर) काफी लोकप्रिय थीं। आनन्द देने वाले भजन जिन्हें 'कैरोल' कहा जाता था, क्रिसमस या ईस्टर पर गाया जाता था। धीरे-धीरे सांसारिक अर्थात् मौज-मस्ती के गीत भी लोकप्रिय होने लगे।

उदाहरण– विद्यार्थियों में मदिरा गीत, किसानों में कृषि सम्बन्धी गीत और सैनिकों में शूरवीरता के गीत और रसिक लोगों में प्रेमगीत काफी लोकप्रिय थे।

उस समय में सह-वादन (आरकैस्ट्रा) का प्रचलन नहीं था परन्तु विविध वाद्य यन्त्र जैसे कि ढोल, तुरही, बाँसुरी और अन्य वाद्य एक साथ अवश्य बजाये जाते थे।

स्थापत्य कला–मध्ययुग में धर्म का अत्यधिक महत्त्व था। धन-सम्पन्न लोगों, सामन्तों एवं राजाओं ने ईश्वर की महिमा के लिए भव्य गिरजाघरों का निर्माण करवाया। रोमानसक अथवा गौथिक शैली में बने ये गिरजाघर कला के अनुपम नमूने हैं। किसी-किसी गिरजाघर के निर्माण में तो अनेक वर्ष लग जाते थे और उसके निर्माण कार्य में समूचा देश यथाशक्ति आर्थिक सहयोग प्रदान करता था। इस पुण्य कार्य में मजदूर लोग भी अपना सहयोग देने में पीछे नहीं रहते थे। रोमन शैली में निर्मित गिरजाघरों में पत्थर की विशाल छत को सम्भालने के लिये मोटी-मोटी दीवारें बनाई जाती थीं और बहुत कम खिड़कियाँ रखी जाती थीं। वे भी छोटे आकार की होती थीं। परिणामस्वरूप ऐसे गिरजाघरों का भीतरी भाग अन्धकारमय होता था। दरवाजों और खिड़कियों पर गोलाई लिए मेहराबें होती थीं जो कि इस शैली की विशेषता कही जा सकती है। बाद में, गौथिक शैली का प्रचलन बढ़ा। इस शैली के गिरजाघर ऊँचे, हल्के और शोभायमान होते थे। इसमें प्रकाश की समुचित व्यवस्था रहती थी और बड़ी-बड़ी अनेक खिड़कियाँ होती थीं। इसमें गोल मेहराबों के स्थान पर नुकीली मेहराबों का प्रयोग किया जाता था तथा सपाट छत की जगह ढलवाँ छत का निर्माण किया जाता था। कुशल कारीगरों ने दीवारों, दरवाजों तथा खिड़कियों पर रंग-बिरंगे काँच के टुकड़ों को जड़ कर गिरजाघरों की सुन्दरता को और भी अधिक निखारने का प्रयत्न किया। मूर्तिकारों ने दीवारों पर उभार-चित्र और मूर्तियाँ बनाई हैं। फ्रांस में स्थित सार्त्रे के गिरजाघर में, अन्दर और बाहर संतों, देवताओं, पैगम्बरों और अन्य धार्मिक नायकों की लगभग दो हजार प्रतिमाएँ हैं। दीवारों पर उभरी हुई इन प्रतिमाओं से गिरजेघरों का सौन्दर्य दुगुना हो उठा है। उस युग के कलाकारों ने लकड़ी, काँसे और लोहे पर भी सुन्दर कोराई और नक्काशी का काम किया है। वैस्टमिंस्टर, ऐबे, नोत्रदाम, कोलोन, मिलान आदि स्थानों के गिरजाघर अधिक विख्यात हैं। ये गिरजाघर जहाँ मध्यकालीन यूरोप की समृद्धि और कारीगरों तथा शिल्पकारों के कला-कौशल को अभिव्यक्ति करते हैं, वहीं उस

युग की मुख्य विशेषता 'धर्म' की अभिव्यक्ति भी करते हैं और बतलाते हैं कि उस युग के लोगों का ध्यान किस सीमा तक परलोक की कल्पना के साथ जुड़ा हुआ था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. .... ने यूरोप को उस समय धार्मिक एकता प्रदान की, जिस समय उसकी राजनैतिक एकता लुप्त हो चुकी थी।

   (क) पोप (ख) चर्च

   (ग) सम्राट (घ) साम्राज्य

6. अपनी ईसाई .... के प्रभाव में आकर क्लीविस ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया।

   (क) रानी (ख) मंत्री

   (ग) गुरु (घ) नन

7. शालमैन मध्ययुगीन .... का एक महान सम्राट था।

   (क) इंग्लैंड (ख) यूरोप

   (ग) अरब (घ) भारत

8. सम्राटों और .... के बीच सर्वोच्चता का दावा, मध्ययुगीन यूरोप की एक प्रमुख विशेषता थी।

   (क) मंत्री (ख) मौकों

   (ग) पोपों (घ) चर्चों

17.5 धर्मयुद्ध (क्रूसेड) (Crusade)

मध्यकालीन यूरोप की एक प्रमुख विशेषता है–धर्म के नाम पर लड़े जाने वाले धर्मयुद्ध। ईसाई धर्म के पवित्र तीर्थ स्थान जेरूसलम के अधिकार को लेकर ईसाइयों और मुसलमानों (सैल्जुक तुर्कों) के मध्य लड़े गये युद्ध इतिहास में 'धर्मयुद्धों' (क्रूसेड्स) के नाम से विख्यात हैं। ये युद्ध लगभग दो शताब्दियों (1095-1291 ई.) तक चलते रहे। इतिहासकार ऐसे सात धर्मयुद्ध मानते हैं। धर्मयुद्ध के कारणों एवं घटनाओं का उतना महत्त्व नहीं है, जितना कि उसके परिणामों का है।

(1) सांस्कृतिक आदान-प्रदान-परिणाम–धर्मयुद्ध यूरोप के ईसाई जगत् को उसका पवित्र तीर्थ स्थान जेरूसलम तो नहीं दिलवा पाये परन्तु वे एक नये यूरोप के निर्माण में सहायक अवश्य बने। धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपवासी पूर्वी रोमन साम्राज्य तथा दूसरे पूर्वी देशों के सम्पर्क में आये। इस समय जहाँ यूरोप अज्ञान एवं अन्धकार में डूबा हुआ था, पूर्वी देश ज्ञान के प्रकाश से आलोकित थे। पूर्वी देशों में अरब लोगों ने यूनान तथा भारतीय सभ्यताओं के सम्पर्क से अपनी एक नई समृद्ध सभ्यता का विकास कर लिया था। इस नवीन सभ्यता के सम्पर्क में आने पर यूरोपियों को यह पता चल गया कि अन्य लोगों के पास ऐसा बहुत कुछ है जिसे वे सीख सकते हैं। जब उन्होंने देखा कि मुसलमान कितनी स्वच्छता से रहते थे, तो उन्हें अपनी गन्दगी पर लज्जा आने लगी।

पूर्व और पश्चिम के इस मिलन के ऐतिहासिक महत्त्व को कई लोगों ने बढ़ा-चढ़ा कर प्रस्तुत किया है। वस्तुतः पश्चिम पर पूर्व का प्रभाव वैज्ञानिक और साहित्यिक की अपेक्षा कलात्मक, औद्योगिक, व्यापारिक एवं सांस्कृतिक अधिक था। वैसे धर्मयुद्धों के समय में पूर्व में मुस्लिम संस्कृति अपने ह्रास की ओर अग्रसर थी। दर्शन, चिकित्सा, संगीत और दूसरे अन्य क्षेत्रों में उसकी पुरानी चमक मंद पड़ चुकी थी। यह स्थिति शायद इस तथ्य को स्पष्ट करने में सहायक हो सकती है कि बारहवीं और तेरहवीं शताब्दियों में स्पेन, सिसली, उत्तरी अफ्रीका और यहाँ तक कि बाईजेण्टियन साम्राज्य (पूर्वी रोमन साम्राज्य) की अपेक्षा सीरिया ही इस्लाम और पश्चिमी ईसाइयत के बीच

नोट

सांस्कृतिक आदान-प्रदान का प्रमुख केन्द्र बना रहा। सीरिया के माध्यम से ही इस्लाम ने यूरोपीय ईसाइयत को प्रत्यक्ष रूप में धर्मयोद्धाओं के द्वारा सांस्कृतिक दृष्टि से प्रभावित किया था। दूसरी तरफ, यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि सीरिया में आने वाले फ्रेंक अथवा जर्मन योद्धा, पश्चिमी संस्कृति के उन्नत प्रतिनिधि न होकर दुर्गों और गढ़ियों के सीमित क्षेत्र में जीवनयापन करने वाले सामान्य स्तर के लोग थे जिनका पश्चिम के बौद्धिक वर्ग से विशेष सम्पर्क नहीं था। इसके अलावा राष्ट्रीय और धार्मिक पूर्वाग्रहों ने भी पूर्व और पश्चिम के उन्मुक्त मिलन में कई प्रकार की कथाएँ उत्पन्न कर दी थीं। कला और विज्ञान के क्षेत्र में पूर्व के स्थानीय लोगों को सिखाने लायक कोई बात पश्चिम के इन धर्मयोद्धाओं के पास नहीं थी। अरब इतिहासकारों ने फ्रेंकी की न्याय विधि का मजाक उड़ाते हुए लिखा है कि वे लोग कितने अज्ञानी हैं जो विवादों का निर्णय द्वन्द्व युद्ध अथवा पानी में डुबो कर करते हैं।

(2) लोककल्याणकारी कार्य–बारहवीं सदी से हमें सम्पूर्ण यूरोप में धर्मशालाएँ और चिकित्सालयों, विशेषकर कुष्ठ रोगियों के आश्रम दिखाई पड़ते हैं। इससे हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि व्यवस्थित चिकित्सालयों का विचार पूर्वी मुसलमानों की देन है। यूरोप में सार्वजनिक स्नानागारों का पुनर्प्रचलन भी पूर्व की देन है, क्योंकि रोमनों ने तो इसे संरक्षण दिया था परन्तु ईसाइयों ने इस सार्वजनिक संस्था को निरुत्साहित किया था।

(3) साहित्य पर प्रभाव–साहित्य के क्षेत्र में पूर्व का प्रभाव अधिक व्यापक रहा। 'होलीग्रेल' के आख्यानों में निस्सन्देह सीरियन मूल के तत्व सम्मिलित हैं। धर्मयोद्धाओं ने पूर्वी लोगों से 'अरेबियन नाइट्स' की कहानियाँ सुनी होंगी और वापसी में अन्य लोगों को पूर्वी किस्से सुनाये होंगे। चौसर की 'स्कॉयरर्स टेलस्' वास्तव में एक अरेबियन-नाइट्स की कहानी है। बुकासियो ने मौखिक स्रोतों से जिन पूर्वी कहानियों को प्राप्त किया, उन्हें उसने अपनी सर्वश्रेष्ठ रचना 'डेकामेरन' में रूपान्तरित किया है। धर्म-युद्धों के परिणामस्वरूप ही यूरोपवासियों में अरबी तथा अन्य इस्लामी भाषाओं में गहरी रुचि उत्पन्न हुई।

(4) युद्ध कला-कौशल पर प्रभाव–युद्ध कला-कौशल के क्षेत्र में पूर्वी प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। क्रॉस धनुष का उपयोग, शूरमाओं द्वारा भारी जिरह-बख्तर पहनना, अस्त्र-शस्त्रों के नीचे रूई के पैड का इस्तेमाल, घोड़ों की सुरक्षा पर अधिक ध्यान देना आदि धर्मयुद्धों की सीख के ही परिणाम हैं। सीरिया में तो फ्रेंक लोगों ने अपने सैनिक बैण्ड में मृदंग तथा ढोल को भी सम्मिलित कर लिया था। उन्होंने स्थानीय लोगों से सैनिक सूचनाओं को पहुँचाने के लिए कबूतरों को प्रशिक्षित करने की कला भी सीखी और विजय के जश्न को मनाने तथा अन्य पुरुषोचित खेल-कूदों को सीखा तथा उनका यूरोप में प्रसार किया। वस्तुत: सामन्तवाद की कई महत्त्वपूर्ण शौर्य विशेषताओं के विकास में सीरिया का अप्रत्यक्ष योगदान रहा है। आयुधांक और सायुधांक (कुल चिन्ह-अस्त्रध्वजादि चित्रण) के बढ़ते हुए प्रयोग का मूल कारण मुस्लिम सरदारों के साथ उनका सम्पर्क ही था। धर्मयोद्धाओं ने घेरा डालने की उन्नत तकनीक भी सीखी जिसमें सुरंगें बिछाना तथा दुर्ग की प्राचीरों एवं बुर्जियों को ध्वंस करने के लिए विस्फोटक सामग्री का उपयोग आदि सम्मिलित था। वैसे बारूद का आविष्कार चीन में हुआ था। मंगोलों के माध्यम से इसकी जानकारी यूरोप को मिली परन्तु आग्नेय शस्त्रों में इसके उपयोग की जानकारी धर्मयुद्धों के बाद ही हो पाई और चौदहवीं सदी में यूरोप वाले इसके प्रयोग में काफी निपुण हो चुके थे।

(5) कृषि के क्षेत्र में नई फसलें–कृषि, उद्योग और वाणिज्य के क्षेत्र में बौद्धिक क्षेत्र से भी अधिक महत्त्वपूर्ण परिणाम निकले। उन्होंने पश्चिमी भूमध्यसागरीय क्षेत्रों में नींबू, प्याज, खुबानी, तरबूजा, बाजरा, चावल आदि के नये पौधों और फसलों को लोकप्रिय बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। यूरोप में कई वर्षों तक खुबानी को दमिश्क के बेर के नाम से पुकारा जाता रहा।

(6) खान-पान एवं रहन-सहन पर प्रभाव–पूर्वी देशों के अपने प्रवास काल में धर्मयोद्धाओं ने खाने-पीने के मामलों में नये स्वादों का अनुभव किया और यूरोप लौटने के बाद उनका प्रचार भी किया। सीरिया में बाजारों में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध सुगन्धित पदार्थों, गर्म मसालों, मिठाइयों और अरब तथा भारत जैसे देशों के अनेक खाद्य पदार्थों ने उन्हें अत्यधिक प्रभावित किया। इन सुस्वादों ने आगे चलकर इटालियन और भूमध्यसागरीय नगरों के वाणिज्यों को भी काफी सहारा दिया। क्योंकि अब यूरोप में सहभोजों के अवसर पर पूर्वी देशों के मसालों से छौंके गये अधिकाधिक व्यंजन बनने लगे। आड़ू, खुबानी, तरबूज, खजूर, नींबू आदि दुर्लभ फलों का प्रयोग बढ़ने लगा। चीनी

नोट

का प्रयोग भी बढ़ा। इससे पूर्व यूरोपवासी अपने खाद्य पदार्थों को मीठा बनाने के लिए शहद का प्रयोग किया करते थे। चीनी के साथ ही कई-कई प्रकार के शर्बत तथा पेय पदार्थ भी पश्चिम में जा पहुँचे। पूर्व ने पश्चिम के रहन-सहन और घरों की सजावट को भी प्रभावित किया। सम्पन्न घरों में पूर्वी देशों के कालीन और पर्दे प्रयुक्त होने लगे। अब यूरोपीय महिलाएँ मखमल, रेशम, मलमल, छींट और दामस्क के परिधान पहनने लगीं। विशेष अवसरों पर ईरानी इत्र और सुगन्धित तेलों का प्रयोग किया जाने लगा। फिटकरी और अगर नामक द्रव्यों की जानकारी मिली। संक्षेप में, धर्मयुद्धों ने यूरोप के खान-पान, रहन-सहन, ज्ञान-विज्ञान, व्यापार-वाणिज्य सभी को काफी प्रभावित किया।

(7) व्यापार एवं बैंकिंग व्यवस्था में सुधार–पूर्वी कृषि उत्पादों और औद्योगिक वस्तुओं की बढ़ती माँग ने यूरोप में एक नया बाजार खोल दिया। धर्मयोद्धाओं और तीर्थ यात्रियों को लाने-ले जाने की आवश्यकता ने समुद्री परिवहन के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को रोमन युग के स्तर तक पहुँचा दिया। धर्मयुद्धों के समय में अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण इतालवी नगरों ने व्यावसायिक समृद्धि का पूरा लाभ उठाया। इटली के नगरों के व्यापारी धर्मयोद्धाओं को आवश्यक सामग्रियाँ बेच-बेच कर मालामाल हो गये। वेनिस, जिनोआ, पीसा तथा अन्य इतालवी व्यापारिक बेड़े, सुदूरपूर्व से आने वाली विलास सामग्रियाँ तथा मसाले उठाते थे। वेनिस के रास्ते वे अन्ततोगत्वा यूरोप के अन्य नगरों तक पहुँच जाती थीं। धर्मयुद्धों के बाद पश्चिमी यूरोप के अन्य नगर भी इतालवी नगरों से व्यापारिक प्रतिस्पर्धा करने लगे। लन्दन, पेरिस, कोलोन और हेम्बर्ग मुख्यतया व्यापारिक गतिविधियों के बढ़ जाने के कारण बड़े नगर बन गये। नई स्थिति की वित्तीय आवश्यकता ने धन के तीव्र हस्तांतरण को बढ़ावा दिया। परिणामस्वरूप बैंकिंग व्यवसाय का विकास हुआ। जिनोआ और पीसा में बैंकरों के फर्म कायम हुए। इन फर्मो की शाखाएँ अन्य नगरों में भी काम करने लगीं। ब्याज पर धन जमा करना और कर्जा देना ही इनका मुख्य काम था। व्यापार-वाणिज्य तथा बैंकिंग के विकास से एक शक्तिशाली एवं सम्पन्न व्यवसायी वर्ग उठ खड़ा हुआ। इस वर्ग ने जिज्ञासु वैज्ञानिकों, अन्वेषकों, कलाकारों तथा साहित्यकारों को संरक्षण एवं प्रोत्साहन देकर पुनर्जागरण की आर्थिक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार कर दी।

(8) भौगोलिक ज्ञान में वृद्धि–धर्मयुद्धों की समुद्री गतिविधियों से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण खोज दिशा-सूचक यन्त्र (कुतुबनुमा) की है। शायद चीनियों ने सर्वप्रथम इसकी खोज की थी। परन्तु मुसलमानों ने जो कि ईरान की खाड़ी से सुदूर पूर्वी सागरों तक व्यापार करते थे, दिशा-सूचक यन्त्र का व्यावहारिक उपयोग किया। उन्होंने अपनी यह जानकारी पश्चिम को प्रदान की। धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपवासियों को नवीन मार्गों की जानकारी मिली। कुतुबनुमा की जानकारी भी मिल चुकी थी। इस अवधि में जहाँ अरब साम्राज्य सिकुड़ता जा रहा था और मुसलमानों का व्यापार-वाणिज्य एक सीमा पर पहुँच कर स्थिर हो गया था, वहीं यूरोप के साहसिक लोग पूर्वी देशों की यात्रा के लिए चल पड़े। उनमें से कुछ ने पूर्वी देशों की यात्राओं के दिलचस्प वर्णन लिखे, जिन्हें पढ़कर यूरोपवासियों की कूप-मंडूकता दूर हुई।

(9) पोप के प्रभाव में कमी–मध्य युग में लोग अपने सर्वोच्च धर्माधिकारी पोप को ईश्वर का प्रतिनिधि मानने लगे थे, परन्तु जब धर्मयुद्धों में पोप की सम्पूर्ण शुभकामनाओं एवं आशीर्वादों के बाद भी ईसाइयों की पराजय हुई तो लाखों लोगों की धार्मिक आस्था डगमगा गई और वे सोचने लगे कि पोप भी हमारी तरह एक साधारण मनुष्य मात्र है। उसके चारों तरफ जो दिव्य आडंबरयुक्त वातावरण निर्मित किया गया है, वास्तव में धर्म के नाम पर धर्माचार्यों की स्वार्थ सिद्धि का साधन मात्र है। पोप की गिरती प्रतिष्ठा से धर्म का शिकंजा कुछ ढीला पड़ गया और एक नया तार्किक दृष्टिकोण उभरकर सामने आया जिसने पुनर्जागरण को आहूत करने में भारी योगदान दिया।

(10) सामन्ती प्रथा का अश्वासन–दीर्घकालीन धर्म युद्धों ने अप्रत्यक्ष रूप से सामन्ती प्रथा के पतन में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। पोप की अपील पर असंख्य सामन्त अपने अनुचरों और सैनिकों के साथ धर्मयुद्धों में भाग लेने मध्य एशिया पहुँचे। उनमें से अधिकांश सामन्त और उनके अनुचर युद्धों में मारे गये। बहुत से वहीं बस गये। परिणामस्वरूप यूरोप में सामन्तों की शक्ति क्षीण हो गई और नवोदित राजाओं के लिए सामन्तों की बची हुई शक्ति को कुचलना सम्भव हो गया।

(11) निष्कर्ष–कुछ विद्वानों का मानना है कि धर्मयुद्धों के इस प्रकार के तथाकथित परिणाम धर्मयुद्धों के बिना भी होकर रहते। उनका मानना है कि पश्चिम का पूर्व से मिलन व्यापार और यात्रा द्वारा अनिवार्य रूप से होना ही

नोट

था। धर्मयुद्धों ने केवल इस मिलन की गति को तीव्र कर दिया। जो भी हो, इतना तो निश्चित है कि धर्मयुद्ध मध्ययुगीन यूरोपवासियों के धार्मिक उत्साह को प्रदर्शित करते हैं और यह बताते हैं कि लोगों के जीवन पर धर्म का कितना जबरदस्त प्रभाव था। इसीलिए धर्म को मध्यकालीन यूरोप की एक मुख्य विशेषता माना जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ–

(State whether the following statements are True/False)

9. पोप और राजाओं के बीच संघर्ष का एक मुख्य कारण चर्च की धन-संपदा थी।
10. धार्मिक न्यायालयों से सम्राट को आय होती थी।
11. सम्राट हेनरी ने मानाभिषेक की प्रथा को बंद कर दिया।
12. मध्ययुगीन लोक-काव्य में शूरमाओं के गीत गाए गए हैं।

17.6 सारांश (Summary)

- सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में लिथुआनिया से आयरलैंड तक और नार्वे तथा फिनलैण्ड से लेकर पुर्तगाल और हंगरी तक सम्पूर्ण पश्चिमी और मध्य यूरोप में रोमन कैथोलिक ईसाई चर्च का वर्चस्व था। ईसाई परिवार में उत्पन्न प्रत्येक शिशु इसका सदस्य समझा जाता था और जन्म से लेकर कब्र तक लोगों के जीवन पर चर्च का नियन्त्रण एवं प्रभुत्व था। जब रोमन साम्राज्य टूटा; तब कोई ऐसा सुदृढ़ शासन नहीं था, जो उसका स्थान ले सकता।
- ईसाई जगत् के इस धार्मिक साम्राज्य के संगठनात्मक ढाँचे का अध्यक्ष रोम का बिशप होता था, जिसे 'पोप' के नाम से पुकारा जाता था। प्राचीन रोम के कुछ थोड़े से ही सम्राटों के हाथ में उतनी शक्ति रही थी, जितनी की मध्यकालीन पोप के हाथ में थी। कैथोलिक जनता उसे पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि मानने लगी थी। वह चर्च का सर्वोच्च नियम-निर्माता, सर्वोच्च न्यायाधीश और चर्च की समस्त गतिविधियों का सर्वोच्च प्रशासक था। वह यूरोप के किसी भी ईसाई राज्य के शासक को पदच्युत करने की क्षमता रखता था। वह किसी भी ईसाई राज्य के किसी भी ऐसे सिविल कानून को जो उसकी निगाह में अनुचित हो, रद्द कर सकता था।
- मध्यकालीन मठ आस-पास की बस्तियों के बालकों के लिए विद्यालयों का दायित्व भी निभाते थे और यात्रियों के लिए विश्रामगृहों का काम भी करते थे। मठवासी चिकित्सक का काम भी करते थे। कृषि, पशुपालन और उद्योग के क्षेत्र में उनका योगदान रहा, क्योंकि अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वे स्वयं कठोर शारीरिक श्रम करते थे। ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों पर चर्च तथा धर्म का प्रभाव स्थापित करने में उन्होंने सक्रिय भूमिका अदा की थी।
- 496 ई. में फ्रांक लोगों के नेता क्लीविस ने एक अन्य जर्मन कबीले को पराजित करके एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की। अपनी ईसाई रानी के प्रभाव में आकर उसने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। इससे पोप को शक्तिशाली जर्मन कबीले (फ्रांक) का समर्थन मिल गया और फ्रांक शासकों को पोप का। क्लीविस के उत्तराधिकारी कमजोर निकले और शासन की बागडोर राजमहलों के मेयर शार्ल मार्तेल के हाथ में चली गई।
- रोमन साम्राज्य की खोयी हुई प्रतिष्ठा को पुन: स्थापित करने का एक और प्रयास जर्मनी के एक राजा ओट्टो ने किया। लोम्बार्डी के सरदारों का दमन करके पोप की सत्ता को सुदृढ़ बनाया। इस सहायता के बदले में पोप ने 962 ई. में उसे रोमन सम्राट का मुकुट प्रदान किया।

- पोप और राजाओं के मध्य संघर्ष का एक मुख्य कारण चर्च की धन सम्पदा थी। चर्च के पास बहुत अधिक भूमि थी और इस भूमि से होने वाली उपज पर उसे किसी प्रकार का राजकीय कर नहीं देना पड़ता था। चर्च लोगों से धार्मिक कर भी वसूल करता था, जिससे काफी आय होती थी। धार्मिक न्यायालयों से भी चर्च को आय होती थी। श्रद्धालु ईसाइयों से भी चर्च को काफी धन-दान मिलता रहता था।
- पोप और राजाओं के आपसी संघर्ष ने उस समय एक नया मोड़ ले लिया जब ग्रेगरी सप्तम पोप बना। ग्रेगरी सप्तम एक साधारण किसान के घर पैदा हुआ था। शारीरिक दृष्टि से वह दुर्बल था परन्तु मानसिक दृष्टि से बहुत बलवान था। उसने राजाओं द्वारा संपादित की जाने वाली 'मानाभिषेक' प्रथा को समाप्त करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। उसका तर्क था कि पोप होने के नाते उसे 'सम्राटों को पदच्युत' करने और 'अन्यायी शासकों के प्रजाजनों को उन शासकों के प्रति निष्ठा की शपथ से मुक्त करने' का अधिकार है।
- मध्ययुग में धर्म का अत्यधिक महत्त्व था। धन-सम्पन्न लोगों, सामन्तों एवं राजाओं ने ईश्वर की महिमा के लिए भव्य गिरजाघरों का निर्माण करवाया। रोमानसक अथवा गौथिक शैली में बने ये गिरजाघर कला के अनुपम नमूने हैं। किसी-किसी गिरजाघर के निर्माण में तो अनेक वर्ष लग जाते थे और उसके निर्माण कार्य में समूचा देश यथाशक्ति आर्थिक सहयोग प्रदान करता था। इस पुण्य कार्य में मजदूर लोग भी अपना सहयोग देने में पीछे नहीं रहते थे।
- धर्मयुद्ध यूरोप के ईसाई जगत् को उसका पवित्र तीर्थ स्थान जेरूसलम तो नहीं दिलवा पाये परन्तु वे एक नये यूरोप के निर्माण में सहायक अवश्य बने। धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपवासी पूर्वी रोमन साम्राज्य तथा दूसरे पूर्वी देशों के सम्पर्क में आये। इस समय जहाँ यूरोप अज्ञान एवं अन्धकार में डूबा हुआ था, पूर्वी देश ज्ञान के प्रकाश से आलोकित थे।

17.7 शब्दकोश (Keywords)

- **पोप**—ईसाइयों का सर्वोच्च धार्मिक गुरु।
- **बियोवुल्फ**—आंग्ल-सैक्सन भाषा का पुराना काव्य।

17.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मध्यकालीन यूरोप की मुख्य विशेषताओं पर संक्षेप में प्रकाश डालिये।
2. मध्यकालीन यूरोप में कैथोलिक चर्च की भूमिका की समीक्षा कीजिए।
3. सम्राटों और पोपों के आपसी संघर्ष के कारणों एवं परिणामों का उल्लेख कीजिये।
4. मध्यकालीन यूरोप में नगरों के विकास एवं उनकी प्रबन्ध-व्यवस्था का विवरण दीजिये।
5. मध्यकालीन यूरोप के आर्थिक जीवन का उल्लेख कीजिये तथा गिल्ड पद्धति की भूमिका की समीक्षा कीजिये।
6. मध्यकालीन यूरोप में ज्ञान-विज्ञान तथा कला की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिये।
7. धर्मयुद्धों के परिणामों का उल्लेख कीजिये।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. मध्य युग	2. चर्च	3. मोंक	4. पोप
5. चर्च	6. रानी	7. यूरोप	8. पोपों
9. सत्य	10. असत्य	11. असत्य	12. सत्य

नोट

17.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–18: अरब जगत
(The Arab World)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

18.1 मुहम्मद साहब का जीवन-वृत्त (Early life of Prophet Mohammed)

18.2 हजरत मुहम्मद की शिक्षाएँ (Precept of Prophet Mohammed)

18.3 सुन्नी-शिया सम्प्रदाय (Sunni and Shia Section)

18.4 इस्लाम धर्म के शीघ्र प्रसार के कारण (Causes for Fast Spread of Islam)

18.5 इस्लामी साम्राज्य का प्रसार, खिलाफत का उदय : प्रथम चार खलीफे (Expansion of Islam Empire, Rise of Khilafat : First four Khalifas)

18.6 सारांश (Summary)

18.7 शब्दकोश (Keywords)

18.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

18.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मुहम्मब साहब का जीवन-वृत्त एवं उनकी शिक्षाओं को जानने में;
- सुन्नी-शिया संप्रदाय एवं इस्लाम धर्म के प्रसार के कारणों को जानने में;
- इस्लामी साम्राज्य का प्रसार, खिलाफत का उदय एवं प्रथम चार खलीफों को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

पश्चिमी एशिया में स्थित अरब प्रायद्वीप अनेक सभ्यताओं, धर्मों तथा जातियों का उद्‌गम स्थान रहा है। भूमध्यसागर, लालसागर, अरबसागर और फारस की खाड़ी इस प्रायद्वीप को तीन तरफ से घेरे हुए हैं। कुछ तटवर्ती क्षेत्रों के अलावा सम्पूर्ण प्रायद्वीप रेगिस्तान है। यहाँ बहुत कम वर्षा होती है। कृषि का थोड़ा-बहुत काम समुद्रतटीय क्षेत्रों या रेगिस्तान में ओयसिस क्षेत्र (नखलिस्तान) में ही होता है। अरब में अति प्राचीन काल से ही सेमेटिक जनजातियों के लोग रहते आये थे, जो आज के अरबों के पूर्वज हैं। उनमें से कुछ नखलिस्तानों और नगरों में स्थायी रूप से रहते थे और कृषि, व्यापार तथा दस्तकारी के धन्धे करते थे। दूसरा भाग स्तेपियों तथा रेगिस्तानों में खानाबदोशी करता था और ऊँट, घोड़े, भेड़-बकरियाँ पालता था। ये लोग पालतू पशुओं के साथ सारी गृहस्थी को समेटे जीविका की खोज में घूमते-भटकते

नोट

थे। ये लोग कबीलों में बँटे हुए थे। प्रत्येक कबीले का अपना नेता, अपने नियम, रहन-सहन तथा रीति-रिवाज होते थे। भौगोलिक अवस्था तथा जलवायु के कारण यह प्रायद्वीप सभ्यता की दौड़ में काफी पीछे रह गया था। उन लोगों का कोई व्यवस्थित राजनीतिक संगठन भी नहीं था। उनका हर परिवार अपने आप में पूर्णत: स्वायत्त इकाई थी। उनमें एकता तथा राष्ट्रीयता की भावना बिल्कुल नहीं थी। उन लोगों के कबीले प्राय: आस-पास के सम्पन्न देशों पर हमला करके लूटमार करते रहते थे। उनमें आपस में भी संघर्ष होता रहता था। उनके सार्वजनिक जीवन में भी कई बुराइयाँ विद्यमान थीं। शराब पीना, जुआ खेलना तथा बहु-विवाह की कुरीतियाँ मौजूद थीं। एकता के अभाव तथा विविध प्रकार की आजीविका के उपरान्त भी उन लोगों का रहन-सहन, भाषा तथा धार्मिक विश्वास एक जैसे थे।

इस्लाम के उदय के पूर्व अरब के लोग अपने अलग-अलग पारिवारिक एवं कबीलाई देवताओं में विश्वास करते थे तथा उनकी अलग-अलग मूर्तियाँ बनाकर पूजा किया करते थे। मक्का सभी अरबों का तीर्थस्थल था और वहाँ के अल-काबा नामक एक विशाल काले पत्थर को पूजते थे। वहाँ विभिन्न अरब कबीलों के देवताओं की मूर्तियाँ और दूसरी पूजा की वस्तुएँ एकत्र की हुई थीं। इसके अलावा, उन लोगों में कई प्रकार के अन्धविश्वास घर किये हुए थे। भूत-प्रेत की भावना उनमें कूट-कूटकर भरी थी। समग्र रूप में उस समय में अरब में गरीबी, अनियमितता और धार्मिक अन्धविश्वासों का बोलबाला था। वैसे अरब में विदेशियों, विशेषत: यहूदियों और ईसाइयों की बस्तियाँ भी थीं। विभिन्न भाषाओं और धर्मों के लोग एक-दूसरे के सम्पर्क में आते थे और उनके विश्वास एक-दूसरे को प्रभावित करते थे।

अरब लोगों के मेसोपोटामिया, सीरिया, फिलिस्तीन, मिस्र, ईथोपिया आदि पड़ोसी देशों के साथ आर्थिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध थे। इन देशों को आपस में जोड़ने वाले व्यापारिक मार्ग अरब से ही गुजरते थे। ऐसे ही मार्गों के एक संधिस्थल पर, लालसागर के तट के निकट मक्का का नखलिस्तान स्थित था। यहाँ रहने वाली कुरैश जनजाति के अभिजात तबके इस कारवाँ व्यापार से भरपूर लाभ उठाते थे, परन्तु छठी शताब्दी में अरब में कारवाँ व्यापार का ह्रास शुरू हो गया, क्योंकि व्यापार मार्ग अब पूर्व सासानी ईरान के क्षेत्र में गुजरने लगे। इससे शताब्दियों से चला आ रहा आर्थिक संतुलन भंग हो गया। कारवाँओं से होने वाली आमदनी के छिन जाने पर खानाबदोश अरब स्थायी जीवन अपनाने और कृषि का धंधा करने लगे। फलस्वरूप भूमि की माँग बढ़ गयी और विभिन्न जनजातियों के बीच पहले से भी अधिक खूनी संघर्ष होने लगा। इन्हीं परिस्थितियों में अरब में इस्लाम का अभ्युदय हुआ और मुहम्मद साहब ने अपने विचारों का, जो तत्कालीन समाज की आवश्यकता के अनुरूप थे, प्रचार शुरू किया।

> *नोट्स* कारवाँओं से होने वाली आमदनी के छिन जाने पर खानाबदोश अरब स्थायी जीवन अपनाने और कृषि का धंधा करने लगे। फलस्वरूप भूमि की माँग बढ़ गयी और विभिन्न जनजातियों के बीच पहले से भी अधिक खूनी संघर्ष होने लगा।

18.1 मुहम्मद साहब का जीवन-वृत्त (Early Life of Prophet Mohammed)

तीसरा और सबसे बाद में उत्पन्न विश्वव्यापी धर्म इस्लाम का पैगाम दुनिया को सुनाने वाले पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब की जन्म तिथि के बारे में मतभेद है, किन्तु यह प्रामाणिक है कि उनका जन्म सन् 570 ई. में मक्का में हुआ था। उनके पिता का नाम अब्दुल्ला और माता का नाम बीबी अमीना था। जन्म के कुछ दिनों पूर्व ही उनके पिता का देहान्त हो गया और जब वे 6 वर्ष के थे तब उनकी माता का भी स्वर्गवास हो गया, उनका लालन-पालन उनके चाचा ने किया। बचपन में वे भेड़ें चराने का काम करने लगे। भेड़ों को चराते हुए अवकाश के समय में बालक मुहम्मद ईश्वर और उसकी सत्ता के बारे में विचार किया करता था। वयस्क होने पर उन्होंने ऊँट हाँकने तथा ऊँटों के व्यापारिक काफिलों को इधर-उधर ले जाने का काम अपना लिया। एक धनी विधवा बीबी खदीजा ने उनकी ईमानदारी एवं गुणों के कारण उनसे विवाह का प्रस्ताव रखा जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। उस समय मुहम्मद साहब की आयु लगभग 25 वर्ष और बीबी खदीजा की 40 के लगभग थी। विवाह के कुछ वर्षों बाद मुहम्मद साहब

की धार्मिक जिज्ञासा बढ़ती गई। वे बहुधा एकान्त में जाकर ईश्वर और उसकी सत्ता के बारे में विचार किया करते थे। वहाँ उन्हें कई प्रकार के ईश्वरीय चमत्कारों की अनुभूति होने लगी। वे अपने इन अनुभवों को अपनी पत्नी और निकट साथियों को सुनाया करते थे। धीरे-धीरे उनको ऐसा अनुभव होने लगा कि "ईश्वर एक है" तथा संसार में फैली इस धार्मिक अराजकता और अन्धविश्वासों को दूर करने के लिए ईश्वर ने उनको भेजा है। अत: उन्होंने घोषणा की कि "ईश्वर एक है और मैं उसका पैगम्बर हूँ।" इसके साथ ही उन्होंने प्रचलित मूर्ति-पूजा और धार्मिक आडम्बरों एवं अन्धविश्वासों की खुलेआम आलोचना करनी शुरू कर दी। उनकी शिक्षा में यहूदी, ईसाई और हनीफी शिक्षाओं से भिन्न या नया लगभग कुछ नहीं था; उसमें सबसे मुख्य यह कठोर माँग थी कि केवल अल्लाह (एक मात्र ईश्वर) में आस्था रखी जाये और उसकी इच्छा को चुपचाप शिरोधार्य किया जाये। 'इस्लाम' शब्द का अर्थ ही आत्मसमर्पण है। कुरान की सूरत तीन में कहा गया है–"अल्लाह इस बात की गवाही देता है कि उस (एक अल्लाह) के सिवाय कोई भी पूज्य नहीं और फरिश्ते और इल्मवाले भी गवाही देते हैं कि वही इन्साफ के साथ (सब कुछ) सम्भालने वाला है। उसके सिवाय और कोई इलाह (पूज्य) नहीं; वह सर्वशक्तिमान और ज्ञानमय है। बेशक दीन तो अल्लाह के नजदीक है यही इस्लाम (आत्मसमर्पण) है।" परन्तु मुहम्मद साहब के उपदेशों के बारे में आसपास के लोगों, विशेषत: उनकी ही कुरैश जनजाति के बड़े लोगों ने पहले अविश्वास और शत्रुता से भरपूर रवैया दिखाया। व्यापारी अभिजात वर्ग को डर था कि पुराने अरबी जनजातीय देवताओं की पूजा बन्द हो जाने से एक धार्मिक और आर्थिक केन्द्र के रूप में मक्का का महत्त्व खत्म हो जायेगा। उन लोगों ने मिलकर मुहम्मद साहब की हत्या का षडयन्त्र भी रचना शुरू कर दिया। ऐसी स्थिति में मुहम्मद साहब को अपने अनुयायियों के साथ मक्का छोड़कर अपने ननिहाल मदीना जाना पड़ा। यह सन् 622 ई. की बात है और मक्का से जुदाई (हिजरा) को ही मुसलमानों के हिजरी संवत् की शुरुआत माना जाता है।

मदीना के खेतिहर नखलिस्तान में मुहम्मद को अपने विचारों के प्रचार के लिए अनुकूल वातावरण मिला। मदीना वालों की मक्का के अभिजात लोगों से प्रतिस्पर्धा और शत्रुता थी, अत: उन्होंने मुहम्मद साहब का सहर्ष समर्थन किया और बहुत से लोग उनके अनुयायी बन गये, जो 'अन्सार' कहलाये। मदीना में अपना प्रभाव स्थापित करने के बाद मुहम्मद साहब ने अपने अनुयायियों के साथ 630 ई. में मक्का पर आक्रमण कर उसे जीत लिया। पराजित मक्कावासियों ने आत्मसमर्पण कर मुहम्मद के धार्मिक विश्वासों को स्वीकार कर लिया। इससे कुरैशी व्यापारियों तथा सरदारों को नुकसान नहीं हुआ, उल्टे फायदा ही हुआ। मक्का का एक जातीय व धार्मिक केन्द्र के रूप में महत्त्व पहले से भी ज्यादा बढ़ गया। जो कुरैशी पहले मुहम्मद साहब के इस्लाम के आन्दोलन को शत्रुता से देखते थे, वे ही अब इससे जुड़ने लगे और अग्रणी भूमिका निभाने लगे। परिणामस्वरूप लगभग सारा अरब थोड़े ही समय में 'इस्लाम' को मानने लग गया। मक्का इस्लाम का तीर्थ स्थान एवं प्रमुख धार्मिक केन्द्र बन गया। मुहम्मद साहब की बफात (स्वर्गारोहण) सन् 632 ई. में. हुई। उनके उत्तराधिकारी खलीफाओं ने उनके धर्म को दूर-दूर फैलाया।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. इस्लाम के उदय से पूर्व अरब के लोग पारिवारिक एवं कबीलाई ········ की मूर्ति बनाकर पूजा करते थे।
2. ········ सभी मुस्लिमों का तीर्थ-स्थल था।
3. पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब का जन्म सन् ········ में हुआ था।
4. मुहम्मद साहब का विवाह एक धनी ········ बीबी खदीजा के साथ हुआ।

18.2 हजरत मुहम्मद की शिक्षाएँ (Precept of Prophet Mohammed)

जानकारी के स्रोत–मुस्लिम परम्पराओं के अनुसार इस्लाम के संस्थापक पैगम्बर मुहम्मद थे। उनकी गणना संसार के महापुरुषों में होती है। धर्म प्रवर्तक होते हुए भी वे पूर्णतया सांसारिक व्यक्ति और एक राजनेता भी थे। उन्हें अल्लाह की ओर से बहुत से 'इल्हाम' (दिव्य ज्ञान) हुए थे, जो मुसलमानों के धर्मग्रन्थ कुरान में लिखे हुए हैं। कुरान

नोट

मुसलमानों के लिए वही महत्त्व रखता है जो ईसाइयों के लिए न्यू टेस्टामेंट (बाइबिल)। इसे 'कलामे-पाक' भी कहा जाता है। यह स्वयं अल्लाह ताला का कलाम है। यह आसमान से हजरत मुहम्मद पर नाजिल किया (उतारा) गया। यह इस्लाम की बुनियाद और मुसलमानों का ईमान है। मुहम्मद साहब ने स्वयं कुछ नहीं लिखा था। उनके अनुयायी उनकी कही बातों, उनके उपदेशों और प्रवचनों की शायद टीपें तैयार कर लेते थे और उनकी मृत्यु के बाद बिखरी हुई टीपें ही बाकी रहीं। इन टीपों को 650 ई. में (खलीफा उस्मान के काल में) संकलित कर लिया गया और यह संकलन ही कुरान के नाम से जाना जाता है। इसे पैगम्बरों के पास के ईश्वर का आदेश पहुँचाने वाले फरिश्ते जिब्रील द्वारा स्वयं मुहम्मद को लिखायी गयी पवित्र पुस्तक घोषित किया गया। जो टीपें इस संकलन में शामिल न हो पायीं, उन्हें नष्ट कर दिया गया। कुरान शरीफ में 114 सूरतें (अध्याय), 6237 आयतें, 3,22,670 शब्द, 72 मन्जिलें, 30 पारे और 540 खफू हैं। कुरान का महत्त्व बतलाते हुए मुहम्मद साहब ने स्वयं कहा था—"कुरान तुम्हारे पथ-प्रदर्शक का कार्य करे। वही करो जो यह आदेश देती है। जो यह मना करता है, उससे अलग रहो।" स्पष्ट है कि इस्लाम के आरम्भिक इतिहास के अध्ययन के लिए कुरान एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्रोत ग्रन्थ है।

मुसलमानों के धार्मिक साहित्य का दूसरा भाग सुन्नी कहलाता है और उसमें मुहम्मद के जीवन, चमत्कारों और सीखों से सम्बन्धित अनुश्रुतियाँ-हदीसें-शामिल की जाती हैं। हदीसों का संकलन नौवीं शताब्दी में बुखारी, मुस्लिम इब्न अल इज्जाज आदि उलेमाओं ने तैयार किये थे। मुस्लिम उलेमाओं ने कुरान और हदीसों के आधार पर मुहम्मद साहब का जीवन-चरित लिखने का प्रयास किया। उनके उपलब्ध जीवन-चरितों में सबसे पुराना मदीना के निवासी इब्न इसहाक (आठवीं शताब्दी) का लिखा हुआ है।

इस्लाम का धर्म सिद्धान्त—इस्लाम का धर्म सिद्धांत बड़ा सरल है। मुसलमान को इस विश्वास पर अटल होना चाहिए कि 'ला इलाह इल्ललाह मुहम्मदुर्रसूलिल्लाह' अर्थात् "अल्लाह के सिवा और कोई पूजनीय नहीं है तथा मुहम्मद उसके रसूल हैं।" अल्लाह में विश्वास रखने के साथ-साथ यह मानना भी जरूरी है कि मुहम्मद अल्लाह के नबी, रसूल और पैगम्बर हैं। पैगम्बर कहते हैं—पैगाम (संदेश) को ले जाने वाले को, मुहम्मद साहब के माध्यम से ईश्वर का संदेश पृथ्वी पर पहुँचा, इसलिए वे पैगम्बर कहे जाते हैं। नबी कहते हैं किसी उपयोगी परमज्ञान की घोषणा को। मुहम्मद साहब ने चूँकि ऐसी घोषणा की इसलिए ये नबी हुए। रसूल का अर्थ प्रेषित या दूत होता है। मुहम्मद साहब रसूल हैं क्योंकि परमात्मा और मनुष्यों के बीच उन्होंने धर्म का जाप किया।

पाँच धार्मिक कृत्य

1. **कलमा पढ़ना (कल्म-ए-तौहीद)**—अर्थात् इस मन्त्र का परायण करना कि ईश्वर एक है और मुहम्मद उसके रसूल हैं (ला इलाह इल्लिलाह मुहम्मदुर्रसूलिल्लाह)। इस्लाम की एकेश्वरवादी आधारशिला इसी पर टिकी है। इस कल्मे को हृदय तथा वाणी से स्वीकार करना आवश्यक है।
2. **नमाज**—दिन में अनिवार्य रूप से पाँच बार, नियत समय पर नमाज पढ़ना। अर्थात् अल्लाह से प्रार्थना करना। नमाज से पहले और दूषित वस्तुओं के सम्पर्क में आने के बाद वुजू अवश्य करना (हाथ-पाँव, मुँह आदि धोना) शादी, गर्मी, यात्रा, लड़ाई, बेकारी आदि सभी परिस्थितियों में नमाज पढ़ी जा सकती है। नमाज किसी भी परिस्थितियों में मुआफ नहीं हो सकती। नाबालिग बच्चों और पागलों पर नमाज का फर्ज नहीं है।
3. **रोजा**—तीसरा प्रमुख कृत्य रोजा है। रमजान महीने भर केवल एक शाम खाना और वह भी सूर्यास्त के बाद। रमजान महीना इसलिए चुना गया कि इसी महीने में पहले-पहल कुरान उतरा था। सूर्योदय से सूर्यास्त के मध्य खाना-पीना वर्जित है।
4. **जकात**—जकात का अर्थ है—पवित्र करना। जैसे स्नान से शरीर पवित्र होता है, वैसे ही जकात (दान) करने से मुसलमान का धन व माल पवित्र हो जाता है। जकात की मात्रा वार्षिक आय का चालीसवाँ भाग (ढाई प्रतिशत) है।
5. **हज**—अगर अधिक नहीं, तो जीवन में एक बार अवश्य ही हज (मक्का की तीर्थ यात्रा) करना। जिलहज (बकरा ईद का महीना) की नवीं तारीख को 'अरफात' (एक स्थान का नाम) के मैदान में उपस्थित होना भी अनिवार्य है।

नोट

यद्यपि इनमें से कोई भी धार्मिक कृत्य विशेष कठिन या अपूरणीय नहीं है, फिर भी प्रतिकूल परिस्थितियों में ढील दी जा सकती है या उन्हें छोड़ा भी जा सकता है।

उदाहरण– रेगिस्तान में पानी न होने पर वुजू के लिए रेत अथवा मिट्टी इस्तेमाल की जा सकती है; या बीमार और यात्रियों के लिए रमजान के महीने में रोजा रखना अनिवार्य नहीं है और वे बाद में फिर कभी उतने ही दिन रोजा रख सकते हैं।

मुसलमानों की बहुत-सी प्रथाएँ और प्रतिबन्ध बिल्कुल यहूदियों जैसे हैं; जैसे लड़कों का अनिवार्यत: खतना करना (अन्तर इतना है कि मुसलमान सामान्यत: लड़के के सात-दस वर्ष की अवस्था का हो जाने पर करते हैं और यहूदी जन्म के कुछ समय बाद); सूअर का माँस न खाना; ईश्वर की और इसी तरह मनुष्यों अथवा पशुओं की मूर्ति या चित्र बनाने पर कड़ा प्रतिबन्ध, ताकि मूर्तिपूजा के लिए कोई बहाना न रहे। इस्लाम के अनुयायियों के लिए शराब पीना भी मना है; हालाँकि इस नियम का पालन हर कहीं नहीं किया जाता।

इस्लाम का ईश्वर–इस्लाम में ईश्वर (अल्लाह) एक है तथा उसके सिवा किसी और की पूजा नहीं की जानी चाहिए। इस्लाम बहुदेववाद के साथ-साथ मूर्ति पूजा और प्रकृति पूजा का भी विरोधी है। वह ईसाइयों द्वारा प्रतिपादित ईश्वर-त्रय (पिता, पुत्र एवं पवित्र आत्मा) का भी विरोधी है। वह ईसा को पैगम्बर तो मानता है परन्तु ईश्वर पुत्र नहीं, क्योंकि ईश्वर में पुत्र उत्पन्न करने वाले गुणों को जोड़ना उसे मनुष्य कोटि में ले जाना है। इस विश्वास को हटाने के लिये कुरान में बार-बार कहा गया है; "यदि ईश्वर को संतानोत्पादक कहोगे तो आकाश फट जायेगा और धरती उलट जायेगी।" चित्र, मूर्ति और संगीत के प्रति इस्लाम के द्वेष का भी यही कारण था।

इस्लाम का ईश्वर देखने, सुनने, बोलने-चालने, खुश और नाराज होने वाला ईश्वर है। वह कभी लोगों पर नाराज होता है और कभी उन्हें क्षमा करता है। वह कुछ से प्यार करता है और कुछ से नफरत। वह अपने भक्तों की आवाज भी सुनता है और दुष्टों का दमन भी करता है। परन्तु उसके ये सभी कार्य मनुष्यों की भाँति नहीं होते, क्योंकि उसके मनुष्यों की भाँति हाथ-पाँव और नाक-कान आदि नहीं हैं। वह निराकार है परन्तु उसमें असीम शक्ति है और इस शक्ति का वर्णन करने के लिये ही मनुष्य की भाषा का प्रयोग किया जाता है। कुरान यह मानता है कि ईश्वर अर्श (आकाश) पर रहता है और वहाँ उसका सिंहासन भी है। वह प्रेम और दया का सागर है। इसीलिए कुरान का सबसे बड़ा सैद्धान्तिक और नैतिक निर्देश है–अल्लाह की इच्छा के सामने पूर्ण और बिना शर्त आत्मसमर्पण।

देवदूत और शैतान–कुरान देव-योनि को मानता है। कुरान में देवों और देवदूतों का नाम 'मलक' या 'फरिश्ता' है। मनुष्य उन्हें देख नहीं सकता और न वे प्रकट होकर मनुष्यों से सम्पर्क ही रख सकते हैं। ईश्वर, मुहम्मद साहब को जो पैगाम भेजते थे, वे पैगाम कभी-कभी देवदूत जिब्रिल ले आते थे, परन्तु हजरत, जिब्रिल को चर्म चक्षु से नहीं, अपनी आध्यात्मिक दृष्टि से देखते थे। कुरान का कहना है, "धर्म यह है कि मनुष्य अल्लाह, मलायक, कयामत, किताब और नबी में विश्वास करे।" शैतान भी देवताओं की तरह, मलक-योनि का है। किन्तु कुरान शैतान में विश्वास रखने की मनाही करता है।

सावधानी कुरान के अनुसार नीच वासनाएँ मनुष्य के पतन का मार्ग प्रशस्त करती हैं और नीच वासनाओं को उभारने का काम 'जिन' करते हैं। यह 'इबलीस' को इसी जिन-योनि का मानती है। इबलीस मनुष्य को गुमराह करने की कोशिश में लगा रहता है। अत: उससे बचना चाहिए।

कयामत, स्वर्ग और नरक–कुरान शरीफ के अनुसार पृथ्वी पर मनुष्य का जन्म पहला और आखिरी जन्म है। इस जीवन के समाप्त हो जाने पर, मनुष्य की देह जब कब्र में दफना दी जाती है, तब भी उसकी आत्मा एक भिन्न प्रकार के कब्र में भी जीवित पड़ी रहती है और इसी आत्मा को कयामत के दिन उठ कर ईश्वर के समक्ष जाना पड़ता है।

कुरान में कयामत का वर्णन इस प्रकार से किया गया है–"जब कयामत आयेगी, चाँद में रोशनी नहीं रहेगी, सूरज और चाँद सट कर एक हो जायेंगे और मनुष्य यह नहीं समझ सकेगा कि वह किधर जाये और ईश्वर को छोड़कर

नोट

अन्यत्र उसकी कोई भी शरण नहीं होगी।" "जब तारे गुम हो जायेंगे, आकाश टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा, पहाड़ों की धूल उड़ जायेगी और तब नबी अपने निर्धारित क्षण पर पहुँचेंगे।" "न्याय का दिन जरूर आयेगा, जब सुर (तुरही) की आवाज उठेगी, जब तुम सब उठ कर झुंड के झुंड आगे बढ़ोगे और स्वर्ग के दरवाजे खुल जायेंगे।"

कयामत के दिन सभी आत्माएँ भगवान के सामने खड़ी होंगी और मुहम्मद उनके प्रवक्ता होंगे। तब, हर एक रूह के पुण्य और पाप का लेखा-जोखा लिया जायेगा। पुण्य और पाप को तोलने का काम जिब्रिल करेंगे। जिसका पुण्य परिमाण में अधिक होगा, वह स्वर्ग में जायेगा। जिनके पाप अधिक होंगे, वे नरक में पड़ेंगे।

कुरान के अनुसार "स्वर्ग सातवें आकाश (अर्श) पर स्थित है। उसमें एक रमणीय उद्यान है, जहाँ झरने और फव्वारें हैं। दूध और मधु की नदियाँ बहती हैं। ऐसे-ऐसे वृक्ष हैं जिनके तने स्वर्ण के हैं और उनमें रसदिए फल लगते हैं। स्वर्ग में 'हूर-युल-आयून' जाति की सत्तर युवतियाँ हैं जिनकी आँखें काली-काली और बड़ी-बड़ी हैं।" पुण्यात्माओं की सेवा करने के लिये 'गिलमा' जाति के सुन्दर-सुन्दर लड़के भी रहते हैं। संक्षेप में, स्वर्ग का बड़ा ही सुन्दर मनमोहक चित्र उपस्थित किया गया है। इसके विपरीत नरक के अत्यन्त भयानक या विकराल रूप की कल्पना की गई है।

क्या आप जानते हैं कुरान में देवों और देवदूतों का नाम 'मलक' या 'फरिश्ता' है।

कर्मफलवाद में विश्वास–अन्य धर्मों की भाँति इस्लाम भी कर्मफलवाद में विश्वास करता है। ऐसा करने पर ही मनुष्य अपकर्म को छोड़ने का प्रयास करता है अथवा उससे दूर रहता है। कुरान कहता है, "अच्छे और बुरे कर्मों के परिणाम अवश्य मिलेंगे। जिसने भी कण-मात्र भी सुकर्म किया है, वह उसे अपनी आँखों से देखेगा, जिसने भी कण-मात्र भी दुष्कर्म किया है, वह भी उसे अपनी आँखों से देखेगा।" कयामत के बाद स्वर्ग और नरक का निर्णय इसी जन्म में किये गये कर्मों के फलानुसार ही होता है। कुरान स्पष्ट शब्दों में कहता है, "अगर तुम ज्ञान से देखते तो तुम यहीं नरक को भी देख सकते थे।" कुरान मनुष्य जीवन का लक्ष्य 'लिका-अल्लाह' (ईश्वर मिलन) को मानता है। यह मिलन सम्भवत: सुकर्मों के द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

ईमान और कुफ्र–कुरान शरीफ में दो शब्दों-ईमान और अमल का उल्लेख मिलता है। विद्वानों की मान्यता है कि ईमान का अर्थ 'उसूल' अथवा 'अमल' से लिया जाना चाहिए। उसूल वे धार्मिक सिद्धान्त हैं जिन्हें नबी ने बताया है। अमल का अर्थ है उन उसूलों को अपनाना तथा उन पर अमल करना। कुरान में ईमान की 60 शाखाएँ बतलाई गई हैं जबकि हदीस 70 शाखाओं की बात कहता है। सबसे ऊँची यह कि अल्लाह को छोड़कर और किसी की पूजा मत करो और सबसे बाद यह कि जिन बातों से किसी का नुकसान होता हो, उन्हें छोड़ दो। नबी द्वारा उद्घोषित सत्य को नकारना अथवा उसपर विश्वास न करना 'कुफ्र' कहलाता है। कुफ्र का सबसे बुरा रूप 'शिर्क' है जिससे मनुष्य ईश्वर के अलावा और देवताओं को भी ईश्वर मान लेता है अथवा उनमें ईश्वरीय गुणों का आरोप करता है। शिर्क का सबसे बुरा रूप मूर्ति पूजा है।

मुहम्मद साहब का सबसे अधिक जोर ईश्वर को एक, केवल एक मानने पर था। उन्होंने कहा है, "मैं सिर्फ यह कहने आया हूँ कि ईश्वर एक है और केवल उसी की पूजा की जानी चाहिए।"

संसार के धर्मों में इस्लाम ही ऐसा धर्म है जिसका विषय केवल व्यक्ति नहीं सारा समाज है। कुरान में मनुष्य-मनुष्य के विविध सम्बन्ध, राजनीतिक व्यवहार तथा आचरण, न्याय, प्रशासन, सैन्य-संगठन, विवाह, तलाक, शान्ति, युद्ध, कर्ज, सूदखोरी, दान आदि के सम्बन्ध में भी धार्मिक उपदेश है। जिनका पालन धार्मिक नियमों के समान ही आवश्यक माना जाता है। उदाहरणार्थ, इस्लाम सूदखोरी को पाप समझता है, एक साथ चार स्त्रियों से अधिक रखना बुरा मानता है और शराब पीने का निषेध करता है।

नैतिक सिद्धान्त–इस्लाम के नैतिक सिद्धान्त बड़े ही सरल हैं। मुसलमानों से न्यायी होने, भलाई का बदला भलाई से और बुराई का बदला बुराई से चुकाने, उदारता दिखाने, गरीबों की मदद करने आदि की अपेक्षा की जाती है। इस्लाम में ऐसे कोई नैतिक नियम नहीं हैं जिन पर अमल न किया जा सके।

नोट

इस्लाम के पारिवारिक नैतिकता और स्त्री-पुरुषों के आपसी सम्बन्धों के बारे में विचारों पर पितृसत्तात्मक-गोत्रीय जीवन पद्धति की छाप है। स्त्री को अल्लाह ने पुरुष के उपभोग के लिए बनाया है और उसे दब कर रहना चाहिए। मगर, दूसरी ओर, कुरान में स्त्रियों के मानवीय और नागरिक अधिकारों को मान्यता भी दी गई है। पति द्वारा पत्नी से अनावश्यक क्रूर व्यवहार किये जाने की निन्दा की गयी है। स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार, दहेज का अधिकार और दयाधिकार प्रदान किये गये हैं। अरबों की पितृसत्तात्मक प्रथागत विधि से आगे बढ़कर कुरान ने स्त्रियों की स्थिति को काफी बेहतर बना दिया।

अल्लाह के सामने सभी मुसलमान बराबर हैं; मगर साम्पत्तिक अन्तरों को, अमीरी और गरीबी को प्राकृतिक चीजें माना गया है, जिन्हें स्वयं अल्लाह ने बनाया है। गरीबों के लिये दिये जाने वाले जकात का उद्देश्य जैसे कि साम्पत्तिक विषमता को कम करना है। कुरान निजी सम्पत्ति की संस्था का समर्थन करता है। व्यापारिक मुनाफे को सर्वथा न्यायसंगत माना गया है, जबकि सूदखोरी की निन्दा की गयी है–"बेचने (व्यापार) को तो अल्लाह ने हलाल (जाइज) किया है और सूद (ब्याज) को हराम (नाजाइज)।" कर्जदार को बन्धुआ बनाने की सख्त मनाही कर दी गयी।

संक्षेप में, इस्लाम की विचारधारा सरल थी और आसानी से समझ में आ जाती थी। उसके निर्देश भी कठिन नहीं थे और सहजता से पूरे किये जा सकते थे। हजरत मुहम्मद की शिक्षाओं तथा उनके द्वारा प्रवर्तित धर्म की विशेषता यह है कि यह दार्शनिक उलझनों के चक्कर में न पड़कर व्यावहारिकता पर अधिक जोर देता है। इस धर्म में पुरोहित की कोई आवश्यकता नहीं। इसमें कोई बात ऐसी नहीं है जो मनुष्य की बुद्धि से परे हो, इसमें आचरण की शुद्धता और बन्धुत्व की भावना पर जोर दिया गया है।

मुहम्मद साहब की शिक्षाओं पर समकालीन यहूदी तथा ईसाई धर्मों का प्रभाव देखने को मिलता है। उन्होंने इन धर्मों के अच्छे तत्वों का इस्लाम में समावेश किया। इसी प्रकार उन्होंने अरबों के पुराने विचारों और प्रथाओं को भी स्थान दिया। सम्भवत: काबा और मक्का का महत्त्व इसी का परिणाम रहा हो। चार स्त्रियों को रखने के पीछे भी अरबों में प्रचलित बहुपत्नी प्रथा कारण रही हो। इसीलिए कुछ विद्वानों का मानना है कि हजरत मुहम्मद एक बहुत बड़े समाज सुधारक भी थे। उन्होंने अरबों के प्रचलित धर्म तथा समाज की बुराइयों को दूर करने का प्रयत्न किया।

जिहाद–इस्लाम का एक निर्देश धर्म की खातिर पवित्र युद्ध (जिहाद) से सम्बन्ध रखता है। कुरान में इस निर्देश को स्पष्टत: सूत्रबद्ध किया गया है–वर्ष में आठ मास (अन्य चार मास वर्जित माने जाते हैं) बहुदेववादियों और विधर्मियों से लड़ना, उनका संहार करना और उनकी जमीन-जायदाद को छीन लेना चाहिए। मगर आगे चलकर मुस्लिम धर्मशास्त्रियों और अन्य विद्वानों ने जिहाद से सम्बन्धित निर्देश की अलग-अलग ढंग से व्याख्या की। बहुदेवपूजक धर्मों के अनुयायियों के बारे में कुरान का रवैया बहुत ही सख्त है। उसमें कहा गया है, "ऐ ईमानवालों! अपने आसपास के काफिरों से लड़ जाओ जिससे कि वह तुमसे अपनी बाबत सख्ती महसूस करे और जानो कि अल्लाह उन लोगों का साथी है जो अल्लाह से डरते हैं।" मगर 'किताबवालों' अर्थात् यहूदियों और ईसाइयों के प्रति कुरान थोड़ा उदार है। फिर भी कुरान में 'किताबवालों' के साथ भी लड़ने का आदेश दिया गया है, यदि वे अल्लाह को नहीं मानते और सच्चे धर्म के आगे नहीं झुकते हैं। सम्भवत: इसका कारण सम्पूर्ण संसार को एक राज्य और एक धर्म के अधीन लाना था। क्लेन नामक एक विद्वान् ने जिहाद का अर्थ 'संघर्ष' बताया है और इस संघर्ष के उसने तीन क्षेत्र माने हैं–(1) दृश्य शत्रु के विरुद्ध संघर्ष, (2) अदृश्य शत्रु (जिन) के विरुद्ध संघर्ष और (3) इन्द्रियों के विरुद्ध संघर्ष। कुछ विद्वानों का मानना है कि इस्लाम के प्रचार के लिए जो लड़ाइयाँ लड़ी गयीं, उन्हें पवित्र विशेषण देने के लिए ही इस शब्द का प्रचलन किया गया। मुहम्मद अली (रिलीजन ऑफ इस्लाम के लेखक) का मत है कि इस शब्द का अर्थ इस्लाम के प्रचार के लिए युद्ध करना नहीं है; इसका अर्थ परिश्रम, उद्योग या सामान्य संघर्ष ही है। हदीस में हज की गिनती भी जिहाद के रूप में की गई है–"नबी ने कहा है कि सबसे अच्छा जिहाद हज में जाना है।" मगर व्यवहार में, आगे चलकर काजियों ने जिहाद का अर्थ युद्ध कर दिया। उन्होंने सारे संसार को दो हिस्सों में बाँट दिया–(1) दारूल-इस्लाम (जिस हिस्से पर मुसलमानों की हकूमत थी, उसे शांति का देश कहा गया और (2) दारूल-हरब (युद्ध-स्थल) जिस हिस्से पर गैर-मुसलमानों की हकूमत थी। उन्होंने मुसलमानों की धार्मिक भावना को उत्तेजित किया कि ऐसे देशों को जीत कर इस्लाम का झण्डा गाड़ना जिहादियों का परम कर्त्तव्य है।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions)–

5. मुहम्मद साहब ने अपने अनुयायियों के साथ ………… ई. में मक्का पर आक्रमण कर उसे जीत लिया।
   (क) 620 (ख) 630
   (ग) 625 (घ) 635
6. कुरान ………… की बुनियाद है।
   (क) ईसाई (ख) हिन्दू
   (ग) इस्लाम (घ) खालसा
7. ………… में सूर्योदय से सूर्यास्त तक खाना पीना मना है।
   (क) जकात (ख) रोजा
   (ग) नमाज (घ) ईद
8. ………… के अनुसार पृथ्वी पर मनुष्य का जन्म पहला और आखिरी जन्म है।
   (क) रामायण (ख) बाइबिल
   (ग) महाभारत (घ) कुरान शरीफ।

18.3 सुन्नी-शिया सम्प्रदाय (Sunni and Shia Section)

इस्लाम में सबसे बड़ा और एक सबसे शुरू का विभाजन 'शिया' मत के प्रकट होने का परिणाम था। अरबी शब्द 'शिया' का अर्थ है—दल, सम्प्रदाय अथवा संघ-भेद। बहुत से विद्वानों का मानना है कि शिया आन्दोलन विजेता अरबों के विरुद्ध ईरानियों के असन्तोष तथा संघर्ष की अभिव्यक्ति था। यह आंशिकत: सही भी है; मगर शिया मत ऐसा तुरन्त नहीं, बल्कि बाद में जाकर बना। आरम्भ में स्वयं अरबों के बीच, हजरत मुहम्मद के उत्तराधिकारियों के बीच सत्ता के लिए संघर्ष से हुआ था। मुहम्मद साहब के कोई पुत्र नहीं था, केवल एक बेटी थी जिसका नाम फातिमा था। फातिमा बीबी का विवाह हजरत अली से हुआ था। हजरत मुहम्मद साहब के बाद खिलाफत (धर्म-राज्य) पद पर हजरत अली की जगह अबूबक्र को चुन लिया गया। यहीं से विवाद शुरू हुआ। हजरत अली के दल (शिया) का तर्क था कि उत्तराधिकार हजरत मुहम्मद के चचेरे भाई एवं दामाद अली को मिलना चाहिए। वे लोग पूर्ववर्ती खलीफाओं को मुहम्मद साहब का वैध उत्तराधिकारी नहीं मानते थे; क्योंकि वे पैगम्बर साहब के वंश के न होकर धार्मिक समुदाय द्वारा 'चुने हुए' थे। अर्थात् उन्होंने सीधे-सीधे सत्ता पर अनाधिकार कब्जा किया था। शिया मत की मुख्य विशेषता इस बात में विश्वास है कि पैगम्बर साहब के वैध उत्तराधिकारी-इमाम-केवल उनके गोत्र के ही लोग हो सकते हैं। इस कारण शिया मतावलम्बी सुन्नी को नहीं मानते हैं, जिसकी रचना पहले खलीफाओं (अबूबक्र, उमर और उस्मान) के शासनकाल में पैगम्बर विषयक अनुश्रुतियों से हुई थी। हजरत अली चौथे खलीफा हुए। परन्तु शिया लोग खलीफाओं की गणना यहीं से प्रारम्भ करते हैं। 'सुन्नी' को मानने वाले तथा अबूबक्र से खलीफाओं की गणना करने वाले सुन्नी कहलाये। इस्लामी समाज में सुन्नियों का बहुमत है। ईरान और इराक में शियाओं का बहुमत है। शिया अनुश्रुतियों के अनुसार हजरत अली और उनको दो पुत्र-हसन और हुसैन दीन की खातिर शहीद हुए थे। उनकी शहादत की याद में शिया लोग हर वर्ष मुहर्रम के महीने में शोक मनाते हैं।

18.4 इस्लाम धर्म के शीघ्र प्रसार के कारण (Causes for Fast Spread of Islam)

अरब के एक छोटे से नगर में उत्पन्न इस्लाम धर्म कुछ ही सदियों में विश्व की सबसे बड़ी ताकतों में से एक हो गया, यह वास्तव में एक आश्चर्यजनक घटना है। परन्तु यदि उस समय के विभिन्न देशों की सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक स्थितियों का अध्ययन करें तो इस्लाम की इस आश्चर्यजनक सफलता के कई कारण स्वयं ही

दृष्टिगत हो जाते हैं। श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है–"जहाँ-जहाँ इस्लाम के उपासक गए, उन्होंने विरोधी सम्प्रदाय के सामने तीन रास्ते रखे–या तो कुरान हाथ में लो और इस्लाम कबूल करो या कर दो और अधीनता स्वीकार करो अथवा दोनों में से कोई बात पसन्द न हो तो तुम्हारे गले पर गिरने के लिए हमारी तलवार प्रस्तुत है।" ये बड़े ही कारगर उपाय रहे होंगे, किन्तु यह समझ में नहीं आता कि सिर्फ इन्हीं उपायों से इस्लाम इतनी जल्दी कैसे फैल गया।

कुछ अन्य विद्वानों का मानना है कि युद्ध करने वाले मुसलमानों के लिए कुरान का आश्वासन था कि उनके पाप क्षमा कर दिए जायेंगे और उन्हें स्वर्ग में खूब आनन्द प्राप्त होगा। किन्तु इस्लाम की सफलता का यह एकमात्र कारण नहीं था। उसकी सफलता के लिए अन्य बहुत से कारण उत्तरदायी थे।

(1) **तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति**–पहला मुख्य कारण अरब की तत्कालीन सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति थी। उस समय सारा अरब अन्धविश्वास, सामाजिक कुरीतियों और दुराचार का केन्द्र बना हुआ था। अरबों में निर्धनता का बोलबाला था जिसकी वजह से उसमें लोभ भी बहुत बढ़ा हुआ था और धन प्राप्त करने का हर उपाय अच्छा समझा जाता था। जुआ, शराबखोरी और वेश्यागमन भयंकर रूप से प्रचलित थे। विवाह जैसी पवित्र संस्था का महत्त्व भी जाता रहा और समाज में यौन-सम्बंधों की कोई नैतिक व्यवस्था नहीं रह गई थी। समस्त अरब लोग बहुदेववादी और घोर रूप से मूर्तिपूजक थे। ऐसी स्थिति में जब मुहम्मद साहब ने अन्धविश्वासों से रहित आडम्बरहीन, सरल एवं बोधगम्य, एक निराकार ईश्वर की उपासना वाला इस्लाम धर्म चलाया तो वह शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया।

(2) **सामाजिक एवं धार्मिक समानता**–दूसरा मुख्य कारण इस्लाम की सामाजिक एवं धार्मिक समानता की विचारधारा है। इस्लाम में प्रत्येक व्यक्ति के सामाजिक एवं धार्मिक अधिकार एक समान माने गये हैं। किसी प्रकार का भेदभाव नहीं है। इस बराबरी वाले सिद्धान्त के कारण इस्लाम की लोकप्रियता बहुत बढ़ गयी और जिस समाज में भी निम्न स्तर के लोग उच्च स्तर वालों के धार्मिक या सामाजिक अत्याचार से पीड़ित थे, उस समाज के निम्न स्तर के लोगों के बीच यह धर्म आसानी से फैल गया।

(3) **रोम और फारस की पतनोन्मुख स्थिति**–तीसरा मुख्य कारण तत्कालीन रोम और फारस की पतनोन्मुख स्थिति और ईसाइयत का अन्धविश्वास था। रोमन साम्राज्य खोखला हो चुका था और उसके भीतर विलासिता और भोगाचार पाप की सीमा तक पहुँचे हुए थे। ईरानी साम्राज्य भी विलासिता की दलदल में डूबा हुआ था। राज्य के अधिकारी और धर्माधिकारी दोनों मिलकर जनता का जी-भरकर शोषण करने में लगे हुए थे। इसीलिए, जैसाकि मानवेन्द्र राय ने लिखा है, "अरब आक्रमणकारी वीर जहाँ भी गये, जनता ने उन्हें अपना रक्षक और त्राता मानकर उनका स्वागत किया; क्योंकि जनता कहीं तो रोमन शासकों के भ्रष्टाचार के नीचे पिस रही थी, कहीं ईरानी तानाशाहों के जुल्मों से त्रस्त थी और कहीं ईसाइयत का अन्धविश्वास उसे जकड़े हुए था।"

(4) **राजनीति और धर्म का समन्वय**–चौथा मुख्य कारण राजनीति और धर्म का समन्वय था। प्रारम्भिक इस्लामी संगठन में राजनीति और धर्म-दोनों एक स्थान पर आकर मिल गये थे। खलीफा लोग राजनीतिक क्षेत्र की सर्वोच्च शक्ति थे, तो धार्मिक क्षेत्र में भी सर्वोच्च अधिकारी थे।

(5) **धन की लालसा**–इस्लाम के शीघ्र प्रसार का एक मुख्य कारण अरबों की आर्थिक स्थिति थी। जैसाकि पहले बताया जा चुका है कि छठी शताब्दी में अरब में कारवाँ व्यापार का ह्रास शुरू हो गया जिससे आर्थिक संतुलन भंग हो गया। कारवांओं से होने वाली आमदनी गँवाकर खानाबदोश अरब स्थायी जीवन अपनाने और कृषि का धंधा करने लगे। जमीन की माँग बढ़ती गई और इसके लिए अपने पड़ोसी राज्यों की उपजाऊ भूमि को हस्तगत करना सबसे सरल साधन था। लाखों लोगों ने भी इस्लाम को इसलिए स्वीकार कर लिया था कि उन्हें कर नहीं चुकाना पड़ेगा। इतना ही नहीं, धर्म परिवर्तन से वे इस्लामी राज्य में नौकरियाँ प्राप्त करने के पात्र भी बन जाते थे। यदि वे दास अथवा अर्द्ध दास (सर्फ) होते तो धर्म परिवर्तन से स्वतन्त्रता भी प्राप्त कर लेते थे। ये कुछ ऐसे आकर्षण थे जिन्होंने इस्लाम की सफलता में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

नोट

(6) **प्रारम्भिक खलीफाओं का असाधारण व्यक्तिगत**–अन्तिम कारण इस्लाम के प्रारम्भिक नेताओं का महान व्यक्तित्व तथा आदर्शपूर्ण जीवन था। अबूबक्र, उमर, उस्मान और अली-ये नबी के चुने हुए साथी थे और उन्होंने भी उनकी ही तरह अभाव और दरिद्रता में जीवन बिताया। उनके न तो महल या अंगरक्षक थे और न समसामयिक बादशाहों जैसे ठाठ-बाट थे, जबकि उनके एक इशारे पर इन सबकी व्यवस्था हो सकती थी। प्रत्येक नागरिक सीधे उन तक बेरोक-टोक पहुँच सकता था। उन्होंने सादगी, सच्चरित्रता, वीरता और वैराग्य का ऐसा सुन्दर उदाहरण उपस्थित किया कि इस्लाम का आचार पक्ष बहुत ऊँचा उठ गया। सैनिक अभियान हो अथवा तीर्थ यात्रा, ये खलीफा लोग सर्वत्र न्याय प्रदान करते चलते थे। उन्होंने अरबों में प्रचलित कुरीतियों को दूर किया और राज्य के कर्मचारियों को निर्दयी एवं जुल्मी होने से रोका तथा उन्हें भोग-विलासिता से दूर रखा। कुछ खलीफा तो बड़े ही दक्ष सेनापति तथा कुशल सैन्य-संचालक भी थे। इन्हीं सब कारणों के फलस्वरूप इस्लाम का प्रसार सम्भव हो पाया था और वह विश्व के प्रमुख धर्मों में से एक बन सका।

18.5 इस्लामी साम्राज्य का प्रसार, खिलाफत का उदय : प्रथम चार खलीफे (Expansion of Islam Empire, Rise of Khilafat : First four Khalifas)

जब तक हजरत मुहम्मद जीवित रहे वे पैगम्बर, कानून निर्माता, धर्मगुरू, प्रधान न्यायाधीश, प्रधान सेनापति और राज्याध्यक्ष के सभी कार्यों का निर्वाह करते रहे, परन्तु उनके देहावसान के बाद मुसलमानों के सन्मुख उनके उत्तराधिकार की गम्भीर समस्या उठ खड़ी हुई। आध्यात्मिक कार्य के अलावा अन्य सभी बातों के लिए उनका उत्तराधिकारी अर्थात् खलीफा कौन बने या किसे बनाया जाये?

मुहम्मद साहब अपने पीछे कोई पुत्र नहीं छोड़ गये थे। उनके बाद उनकी एकमात्र पुत्री बीबी फातिमा ही जीवित थी जिनका विवाह हजरत अली के साथ हुआ था। परन्तु अरब सरदारों में उत्तराधिकार का नियम केवल वंश परम्परा पर ही आधारित नहीं था। यह निर्वाचनात्मक था जिसमें जनजातीय वरीयता क्रम को प्राथमिकता प्राप्त थी। इसलिए यदि पैगम्बर साहब के पुत्र भी जीवित रहे होते तो भी उत्तराधिकार की समस्या इतनी सरल नहीं रहती। अपनी मृत्यु के पूर्व मुहम्मद साहब किसी को अपना उत्तराधिकारी भी मनोनीत नहीं कर गये थे। यही कारण है कि उनकी मृत्यु के बाद इस्लामी जगत में उनके उत्तराधिकार को लेकर परस्पर विरोधी मत उभरकर सामने आ गये। एक तरफ वे लोग थे जो अपने आपको हजरत मुहम्मद की जनजाति का सदस्य होने तथा सबसे पहले इस्लाम को अपनाने के लिए अपना दावा प्रस्तुत कर रहे थे। दूसरी तरफ मदीना वाले वे लोग जिनका कहना था कि यदि उन्होंने हजरत को सहयोग एवं समर्थन नहीं दिया होता तो इस्लाम एकान्त में ही बिखर जाता। इसके बाद वैधतावादी आये। उनका तर्क था कि अल्लाह और पैगम्बर निष्ठावानों के समुदाय को मतदाताओं की अस्थिरता एवं अवसरवादिता के लिए नहीं छोड़ सकते थे, अत: उन्होंने अवश्य ही नेतृत्व की स्पष्ट व्यवस्था की होगी। उनकी दृष्टि में इस प्रकार का विधि सम्मत नेता हजरत अली ही हो सकते हैं, जो कि हजरत की एकमात्र जीवित पुत्री के पति के साथ-साथ इस्लाम की दीक्षा लेने वाले प्रथम तीन व्यक्तियों में से भी एक हैं। प्रथम दोनों विचारधाराओं के निर्वाचन सिद्धान्त के विरुद्ध यह दल दैवी अधिकार के नियम का समर्थक था और अन्त में कुरैश तथा उम्माद सरदार थे। इस्लाम के उदय के पूर्व शासन, सत्ता और दौलत पर इन्हीं लोगों का अधिकार था। यद्यपि इन लोगों ने बाद में इस्लाम स्वीकार किया था, परन्तु उत्तराधिकार की दौड़ में ये लोग भी पीछे नहीं रहे।

उत्तराधिकार संघर्ष में प्रथम विचारधारा वाले दल की विजय हुई। हजरत मुहम्मद के ससुर और इस्लाम की दीक्षा लेने वालों में अग्रणी, बुजुर्ग एवं धर्मनिष्ठ अबूबक्र को एकत्रित सरदारों ने अपना समर्थन प्रदान कर उन्हें मुहम्मद साहब का उत्तराधिकारी (खलीफा) निर्वाचित कर लिया।

प्रथम चार खलीफाओं के समय को धर्मनिष्ठ अथवा पितृतंत्री खिलाफत कहा जाता है। सुन्नी मुसलमानों का इन चारों खलीफाओं के प्रति बड़ा स्निग्ध सम्मान है। ये खलीफा हैं–अबूबक्र (632 से 634 ई.), उमर (634 से 644 ई.), उस्मान (644 से 656 ई.) और अली (656 से 661 ई.)। ये सभी नबी के चुने हुए साथी (साहिब) थे और उन्होंने

नोट

भी उनकी ही तरह अभाव और दरिद्रता में जीवन बिताया। उन्हें इज्तिहाद अथवा व्याख्यात्मक विधि निर्माण का अधिकार था और सुन्नी कुछ महत्त्वपूर्ण बातों में उनके निर्णय अनुल्लंघनीय, मानते हैं। धर्मनिष्ठ खिलाफत ने इस्लाम को पुष्ट और उसका प्रसार किया।

अबूबक्र (632 से 634 ई.)—प्रथम खलीफा अबूबक्र की राजधानी मदीना रही। अरब इतिहासकारों के अनुसार हजरत मुहम्मद की मृत्यु के तत्काल बाद मदीना, मक्का और थाइफ नगरों को छोड़कर समूचे अरब में इस्लाम के नवोदित संगठित राज्य के विरुद्ध विद्रोह उठ खड़ा हुआ। वास्तव में यातायात के सुगम मार्गों तथा संचार साधनों के अभाव, धर्म प्रचार कार्य के संगठित उपायों की कमी और समयाभाव के कारण हजरत मुहम्मद के जीवनकाल में लगभग आधा अरब क्षेत्र ही नये धर्म और राज्य के संरक्षण में आ पाया था। परन्तु अबूबक्र के नेतृत्व में एक के बाद एक लड़े गये निर्णायक युद्धों में अलगाववादियों के विद्रोह को पूरी तरह से कुचल दिया गया। इन युद्धों में अबू बक्र के सेनापति खालिद बिन अल वालिद ने सैन्य नेतृत्व की अनुपम योग्यता का प्रदर्शन किया। उसके प्रयत्नों से इस्लाम की एकता कायम की गई और अब इस्लाम आगे बढ़ने के लिये तैयार था।

अरब प्रायद्वीप का विजेता और इस्लाम की नींव और एकता को सुदृढ़ करने वाला अबूबक्र पितृतन्त्रात्मक सादगी के साथ जीवन बिताने वाला व्यक्ति था। अपने अल्प शासन के प्रारम्भिक छः महीने तक वह अपने पैतृक स्थान अल-सुनह में अपनी बीवी हबीबा के साथ साधारण मकान में ही रहा। वहाँ से वह प्रतिदिन अपनी राजधानी मदीना आता-जाता था और इसके लिये उसे किसी प्रकार का भत्ता नहीं मिलता था; क्योंकि उस समय में राज्य की आमदनी नाममात्र की थी। मदीना में हजरत मुहम्मद की मस्जिद के आँगन में ही अन्य साथियों के परामर्श से वह राजकाज किया करते थे। मदीना का कोई भी नागरिक सीधे उन तक पहुँच सकता था। अपनी मृत्यु के पूर्व वे उमर को अपना उत्तराधिकारी मानोनीत कर गये। लोगों ने उमर को मान्य किया।

उमर (634 से 644 ई.)—खलीफा उमर लम्बे कद तथा हृष्ट-पुष्ट शरीर वाले व्यक्ति थे। उनका व्यवहार अत्यधिक विनम्र एवं मिलनसार था। खलीफा बनने के बाद भी उन्हें व्यापार के द्वारा अपनी जीविका का साधन जुटाना पड़ा। अपने शेष जीवन में भी वे एक सामान्य अरब शेख की भाँति ही रहे। मुस्लिम परम्परा में हजरत मुहम्मद के बाद उमर का नाम ही अत्यधिक सम्मान के साथ लिया जाता है। मुस्लिम लेखकों ने उनकी दयालुता, न्यायप्रियता और पितृतंत्रात्मक सादगी के लिये उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए लिखा है कि उमर ने उन समस्त गुणों का प्रदर्शन किया जो कि एक खलीफा में होने चाहिए। उनके पास पहनने के लिए एक ही कुर्त्ता और ओढ़ने के लिए एक ही वस्त्र था और दोनों ही पैबन्दों के कारण प्रसिद्ध थे। घास-फूस और पत्तियाँ ही उनकी शय्या थी और उनके जीवन का एक ही उद्देश्य था—अरब और इस्लाम की सुरक्षा और उसके प्रभुत्व की वृद्धि। उमर अपनी कठोरता के लिए भी विख्यात थे। शराब पीने तथा अनैतिक कृत्य में लिप्त होने पर उन्होंने अपने ही पुत्र को मौत की सजा दी थी।

उमर के शासन काल में इस्लाम का विजय अभियान शुरू हुआ। सर्वप्रथम, अरब प्रायद्वीप के उत्तर में स्थित सीरिया पर आक्रमण किया गया। इस समय सीरिया क्षेत्र पर बाइजेन्टियन साम्राज्य का अधिकार था। उस साम्राज्य के सैनिक अधिकारी अरबों की गतिविधियों का सही अनुमान नहीं लगा पाये और उन्हें सीमावर्ती लुटेरे मात्र समझ बैठे, परन्तु शीघ्र ही उन्हें पता चल गया कि उनके शत्रु एक नये उत्साह और उत्तम गतिशीलता के धनी हैं। उनके साथ रेगिस्तानी ऊँटों का सैनिक दस्ता था जिसको रोकना कठिन काम था। पहली मुठभेड़ में अरबों को पीछे हटना पड़ा। इसकी सूचना मिलते ही निचले इराक से सेनानायक खालिद ने द्रुतगति से रेगिस्तान को पार किया और सीरिया की राजधानी ने आत्मसमर्पण कर दिया। आस-पास के अन्य नगरों पर भी इस्लामी सेना का अधिकार हो गया। मुसलमानों का सामना करने के लिये पूर्वी साम्राज्य के शासक हेराक्लीज ने 50,000 सैनिकों की एक शक्तिशाली सेना भेजी। जोर्डन नदी की एक सहायक नदी यारमुक की घाटी में खालिद ने अपने 20-25 हजार सैनिकों के साथ उसका सामना किया और 20 अगस्त, 636 ई. के दिन उसे बुरी तरह से पराजित किया। इसके बाद मुस्लिम सेना को प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा और सीरिया के प्राकृतिक सीमान्त टोरस पर्वतमाला तक सम्पूर्ण क्षेत्र उसके अधिकार में आ गया। इस प्रारम्भिक परन्तु सामरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण विजय ने इस्लामी सेना के उत्साह को तो बढ़ाया ही साथ ही उसकी सैनिक प्रतिष्ठा भी जम गई। सीरिया को आधार बना कर इस्लामी सेना के लिए आर्मीनिया, उत्तरी मेसोपोटामिया,

नोट

जार्जिया आदि की तरफ बढ़ना सुगम हो गया। कुछ ही वर्षों में सम्पूर्ण इराक पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। इसके बाद अल्लाह के सैनिकों ने फारस की तरफ अपना ध्यान केन्द्रित किया। 637 ई. में एक विशाल सासानी सेना को अरबों के हाथों बुरी तरह पराजित होकर भागना पड़ा और तिगरस नदी के पश्चिम में स्थित इराक का सम्पूर्ण निचला क्षेत्र आक्रमणकारियों के अधिकार में चला गया। इसके बाद आक्रमणकारियों ने उफनती हुई तिगरस को पार किया। सीरिया की भाँति यहाँ के स्थानीय लोगों ने भी अरब विजेताओं का स्वागत किया, क्योंकि दोनों ही क्षेत्रों के लोगों ने अपने पुराने विदेशी शासकों के शासन को कभी पसन्द नहीं किया था। फारसी (पर्शियन) सम्राट और उसकी सेना बिना युद्ध लड़े ही अपनी राजधानी को असहाय छोड़कर भाग खड़ी हुई। मुसलमानों ने एशिया के इस मुख्य नगर में धूम-धाम के साथ प्रवेश किया। कुछ दिनों बाद ही, पर्शियन सम्राट की हत्या कर दी गई और विगत बारह सदियों से ईरान तथा इराक पर शासन करने वाले राजवंश का अन्त हो गया। सम्पूर्ण फारस मुसलमानों के अधिकार में चला गया।

अब मरुभूमि के पुत्र पहली बार सुख-सुविधा और विलासिता के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आये। अपने वैभवपूर्ण दीवाने-आम, आकर्षक मेहराबों और मूल्यवान फर्नीचर तथा साज-सज्जा से युक्त राजप्रासाद को देखकर अरब पुत्र अपने रेगिस्तान के मिट्टी से बने आवासों की तुलना करके अवाक् रह गये। उनके सभ्य जीवन की प्रारम्भिक शिक्षा शुरू हुई और जैसाकि एक इतिहासकार ने लिखा है–"फारस विजय से पूर्व अरबों ने कभी कपूर नहीं देखा था। यहाँ उन्होंने भ्रमवश उसे नमक समझकर सब्जी पकाने के काम में लेना शुरू कर दिया।" कुछ सैनिकों ने स्वर्ण को चाँदी से बदल लिया क्योंकि वे सोने की उपयोगिता तथा कीमत से अपरिचित थे।

इराक की सीमा को पार करने के बाद मध्यवर्ती फारस में अरबों को जबरदस्त विरोध का सामना करना पड़ा और शेष फारस को जीतने में उन्हें लगभग दस वर्ष लग गये। 643 ई. में अरब लोग भारत के सीमावर्ती क्षेत्र तक आ पहुँचे, जबकि पूर्व में इस्लाम का विजय अभियान जारी रहा। पश्चिम में भी उनका विजय अभियान काफी सफल रहा। अब उसका ध्येय मिस्र था। मिस्र की सामरिक स्थिति सीरिया और हेजाज के लिए खतरनाक थी। यहाँ की उर्वरा भूमि कुस्तुनतुनिया का अन्न-भण्डार था, यहाँ की तत्कालीन राजधानी सिकन्दरिया बाइजेण्टियन नौ-सेना का आधार थी और मिस्र शेष उत्तरी अफ्रीका की विजय का प्रवेश द्वार था। इन सभी कारणों ने अरबों को अपने प्रसार के प्रारम्भिक काल से ही मिस्र को जीतने की प्रेरणा प्रदान की। अपने सुप्रसिद्ध प्रतिस्पर्धी खालिद से भी अधिक प्रतिष्ठा अर्जित करने की कामना संजोये अम्र बिन-उल-अस ने अपने चार हजार सवारों के साथ मिस्र पर धावा बोल दिया। देखते-देखते मिस्र का बहुत बड़ा क्षेत्र अरबों के अधिकार में आया। इस प्रारम्भिक सफलता से उत्साहित खलीफा ने उमर की सहायता के लिये और कुमक भेज दी। इससे उसके सैनिकों की संख्या 20,000 तक पहुँच गई। अपनी इस विशाल सेना के साथ उसने मिस्र की राजधानी तथा प्रमुख बन्दरगाह सिकन्दरिया को घेरा। कहा जाता है कि उस समय सिकन्दरिया की सुरक्षा के लिए 50,000 सैनिक तैनात थे। इनके अलावा, बन्दरगाह की सुरक्षा के लिए बाइजेण्टियन नौ-सेना भी थी। इसके विपरीत आक्रमणकारी अरबों के पास एक नौका भी नहीं थी, न ही उनके पास घेरेबन्दी लायक यन्त्र थे और नई कुमक और खाद्य-पदार्थों की पूर्ति का तो सवाल ही नहीं था। इन विपरीत परिस्थितियों में भी अरब सैनिकों ने अद्‌भुत शौर्य का परिचय देते हुए अपने शत्रुओं को परास्त करके सिकन्दरिया नगर पर अधिकार कर लिया। कुछ इतिहासकारों ने अरबों पर सिकन्दरिया के सुप्रसिद्ध पुस्तकालय के ग्रन्थों को जलाकर पानी गर्म करने का आरोप लगाया, परन्तु फिलिप के हित्ती के अनुसार इस प्रकार के आरोप बेबुनियाद हैं। इसे तो रोमनों ने बहुत पहले ही जला डाला था। विजित क्षेत्रों में अपनी स्थिति को सुरक्षित बनाने की दृष्टि से अरबों ने उत्तरी अफ्रीका में त्रिपोली तक का इलाका भी अपने अधिकार में कर लिया। मदीना में इस विजय पर भारी प्रसन्नता व्यक्त की गई। खलीफा उमर का शासन अपने चरमोत्कर्ष पर था। तभी अचानक एक दिन एक ईरानी ईसाई गुलाम ने उमर की हत्या कर दी।

अपनी मृत्यु के पूर्व खलीफा उमर ने अरबों की भुखमरी की स्थिति को बदल दिया। अब वे सुसम्पन्न हो गये थे। फिर भी, शासन का ढाँचा नगर-राज्य की भाँति ही रहा। उमर ऐसी संस्थाओं की स्थापना नहीं कर पाये जो उनके द्वारा निर्मित विस्तृत मुस्लिम साम्राज्य का शासन कर सकतीं। अपनी मृत्यु के पहले उमर ने 6 व्यक्तियों की एक समिति बना दी और समिति को अपने सदस्यों में से ही किसी को खलीफा मनोनीत करने को कहा। समिति ने उस्मान को नया खलीफा चुना।

उस्मान (644 से 656 ई.)—धर्मनिष्ठ खलीफाओं में तीसरा नाम उस्मान का है। उनकी खिलाफत लगभग बारह वर्ष तक रही। ऐसा प्रतीत होता है कि उनके शासन काल में नवीन क्षेत्रों की विजय की तरफ कम ध्यान दिया गया और उमर के समय में जीते गये प्रदेशों पर इस्लामी शासन को सुदृढ़ बनाने तथा शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित करने की तरफ अधिक ध्यान दिया गया। कूफा, बसरा और मिस्र के मुसलमानों ने उपद्रव मचाना शुरू कर दिया और एक दिन उन विद्रोहियों ने खलीफा उस्मान को उनके ही घर में घेर लिया और उनकी हत्या कर दी।

हजरत अली (656 से 661 ई.)—उस्मान की मृत्यु के बाद मदीनावासियों ने हजरत अली को खलीफा चुना। उनमें बहुत से वे लोग भी थे जो मदीना के नहीं थे और जिनमें उस्मान के हत्यारे भी थे। जो भी हो, पूरे मुस्लिम जगत् के लिये मदीना वालों द्वारा शासक चुने जाने के अधिकार को देर-सबेर चुनौती मिलनी ही थी। अली की खिलाफत अधिकांशत: युद्धों का युग रहा। शीघ्र ही अली के विरुद्ध एक दल संगठित हो गया और वंशानुगत युद्धों ने इस्लाम की आधारशिला को ही हिला कर रख दिया। सीरिया के अतिरिक्त समस्त मुस्लिम जगत् ने अली को अपना खलीफा स्वीकार कर लिया, परन्तु सीरिया का शासनाध्यक्ष मुआविया ने उनकी खिलाफत का विरोध किया। चूँकि मुआविया के अधिकार में सीरिया की शक्तिशाली सेना थी, अत: उसको पराजित करना सम्भव नहीं था। एक दिन जब हजरत अली धर्मनिष्ठ लोगों को नमाज पढ़ा रहे थे, उनका वध कर दिया गया। कुछ के अनुसार अली मुआविया से पराजित हुए और उनका वध कर दिया गया। जैसे भी हुआ, यह सत्य है कि वे शहीद किये गये थे।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ–

(State whether the following statements are True/False)

9. अन्य धर्मों की भाँति इस्लाम भी कर्मफलवाद में विश्वास करता है।
10. इस्लाम के नैतिक सिद्धांत बड़े ही कठिन हैं।
11. 'शिया' का अर्थ है–दल, संप्रदाय अथवा संघ भेद।
12. प्रथम खलीफा अबुबक्र की राजधानी मक्का थी।

18.6 सारांश (Summary)

- अरब में अति प्राचीन काल से ही सेमेटिक जनजातियों के लोग रहते आये थे, जो आज के अरबों के पूर्वज हैं। उनमें से कुछ नखलिस्तानों और नगरों में स्थायी रूप से रहते थे और कृषि, व्यापार तथा दस्तकारी के धन्धे करते थे। दूसरा भाग स्तेपियों तथा रेगिस्तानों में खानाबदोशी करता था और ऊँट, घोड़े, भेड़-बकरियाँ पालता था।
- तीसरा और सबसे बाद में उत्पन्न विश्वव्यापी धर्म इस्लाम का पैगाम दुनिया को सुनाने वाले पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब की जन्म तिथि के बारे में मतभेद है, किन्तु यह प्रामाणिक है कि उनका जन्म सन् 570 ई. में मक्का में हुआ था। उनके पिता का नाम अब्दुल्ला और माता का नाम बीबी अमीना था।
- मक्का का एक जातीय व धार्मिक केन्द्र के रूप में महत्त्व पहले से भी ज्यादा बढ़ गया। जो कुरैशी पहले मुहम्मद साहब के इस्लाम के आन्दोलन को शत्रुता से देखते थे, वे ही अब इससे जुड़ने लगे और अग्रणी भूमिका निभाने लगे।
- मुस्लिम परम्पराओं के अनुसार इस्लाम के संस्थापक पैगम्बर मुहम्मद थे। उनकी गणना संसार के महापुरुषों में होती है। धर्म प्रवर्तक होते हुए भी वे पूर्णतया सांसारिक व्यक्ति और एक राजनेता भी थे। उन्हें अल्लाह की ओर से बहुत से 'इल्हाम' (दिव्य ज्ञान) हुए थे, जो मुसलमानों के धर्मग्रन्थ कुरान में लिखे हुए हैं।
- इस्लाम का धर्म सिद्धांत बड़ा सरल है। मुसलमान को इस विश्वास पर अटल होना चाहिए कि 'ला इलाह इल्ललाह मुहम्मदुर्रसूलिल्लाह' अर्थात् "अल्लाह के सिवा और कोई पूजनीय नहीं है तथा मुहम्मद उसके रसूल हैं।"

नोट

- इस्लाम में ईश्वर (अल्लाह) एक है तथा उसके सिवा किसी और की पूजा नहीं की जानी चाहिए। इस्लाम बहुदेववाद के साथ-साथ मूर्ति पूजा और प्रकृति पूजा का भी विरोधी है। वह ईसाइयों द्वारा प्रतिपादित ईश्वर-त्रय (पिता, पुत्र एवं पवित्र आत्मा) का भी विरोधी है।
- इस्लाम में सबसे बड़ा और एक सबसे शुरू का विभाजन 'शिया' मत के प्रकट होने का परिणाम था। अरबी शब्द 'शिया' का अर्थ है—दल, सम्प्रदाय अथवा संघ-भेद। बहुत से विद्वानों का मानना है कि शिया आन्दोलन विजेता अरबों के विरुद्ध ईरानियों के असन्तोष तथा संघर्ष की अभिव्यक्ति था।
- अरब के एक छोटे से नगर में उत्पन्न इस्लाम धर्म कुछ ही सदियों में विश्व की सबसे बड़ी ताकतों में से एक हो गया, यह वास्तव में एक आश्चर्यजनक घटना है।
- श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' ने लिखा है—"जहाँ-जहाँ इस्लाम के उपासक गए, उन्होंने विरोधी सम्प्रदाय के सामने तीन रास्ते रखे—या तो कुरान हाथ में लो और इस्लाम कबूल करो या कर दो और अधीनता स्वीकार करो अथवा दोनों में से कोई बात पसन्द न हो तो तुम्हारे गले पर गिरने के लिए हमारी तलवार प्रस्तुत है।"
- प्रथम चार खलीफाओं के समय को धर्मनिष्ठ अथवा पितृतंत्री खिलाफत कहा जाता है। सुन्नी मुसलमानों का इन चारों खलीफाओं के प्रति बड़ा स्निग्ध सम्मान है। ये खलीफा हैं—अबूबक्र (632 से 634 ई.), उमर (634 से 644 ई.), उस्मान (644 से 656 ई.) और अली (656 से 661 ई.)। ये सभी नबी के चुने हुए साथी (साहिब) थे और उन्होंने भी उनकी ही तरह अभाव और दरिद्रता में जीवन बिताया।

18.7 शब्दकोश (Keywords)

- **पैगम्बर**—ईश्वर के संदेश को धरती पर पहुँचाने वाला।
- **नबी**—किसी उपयोगी परम ज्ञान की घोषणा करने वाला।
- **रसूल**—दूत, संदेशवाहक।
- **कुमक**—किसी सेना के सहायतार्थ भेजी गयी सेना।

18.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. इस्लाम के उदय से पूर्व अरब की स्थिति का वर्णन करो।
2. मुहम्मद साहब का आरम्भिक जीवन परिचय दीजिए।
3. हजरत मुहम्मद साहब की शिक्षाओं का विस्तार से वर्णन करो।
4. इस्लाम के पाँच धार्मिक कृत्य क्या हैं?
5. शिया और सुन्नी सम्प्रदाय के बारे में आप क्या जानते हैं?
6. उन कारणों का विवेचन कीजिए जिनकी वजह से इस्लाम तेजी से फैला।
7. खिलाफत का क्या तात्पर्य है?
8. खिलाफत का उदय और प्रथम चार खलीफाओं का विवेचन कीजिए।
9. उन उपायों का मूल्यांकन कीजिए, जिन्हें अपनाकर खलीफों ने इस्लाम का प्रसार किया।
10. निम्नलिखित शीर्षकों पर टिप्पणी लिखें—

    (क) कयामत (ख) ईमान और कुफ्र (ग) जिहाद

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. देवताओं	2. मक्का	3. 570 ई.	4. विधवा
5. (ख) 630 ई.	6. (ग) इस्लाम	7. (ख) रोजा	8. (घ) कुरान शरीफ
9. सत्य	10. असत्य	11. सत्य	12. असत्य।

18.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

नोट

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–19: चीन की प्राचीन सभ्यता (Ancient Civilisation of China)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

19.1 चीन के प्राचीन राजवंश (Ancient Dynasty of China)

19.2 कन्फ्यूशियस और लाओजी की शिक्षाएँ (Precept of Confucius and Lao-tse)

19.3 चीन की प्राचीन सभ्यता की विशेषताएँ (Features of Ancient Chineese Civilization)

19.4 चीन और भारत के प्राचीन सम्बन्ध (Indo-China Ancient Relation)

19.5 सारांश (Summary)

19.6 शब्दकोश (Keywords)

19.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

19.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- प्राचीन चीन की सभ्यता से परिचित होंगे;
- कन्फ्यूशियस और लाओ की शिक्षाओं को जानेंगे;
- भारत-चीन के प्राचीन सम्बन्धों को जानेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मिस्र, मेसोपोटामिया और भारत के समान चीन भी एक अत्यन्त प्राचीन देश है। चीनी अपनी सभ्यता को हजारों वर्ष पुरानी मानते हैं। चीन में भी सभ्यता का विकास नदी घाटियों में ही हुआ था। चीन का प्रसिद्ध मैदान (The Great Plain of China) ह्वांगहो पीली नदी तथा यांग्ट्सीक्यांग नदियों से सींचा जाता है। इसी मैदान में चीन की सभ्यता की उन्नति हुई तथा यह सभ्यता एशिया के पूर्वी भाग में फैली। चीन, जापान, हिन्दचीन, बर्मा आदि देशों में बसने वाली जाति (Race) मंगोल कहलाती है।

चीन की सभ्यता का जन्म, उसका फैलाव और उन्नति संसार की अन्य प्राचीन सभ्यताओं से पृथक् रही है। चीन की प्राचीन सभ्यता का मिस्र, मेसोपोटामिया एवं सिन्धु घाटी की सभ्यता से कोई सम्पर्क नहीं था।

लगभग 5000 वर्ष पूर्व चीन में पश्चिम की ओर से मंगोल जाति के लोगों या कबीलों का आक्रमण हुआ। ये कबीले मध्य एशिया की ओर से आये थे तथा सभ्यता में बढ़े-चढ़े थे। वे पशुपालन तथा कृषि के उद्योगों से भलीभाँति

नोट

परिचित थे। वे भेड़ों एवं चौपायों के बड़े-बड़े झुण्ड रखते थे। उनका समाज संगठित था और वे घर बनाना जानते थे। इन लोगों ने ह्वांगहो नदी के मैदान में अपना डेरा जमा लिया और यहाँ के स्थायी निवासी बन गये। यही लोग चीन के प्राचीन निवासी थे।

चीनी अनुश्रुतियों के अनुसार चीन में 3000 वर्ष ई. पू. सभ्यता की बड़ी उन्नति हो चुकी थी और इस काल में वहाँ बड़े महान सम्राट हुये। चीनी इतिहास के आधार पर पता लगता है कि लगभग 2852 ई. पू. में वहाँ फूसी नाम का शासक गद्दी पर था। वह चीन का पहला सभ्य शासक था, जिसके काल में चीन में लिखना-पढ़ना, मछली-पालन, संगीत और रेशम उद्योग का विकास हुआ। इस शासक ने चीन के निवासियों के लिए अनेक कानून आदि भी बनाये। उसके बाद शेननुंग शासक बना। इसने 2737 ई. पू. से 2697 ई. पू. तक शासन किया। शेननुंग के शासन काल में चीन में कृषि, व्यापार और चिकित्सा विज्ञान की बड़ी उन्नति हुई।

ह्वांग-टी चीन का एक महान शासक था। कहा जाता है कि उसने 2697 ई. पू. से 2597 ई. पू. तक शासन किया। इस शासक के काल में चीनियों ने पक्के मकान बनवाये। उन्होंने ज्योतिष में उन्नति की; कलैण्डर में सुधार किया और एक व्यवस्थित भूमि-व्यवस्था का सूत्रपात किया।

याओ नामक एक अन्य शासक था, जो अपनी न्यायप्रियता के लिए विख्यात था। इस सरल, प्रजा सेवक तथा आदर्श सम्राट की चीनी अनुश्रुतियों में बड़ी प्रशंसा की गई है। जन कल्याण की ओर ध्यान देने वाला एक अन्य शासक शुन था। शुन ने ह्वांगहो नदी की बाढ़ों से होने वाली तबाही को रोकने के लिए अनेक उपाय किये। इसके काल में यू नामक एक चीनी इंजीनियर बहुत विख्यात था।

19.1 चीन के प्राचीन राजवंश (Ancient Dynasty of China)

उपरोक्त वंशावली के बाद लगभग 1766 ई. पू. से चीन का क्रमबद्ध इतिहास मिलता है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से नीचे हम राजवंशानुसार इनका इतिहास पढ़ेंगे। प्राचीन राजवंशों का नामावली इस प्रकार है–

1. शांग (Shang) वंश–1766 ई. पू. से 1122 ई. पू.
2. चाऊ (Chou) वंश–1122 ई. पू. से 225 ई. पू.
3. सिन (Tsin) वंश–225 ई. पू. से 206 ई. पू.
4. हान (Han) वंश–206 ई. पू. से 221 ई. पू.

1. शांग राजवंश–चीन में शांग वंश ने 1766 ई. पू. से 1122 ई. पू. तक अर्थात् लगभग साढ़े 6 सौ वर्षों तक राज्य किया। इस राजवंश में 28 सम्राट हुए। इनमें से कई शासकों ने देश की समृद्धि में योगदान दिया। होनान नगर में जो प्राचीन अवशेष प्राप्त हुए हैं, उनसे देश की शिल्प एवं कलाओं की उन्नति का प्रमाण मिलता है। शांग वंश के शासकों के काल में चीन में कला-कौशल की उन्नति हुई। इस काल में बांस के पत्तों पर चीनी लोग लिखाई करते थे। कलम और स्याही का भी उन्होंने आविष्कार कर लिया था। चीनी जनता का मुख्य उद्यम कृषि था। एक क्रान्ति के फलस्वरूप यह राजवंश पदच्युत हो गया तथा चाऊ नामक व्यक्ति ने गद्दी पर अधिकार करके चाऊ वंश की स्थापना की।

क्या आप जानते हैं परीक्षाओं द्वारा अफसरों की नियुक्ति की प्रणाली का विकास सबसे पहले चीन में हुआ।

2. चाऊ राजवंश–चाऊ वंश ने 1122 ई. पू. से 225 ई. पू. तक अर्थात् लगभग नौ सौ वर्ष तक चीन में राज्य किया। इस वंश के शासन-काल में एक सुसंगठित राज्य का विकास हुआ और चीन ने एक अच्छे राज्य का रूप धारण किया। इसी काल में चीन में दो बड़े महात्मा हुए–कन्फ्यूशियस (Confucius) तथा लाओजी (Lao-Tse)। इस काल में चीन में शिक्षा का बड़ा प्रचार हुआ। पक्षपात समाप्त करने के लिये परीक्षाओं द्वारा अफसरों की नियुक्ति की प्रणाली लागू की गई। यह प्रणाली चीन ने सारी दुनिया से पहले निकाली। शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना के लिये इस काल के सम्राटों ने सामन्तों की शक्ति का विनाश किया और शक्तिशाली केन्द्रीय शासन की स्थापना की।

नोट

जब चाऊ ने इस वंश की नींव डाली, तो शांग वंश का एक राज-कर्मचारी 5,000 सैनिकों के साथ कोरिया (Korea) की ओर भाग गया और उसने वहाँ अपना राज्य स्थापित कर लिया। कोरिया में इस कर्मचारी ने चीन देश की उपयोगी कलाओं की स्थापना और विस्तार किया जैसे–कृषि, पशुपालन, रेशम उत्पादन, गृह-निर्माण आदि। बाद में भी चीन के बहुत से निवासी चीन से जाकर कोरिया में रहने लगे।

इस वंश के अन्तिम समय में देश में अराजकता फैल गई, केन्द्रीय शासन दुर्बल हो गया तथा स्थानीय सामन्तों का जोर बढ़ गया। ये स्थानीय शासक छोटी-छोटी बातों के लिए युद्ध करते रहते थे तथा प्रजा दु:खी रहती थी। सैकड़ों वर्षों तक यही दशा रही। अराजकता का अन्त सिन नामक सामन्त ने किया। उसने दुर्बल चाऊ वंशीय सम्राट को पदच्युत करके शासन की बागडोर स्वयं संभाल ली। इस प्रकार एक नवीन राजवंश–सिन वंश–का शासन आरम्भ हुआ।

3. सिन राजवंश–सिन वंश का शासन 225 ई. पू. से 206 ई. पू. तक रहा। इस वंश के सम्राट चीन के प्रसिद्ध शासक हुए हैं। इन्होंने सामन्तों की शक्ति का विनाश करके चीन में दृढ़ केन्द्रीय शासन की स्थापना की। इस महान सफलता का श्रेय सम्राट एवं उसके सुयोग्य मन्त्री कुआन चुंग को है। इसी वंश के नाम पर देश का नाम 'चीन' हो गया–इससे पहले इसके कई और नाम थे।

इस वंश का सबसे प्रसिद्ध सम्राट शि-ह्वांग-टी हुआ जिसने चीन की उन्नति, सभ्यता और दृढ़ता के अमिट चिह्न छोड़े हैं। इस सम्राट ने सामन्तवाद की रही सही शक्ति भी मिटा दी। वास्तव में शि-ह्वांग-टी का शाब्दिक अर्थ है 'प्रथम सम्राट'।

(क) **उद्योग-धन्धे**–उस समय चीनी लोग काफी प्रगति कर चुके थे। पुरुष मछली पकड़ने, आखेट एवं कृषि में लगे रहते थे और स्त्रियां कातने-बुनने में संलग्न रहती थीं। समाज में लुहार व स्वर्णकार लोग बर्तन व हथियार आदि बनाते थे। उस समय के अत्यन्त सुन्दर कांसे के पात्र आज भी विद्यमान हैं। अत्यन्त सुन्दर रेशमी वस्त्रों की बुनाई की जाती थी क्योंकि सम्राटों एवं सामन्तों तथा उनके वंशजों की ओर से इस उद्योग को प्रोत्साहन मिलता था। मिट्टी के पात्र बहुत सुन्दर बनाये जाते थे तथा बाद में चीनी मिट्टी की खपरैल और फर्श की टाइलें भी बनने लगीं।

(ख) **लेखन कला**–प्राचीन काल में चीन में लेखन कला का विकास हुआ तथा लेखन प्रणाली आज तक ऐसे ही बनी हुई है जैसी कि उस समय थी। बाँस या लकड़ी के चपटे तथा चिकने पट्टों पर पुस्तकें लिखी जाती थीं। स्याही के लिए स्याही (रंगीन द्रव) और ब्रुश के समान बनी हुई कलमें प्रयोग की जाती थीं। यदि कोई अक्षर लिखने में गलत हो जाता था तो चाकू से खुरच कर उस स्थान को साफ कर लिया जाता था और पुन: लिखाई की जाती थी। आगे चलकर बाँस के पत्ते बने तथा तत्पश्चात् रेशम को कागज की भाँति प्रयोग किया गया। 1418 ई. में चीनियों ने आधुनिक कागज बनाने का आविष्कार किया।

नोट्स कागज पेड़ों की छालों, सन, चीथड़ों, पुराने जालों आदि को गला कर बनाया जाता था। चीन ने पूरे संसार को कागज बनाना सिखाया।

(ग) **चीन की महान दीवार का निर्माण**–शि-ह्वांग-टी के अनेक कार्य प्रसिद्ध हैं। उसने चीन पर बार-बार होने वाले बर्बर और जंगली हूणों के आक्रमणों को रोक दिया। उसने अपनी वीरता एवं सैन्य संचालन से उन्हें भयानक पराजय दी। उत्तर की ओर से जंगली जातियों के इन आक्रमणों को सदा के लिए असम्भव बनाने के लिए उसने चीन की महान दीवार का निर्माण कराया। यह दीवार लगभग 22 फुट ऊँची, 20 फुट चौड़ी और 1,800 मील लम्बी है। इसमें लगभग प्रत्येक 100 फुट पर चालीस फुट चौड़े स्तम्भ या बुर्ज बने हुए हैं जिनके बीच से होकर दीवार पर यातायात निरन्तर रूप से हो सकता है। दीवार पर और स्तम्भों पर किलेबन्दी है जिसके पीछे सुरक्षित खड़े होकर सिपाही तीर एवं अस्त्र छोड़ सकते हैं। इस दीवार को बनाने के लिए अधिकतर काम कैदियों से लिया गया था। हो सकता है कि काम करने वालों की संख्या बढ़ाने

नोट

के लिए अनेक लोगों को दंडित कर दिया गया हो। चीनी लोग इस दीवार के निर्माण के विरुद्ध थे क्योंकि इसे बेगार के मजदूर पकड़ कर बनवाया गया था।

शि-ह्वांग-टी—शि-ह्वांग-टी अपने आप को चीन का प्रथम सम्राट कहता था तथा चाहता था कि चीन का इतिहास उसी के समय से आरम्भ माना जाए। इसके लिए उसने यह निश्चय किया कि सारे प्राचीन साहित्य को नष्ट कर दिया जाए। प्राचीन साहित्य के रहने पर उसकी इस आकाँक्षा का पूरा हो पाना असम्भव था। उसने कृषि, ज्योतिष और चिकित्सा शास्त्र की पुस्तकों को छोड़कर शेष सभी पुस्तकों को नष्ट करने की ठान ली। परिणाम यह हुआ कि चीन के प्राचीन और बहुमूल्य साहित्य के असंख्य ग्रन्थ नष्ट कर दिये गये। विद्वानों एवं विद्या प्रेमियों ने ग्रन्थों की रक्षा करनी चाही, तो सम्राट ने या तो उन्हें प्राण-दण्ड दे दिया या विशाल दीवार पर मजदूरों की भाँति काम करने को भेज दिया। फिर भी ऐसे लोगों के साहस के बल पर अनेक ग्रंथों की रक्षा हो गई। इन सुरक्षित ग्रंथों में महात्मा कन्फ्यूशियस व महात्मा लाओजी के ग्रन्थ भी हैं। शि-ह्वांग-टी की मृत्यु 210 ई. पू. में हो गई। उसके संसार से विदा होते ही लोगों ने पुराने साहित्य को पुनः मान्यता तथा आदर प्रदान किया।

टास्क चीन की महान दीवार कितने दिनों में बनी, इसका पता लगाइए।

हान राजवंश—शि-ह्वांग-टी की मृत्यु के कुछ वर्षों के पश्चात् ही उसके वंश का शासन समाप्त हो गया तथा हान वंश का शासन काल आरम्भ हुआ। इस वंश का प्रभुत्व लगभग चार सौ वर्ष तक रहा। इस वंश के समय चीन में अभूतपूर्व उन्नति हुई, उसकी सीमाओं का विस्तार बढ़ा तथा संसार के दूरस्थ देशों से उसका प्रथम बार सम्बन्ध हुआ।

हान वंश के समय उत्तर की ओर से तातारी कबीलों एवं जातियों का आक्रमण हुआ। चीन की बड़ी दीवार उन्हें रोकने में असमर्थ हुई। उधर हूणों एवं कोरियावासियों में संघर्ष होते रहे। फल यह हुआ कि चीनी सेनाएँ मध्य-एशिया में बढ़ीं तथा उन्होंने पामीर और कोकन्द को चीनी साम्राज्य में मिला लिया। बाह्य युद्धों के साथ-साथ आन्तरिक विप्लव एवं विद्रोह भी होते रहे। इसी बीच वेंग-मेंग (Wang-Mang) नामक एक अनाधिकारी ईसा से लगभग 50 वर्ष पूर्व सिंहासन पर बैठ गया तथा कई वर्षों तक राजा बना रहा। उसकी मृत्यु के पश्चात् हान वंश पुनः गद्दी पर प्रतिष्ठित हो गया। इस प्रकार की परिस्थिति के होते हुए भी इस काल में चीन की उन्नति होती रही।

हान वंश के समय में ही कागज तथा स्याही के आविष्कार हुए थे। इस काल में चित्र-कला में पर्याप्त उन्नति हुई। ऊँट के बालों से ऐसे ब्रुश बनाये गये, जो चित्रकारी के काम में आते थे। चित्रकारी के लिए भाँति-भाँति के रंगों का निर्माण किया गया। शि-ह्वांग-टी के समय में साहित्य को जो भारी हानि पहुँची थी, उसे पूर्ण करने का प्रयास किया गया। कन्फ्यूशियस एवं लाओजी के उपदेशों को फिर से पुराने काल जैसी मान्यता दी गई तथा कन्फ्यूशियस-वंश के प्रमुख पुरुष को पैतृक उपाधि और सम्मान प्रदान किया गया। इस काल में मूर्ति-निर्माण-कला और भवन-निर्माण-कला की भी पर्याप्त उन्नति हुई। पत्थर पर सुन्दर उभरी हुई खुदाई के अवशेष मिलते हैं। शान्टुंग प्रान्त में एक समाधि मन्दिर में अश्वारोहियों, युद्धों, मछली पकड़ने, आखेट, दावतों और जुलूसों के चित्र पत्थरों पर उभरी खुदाई के रूप में मिले हैं। चीन की निर्माण कला की उन्नति का मूल्यांकन करने की दृष्टि से ये चित्र बड़े महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि इनसे चीन के प्राचीन इतिहास का स्पष्ट दिग्दर्शन होता है, जैसा कि मिस्र के पिरामिडों से मिस्र की सभ्यता का पता लगता है।

इसी वंश के समय में सरकारी नौकरी के ऊँचे पदों के लिये प्रतियोगिता परीक्षाएं शुरू की गईं। संसार में यह प्रणाली सबसे पहले चीनी लोगों ने ही अपनाई। इसका कारण यह था कि चीन में सबसे अधिक आदर विद्वानों का ही होता था। समाज में निम्न से निम्न श्रेणी का और गरीब आदमी भी यदि विद्वान् हो तो आदरणीय माना जाता था। दूसरे, चीन में सैनिक या लड़ाई-पेशा व्यक्ति अत्यन्त नीच माना जाता था। इसलिये सेना में केवल गरीब और खराब चरित्र के व्यक्ति ही भर्ती होते थे। चीनी समाज में राजवंश सबसे उच्च माना जाता था। उससे नीचे साहित्यिक एवं विद्वान् श्रेणी, उससे नीचे कृषक श्रेणी, उससे नीचे शिल्पी एवं दस्तकार तथा उससे नीचे व्यापारी माने जाते थे। समाज सैनिकों को कोई आदर नहीं देता था। इससे यह परिणाम निकलता है कि चीन का प्राचीन गौरव शान्तिपूर्ण था।

नोट

नोट्स हान वंश के समय में ही कागज तथा स्याही के आविष्कार हुए थे। इस काल में चित्र-कला में पर्याप्त उन्नति हुई।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. चीनी लोग अपनी सभ्यता को हजारों ········ पुरानी मानते हैं।
2. ह्वांग-टी चीन का एक महान ········ था।
3. 5000 साल पूर्व चीन में पश्चिम की ओर से ········ जाति का आक्रमण हुआ।
4. दुर्बल चाऊ वंश के सम्राट को सामन्त ········ ने पदच्युत किया।

19.2 कन्फ्यूशियस और लाओजी की शिक्षाएँ (Precept of Confucius and Lao-tse)

महात्मा कन्फ्यूशियस–प्राचीन चीन का कोई भी ऐतिहासिक वर्णन महात्मा कन्फ्यूशियस का उल्लेख किये बिना पूर्ण नहीं हो सकता। इस प्रकाण्ड विद्वान का जन्म 551 वर्ष ई. पू. में लून राज्य में हुआ था, जो वर्तमान शान्टुंग प्रान्त में है। वह कुलीन वंश में पैदा हुआ था। जब वह बालक ही था तभी उनके पिता का देहावसान हो गया। बालक कन्फ्यूशियस मेधावी और जिज्ञासु था। अपनी योग्यता व व्यक्तिगत गुणों के कारण उसे चुंगदू नगर में सरकारी पद मिल गया। किन्तु जल्दी ही उन्होंने यह पद छोड़ दिया। वह अध्यापक भी रहा तथा उसने अपना महाविद्यालय (Academy) खोल लिया, जहाँ वह अध्ययन करता था तथा छात्रों को भी उच्च शिक्षा देता था।

कन्फ्यूशियस समाज को सुदृढ़ और सुगठित बनाना ही जीवन का आदर्श मानता था तथा व्यक्ति और समाज में एक सुन्दर सामंजस्य स्थापित करना ही उसका ध्येय था। अतएव वह किसी राजा या सामन्त का मन्त्री या सलाहकार बनकर अपनी कल्याणकारी योजना को क्रियान्वित करना चाहता था।

आगे चलकर वह चुंगदू नगर में मजिस्ट्रेट हो गया तो उसे अपने विचारों को कार्यरूप में लाने का अवसर मिला। उसने सामाजिक जीवन को नियमित करने के लिए अनेक नियम लागू किए–परस्पर व्यवहार के नियम, स्त्रियों एवं पुरुषों को पृथक् रखने के लिए नियम, क्या तथा कैसे भोजन किया जाए इससे सम्बन्धित नियम, सड़कों, समाधियों एवं अर्थियों की माप के नियम आदि। स्वार्थी लोगों ने कन्फ्यूशियस को बदनाम किया और उसके विरुद्ध प्रचार करने लगे। अत: बाद में कन्फ्यूशियस को यह पद छोड़ना पड़ा। उसके जीवन के अन्तिम वर्ष बड़े दु:ख से बीते। फिर भी उसके उपदेशों एवं शिक्षाओं का चीनी जन-समुदाय पर स्थायी और गहरा प्रभाव पड़ा। 72 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया।

महात्मा कन्फ्यूशियस की शिक्षाएं एवं उपदेश–उस समय चीन की राजनैतिक तथा सामाजिक अवस्था बहुत खराब थी। तत्कालीन अराजकता और कुव्यवस्था के कारण कन्फ्यूशियस की आत्मा बड़ी खिन्न थी। उसका कहना था कि मानव को मानव समाज में ही रहना है, चाहे समाज की दशा अच्छी हो या बुरी। मनुष्य अपने मानव समाज को छोड़कर बन्दरों के समाज में जाकर नहीं रह सकता। अतएव राज्य और समाज को सुधारना और व्यवस्थित करना ही व्यक्ति के लिये अत्यन्त कल्याणमय हो सकता है।

क्या आप जानते हैं महात्मा कन्फ्यूशियस न कोई दार्शनिक थे और न धर्म प्रवर्तक थे। उन्होंने न कोई दर्शन दिया और न कोई नया धर्म स्थापित किया। वह एक समाज-सुधारक थे।

नोट

अतएव इस महात्मा ने मानव के सामाजिक व्यवहार को सुधारने की ओर ध्यान दिया। उसने परमेश्वर, आत्मा, प्रकृति आदि गहरे दार्शनिक विषयों पर ध्यान न दिया। उसकी शिक्षाएं इस संसार में आपस के व्यवहार के लिये सबसे अच्छा मार्ग दिखलाती हैं। कन्फ्यूशियस आदर्श समाज या राज्य की स्थापना करना चाहता था। अतएव उसने बहुत से व्यावहारिक नियम बनाए, जिनको पाँच भागों में बाँटा जा सकता है–

1. पति-पत्नी के परस्पर व्यवहार के नियम;
2. पिता-पुत्र के आपसी व्यवहार के नियम;
3. राजा-प्रजा के परस्पर कर्तव्य;
4. बड़ों-छोटों के परस्पर व्यवहार के नियम; तथा
5. मित्रों के परस्पर कर्तव्य और व्यवहार के नियम।

कन्फ्यूशियस के अनुसार शासक और मंत्रीगण आदर्श व्यक्ति होने चाहिए। उनके चरित्र दूसरों के लिए आदर्श होते हैं तथा इससे सामाजिक व्यवस्था ठीक होती है। उस काल की अव्यवस्था और गड़बड़ी में उनके ये उपदेश ही चीन की रक्षा कर सकते थे। उनका विचार ठीक था कि यदि जनता या समाज की हर एक श्रेणी के लोगों का जीवन नियमों के अनुसार ठीक हो जायगा, तो सांसारिक जीवन का दुख समाप्त हो जायेगा और समाज व्यवस्थित और सुख-समृद्धि से परिपूर्ण हो जायेगा। उनके नियमों का पालन करने से चीनियों का जीवन बहुत कुछ व्यवस्थित और शान्तिमय हो गया।

सबसे अच्छी बात यह है कि महात्मा कन्फ्यूशियस के नियम सरल, समझ में आने वाले तथा पालन करने में भी अत्यन्त सरल हैं। उनके आदर्श देखने में बड़े ही कठिन लगते हों, परन्तु उन आदर्शों की प्राप्ति के नियम बड़े सुन्दर, अच्छे और आसान थे। श्रेष्ठ शासन, श्रेष्ठ शिक्षा और उच्च कोटि का नियमित, व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन ही उनके आदर्श थे। उनके बताये गये मार्ग पर चलकर चीनियों ने अपने जीवन को नियमित किया। कन्फ्यूशियस के अपने विचारों को लिपिबद्ध किया। उनके लिखे पाँच ग्रंथ हैं, जिन्हें चीन के लोग पंचचिंग कहते हैं।

अन्त में, हम यह कह सकते हैं कि कन्फ्यूशियस ने दैनिक जीवन के व्यवहार के सिद्धान्तों को सरल और सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया। चीनी लोग उठने-बैठने, वार्तालाप करने, भोजन करने, पानी पीने, वस्त्र पहनने, चलने-फिरने अर्थात् जीवन की प्रत्येक क्रिया में उनके नियमों का पालन करने लगे। वास्तव में उनके उपदेशों का अत्यन्त व्यापक प्रभाव हुआ। चीन में कन्फ्यूशियस के उपदेशों को बड़ा ऊँचा स्थान दिया गया।

महात्मा लाओजी–आप का जन्म 604 वर्ष ई. पूर्व में हुआ था। आप का प्रभाव अधिकतर दक्षिणी चीन क्षेत्र में पड़ा। आपके विचार वैसे नहीं थे जैसे कन्फ्यूशियस के थे। लाओजी चाऊ वंश के चीनी सम्राट के राज पुस्तकालय का अध्यक्ष था। लाओजी कहता था कि मनुष्य को संसार के आनन्दमय और विलासमय जीवन से दूर रहना चाहिए तथा त्याग भावना, संयम और आत्मनिग्रह पूर्वक रहना चाहिए। माया-मोह बुरा है तथा मानव को पतित करने वाला है। लाओजी का धर्म ताओ धर्म (Taoism) कहलाता था।

लोओजी का दृष्टिकोण रचनात्मक न होकर नकारात्मक था। वह यह उपदेश नहीं देते थे कि चीन के लोगों को क्या करना चाहिए। उनका कहना था कि प्रवृत्ति के अनुसार काम करना ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है। उनकी शिक्षा का सार 'कुछ मत करो, सब अपने आप होता जाएगा' था। इसी शिक्षा का एक भाग यह था कि महात्मा लाओजी विलासमय जीवन त्यागने और सांसारिक माया के बन्धनों से दूर रहने का उपदेश देते थे। ताओ धर्म का अनुशासन, नियंत्रण तथा संयम से कोई सम्बन्ध न था। इसी तर्क के आधार पर लाओजी का कहना था कि जनता के कामों में कम से कम हस्तक्षेप करने वाली सरकार ही सर्वोत्कृष्ट सरकार है। महात्मा लाओजी की प्रसिद्ध पुस्तक 'ताऊ-ती चिंग' जिसमें उनके विचार संग्रहीत हैं।

चीन के सामाजिक जीवन पर महात्मा कन्फ्यूशियस, महात्मा लाओजी तथा महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं का बड़ा प्रभाव पड़ा। इस प्रकार चीन में तीन धर्म या तीन प्रकार की शिक्षा का प्रचार हुआ–कन्फ्यूशियस धर्म, लाओ धर्म और बौद्ध धर्म। ये तीनों धर्म अपनी शिक्षाओं में बहुत कुछ मिलते हैं। तीनों ही जीवन में श्रेष्ठ आचार और आदर्श सहयोग पर बल देते हैं तथा नीच और पाप कर्मों और तुच्छ भावनाओं से दूर रहने की शिक्षा देते हैं। तीनों ही धर्म चीनियों के

नोट

जातिगत स्वभाव–शान्तिप्रियता, युद्धों से उपरामता, शिष्टाचार, नियमित व्यवस्थित और कर्तव्य परायण जीवन–के अनुकूल थे।

19.3 चीन की प्राचीन सभ्यता की विशेषताएं (Features of Ancient Chineese Civilization)

समाज–अत्यन्त प्राचीन काल में ही चीन में समाज का संगठित ढाँचा खड़ा हो चुका था। सामाजिक व्यवस्था में विद्वानों को सबसे ऊँचा स्थान दिया जाता था। धीरे-धीरे चीन में यह धारणा मान्य हो गई कि सरकारी पदों पर विद्वानों को ही नियुक्त किया जाए तथा उन्हें हर प्रकार से सम्मानित किया जाए। चीन का सामाजिक विभाजन निम्न प्रकार से था। इसमें सबसे अधिक सम्मानित श्रेणी को सबसे पहला स्थान दिया गया तथा उससे निम्नतर को उससे नीचे का दर्जा।

(1) **मंडारिन**–यह श्रेणी विद्वानों एवं साहित्यकारों की थीं, परन्तु पैतृक नहीं थी। किसी भी वंश का तथा गरीब से गरीब व्यक्ति भी विद्वान होने पर इस श्रेणी में सम्मिलित हो जाता था तथा राजाओं, सामन्तों एवं जनता द्वारा उसका आदर सम्मान किया जाता था।

(2) **किसान**–कृषि चीनवासियों का प्राचीनतम तथा सर्वप्रमुख उद्यम था चीन में खेती करने वालों की श्रेणी अत्यन्त प्राचीन काल से विद्यमान थी इन लोगों को समाज में केवल विद्वानों को छोड़कर सबसे अधिक आदर दिया जाता था।

(3) **शिल्पी, दस्तकार, मजदूर**–इन लोगों को समाज में तीसरा स्थान प्राप्त था। इससे प्रतीत होता है कि जुलाहों, बढ़ई, लोहार आदि का चीनी समाज में पर्याप्त आदर था।

(4) **व्यापारी**–इन लोगों का आदर किसानों और दस्तकारों के समान नहीं था क्योंकि ये लोग उनके समान परिश्रम की कमाई नहीं खाते थे।

(5) **सैनिक**–चीनी समाज की शान्तिप्रियता का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है कि सैनिकों को समाज में सबसे छोटे दर्जे का माना जाता था। सेना में भर्ती होने वाले या तो अत्यन्त निर्धन, आलसी, आवारा होते थे या ऐसे आदमी होते थे, जिनका चरित्र सन्दिग्ध होता था।

सामाजिक जीवन–प्राचीन काल में चीन में सामाजिक संगठन का आधार परिवार था। परिवार में पिता ही मुखिया माना जाता था। उसकी मृत्यु हो जाने पर माता परिवार की सर्वेसर्वा बन जाती थी। चीन जाति के लोग अपने परिवार तथा अपने मुखिया को बड़े सम्मान व निष्ठा की दृष्टि से देखते थे। परिवार के प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य था कि वह परिवार के मुखिया के आदेशों का पालन करे। अपने पूर्वजों के प्रति चीन निवासी बड़ा सम्मान प्रदर्शित करते थे। प्राचीन काल में चीन में सम्मिलित परिवार प्रणाली थी। पति-पत्नी और उनके बच्चों के अतिरिक्त चचेरे, मौसेरे भाई व उनकी पत्नी व बच्चे भी एक ही परिवार के सदस्य माने जाते थे। स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त नहीं था। पर्दा-प्रथा का चलन था। स्त्रियाँ प्राय: घरेलू काम ही करती थीं। उनको सामाजिक कार्यों में भाग लेने का अवसर नहीं मिलता था।

आर्थिक जीवन–चीन प्राचीन काल में एक कृषि-प्रधान देश था। अधिकांश जनता कृषि के कामों में ही लगी रहती थी। कृषि की उन्नति के लिये बाँध बनाये जाते थे और नहरें खोदी जाती थीं। खेती में गेहूँ, चावल और जौ की फसलें मुख्य थीं। मिट्टी के बर्तन तो चीन में काफी समय से बनते चले आ रहे थे किन्तु कांसे का प्रयोग यहाँ शांगवंश काल में अर्थात् 1600 वर्ष ई. पू. में आरम्भ हुआ। अनुमान है कि चीनवासी कांसा बाहर से मंगाते रहे होंगे। लकड़ी के फर्नीचर, रेशम, रेशमी कपड़े और कागज बनाने के उद्योगों में चीन ने बड़ी उन्नति की।

क्या आप जानते हैं चीन में मकानों में ईंट-पत्थरों का प्रयोग कम होता था; लकड़ी और बाँस का प्रयोग अधिक होता था।

नोट

ईसा से 200 वर्ष पहले चीनवासियों ने सीसे का पता लगा लिया और सीसे की वस्तुएँ बनाने लगे। रेशम का काम चीन की ख्याति का एक मुख्य आधार है। यहाँ के रेशमी कपड़े विख्यात थे। प्राय: स्त्रियाँ ही रेशमी कपड़े तैयार करती थीं। ईसा से लगभग 200 वर्ष पूर्व चीन में कपास भी आने लगी। शायद भारत से ही चीन को कपास पहुँचाई गई। चीन वालों ने कागज बनाने की कला का भी आविष्कार किया।

चीन का वाणिज्य-व्यापार भी विकसित था। रेशम, नमक और लोहा उनके व्यापार की मुख्य वस्तुएँ थीं। ई. पूर्व 5वीं शताब्दी में चीन में सिक्के प्रचलित थे। इतना ही नहीं उस समय एक प्रकार की बैंकिंग व्यवस्था का भी चीन में विकास हो चुका था।

धार्मिक विश्वास—चीन के निवासी आरम्भ में प्रकृति की शक्तियों की उपासना करते थे। उनका विश्वास था कि प्राकृतिक वस्तुओं जैसे पहाड़ों, नदियों आदि में जीव होता है। इसी जीव को वे ईश्वर या परमात्मा मानकर उसकी उपासना करते थे। चीनवासी अपने पूर्वजों की भी उपासना करते थे। चीनवासियों ने अपनी उपासना के लिए सुन्दर मन्दिरों का निर्माण किया था, जिन्हें पगोड़ा कहा जाता था। ये मन्दिर ऊँचे गुम्बदनुमा और कई-कई मंजिल ऊँचे होते थे। उन पर सुन्दर कारीगरी की जाती थी।

चीन के लोगों के ग्राम-देवता और कुल देवता भी होते थे। प्रकृति की सर्वोच्च शक्ति को चीनी लोग स्वर्ग की आत्मा (Spirit of Heaven) कहते थे। सब लोग इसकी पूजा करते थे।

नोट्स चीन में पुरोहित नहीं होते थे। उपासना व्यक्तिगत कार्य था और सब लोग अपने-अपने घरों में उपासना करते थे। लोग अपने देवताओं को अनाज और मांस चढ़ाते थे।

राजा और जनता भी कई प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान करते थी। चीन-वासियों का विश्वास था कि मृत व्यक्ति की आत्मा में बड़ी शक्ति होती है। मृत व्यक्ति की आत्मा किसी को यश सा अपयश दिला सकती है अथवा सफलता या असफलता दिला सकती है। इसी भय के कारण वे मृत आत्मा की भी उपासना करते थे। उनका एक देवता टी (Ti) था। उनका विश्वास था कि सब मृत आत्माएँ टी के अधीन रहती हैं। भूमि और वायु को भी वे देवता मानते थे।

शासन-प्रबन्ध—चीन में हान वंश के शासन काल में शासन प्रबन्ध में भी भारी उन्नति हुई, यद्यपि उसका आधार पहले से विद्यमान शासन ही था। प्रमुख सरकारी पदों पर विद्वानों की नियुक्ति होती थी। नियुक्ति का आधार प्रतियोगिता परीक्षाएँ थीं। नमक बनाना, लोहा खोदना तथा उसको साफ करना और सिक्कों का बनाना सरकारी अधिकार में था। वस्तुओं के मूल्य का नियन्त्रण, सरकार द्वारा आवश्यक वस्तुएँ खरीदना और बेचना (Procurement, Price Control, Supply Deptt. etc.) उस प्राचीन काल के लिये एक बड़ी महत्त्वपूर्ण बात थी। चीन के शासकों ने आधुनिक ढंग पर जल एवं स्थल पर सरकारी यातायात का प्रबन्ध किया अर्थात् गाड़ी, नाव आदि के लिए सरकारी विभाग स्थापित किये। किसानों को सस्ते ब्याज पर सरकार से रुपया उधार दिया जाता था और किस्तों में वापिस लिया जाता था। चीन की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति में जहां परस्पर व्यवहार और शिष्टाचार पर बल दिया गया वहां उसमें विद्या, साहित्य और कला को सदा ही सम्मान दिया गया।

लेखन कला और लिपि—चीन में अत्यन्त प्राचीन काल में लेखन कला का प्रारम्भ हुआ। कागज के स्थान पर बाँस या लकड़ी की चिकनी बारीक पट्टियों का प्रयोग किया गया। बाँस की ब्रुश जैसी डंडियों की कलम बनायी जाती थी। 105 ई. में चीन में कागज बनाने का आविष्कार हो गया। कितनी ही शताब्दियों तक रेशम का भी कागज की भाँति प्रयोग होता रहा है। चीन की लिपि में वर्णमाला में अक्षर नहीं होते परन्तु वस्तुओं, भावों और क्रियाओं के लिए अलग-अलग चिह्न होते हैं। कहा जाता है कि इन चिह्नों की संख्या लगभग 40,000 है। चीनी भाषा ऊपर से नीचे को लिखी जाती है। साधारण पढ़े-लिखे लोगों को भी लगभग 4,000 चिह्न सीखने होते थे।

नोट

> *क्या आप जानते हैं* चीनी भाषा ऊपर से नीचे को लिखी जाती है।

भवन और मूर्ति-निर्माण कला–चीन की भवन-निर्माण कला भी बढ़ी-चढ़ी थी। घर लकड़ी, चूना, पत्थर आदि के बनाये जाते थे, फिर भी लकड़ी का प्रयोग बहुत अधिक होता था। मकान बनाने में सुन्दरता और कलात्मकता का विचार अधिक रखा जाता था, दृढ़ता और पक्केपन का नहीं। चीन की चित्रकला भी बड़ी समुन्नत तथा अपने ढंग की अलौकिक थी। वहाँ की मूर्ति-निर्माण-कला के नमूने शान्टुंग प्रान्त में समाधियों में प्राप्त हुए हैं, जो मिस्त्री मूर्तियों के नमूनों से होड़ करते हैं। कविता, संगीत आदि के क्षेत्र में भी चीन ने अपने ढंग से उन्नति की।

आविष्कार और खोज–प्राचीन काल में चीन में अनेक आविष्कार हुये। कागज का उल्लेख ऊपर हो चुका है। दिशा-सूचक यन्त्र अर्थात् कुतुबनुमा (Compass) के आविष्कार का श्रेय भी उन्हीं को है। सबसे प्रथम पत्थर के कोयले को ईंधन के रूप में प्रयोग करने का कार्य भी चीनियों ने ही शुरू किया। पहले-पहल बारूद की खोज भी उन्होंने की, परन्तु उससे भयानक शस्त्रों–तोप, गोले, बन्दूक का निर्माण नहीं किया। चीनी मिट्टी के बर्तन तथा रेशम का कपड़ा बनाने का काम भी सबसे पहले चीन में ही शुरू हुआ। चित्रकला के ब्रुश भी पहले-पहल चीन में ही बने। सिक्कों का निर्माण भी चीन में पहले हुआ। भूचाल की गति एवं दिशा जानने का यन्त्र (Siesmograph) भी पहले-पहल चीन में ही बना। बैंकिंग-प्रथा का आरम्भ भी चीन में हुआ। धूप-घड़ी के स्थान पर जल-घड़ी का आविष्कार करके चीनवासियों ने समय का माप किया। दिन-रात को इन्होंने 12 भागों में विभक्त किया तथा एक नया पंचांग भी बनाया। चीनियों ने एक प्रकार के ताश के पत्ते भी बनाये थे जिनके खेलों से वे मनोरंजन करते थे।

इस प्रकार चीन में एक अच्छी राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था थी। हानवंश के समय में इस सभ्यता का दूर-दूर तक प्रचार हुआ। मध्य एशिया, पूर्वी एशिया और दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में इस सभ्यता और संस्कृति का दूर-दूर तक प्रचार हुआ।

19.4 चीन और भारत के प्राचीन सम्बन्ध (Indo-China Ancient Relation)

चीन और भारत की दुर्गम सीमाएं पर्वतों तथा गहन वनों से आच्छादित हैं। स्थल-मार्ग तो इतने दुरूह हैं कि साधारणतया लोगों का आना-जाना कठिन है। मंगोल जाति के लोग चीन, तिब्बत, नेपाल, भूटान, सिक्किम, कश्मीर के भागों और बर्मा में फैल गये। यहाँ तथा बंगाल, आसाम आदि में आर्य तथा मंगोल जातियों का सम्मिश्रण हो गया। हिमालय तथा अन्य पर्वतमालाओं और पठारों एवं नदियों की घाटियों से होकर चीन और भारत के बीच यातायात, व्यापार और विचारों का आदान-प्रदान होता था।

भारत और चीन के बीच आने-जाने का रास्ता–अशोक भारत का महान धार्मिक सम्राट था जिसके प्रयत्नों से बौद्ध-धर्म का प्रसार भारत से बाहर के देशों में भी होने लगा। चीन में बौद्ध-धर्म पहुंचा और वहाँ की प्राचीन संस्कृति से इसका इतना सामंजस्य था कि वहाँ इसका बड़ा स्वागत हुआ। बौद्ध-धर्म शीघ्र ही चीन का मुख्य धर्म हो गया तथा दोनों देशों के बीच विद्वानों का आना-जाना और धर्म प्रचार के लिए भिक्षुओं की यात्राएं आदि आरम्भ हुईं। चीन और भारत के बीच के जल तथा स्थल-मार्ग दोनों ही कठिन हैं, फिर भी साहसी यात्री धर्म का उत्साह हृदय में भर कर यात्राएँ करते थे तथा सफलता प्राप्त करते थे। स्थल-मार्ग हिमालय एवं अन्य ऊँची पर्वत मालाओं से होकर गोबी के भयंकर रेगिस्तान को पार करके भारत पहुँचता था। जल-मार्ग बर्मा या अण्डमान द्वीप, मलाया, सुमात्रा, दक्षिणी चीन सागर, हिन्दी-चीन आदि से होकर जाता था। इन मार्गों से बहुत से यात्रियों ने यात्राएँ कीं।

भारत में चीनी यात्री–चीन से भारत में जो यात्री आये उनमें से कुछ तो इतिहास में बड़े प्रसिद्ध हैं। फाह्यान, ह्वेन सांग, इत्सिंग का नाम भारतीय इतिहास में अमर है। फाह्यान विक्रमादित्य के समय में भारत में बौद्ध-धर्म का अध्ययन करने, बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित तीर्थ-स्थान देखने तथा धर्म सम्बन्धी लेख, पुस्तक-सामग्री इकट्ठी करने आया था। उसका गुरु एक भारतीय भिक्षु कुमारजीव था तथा उसी की आज्ञा से फाह्यान भारत आया था। उसने अपनी भारत-यात्रा का पूरा विवरण लिखा है, जिससे उस काल के भारतीय इतिहास पर गहरा प्रकाश पड़ता है।

महाराजाधिराज हर्ष के समय ह्वेन सांग नामक चीनी विद्वान भारत आया था। वह भी फाह्यान की भाँति स्थल-मार्ग से ही भारत पहुँचा था। वह भारत में 15 वर्षों तक रहा तथा उसने अपना बहुत-सा समय नालन्दा विश्वविद्यालय में अध्ययन करने में व्यतीत किया। उसने भी अपनी यात्रा का पूरा-पूरा विवरण लिखा है तथा उसका वर्णन इतिहासकारों के बड़े काम का है। फाह्यान के समय प्राचीन भारत का स्वर्ण-युग था। उसने लिखा है कि लोग पढ़े-लिखे और समृद्ध थे, पक्के घरों में रहते थे तथा स्वतन्त्र और आनन्दमय जीवन व्यतीत करते थे। राजा बड़े विद्वान धार्मिक वृत्ति के व उदार थे तथा देश में धार्मिक सहिष्णुता थी। ह्वेन सांग ने भी भारत की ऐसी ही प्रशंसा की है तथा नालन्दा विश्वविद्यालय का बड़ा सुन्दर वर्णन किया है। इत्सिंग ने भी इसी विश्वविद्यालय में शिक्षा पाई थी तथा उसने भी वहां का और भारत का वर्णन किया है। इन यात्रियों के आँखों देखे तथा पूर्ण वर्णन से स्पष्ट है कि भारत अपने प्राचीन काल में संस्कृति, समृद्धि, सभ्यता, व्यापार और शिल्प की चरम उन्नति पर था।

चीन में भारतीय यात्री—भारत से भी अनेक बौद्ध भिक्षु, विद्वान आदि बड़ी संख्या में चीन में बौद्ध धर्म को फैलाने जाते थे। अनेक लोग तो वहाँ बस गये थे।

क्या आप जानते हैं सबसे पहला बौद्ध विद्वान कश्यप मतंग चीन गया। उसे 67 ई. में चीनी सम्राट मिगेटी ने बुलाया था। वह लूलोंग नगर में रहने लगा, जो लू नदी के किनारे है।

धर्मप्रकाश, भद्रा, जिनभद्र, कुमारजीव, जिनगुप्त आदि अनेक विद्वान यात्री भारत से चीन गये। इस समय भारत में बौद्ध धर्म कम होता जा रहा था। कहा जाता है कि चीन के लूलोंग प्रान्त में भारतीयों की संख्या धीरे-धीरे लगभग 10,000 हो गई तथा जिनगुप्त चीन सम्राट का गुरु हो गया। ये विद्वान भारत से संस्कृत की पुस्तकें ले गये थे तथा इन्होंने इनका चीनी भाषा में अनुवाद किया। चीन में ये लोग सर्व-प्रिय थे तथा इन्हीं के प्रयत्नों से चीन में बौद्ध-धर्म और उसकी शिक्षाओं को बड़ा आदर और सम्मानपूर्ण स्थान मिला।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ—

(State whether the following statements are True/False)

5. प्राचीन लेखन कला जिसका विकास प्राचीन काल में हुआ, वही आज भी बनी हुई है।
6. चीन की दीवार के निर्माण में मजदूर विदेशों से मंगवाए गए थे।
7. कन्फ्यूशियस का जन्म 551 ई.पू. लून राज्य में हुआ।
8. मंडारिन किसानों का वर्ग था, जिन्हें बहुत कम सम्मान प्राप्त था।

19.5 सारांश (Summary)

- लगभग 5000 वर्ष पूर्व चीन में पश्चिम की ओर से मंगोल जाति के लोगों या कबीलों का आक्रमण हुआ। ये कबीले मध्य एशिया की ओर से आये थे तथा सभ्यता में बढ़े-चढ़े थे। वे पशुपालन तथा कृषि के उद्योगों से भलीभाँति परिचित थे। वे भेड़ों एवं चौपायों के बड़े-बड़े झुण्ड रखते थे। उनका समाज संगठित था और वे घर बनाना जानते थे। इन लोगों ने ह्वांगहो नदी के मैदान में अपना डेरा जमा लिया और यहाँ के स्थायी निवासी बन गये। यही लोग चीन के प्राचीन निवासी थे।
- चाऊ वंश ने 1122 ई. पू. से 225 ई. पू. तक अर्थात् लगभग नौ सौ वर्ष तक चीन में राज्य किया। इस वंश के शासन-काल में एक सुसंगठित राज्य का विकास हुआ और चीन ने एक अच्छे राज्य का रूप धारण किया। इसी काल में चीन में दो बड़े महात्मा हुए—कन्फ्यूशियस (Confucius) तथा लाओजी (Lao-Tse)। इस काल में चीन में शिक्षा का बड़ा प्रचार हुआ।

नोट

- प्राचीन काल में चीन में लेखन कला का विकास हुआ तथा लेखन प्रणाली आज तक ऐसे ही बनी हुई है जैसी कि उस समय थी। बाँस या लकड़ी के चपटे तथा चिकने पट्टों पर पुस्तकें लिखी जाती थीं। स्याही के लिए स्याही (रंगीन द्रव) और ब्रुश के समान बनी हुई कलमें प्रयोग की जाती थीं। यदि कोई अक्षर लिखने में गलत हो जाता था तो चाकू से खुरच कर उस स्थान को साफ कर लिया जाता था और पुनः लिखाई की जाती थी।
- शि-ह्वांग-टी अपने आप को चीन का प्रथम सम्राट कहता था तथा चाहता था कि चीन का इतिहास उसी के समय से आरम्भ माना जाए। इसके लिए उसने यह निश्चय किया कि सारे प्राचीन साहित्य को नष्ट कर दिया जाए। प्राचीन साहित्य के रहने पर उसकी इस आकाँक्षा का पूरा हो पाना असम्भव था। उसने कृषि, ज्योतिष और चिकित्सा शास्त्र की पुस्तकों को छोड़कर शेष सभी पुस्तकों को नष्ट करने की ठान ली। परिणाम यह हुआ कि चीन के प्राचीन और बहुमूल्य साहित्य के असंख्य ग्रन्थ नष्ट कर दिये गये।
- कन्फ्यूशियस के अनुसार शासक और मंत्रीगण आदर्श व्यक्ति होने चाहिए। उनके चरित्र दूसरों के लिए आदर्श होते हैं तथा इससे सामाजिक व्यवस्था ठीक होती है। उस काल की अव्यवस्था और गड़बड़ी में उनके ये उपदेश ही चीन की रक्षा कर सकते थे। उनका विचार ठीक था कि यदि जनता या समाज की हर एक श्रेणी के लोगों का जीवन नियमों के अनुसार ठीक हो जायगा, तो सांसारिक जीवन का दुख समाप्त हो जायेगा और समाज व्यवस्थित और सुख-समृद्धि से परिपूर्ण हो जायेगा। उनके नियमों का पालन करने से चीनियों का जीवन बहुत कुछ व्यवस्थित और शान्तिमय हो गया।
- चीन के सामाजिक जीवन पर महात्मा कन्फ्यूशियस, महात्मा लाओजी तथा महात्मा बुद्ध की शिक्षाओं का बड़ा प्रभाव पड़ा। इस प्रकार चीन में तीन धर्म या तीन प्रकार की शिक्षा का प्रचार हुआ—कन्फ्यूशियस धर्म, लाओ धर्म और बौद्ध धर्म। ये तीनों धर्म अपनी शिक्षाओं में बहुत कुछ मिलते हैं। तीनों ही जीवन में श्रेष्ठ आचार और आदर्श सहयोग पर बल देते हैं तथा नीच और पाप कर्मों और तुच्छ भावनाओं से दूर रहने की शिक्षा देते हैं। तीनों ही धर्म चीनियों के जातिगत स्वभाव—शान्तिप्रियता, युद्धों से उपरामता, शिष्टाचार, नियमित व्यवस्थित और कर्तव्य परायण जीवन—के अनुकूल थे।
- प्राचीन काल में चीन में सम्मिलित परिवार प्रणाली थी। पति-पत्नी और उनके बच्चों के अतिरिक्त चचेरे, मौसेरे भाई व उनकी पत्नी व बच्चे भी एक ही परिवार के सदस्य माने जाते थे। स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त नहीं था। पर्दा-प्रथा का चलन था। स्त्रियाँ प्रायः घरेलू काम ही करती थीं। उनको सामाजिक कार्यों में भाग लेने का अवसर नहीं मिलता था।
- चीन के निवासी आरम्भ में प्रकृति की शक्तियों की उपासना करते थे। उनका विश्वास था कि प्राकृतिक वस्तुओं जैसे पहाड़ों, नदियों आदि में जीव होता है। इसी जीव को वे ईश्वर या परमात्मा मानकर उसकी उपासना करते थे। चीनवासी अपने पूर्वजों की भी उपासना करते थे। चीनवासियों ने अपनी उपासना के लिए सुन्दर मन्दिरों का निर्माण किया था, जिन्हें पगोड़ा कहा जाता था।

19.6 शब्दकोश (Keywords)

- **शि-ह्वांग-टी**—चीन में इसका अर्थ है प्रथम सम्राट।
- **ताओ**—धार्मिक गुरु लाओजी द्वारा प्रसारित धर्म (Taoism)
- **ताऊ-ती चिंग**—महात्मा लाओजी की धार्मिक पुस्तक।

19.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. प्राचीन चीन की सभ्यता का परिचय दीजिए।
2. चीन के विभिन्न राजवंशों के शासनकाल में चीनी सभ्यता के विकास का उल्लेख कीजिए।

नोट

3. कन्फ्यूशियस और लाओजी की धार्मिक शिक्षाओं का चीन पर पड़े प्रभावों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
4. चीन की प्राचीन सभ्यता की विशेषताओं की समीक्षा कीजिए।
5. प्राचीन भारत और चीन के सम्बन्धों का परीक्षण कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. वर्ष	2. शासक	3. मंगोल	4. सिन
5. सत्य	6. असत्य	7. असत्य	8. असत्य।

19.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–20: सामन्तवाद पर विचार (Debates on Feudalism)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

20.1 समान्तवाद का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Feudalism)

20.2 समान्तवाद की संरचना (Structure of Feudalism)

20.3 सामन्तवादी व्यवस्था की विशेषताएँ (Features of Feudal System)

20.4 सारांश (Summary)

20.5 शब्दकोश (Keywords)

20.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

20.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सामन्तवाद का अर्थ और परिभाषा जानेंगे;
- सामन्तवाद की संरचना को समझेंगे;
- सामन्तवादी व्यवस्था की विशेषताओं से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्ययुगीन यूरोपीय सभ्यता के निर्माण तथा विकास में जितने तत्वों ने काम किया है उनमें एक विशेष प्रधान तत्व है सामन्तवाद। 9वीं सदी से लेकर 11वीं सदी तक यूरोपवासियों के जीवन के राजनीतिक, आर्थिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक पक्षों को सामन्तवाद ने केवल प्रभावित ही नहीं किया अपितु अपने उत्तरोत्तर विकास के लिए वे पक्ष इस पर आधारित भी थे। सच पूछा जाय तो 10वीं और 11वीं सदियों में यूरोपीय सभ्यता की बुनियाद सामन्तवाद पर ही कायम थी। कथित काल में यूरोपीय देशों में सामन्तवाद का उत्कर्ष और विकास हुआ था जिसने मानव-सभ्यता के निर्माण तथा विकास में महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया।

20.1 सामन्तवाद का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Feudalism)

सामन्तवाद की सटीक परिभाषा देना कठिन है। एक तरफ इसमें राजनीतिक-वैधता (Political-legal) के तत्व शामिल थे तो दूसरी तरफ सामाजिक-आर्थिक (Socio-economic) तत्व भी विद्यमान थे। यूँ सामन्तवाद राजनीतिक

नोट

तथा सामाजिक संगठन की रचना में योगदान करता रहा किन्तु इसका मूल संबंध भूमि से था। इस प्रकार सामन्तवाद में अनेक बातें शामिल थीं। इसके अतिरिक्त सामन्तवाद की जन्मभूमि तथा विकास-स्थल भी एक नहीं है। इसका प्रथम उद्भव फ्रांस में हुआ था और वही वह अपनी स्थिति की पराकाष्ठा पर पहुँच गया। पुन: जर्मनी, इटली, आदि देशों में इसका विकास हुआ और तत्पश्चात यूरोप के अन्य देशों में यह फैलता गया। यूरोप की तरह एशियाई देश भी इसके विकास-स्थल रहे। इन सारे देशों की सामन्ती व्यवस्था के अध्ययन तथा पर्यवेक्षण के उपरान्त ही विचारकों तथा मीमांसकों ने सामन्तवाद की व्याख्या इस प्रकार निर्धारित की है :

क्या आप जानते हैं 10वीं और 11वीं सदी में यूरोपीय सभ्यता की बुनियाद सामन्तवाद पर ही कायम थी।

प्रसिद्ध भारतीय विचारक श्री एम. एन. राय ने सामन्तवाद में तीन तत्वों का समावेश पाया है—"राजनीतिक तत्त्व, सामाजिक तत्त्व तथा आर्थिक तत्व। उनके अनुसार 'सामान्तवाद एक सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था थी जो मध्ययुगीन यूरोप में भूमि वितरण के आधार पर फली-फूली थी।'[1] विचारक का संकेत इस बात की ओर है कि सामंत सेना से राजा की सहायता करते थे (राजनीतिक), सामन्ततंत्र ने समाज के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित किया (सामाजिक) और समूची व्यवस्था भूमि (आर्थिक) पर आश्रित थी।

एक अन्य भारतीय इतिहासकार **श्री राम शर्मा** की दृष्टि में सामन्तवाद मात्र एक सामाजिक संगठन था। उनका कथन है; "यूरोप का मध्यकालीन सामन्तवाद एक सामाजिक संगठन था जो भूमि के स्वामित्व और उससे संबंधित सेवा की कुछ शर्तों पर आधारित था।" सामन्तवाद को सामाजिक संगठन का रूप देकर भी इसी विद्वान ने यह भी स्पष्ट किया है कि इस व्यवस्था में प्रशासन का तरीका, आर्थिक आवश्यकता तथा राजनीतिक दर्शन के गूढ़ सिद्धांत तथा तत्व भी शामिल थे।

पश्चिमी विद्या-विशारद **विच** (Weech) ने **श्री एम.एन.** राय के विचार का कुछ संशोधन के साथ समर्थन किया है। उन्होंने सामन्तवाद का मूलाधार भूमि को माना है। भूमि के आधार होने से दो भावनाओं का जन्म हुआ—रक्षा करने की भावना तथा सेवा करने की भावना। भूमि के चलते एक अन्य परिणाम भी घटित हुआ—समाज में शोषक-शोषित वर्ग का जन्म। **विच** महोदय ने लिखा है; "इस व्यवस्था में समाज का प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह पूंजीपति वर्ग का हो अथवा सर्वहारा वर्ग का, प्रजातंत्र का समर्थक हो या राजतंत्र का, राजा हो या प्रजा—एक दूसरे से बँधा था।" इसी विद्वान ने इसे और भी अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है; "सामन्ती व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति अपने से निम्न वर्ग का शोषण करने का अधिकार रखता था और अपने से ऊपर वालों से शोषित होने का।"

बिशप स्ट्यूब्स ने विश्लेषणात्मक ढंग से सामन्तवाद की व्याख्या प्रस्तुत की है। उसके अनुसार, "यह कहा जा सकता है कि भूमि के स्वामित्व के माध्यम से सामन्तवाद समाज का एक पूर्ण संगठन है जिसमें राजा से लेकर भूमिपतियों तक के सारे लोग संरक्षण तथा सेवा की शर्तों से एक-दूसरे से बँधे हैं। शर्त यह है कि राजा अपनी रैयतों का संरक्षण करें और रैयत अपने राजा की सेवा करें। संरक्षण और सेवा उस भूमि की किस्म तथ रकबा पर आधारित और नियमित होती है जो एक (रैयत) दूसरे (राजा अथवा भूमिपति) के द्वारा पाता है। उन प्रदेशों में जो राज्य का रूप धारण कर लिये हैं, संरक्षण और सेवा के अधिकारों में एक और अधिकार-क्षेत्राधिकार—जुट जाता है। भूमिपति अपनी रैयत की रक्षा के साथ-साथ न्याय का भी काम करता है, रैयत अपने स्वामी की सेवा के अतिरिक्त उसके पास अपनी समस्या तथा झगड़े संबंधी मुकदमा भी करता है। जिन प्रदेशों में सामन्तवादी सरकारों का विकास हो गया है वहाँ प्रजा के शासन की सारी शाखाएँ—राजनीतिक, आर्थिक, न्यायिक आदि इन्हीं शर्तों पर संचालित होती है। केन्द्रीय सरकार केवल छाया मात्र बनी रहती है।"

एक अन्य इतिहासकार **मायर्स** (Myers) का मत है कि "यह एक मध्यकालीन सरकार की पद्धति थी जो भूमि पर आश्रित थी और जिसका विकास मध्य युग के अन्तिम चरण में यूरोप में हुआ और ग्यारहवीं, बारहवीं तथा तेरहवीं सदियों में इसका पूर्ण विकास हुआ।" वास्तव में यह मध्य काल की सरकार की एक विशेष पद्धति थी जिसकी प्रधान

नोट

विशेषता यह थी कि भूस्वामी राजाओं की तरह संप्रभुता का अधिकार रखते थे। वे भूमि के स्वामी भी थे और शासक के अधिकारों से सम्पूरित भी थे।

मध्यकालीन यूरोप की विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए सामन्तवाद का जन्म हुआ था। एक विशेष परिस्थिति थी युग की अराजकता तथा अशान्ति। शार्लमाँ की मृत्यु के उपरान्त पश्चिमी यूरोप में लगभग दो-तीन शताब्दियों तक घोर अराजक स्थिति बनी रही और केवल नाममात्र को कानून और व्यवस्था रह गयी थी। बर्बर जातियों के आक्रमणों से यूरोप में केंद्रीय शासन-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी और राजाओं ने नाममात्र को अपनी टूटती-छीजती शक्ति के साथ अपनी स्थिति किसी तरह बनाये रखी। उत्तर में नारमनों तथा डेनों के आक्रमण, पूरब में हंगेरियनों तथा दक्षिण में मुसलमानों के आक्रमणों से यूरोप के प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण राज्य टुकड़ों में बँट गये। शासन छोटी-छोटी ईकाइयों में विभक्त हो गया। प्रत्येक इकाई एक स्थानीय लार्ड या सामन्त के अधीन होती थी। लोगों का जीवन संकटों से ग्रस्त हो गया। उस समय एक ऐसी शक्ति तथा व्यवस्था की आवश्यकता थी जो आम लोगों के जान-माल की रक्षा करते हुए अराजक तथा अव्यवस्थित स्थिति पर नियंत्रण कायम कर सके। इसी आवश्यकता ने यूरोप में सामन्तवाद को जन्म दिया। ऐसी बात हुई कि कुछ वीर पुरुषों ने जो ईकाइयों के स्वामी थे, ग्रामों तथा नगरों के निवासियों की सुरक्षा करने और अराजकता का दमन करने का उत्तरदायित्व अपने सिर पर ले लिया। उन्होंने ग्रामों तथा नगरों में दुर्गों का निर्माण कर लिया और वहाँ कुछ सैनिक रखने लगे। सैनिकों की सहायता से वे आसपास के निवासियों की रक्षा करने का काम करने लगे। धीरे-धीरे वे आसपास की भूमि का स्वामी बनते गये। वहाँ के कृषकों, श्रमिकों, व्यापारियों तथा अन्य वर्गों के लोगों ने भी उनकी अधीनता स्वीकार कर ली तथा भूमि और सुरक्षा के बदले उस वीर सामन्त को उन लोगों ने कर देना स्वीकार कर लिया।

इस तरह तत्कालीन समय तथा समाज की आवश्यकताओं के फलस्वरूप सामन्तवाद का जन्म हुआ। यह सब इतिहास में ऐसे समयों में अनेक बार हुआ है, जब केंद्रीय शासन लोगों के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करने में अक्षम हो गया। मिसाल के तौर पर, समाज में इस प्रकार की व्यवस्था प्राचीन मिस्र में विद्यमान थी। 900-1450 के बीच पश्चिमी यूरोप में यह व्यवहारतः हर किसी के जीवन में एक प्रधान शक्ति थी। सेना तथा सेवा पर आधारित भूमि धारण की यह व्यवस्था सामन्तवाद (Feudalism) कहलाती है। जिस जमीन या स्वत्व पर अपने से ऊपर की किसी शक्ति को शुल्क देना पड़ता है, वह क्षेत्र 'फ्यूड' कहलाता था। ऐसे एक या अनेक क्षेत्रों का मालिक 'फ्यूडल लार्ड' (Feudal Lord) कहलाता था। फ्यूडल लॉर्ड के लिए हिन्दी में सामान्यतः 'सामन्त' शब्द और उनकी परम्परा या प्रणाली के लिए 'सामन्तवाद' अथवा 'सामन्ततंत्र' शब्द का प्रचलन हुआ है।

> *नोट्स* सामन्तवाद न कोई प्रणाली, न योजना और न आयोजना थी। यह तो आवश्यकता के कारण हुआ एकमात्र विकास था।

प्लैट तथा ड्रमण्ड ने लिखा है, "जब रोमन साम्राज्य खण्ड-खण्ड होने लगा तब बहुत से कृषकों ने संरक्षण प्राप्त करने के लिए अपनी जमीनें शक्तिशाली भूमिपतियों को सौंप दी। बहुत से धर्मपरायण व्यक्तियों ने अपनी जमीनें चर्च को अर्पित कर दीं और उन्हें अपने जीवन काल में उन पर खेती करने का अधिकार मिल गया। इस प्रकार बहुत से विशेष सामन्त भूमिपति बन गए। इन्हीं लेखकों के अनुसार सामन्ततंत्र के विकास पर जर्मनों ने भी प्रभाव डाला। विजेता जर्मन सरदार प्रायः अपने अनुयायियों को भविष्य में भी उनकी सहायता प्राप्त करते रहने के लिए भूमि के अनेक टुकड़े प्रदान कर देते थे। जिस प्रकार बर्बर जर्मन योद्धा अपने लड़ाकू सरदारों के प्रति निष्ठा की शपथ लेते थे, उसी प्रकार सामन्तीय योद्धा अपने सामन्त स्वामियों के लिये लड़ने की पवित्र शपथ ग्रहण करते थे। मध्यकालीन राजा जो समूचे राज्य की रक्षा कर पाने में असमर्थ होते थे, बहुधा कुछ शक्तिशाली भूमिपतियों से सहायता की माँग करते थे। इस प्रकार के भूमिपतियों को वे पुरस्कार के रूप में कर से मुक्ति, भूमि अनुदान या राजा के हस्तक्षेप के बिना अपने प्रदेश का शासन करने की अनुमति देते थे। अन्त में जब शार्लमाँ के साम्राज्य का विभाजन हो गया और यूरोप के लोग नौर्थमेनों तथा मुसलमानों के आक्रमणों से भयभीत हो उठे तब यूरोप पर सामन्ततंत्र का पक्का अधिकार हो गया।

नोट

क्या आप जानते हैं सामंती व्यवस्था मूलत: एक जाति व्यवस्था थी, जिसमें श्रमिक योद्धाओं का पोषण करते थे।

20.2 सामन्तवाद की संरचना (Structure of Feudalism)

सिद्धान्ततः राजा की, चाहे वह दुर्बल ही क्यों न हो, स्थिति इस सामन्ती पिरामिड में सर्वोपरि थी। राजा के नीचे थे अधीश्वर (Over Lord) जो सबसे अधिक शक्तिशाली भूमिपति होते थे। ये अधीश्वर कभी-कभी अपनी भूमि का एक भाग, जो 'फीफ' (Fief) कहलाता था, अपने से छोटे भूमिपतियों को दे देते थे। ये अपेक्षाकृत छोटे भूमिपति इस प्रकार इन अधीश्वरों (सामन्तों) के 'अनुचर' (Vassal) बन जाते थे। ये अपेक्षाकृत छोटे भूमिपति अपने महत्त्व के क्रम से ड्यूक (Duke), काउन्ट (Count), बैरन (Barren) और नाइट (Knight) होते थे। ये अनुचर अपनी भूमि के कुछ भाग और आगे अन्य भूमिपतियों को दे सकते थे। इस प्रक्रिया से उन्हें अपने उप-अनुचर (Deputy Vassal) बना लेते थे। ये उप-अनुचर फिर आगे ऐसा ही कर सकते थे। चर्च के लोग भूमिपति (Lord), अनुचर (Vassal) या दोनों ही बन सकते थे। इन सामन्ती पिरामिड की सबसे निचली सीढ़ी पर काम करने वाले श्रमिक मुख्यत: कृषक दास (Serf) थे। ये कृषक दास अपनी भूमि के साथ बंधे होते थे। यदि भूमि किसी एक भूमिपति के हाथ से किसी दूसरे के हाथ में चली जाती थी, तो ये कृषक दास भी उस भूमि के साथ ही दूसरे भूमिपति के हाथ में पहुँच जाते थे।

टास्क 'फीफ' के हस्तांतरण की प्रक्रिया बताइए।

किसी अनुचर को 'फीफ' का हस्तान्तरण बड़ी तड़क-भड़क के साथ एक नाटकीय समारोह द्वारा मनाया जाता था। अनुचर बनने वाला व्यक्ति 'लार्ड' (अधीश्वर) की गढ़ी में आता था जहाँ इस अवसर के लिये और भी लोग एकत्रित होते थे। लार्ड अपनी गढ़ी के बड़े कमरे में बैठता था और यह आदमी अस्त्र रहित होकर नंगे सिर लौर्ड के सामने घुटनों के बल झुकता था। वह लॉर्ड का हाथ पकड़ता था और इस बात की शपथ लेता था कि वह 'लॉर्ड का आदमी' बनकर रहेगा अर्थात् उसके प्रति सदैव निष्ठावान बना रहेगा। चूंकि आदमी के लिये लैटिन शब्द 'होमो' (Homo) है, इसलिए यह शपथ 'होमेज' (Homage) कहलाती थी जिसे भारतीय भाषा हिन्दी में 'श्रद्धांजलि' कहते हैं। तब अधीश्वर उस आदमी को उठाकर खड़ा करता था और उसे शान्ति का चुम्बन देता था। इसके बाद अनुचर बाइबिल पर हाथ रखकर इस बात की शपथ लेता था कि वह अधीश्वर के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करेगा। यह 'स्वामीभक्ति की शपथ' (Fielty) कहलाती थी। अंत में अधीश्वर उस आदमी (अनुचर) का फीफ के साथ 'विनियोग' कर देता था अर्थात् उसे भूमि दे देता था। अनुचर को औपचारिक रूप से फीफ प्रदान करने का यह कार्य 'इनवेस्टीचर' (Investiture) कहलाता था जिसे भारतीय भाषा में 'अनुप्रतिष्ठापन' कह सकते हैं। मध्य युग के प्रारंभ में जब बहुत से लोग लिखना नहीं जानते थे, समारोह के इस भाग में इन्हें फीफ का स्वामित्व कागज पर लिखकर नहीं दिया जाता था, अपितु भूमि का प्रतिनिधित्व करने वाली कोई शाखा, मिट्टी का एक ढेला, दस्ताना, तलवार या कोई दूसरी वस्तु दी जाती थी। बाद में जब लोग लिखना सीख गये तब संविदा पत्र लिखकर हस्ताक्षर होने लगे। इस तरह होमेज, स्वामीभक्ति और विनियोग के पश्चात् वह आदमी अधीश्वर का सामन्त या अनुचर हो जाता था।

अनुचरों तथा अधीश्वरों को एक दूसरे के प्रति अपने दायित्वों तथा कर्तव्यों का पालन करना पड़ता था। अनुचर के कर्तव्य बहुत सुनिश्चित होते थे, पर स्थान-स्थान पर वे कुछ अलग-अलग थे। वैसे अग्रलिखित तीन कर्तव्य लगभग सभी जगहों में पालनीय माने जाते थे :

नोट

1. सामन्त (अनुचर) को आवश्यकता पड़ने पर प्रतिवर्ष कुछ दिन (प्राय: 40 दिन) अपने अधीश्वर (Lord) की ओर से लड़ाई में भाग लेना पड़ता था। अत: सामन्त का अपने अधीश्वर के प्रति मुख्य दायित्व सैनिक सेवा का था।
2. सामन्तों को बहुधा अपने अधीश्वर के न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में बैठना होता था और खबर करने पर उसे अधीश्वर के दरबार में अवश्य उपस्थित होना पड़ता था।
3. अवसर पड़ने पर सामन्त को तीन मौकों पर अधीश्वर की सेवा में नजराना (Aid) प्रस्तुत करना पड़ता था। वे मौके थे अधीश्वर के ज्येष्ठ पुत्र के 'नाइट' होने के अवसर पर, बड़ी पुत्री के विवाह के अवसर पर और अधीश्वर किसी का वादी बन जाए तो उसके उद्धार के लिये धन माँगे जाने पर।

कुछ सामन्तों के कुछ दायित्व ऐसे थे, जो विचित्र जान पड़ते हैं। दृष्टांत के तौर पर, एक सामन्त का दायित्व यह होता था कि यदि इंगलिश चैनल को पार करते समय राजा की तबियत खराब होने लगे तो वह उसके सिर को संभाले। यह सब उसे फीफ का उपयोग करने और अपने अधीश्वर का संरक्षण प्राप्त करने के बदले करना पड़ता था। इसके बदले में अधीश्वर पर सामन्त की जान-माल की सुरक्षा की जिम्मेदारी होती थी।

सामन्त को क्षेत्र (फीफ) उसके जीवन भर के लिए ही प्रदत्त होता था। धीरे-धीरे इसके पिता से ज्येष्ठ पुत्र के अधिकार में जाने का रिवाज चल पड़ा। परन्तु हर पीढ़ी में सामन्त होने के समारोह की प्रक्रिया होती थी, आज की तरह जमीन के स्वामित्व या तबादले का नियम तब नहीं था। तो भी जीवनभर के लिये क्षेत्र अधिकार में रहने की निश्चिन्तता के कारण बड़े सामन्त अपने को राजा से स्वतंत्र अनुभव करने लगे। छोटे सामन्त (Sub-vassal) भी, जो किसी बड़े सामन्त के आश्रित होते थे, राजा के प्रति कोई वफादारी महसूस नहीं करते थे। इस तरह सामन्त पद्धति में कुछ सामन्तों के हाथ में राजा से भी अधिक शक्ति होती थी।

सामन्तवाद भ्रामक और जटिल था। यदि प्रत्येक सामन्त का स्वामी (Lord) एक ही होता, तो सामन्तवाद सरल रहा होता। परन्तु बहुत बार किसी सामन्त को यह निश्चित करना ही कठिन हो जाता था कि वह किसका 'आदमी' है। यह हो सकता था कि उसकी एक फीफ एक भूमिपति से ली हुई हो और दूसरी फीफ बिशप से तथा यहाँ तक कि कोई तीसरी फीफ स्वयं राजा से लगी हुई हो। ऐसी स्थिति में उसके स्वामी भूमिपति एवं उसके सामन्तीय विशप के मध्य लड़ाई छिड़ जाने पर सामन्त जटिल घेराव में पड़ जाता था। अब उसे किसका साथ देना चाहिए? वह किसका 'आदमी' है। मान लीजिए कि राजा स्वयं ही अन्य भूमिपति या बिशप का सामन्त (Vassal) है। कभी-कभी कोई सामन्त अधिकाधिक भूमि प्राप्त करके अपने ही स्वामी भूमिपति या यहाँ तक कि राजा से भी अधिक शक्तिशाली बन सकता था।

कई बार ऐसे समय झमेले में डाल देनेवाली दशा उपस्थित हो जाती थी, जबकि कोई ऐसा बिशप मर जाता था, जो सामन्तीय अनुचर भी होता था। तब उसकी फीफ पर चर्च अपना दावा जताता था। बहुत से स्वामी भूमिपति इस बात पर बहुत रुष्ट हो जाते थे कि उनके अनुचर ने अपनी फीफ का कुछ भाग अपने किसी उप-अनुचर को दे दिया है। यह उप-अनुचर कोई बिल्कुल अपरिचित व्यक्ति या यहाँ तक कि स्वामी भूमिपति का शत्रु भी हो सकता था। इन अनुचरों तथा अधीश्वरों के दायित्व ठेके या करार जैसे होते थे। फिर भी हजारों सामन्तीय करारों में से बहुत थोड़े ही ऐसे थे, जो लिखित थे।

20.3 सामन्तवादी व्यवस्था की विशेषताएँ (Features of Fuedal System)

जागीर (फीफ) सामन्तवाद की एक बड़ी विशेषता है और अपनी इसी विशेषता के कारण सामन्तवाद बहुत वर्षों तक एक स्थायी शक्ति (Stabilising Force) के रूप में अपना अस्तित्व कायम रख सका। मध्य काल के अधिकांश लोग अमीर नहीं हुआ करते थे। समाज के पाँच में से चार आदमी सामन्त व्यवस्था को अपने श्रम के बदले पर चलाते थे, क्योंकि अमीर लोग सिवाय सेना में जाने के दूसरा काम नहीं करते थे। जनसंख्या का यह बड़ा भाग मुख्यत: किसानों का होता था। हर अमीर परिवार एक जागीर के बल पर जीवित रहता था। जागीर जमीन का एक बहुत बड़ा हिस्सा होता था और एक-एक सामन्त के पास ऐसी कई जागीरें हुआ करती थीं। हर जागीर में एक गढ़ी या जागीरदार

नोट

का भवन हुआ करता था जिसमें सामन्त निवास करता था, एक गाँव होता था जिसमें उसके नौकर-चाकर रहते थे, एक चर्च होता था, फलों के बगीचे होते थे, वाटिकाएँ होती थीं और चारागाह होते थे। हर जागीर में एक दरबार हुआ करता था जिसका सभापति सामन्त होता था। चूंकि जागीर प्राय: दूर-दराज में होती थी, इसलिये यह अपने आप में ही हर दृष्टि से पूर्ण तथा आत्मनिर्भर हुआ करती थी। शान्ति के लम्बे कालों में राष्ट्र या समाज अपनी आवश्यकता की सारी चीजों का स्वयं उत्पादन करना अनावश्यक मानते हैं। अपने लिये आवश्यक वस्तुओं को वे अन्य राष्ट्रों या समाजों के साथ व्यापार करके प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु युद्ध-काल में या युद्ध के लिये तैयारी करते समय समाज अपनी आवश्यकता की सारी वस्तुओं का उत्पादन करने का प्रयत्न करते हैं। संक्षेप में कहा जाए तो वे आत्मनिर्भर बनने का यत्न करते हैं। निरन्तर होने वाली लड़ाई-झगड़ों और व्यापार में पड़नेवाली बाधाओं ने मध्यकाल की जागीरों को आत्मनिर्भर बनने के लिये प्रेरित किया। किन्तु पूर्ण आत्मनिर्भरता अब की तरह तब भी असंभव थी। दृष्टांत के रूप में, लोगों को अपनी खाद्य सामग्रियों के परीक्षण के लिये नमक और मसालों का आयात तो करना ही पड़ता था, औजार बनाने के लिये लोहे का भी आयात करना पड़ता था। फिर भी, जागीरें बहुत हद तक आत्मनिर्भर हुआ करती थी। गाँव, वाटिका आदि के अलावा उनमें कारखाने, खलिहान और शायद एक चक्की भी होती थी। गढ़ के चारों ओर मीलों दूर तक खेत होते थे, जो देखने में शतरंज की बिसात जैसे जान पड़ते थे। जागीर के अपने मोची और बढ़ई, चक्की चलाने वाले और कलाल, गड़ेरिये और सूअरपाल होते थे। सारा काम कृषक दासों तथा स्वतंत्र किसानों को करना होता था, क्योंकि शारीरिक श्रम करना सरदार के लिये असम्मानजनक माना जाता था।

सम्भवत: 100 ई. के रोमन किसान की खेती की पद्धतियाँ 1000 ई. के मध्ययुगीन कृषक दास की खेती की पद्धतियों से अच्छी होती थी। जागीर की जिस भी जमीन पर खेती हो सकती थी, उसे तीन बड़े-बड़े टुकड़ों (खेतों) में विभक्त कर दिया जाता था। प्रत्येक किसान को थोड़ी-थोड़ी भूमि दे दी जाती थी, जिसमें से कुछ बढ़िया और कुछ घटिया होती थी तथा जो उन तीनों खेतों में अलग-अलग जगह बिखरी होती थी। यदि कोई किसान अपनी किसी भूमि की पट्टी का देखभाल न करता तो उसमें घास-फूस उग आता और उससे साथ वाली भूमि की पट्टी की फसल भी खराब हो जाती। बहुत सी जमीन एक पट्टी से दूसरी तक जानेवाली पगडंडियों के रूप में बेकार पड़ी रहती। मध्यकालीन यूरोपीय किसानों को खादों के प्रयोग तथा महत्त्व का ज्ञान बहुत कम था। उन्हें इस बात का भी ज्ञान नहीं था कि फसलों को बदल-बदल कर बोने के सिद्धान्त का किस प्रकार लाभदायक रूप में प्रयोग किया जा सकता है। वे समझते थे कि भूमि की उर्वरता को बढ़ाने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि वे प्रत्येक वर्ष बारी-बारी से अपने तीन खेतों में से एक को बिना बोये छोड़ दिया करें। उनके लकड़ी के बने हल, दरांतियाँ तथा अन्य औजार अनगढ़ होते थे। अत: कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी प्रति एकड़ उपज थोड़ी-सी ही होती थी। वे खेती करने वाले पशुओं का वैज्ञानिक ढंग से संवर्द्धन भी नहीं कर पाते थे। चूंकि अच्छी और बुरी नस्ल के ढोर एक साथ चारागाहों में खुले रूप में घूमते-फिरते थे, उनकी सन्तान प्राय: दुबली और छोटी होती थी।

सामन्तवादी व्यवस्था में भूमि को लेकर उप-अनुचरों के बीच झगड़े हो जाया करते थे। राजा के सामन्त अक्सर आपस में लड़ा करते थे और कभी-कभी राजा से भी लड़ पड़ते थे। ये युद्ध किसानों द्वारा व्यवहार में लायी जाने वाली जमीन पर होते थे तथा इसमें बर्बाद होनेवाली सम्पत्ति या फसल की कोई परवाह नहीं करता था। चर्च ने सामन्तों के साथ-साथ किसानों पर पड़ने वाले युद्ध के बुरे प्रभावों को देखकर इतनी अधिक लड़ाइयाँ होने पर रोक लगाने की चेष्टा की। उसके अनुसार छुट्टियों के दिन, ईस्टर के पहले चालीस दिनों पर, और हर हफ्ते के बृहस्पतिवार, शुक्रवार, शनिवार और रविवार के दिनों पर युद्ध की वर्जना करने के लिए धर्म-संधि की घोषणा की गयी। युद्ध के दौरान किसानों, व्यापारियों तथा औरतों को सताने की मनाही कर दी गयी। किन्तु चर्च को संधि के कार्यान्वयन के लिए कठिनाइयों का अनुभव करना पड़ा।

गढ़ (Castle) सामन्तवाद की एक अन्य रोचक विशेषता है। प्रत्येक भूमिपति (Lord) अपनी जागीरों में बनी गढ़ियों में निवास करता था। वह अपना गढ़ ऐसा बनाता था कि वह घेराबन्दी का 'तिरस्कार-पूर्वक उपहास कर सके।' गढ़ियों का प्रमुख उद्देश्य आराम नहीं था, बल्कि सुरक्षा थी। रक्षा की दृष्टि से ये गढ़ साधारणतया सीधी खड़ी चट्टानों पर या द्वीप में ऊँची जगह पर पत्थर से बनाये जाते थे। इनके चारों ओर सुदृढ़ दीवारें घिरी रहती थी और दीवारों के कोनों पर पहरे की चौकियाँ बनी रहती थीं। दीवारों के चारों ओर चौड़ी और गहरी खाई खुदी रहती थी

नोट

जिसमें कीचड़ तथा पानी भरा रहता था ताकि किसी शत्रु को इन्हें पार करके सीढ़ियाँ लगाने में और दीवार चढ़ने में कठिनाई हो। इसके फाटक पर एक उठाऊ पुल बना रहता था जिसे जरूरत के समय लोगों को भीतर करने के लिए गिराया और दुश्मनों को रोक रखने के लिए उठाया जा सकता था। गढ़ पर घेरा पड़ जाने की दशा में, गढ़ के रक्षक छत के आसपास बने एक रास्ते पर खड़े होकर या दीवारों और बुर्जियों से बनायी हुई दरारों में से नीचे आक्रान्ताओं पर पत्थर या तप्त शीशा फेंका करते थे या तीर चलाया करते थे। घेरा डालने वाले लोगों के आक्रमण का मुख्य साधन एक चलती फिरती बुर्जी होती थी, जिसमें सैनिक होते थे। इस बुर्जी को खाई पर एक अस्थायी पुल बनाकर उस पर से लुढ़काते हुए खाई के पार ले जाया जाता था। आक्रान्त लोग दीवारों को लांघने के लिए सीढ़ियों का, लकड़ी की दीवारों को तोड़ने के लिए शहतीरों का और गढ़ की रक्षा व्यवस्थाओं के पार पत्थर फेंकने के लिए एक उपकरण का भी प्रयोग किया करते थे। उनका मुख्य लक्ष्य भीतर बुर्ज (अन्त कोर्ट) होता था जो 'डंजन' कहलाता था। गढ़ी का सबसे दृढ़ और सर्वाधिक सुरक्षित स्थान डंजन ही था। यही एक ऐसा कक्ष था, जहाँ उनके परिवार के अधिकांश क्रिया-कलाप होते थे। यहीं वे खाते थे, यहीं मनोरंजन करते थे और यदि किसी हमले में कोई बाहरी दीवार गिर पड़ी तो गढ़ी के सभी लोग रक्षा के लिए अन्त कोर्ट में चले जाते थे।

टास्क 'गढ़' की विशेषताएँ अपने शब्दों में लिखें।

यह गढ़ छोटा-सा बढ़िया दुर्ग तो होता ही था, किन्तु मध्ययुगीन मुस्लिम प्रासादों की तुलना में यह निवास-स्थान की दृष्टि से अत्यधिक असुविधाजनक होता था। गन्दी हवा, सील और अंधकार से परिपूर्ण यह गढ़ मनुष्यों की अपेक्षा चूहों के रहने के लिए अत्यधिक उपयुक्त था। दुर्गंध को मारने के लिए पुआल बिछे फर्श पर गुलाब की पंखुरियाँ या पुदीने की पत्तियाँ बिखेरी जाती थीं। इन गढ़ियों में ठंड इतनी अधिक रहती थी कि गर्मीपाने के लिए अंगीठियों का प्रबन्ध रखना पड़ता था। खिड़कियों और दरवाजों के बेतुके पल्लों के कारण हवा खिंचकर भीतर आती रहती थी। गढ़ियों में धुँधलका-सा छाया रहता था क्योंकि उनमें जो खिड़कियाँ होती भी थीं वे दीवारों पर बने मौरवे जैसी होती थी और जिनसे बाहर के किसी दुश्मन को भीतर तीर मार पाना बहुत मुश्किल पड़ता था। फर्शों पर नरकुल या सरकंडे और फूल बिछे रहते थे। जब खाना खाने का समय आता था, तब खम्भों के ऊपर तख्ते बिछा दिये जाते थे जो मेज का काम करते थे। मेजों का जूठन कुत्तों के खाने के लिए फर्श पर फेंक दिया जाता था। गढ़ियों में होनेवाले सहभोजों में मसालेदार सूपों, मांस, मछली और फल, मिष्ठान्न आदि बढ़िया खाद्यों के बारह-बारह तक दौर परोसे जाते थे। भूमिपति, उसका परिवार तथा अत्यधिक सम्मानित अतिथि मुख्य मेज पर भोजन करने बैठते थे। मध्ययुग के पिछले भाग तक भी अंगुलियों, छुरियों और चम्मचों का प्रयोग तो होता था, किन्तु काँटों और उपवस्त्रों (नैपकिन) का प्रयोग शुरू नहीं हुआ था। सामन्त लोग कई गढ़ियाँ रखना पसन्द करते थे। इससे जब एक गढ़ी को, जिसमें वे रहते थे, हवादार बनाने के लिए कुछ दिन खुला रखने की या उसमें नये सरकंडे बिछवाने की जरूरत पड़ती थी, तब वे किसी दूसरी गढ़ी में जा सकते थे। शयनागारों की दीवारों पर पर्दे टंगे होते थे, जिन पर सुन्दर मच्छरदानियाँ लगी रहती थीं। परन्तु इन शयनागारों में इन पलंगों पर शयन करने वाले लोगों को एकान्त नहीं मिलता था क्योंकि अतिथि लोग तथा दासियाँ भी इन्हीं में सोते थे। मुर्गियों के बच्चे भी इनमें ही डोलते-फिरते थे।

गढ़ी में रहने वाले परिवार का प्रिय खेल शतरंज था। इसके अतिरिक्त चौसर, ताश वगैरह भी खेले जाते थे। इंग्लैंड में बड़े दिनों पर बच्चे और वयस्क सभी आँख-मिचौली खेलते थे। घर के भीतर और बाहर खेला जाने वाला टेनिस और लोमड़ी का शिकार करने जाना लोकप्रिय मनोरंजन थे। लेकिन इन मनोरंजनों के बावजूद मध्यकालीन सामन्तों और उनकी महिलाओं को बहुतेरे दिन निष्क्रियता और मनहूसियत में बिताने पड़ते थे।

क्या आप जानते हैं गढ़ की महिलायें शान-शौकत से तो रहती थीं किन्तु उनके अधिकार बहुत ही कम थे। तेरह वर्ष की एक अबोध बालिका तथा साठ वर्ष के एक खूसट बुड्ढे का विवाह बहुत ही अजीब मालूम पड़ता है।

किन्तु मध्यकालीन अभिजात वर्ग में इस प्रकार के विवाह हुआ करते थे। यदि कोई सामन्त मर जाता और उसकी कन्या होती तो अधीश्वर उससे विवाह कर लेता था। वह इस बात का पक्का निश्चय कर लेना चाहता था कि नया सामन्त उसके प्रति पूर्ण निष्ठावान रहेगा।

लड़की को उसके शैशव काल से ही अपने भावी पति को प्रसन्न करने की कला सिखाई जाती थी। अपने प्रश्वास को मधुर बनाने के लिए वह एक प्रकार के सुगंधित बीज चबाया करती थी। पतली बनी रहने के लिये वह संयत भोजन किया करती थी। मनोरंजन का बढ़िया साधन बनने के लिये वह युद्ध-प्रेमी योद्धाओं की उजड्ड बातचीत सुनने का अभ्यास करती एवं डाँट-फटकार कभी न करती। उससे आशा की जाती थी कि वह गाना, वाद्य बजाना, नृत्य करना और घोड़े पर चढ़ना जानती होगी। साम्मुख्यो तथा सहभोजों के अवसर पर अपनी तड़क-भड़क दिखाने के लिए मध्ययुग की महिलाएँ अपने सबसे बढ़िया और सबसे सुन्दर कढ़ाई वाले चोंगे पहना करती थीं। उनकी इकहरी देह, चमकीले रंगों वाली और कसी हुई पोशाकों में और भी निखर उठती थी। उनके टोपों के कुछ नमूने तितलियों से मिलते-जुलते होते थे, कुछ टोप छोटी टोपियों जैसे होते थे। इस बात का पक्का निश्चय रखने के लिए एक बार अपने पति के हृदय पर अपना अधिकार कर लेने के बाद वह उस अधिकार को बनाये रख सकेगी, किसी भी महिला के लिए बढ़िया बुनाई और कशीदाकारी जानना और बढ़िया आतिथ्य-सत्कार करना आवश्यक होता था। समय-समय पर अपने पति की अनुपस्थिति में उससे आशा की जाती थी कि वह अपनी जागीर का प्रबंध संभालेगी। फिर भी महिलाओं को बहुत कम कानूनी अधिकार प्राप्त थे। उन्हें जो सम्पत्ति उत्तराधिकार में प्राप्त होती थी, वह उनके पतियों की हो जाती थी। पत्नी को पीटना कानून-सम्मत था और पत्नियों की पिटाई प्रायः हुआ करती थी।

नाइट बनने की परम्परा का प्रचलन सामन्तवाद के कारण ही हुआ। शायद पहले नाइट जर्मनी के तरुण योद्धा हुआ करते थे, जो अपने साथ अपने अस्त्रों को लेकर चलते थे और समूचे कबीले के समक्ष प्रस्तुत किये जाते थे। एक सादे और साधारण से समारोह द्वारा नाइटों को कबीले का समुचित रूप से सदस्य बना लिया जाता था।

क्या आप जानते हैं प्रारंभिक नाइट बहुत भयानक योद्धा होते थे। ये अच्छे तैराक होते थे और फरसे तथा तलवार चलाने में सिद्धहस्त होते थे।

कालान्तर में इसी युग में शौर्यता या शूरत्व (Chivalry) का मानक आचार विकसित हो गया जो फ्रेंच (भाषा) के एक शब्द से लिया गया था जिसका अर्थ होता है "अश्वारोही"। शौर्य और शूरता के आदर्श ईसाइयत के अनुकूल होते थे और इसलिये दूसरी दृष्टियों से उस निर्मम समाज में, जिसमें 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का नियम ही लागू था, इसका मानवोचित प्रभाव पड़ता था। नाइटो से उदारता, भद्रता, दुर्बलों की रक्षा और सम्मानित जीविका और सत्य के लिये लड़ने में निर्भीकता की प्रतिज्ञा करायी जाती थी। वे सदैव अपने प्रतिष्ठित मान के अनुरूप ही जीवन नहीं बिताते थे, लेकिन शौर्य उनको इसके लिये प्रयत्नशील होने का एक आदर्श प्रदान करता था।

नाइट बनने की इस परम्परा में कोई अफसर नहीं हुआ करता था, इनका कोई प्रत्यक्ष गठन नहीं था और कोई जन्म से नाइट नहीं होता था। किन्तु नाइट होना इतना सम्मानित समझा जाता था कि राजागण भी नाइट की उपाधि पाने को लालायित रहते थे। कोई आदमी सिर्फ किसी दूसरे नाइट से ही नाइट की उपाधि पा सकता था और उसे यह उपाधि कोई ऐसी बहादुरी का काम करने पर ही दी जाती थी। इस विशिष्ट उपाधि के योग्य और उपयुक्त होता था।

सामन्तों के पुत्रों को नाइट बनने की शिक्षा दी जाती थी। जब कोई पुत्र सात वर्ष का हो जाता था तब उसे किसी सामन्त की गढ़ी में भेज दिया जाता था। वहाँ जाकर वह भृत्य बन जाता था। भृत्य के रूप में वह गढ़ी की महिलाओं की परिचर्या करता था। उसके अतिरिक्त वह तराशने तथा खाना परोसने का भी काम सीखता था। किन्तु सबसे बड़ी बात थी शिष्टता और दूसरों का लिहाज करने की शिक्षा। उसे उन सन्तों की शिक्षाप्रद कहानियाँ सुनायी जाती थीं जिन्होंने ईसाइयत की उन्नति के लिये राक्षसों और दैत्यों से युद्ध किया था। पादरी आमतौर पर नाइटों को पढ़ना-लिखना सिखाते थे। वे शिकार करना, नृत्य करना तथा संगीत-वाद्यों को बजाना सीखते थे। चौदह-पंद्रह साल की उम्र होते ही भृत्य की शिक्षा का प्राथमिक काल समाप्त हो जाता था और वह 'स्क्वायर' बन जाता था। इस काल

नोट

में वह घुड़सवारी की कला, हथियार चलाने की कला तथा युद्ध प्रशिक्षण कला का प्रशिक्षण लेता था। इस चरण में उसका प्रमुख कर्तव्य था अपने स्वामी के जिरह-बख्तर को लक-दक बनाये रखना। जब उसके स्वामी किसी युद्ध में भाग लेने को जाते थे या किसी क्रीड़ा में शामिल होने के लिये प्रस्थान करते थे तो वह भी उनके साथ जाता था। स्वामी के जख्मी हो जाने पर यह आशा की जाती थी कि स्क्वायर उसे युद्ध-स्थल से दूर किसी सुरक्षित स्थान पर उठा ले जायेगा। इसके उपरान्त तीसरी स्थिति आती थी और स्क्वायर को नाइट की उपाधि प्रदान कर दी जाती थी। उपाधि देने का समारोह काफी गंभीर तथा प्रभावशाली हुआ करता था। वह युवक अपने जिरह-बख्तर के साथ चर्च जाता था जहाँ वह सारी रात सिजदे में झुका रहता था। दूसरे दिन सुबह को स्नान करने और नवीन परिधान धारण करने के उपरान्त वह चर्च की प्रार्थना में शामिल होता था। चर्च में वापस आकर वह जिरह-बख्तर पहनता था और फिर वह सामन्त के सम्मुख सत्यनिष्ठापूर्वक नतमस्तक होता था और फिर उसे 'नाइट' की उपाधि मिलती थी। पुराना नाइट उसके कंधे पर तलवार की पल (धार) वाले भाग से तीन बार यह कहते हुए हल्की चोट करता था : "ईश्वर के संत माइकेल और संत जार्ज के नाम पर मैं तुझे नाइट की उपाधि प्रदान करता हूँ; बहादुर बनो, शिष्ट बनो, वफादार बनो।"

सामंती श्रेणियाँ—सामन्तवादी व्यवस्था पिरामिडी थी जो अनेक श्रेणियों के मिलने से बनी थी। इन श्रेणियों का, जिनका राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक महत्त्व था, वृहत उल्लेख करना आवश्यक है।

किसान—इस व्यवस्था में सबसे निम्न बिन्दु पर किसान थे। जागीर के किसान दो श्रेणियों में विभक्त थे—स्वतंत्र जन और कृषक दास। कुछ थोड़े से किसान स्वतंत्र ठेके पर भूमि लेकर खेती करने वाले खेतिहर थे, जो भूमिपति को लगान देते थे, पर अधिकांश किसान कृषक दास थे। कृषक दास उस जमीन पर ही रहने को बाध्य थे जिस पर वे गुजर-बसर करते थे। दूसरे शब्दों में कृषक दास का अधिकांश समय अपने भूमिपति की जमीन पर बिना वेतन लिये खेती करने में व्यतीत होता था तथा उसकी फसल का भी कुछ अंश लगान के रूप में भूमिपति के पास पहुँच जाता था। इन कृषक दासों को सड़कों, पुलों और मकानों की भी मरम्मत करनी पड़ती थी। तंदूर, चक्की और अंगूर का रस निकालने का पेंच भूमिपति के होते थे। यदि कोई किसान उनका उपयोग करना चाहता था तो उसे शुल्क देना पड़ता था। यदि कोई किसान अपनी फसल को चरते हुए किसी हिरन को मार डालता, तो उसकी सजा तुरन्त दी जाती थी तथा वह कठोर होती थी। कभी-कभी किसानों का कोई समूह विद्रोह कर बैठता। उनकी लाशें पेड़ों से लटका दी जातीं, जो अन्य लोगों के लिये चेतावनी का काम करती। एक मध्ययुगीन मठवासी ने भूमिपतियों को भर्त्सना करते हुए कहा था : "तुम कुलीन सरदार भेड़िये हो......तुम गरीबों के खून-पसीने पर जीते हो। तुम आततायी और उत्पीड़क हो।"

> *नोट्स* नाइट होना इतना सम्मानित समझा जाता था कि राजागण भी नाइट की उपाधि पाने को लालायित रहते थे। कोई आदमी सिर्फ किसी दूसरे नाइट से ही नाइट की उपाधि पा सकता था और उसे यह उपाधि कोई ऐसी बहादुरी का काम करने पर ही दी जाती थी।

यद्यपि कृषकदास वस्तुत: दास नहीं थे, किन्तु उन्हें स्वतन्त्रता बहुत कम प्राप्त थी। एक कृषकदास अपने भूमिपति की अनुमति के बिना जागीर को अस्थायी रूप से भी छोड़कर नहीं जा सकता था। उसे अपनी भावी पत्नी के लिए भी अपने भूमिपति की स्वीकृति प्राप्त करनी होती थी। जिस प्रकार वह भूमि के साथ बँधा था, उसी प्रकार उनका मन अंधविश्वास, अज्ञानता तथा निरक्षरता से बँधा हुआ था। उसे न तो विद्यालय में जाकर और न समाज के लोगों के साथ विचार-विनिमय करके ही शिक्षा प्राप्त करने का मौका मिलता था। फिर भी, कभी-कभी प्रतिभा-सम्पन्न कृषक दासों को चर्च के विद्यालय में भर्ती होने के लिए छात्रवृत्तियाँ मिल जाती थीं।

कुछ खास घटनाओं तथा परिस्थितियों के चलते कृषकदास स्वतंत्र बनाये जा सकते थे। यदि कोई कृषकदास भाग जाये और एक साल तथा एक दिन बाहर ही रह जाये तो वह स्वतंत्र था जहाँ चाहे वह भागकर जा सकता था। आसपास की जागीरों में उसे प्रवेश नहीं मिल सकता था और नगरों में उसे जीविका चलाने के लिये बहुत कम ही

नोट

काम मिल पाता था। यदा-कदा सामन्त अपने किसी कृषकदास को किसी असाधारण सेवा के उपलक्ष्य में स्वतंत्र बना दिया करता था। इसके अतिरिक्त नया स्वामी मिलने पर वह उसके यहाँ जा सकता था।

जागीर (Manor) का वह छोटा-सा गाँव, जिसमें कृषकदास रहते थे, एक कमरे की झोंपड़ियों का बना होता था जिसका छप्पर फूस का तथा फर्श कच्ची मिट्‌टी का बना होता था। झोंपड़ी में कोई खिड़की नहीं होती थी। इसकी दीवार आसपास से जुटाए हुए पत्थरों को चुनकर बनायी जाती थीं। कृषकदास अक्सर कच्ची जमीन के फर्श पर ही आग जलाया करते थे और उसक धुँआ दीवारों में बनी दरारों से होकर निकलता रहता था। मौसम खराब होने पर उनकी मुर्गियां या सूअर भी अक्सर शरण लेने के लिये झोंपड़ी में आ जाते थे। मकान में सामान बहुत कम और बेढ़ंगे हुआ करते थे। परिवार एक कोने में या एक मचान पर सो रहता था। इन मकानों में रहने वालों का जीवन बड़ा रद्‌दी हुआ करता था। मैली-कुचैली पोशाक पहने उसकी पत्नी पनीर, काली रोटी और कभी-कभी सूअर के नमकीन मांस का मोटा भोजन तैयार करती थी। कृषकदास अपना लम्बा और धूल भरा कुरता और ढीला ऊनी पायजामा पहने तथा शायद अपने लकड़ी के खड़ाऊँ सरीखे जूते या चमड़े के बूट तक पहने-पहने पुआल के ढेर पर सो जाया करता था। बहुतेरे बच्चे पैदा होते थे, लेकिन चूँकि सफाई बहुत कम होती थी और दवा-दारू के बारे में भी अच्छा ज्ञान नहीं था, इसलिये कृषकदास का आयुष्य काल छोटा ही होता था और मृत्यु का अनुपात काफी ऊँचा होता था। खाने-पीने का भी उनके पास उतना ही अभाव था जितना कपड़ों का। आमतौर से बिना खमीर डाली हुई रूखी-सूखी जौ की रोटी, फली, प्याज और बंदगोभी खाते थे। हालाँकि किसानों को जागीर में पड़ने वाले नदी-नालों में मछलियाँ पकड़ने की अनुमति थी, लेकिन फिर भी माँस उनको छठे-छमासे ही मिल पाता था। यदि जागीर में कहीं थोड़ा-बहुत नमक मिलता भी था तो उसका उपयोग किफायत से करना पड़ता था। मीठे के नाम पर उन्हें किसी प्रकार शहद मिल पाता था। जब कभी सूखा पड़ता था या जब लड़ाई से या शिकारियों के दल द्वारा फसल रौंद दी जाती थी, तब किसानों को भीषण कष्टों को सामना करना पड़ता था। उनमें से बहुतेरे तो भूखों मर जाते थे। फिर भी वे कभी बेकार नहीं रहते थे। उन्हें जमीन से बेदखल नहीं किया जा सकता था। अकाल या युद्ध के दिनों को छोड़कर उन्हें इस बात का भरोसा रहता था कि उन्हें खाने को तो मिल ही जायेगा। चर्च उन्हें आध्यात्मिक शिक्षा देता था। कभी-कभी यह अन्य लोगों के साथ मिलकर गाँव के हरे मैदान में खेल खेलता। उनके जीवन में कुछ उल्लासमय क्षण भी होते थे, जैसे क्रिसमस और मई दिवस के समारोह। किन्तु उनका जीवन निराशा से भरा और कठोर था।

कृषक तथा कृषकदास के बाद अधीश्वर और सामन्त थे जिनको मिला-जुलाकर लॉर्ड या सामन्त कह सकते हैं। सामन्ती यूरोप में मनुष्यों का प्रबंधक बैरोन (Baron) था जिसे लैटिन में डोमिनस (Dominus), फ्रेंच में सीजनियर (Seigneur) जर्मन में हर्र (Herr) अंग्रेजी में लॉर्ड (Lord) कहा जाता था। इनके तीन उत्तरदायित्व थे—अनुचरों या कृषकों तथा उनकी भूमि की रक्षा करना, इन भूमियों पर खेती, उद्योग तथा व्यापार का संगठन करना और युद्ध के समय राजा की सहायता तथा सेवा करना। जिन्होंने इस प्रकार का संरक्षण दिया, वे ही भूमिपति या अधीश्वर बन गये। भूमिपति होने के कारण वे दिनोंदिन धनी होते गये। कृषकदास तथा अनुचरों पर उनके अधिकार तथा नियंत्रण कायम थे। वही अनुचरों को तथा अनुचर कृषकदासों को जीवन भर के लिए भूमि देते थे। कृषकदास इसके बदले अपने स्वामी की अनेक प्रकार की सेवायें किया करते थे। भूस्वामी भोज के समारोहों के समय अपने गढ़ का प्रवेश द्वार खोलता था और सारे कृषकदासों को भोजन कराता था। वह पुलों, सड़कों, नहरों, व्यापार आदि की व्यवस्था करता था। जागीर में वह बाजार की व्यवस्था करता था और विभिन्न उत्पादित सामग्रियों (जिसके उत्पादन कृषकदास ही होते थे) की बिक्री की व्यवस्था करता था। वह अपनी जागीर में न्यायाधीश भी था और कृषकदासों को जुर्माना लगाता था।

सामन्त—लॉर्ड रंगीन सिल्क के परिधान धारण करते थे और काँख तले से वस्त्र निकालकर सिर तक ले जाते थे। वे छोटे जांघिया और कच्छा भी पहनते थे। पैरों को बूट (लम्बे जूते) से ढकते थे। कमर में बेल्ट पहनते थे, जिसमें तलवारें लटकती रहती थीं। अधीश्वर सुबह में बिछावन का त्याग करता था, मीनार पर चढ़ता था, द्रुतगति से जलपान करता था और आम जनता के बीच पहुँच जाता था। वह नौ बजे ही भोजन करता था और दिन भर जागीर के विभिन्न कार्यों की देखरेख, समस्याओं का निदान आदि करता रहता था। वह रसोई पकाने वाले, सेवकों आदि को दिन भर

नोट

आदेश देता रहता था और अनेक आगन्तुकों के साथ शाम में पाँच बजे पुन: भोजन करता था। नौ बजने पर वह अपने शयनकक्ष में चला जाता था। कभी-कभी शिकार में भी वह जाता था जिसके कारण उस दिन के बेलाचक्र में परिवर्तन आ जाता था।

अधीश्वर की पत्नी भी उनके समान ही कार्यों में व्यस्त रहा करती थी। उसकी अनेक संतानें होती थीं, इसलिए वह अपनी सेवा में अनेक सेवकों को रखती थी। सेवक न केवल उसके बच्चों की देखभाल करते थे अपितु उसके रसोई की सफाई, घर, मुर्गी घर आदि की भी देखभाल करते थे। घी तथा मक्खन तैयार करने के काम, शराब बनाने का काम, जोड़े के लिए मांस बनाने का काम आदि भृत्यों की सहायता से करने में वह व्यस्त रहा करती थी। अगर उसका पति युद्ध में चला जाता था तब वह जागीर का सारा भार अपने कन्धों पर ले लेती थी और आवश्यकता पड़ने पर युद्ध-भूमि में उसके पास धनराशि भेजती थी। अगर उसका पति युद्ध-बंदी हो जाता था तब वह पैसे भेजकर उसे छुड़ाने का प्रबन्ध करती थी। अगर उसका पति नि:सन्तान मर जाता था तब जागीर का उत्तराधिकार उसे प्राप्त हो जाता था, किन्तु यह आशा की जाती थी कि वह पुनर्विवाह करके सन्तान उत्पन्न करेगी जो उसकी जागीर को संरक्षण देगा। उसकी सन्तान विद्यालय शिक्षा से भिन्न प्रकार की शिक्षा ग्रहण करती थी। लॉर्ड के बच्चे शायद ही कभी आम विद्यालय में पढ़ते थे। लिपिक ही लिखना-पढ़ना सीखते थे। नाइट बौद्धिक ज्ञान का निरादर करते थे। डू गूसक्लिन (Du Guesclin) नामक एक नाइट ने युद्ध की कला का प्रशिक्षण लिया और हर मौसम के भौगोलिक कष्टों के सहन की शक्ति बढ़ायी। किन्तु पढ़ने-लिखने के लिये उसने कभी भी कष्ट नहीं उठाया। समस्त मध्य यूरोप में केवल इटली और विजेन्ताइन के कुलीन ही लिखने-पढ़ने में अभिरुचि दिखलाते थे। नाइट परिवार के शिशु स्कूल की जगह सामन्त के परिवार में भेजे जाते थे। इस परिवार में ये आज्ञा पालन, प्रशासनिक कला, रहने के तौर-तरीके, नाइट के प्रतिष्ठित नियम, युद्ध-कला आदि का ज्ञान प्राप्त करते थे। स्थानीय पादरी उन्हें कुछ आध्यात्मिक शिक्षा देता था। लड़कियों को सैकड़ों उपयोगी कला का ज्ञान दिया जाता था। वे अतिथियों, युद्ध या क्रीड़ाओं से लौटते हुए नाइटों का ख्याल करती थीं। युद्ध से वापस आये नाइटों के हथियारों को वे खोलती थीं, उनके स्नान का प्रबन्ध करती थीं, वस्त्रों को सुगंधित करके उन्हें धारण करने के लिए देती थीं। वे लिखने-पढ़ने में भी गहरी अभिरुचि दिखलाती थीं। वे युग के रूमानी गद्य तथा पद्य से अपना मनोविनोद करती थीं।

टास्क अधीश्वर की पत्नी के कार्यों की सूची बनाइए।

चर्च—सामन्तवादी व्यवस्था की एक और महत्त्वपूर्ण श्रेणी थी—सामन्ती चर्च। कभी-कभी सामन्त बिशप अथवा एबॉट का भी काम करता था। यद्यपि अनेक मठवासी अपने हाथों से काम करते थे और अनेक मठ करों के कारण धनी हो गये थे, फिर भी उन्हें राजाओं या सामन्तों से जमीन के दान के रूप में काफी मदद मिल जाती थी। दान के रूप में भूमि की प्राप्ति होने के कारण मध्ययुगीन यूरोप में चर्च सबसे बड़ा भूस्वामी हो गया और इस प्रकार सामन्तवाद के संगठन का एक महत्त्वपूर्ण पत्थर। फूल्डा (Fulda) के मठ को 15,000 जागीरें थीं। इसी प्रकार संत गॉल (St. Gall) को 2,000 कृषकदास और टूर्स के अलकूइन को 20,000 कृषकदास थे। राजा से बिशप, एबॉट, आर्कबिशप कानूनी अधिकार (Investiture) पाते थे और सामन्तों तथा अन्यों की तरह उसके प्रति निष्ठावान बने रहने की शपथ लेते थे। सामन्तों की तरह सामन्ती चर्च भी टैक्स (Tithes) लेते थे, सिक्के चलते थे, न्याय का काम करते थे और युद्ध तथा कृषि का कार्य करते थे। जर्मनी और फ्रांस के बिशप बहादुर तथा लड़ाकू होते थे और उसका दावा था कि उनकी तरह इंग्लैंड के बिशप बहादुर नहीं है। इस तरह चर्च भी इस काल में एक राजनीतिक, आर्थिक तथा सैनिक संस्था के रूप में परिणत हो गया था। सामन्तवाद ने चर्च का सामन्तीकरण ही कर दिया था।

राजा—सामन्तवाद के शीर्ष बिन्दु पर राजा का आसन था। सारे सामन्तों के लिए एक लॉर्ड की, सारे संप्थभुओं के लिए एक राजा की आवश्यकता थी। सिद्धान्तत: राजा ईश्वर का अनुचर था और ईश्वर की आज्ञा पर दैवी अधिकारों के बल पर शासन करता था। दूसरे शब्दों में, राजा को ईश्वर द्वारा शासन करने का अधिकार मिला था, पर व्यावहारिक धरातल पर वह निर्वाचन के द्वारा राजपद पाता था या पैतृक अधिकार के बल पर शासक बनता था या

युद्ध में विजय प्राप्त कर गद्दी पर अधिकार करता था। शार्लमाँ, ओटो द्वितीय, विलियम द कन्करर् (William the Conquerer) फिलिप आगस्टम, लुई नवाँ, फ्रेडेरिक द्वितीय जैसे लोग अपने पैतृक अधिकारों में अपने चरित्र बल या हथियारों के कारण वृद्धि की थी, किन्तु सामन्ती यूरोप के राजा लोगों के राजा न थे प्रत्युत सामन्तों के दूत थे। वे बड़े बैरनों द्वारा निर्वाचित होते थे और उनको अपनी जागीर (Manor) में वे नियन्त्रित अधिकारों को प्रयुक्त करते थे। राजा संरक्षण देने में असमर्थ थे, इसलिए लोग सामन्तों के प्रति ही निष्ठावान बने रहने की शपथ लेते थे। इस व्यवस्था में राज्य ही राजा की जागीर थी।

> *नोट्स* राजा को ईश्वर द्वारा शासन करने का अधिकार मिला था, पर व्यावहारिक धरातल पर वह निर्वाचन के द्वारा राजपद पाता था या पैतृक अधिकार के बल पर शासक बनता था या युद्ध में विजय प्राप्त कर गद्दी पर अधिकार करता था।

गॉल (Gaul) में कैरोलिजियन साम्राज्य केंद्र की शक्ति में ह्रास हो गया था और अशान्ति तथा अराजकता पर सामंतों ने अधिकार पाकर लोगों को संरक्षण दिया था। अत: यहाँ राजा का महत्त्व जाता रहा था और वह राजकुमारों, ड्यूकों, मार्क्विसों और काडण्टों से थोड़ा ही ऊँचा था, पर सच्चाई यह है कि व्यवहार में वह भी राज्य का सामन्त ही था। वह साधारण-सा टैक्स लेता था और युद्ध के समय सामन्तों से सैनिक सहायता लेता था। सहायता पाने के लिए वह सबल लोगों को जागीर देने लगा था। ग्यारहवीं तथा बारहवीं सदियों में फ्रांस के राजा के पास सर्वाधिक छोटा राज्य बच गया था जिसके संरक्षण के लिए वह पूर्णत: सामन्तों पर निर्भर करने लगा था। जब सामन्तों ने अपनी पैतृक जागीर प्रारम्भ की, सिक्के ढालने प्रारंभ किये पृथक् प्रशासन की नींव डालने के लिए पुलिस तथा न्याय विभाग का संगठन करने लगे तो राजा के पास इतनी शक्ति नहीं थी कि वह उन्हें ऐसा करने से रोक सके और उनकी शक्ति पर नियन्त्रण कायम कर सके। वह केवल राजधानी को किसी प्रकार बचा सका और उसके सम्पूर्ण राज्य में जागीरों तथा सामन्तों का प्रभाव कायम हो गया। उनकी जागीरों में अब न तो वह अपने अफसरों तथा राजा व अधिकारियों को भेज सकता था और न उन्हें युद्ध तथा संधि करने के लिए रोक सकता था। राजा ही सामन्त हो गया था और सामन्त ही राजा बन गये थे। सामन्ती सिद्धान्त में फ्रेंच राजा ही सामन्तों की सारी जमीन का स्वामी था जिसे वे अपना संप्रभु कहते थे, किन्तु वास्तविकता यह थी कि वह केवल बड़ा भूमिपति था और चर्च की तरह भी प्रभावशाली न रह सका।

किन्तु जिस तरह राजभक्ति के क्षय तथा विनष्ट होने पर सामन्तवाद का जन्म और विस्तार हुआ उसी प्रकार व्यापार के विकास तथा शान्ति-स्थापना के लिए एक सरकार की स्थापना करने में सामन्तों के असफल होने पर राजा की शक्ति पुन: बढ़ चली और बैरनों की शक्ति घटी। धर्मयुद्ध, सौ वर्षीय युद्ध, गुलामों की लड़ाई तथा आपसी द्वेष तथा मतभेद के कारण सामन्तों का खून बहा और वे शक्तिहीन हो चले। कुछ बैरन तो दस्यु हो गये और लूटपाट तथा हत्या का कार्य करने लगे। पुन: एकीकृत राज्य (राजतंत्रीय व्यवस्था) की बात सोची जाने लगी और इसके लिए राजा के अधिकारों की पुनर्स्थापना की बात करने लगे। सामन्तवादी परिधि से बाहर व्यापार-वाणिज्य के कारण एक धनी वर्ग ने जन्म ले लिया। व्यापारियों ने जागीरों के मार्ग की अनुरक्षा पर क्षोभ करना प्रारंभ किया और यह कहने लगे कि सामन्ती कानून या गैर-सरकारी कानून को हटाकर राजकीय कानून का प्रतिष्ठान किया जाए और सामन्तों के प्रभाव को हटाकर राजकीय-सरकार का पुनर्गठन किया जाए। इससे व्यापार को सुरक्षा मिलेगी तथा उसका उत्तरोत्तर विकास भी होगा। इस प्रकार सामन्ती जागीर के शासन की जगह केंद्रीय शासन की आवश्यकता का गम्भीरता से अनुभव किया जाने लगा। राजाओं से इस व्यापारी वर्ग के लोगों तथा नवोदित नगरों ने गठबंधन करना प्रारंभ किया और कथित वर्ग ने राजा को आर्थिक सहायता देकर उसकी शक्ति की वृद्धि में चार चाँद लगाने लगे। इसके अतिरिक्त सामन्तों द्वारा उत्पीड़ित तथा त्रसित लोग भी त्राण तथा संरक्षण पाने के लिए आशाभरी दृष्टि से राजाओं की ओर देखने लगे। राजा एक था और कानून की परिधि में था। सामन्त अनेक थे और बिखरे हुए थे तथा उनमें से बहुतेरे अत्याचारी तथा संभोगी थे। अत: यूरोप के धार्मिक संघ तथा जनों ने भी सामन्तों की बजाय राजा का ही समर्थन करना प्रारंभ

नोट

किया। इस मनोवैज्ञानिक तथा अनुकूल चिन्तनधारा से लाभ उठाकर फ्रान्स तथा इंग्लैंड के लोगों ने पैतृक अधिकार के बल पर राजपद पाना प्रारंभ किया और निर्वाचन की प्रणाली को धता बता दिया। अपनी मृत्यु के पूर्व अपने पुत्र या भाई की ताजपोशी करने लगे। लोगों ने सामन्ती निरंकुशता की जगह पैतृक राजतन्त्र को सहर्ष स्वीकार कर लिया। यातायात की सुविधा होने से तथा मुद्रा के अधिकाधिक संचालन से नियमित रूप से कर का आगमन भी प्रारंभ हो गया। करों की वृद्धि से राजकोष सम्पूरित होने लगा जिससे सेना का संगठन करना राजाओं के लिए आसान हो गया। जूरियों के नये वर्ग ने भी राजगद्दी का समर्थन किया और पुनरुज्जीवित रोमन कानून से इसे दृढ़ बनाया। सन् 1250 ई. तक जूरियों के बल पर सारे लोगों पर राजा की शक्ति पुनः स्थापित हुई और फ्रांस के लोग पुनः राजा के प्रति, न कि सामन्तों के प्रति, निष्ठावान बने रहने की शपथ लेने लगे। तेरहवीं सदी के अन्त तक फिलिप द फेयर (Philip the Fair) इतना शक्तिशाली हो गया कि उसने न केवल अपने बैरनों की शक्ति का दमन किया अपितु पोप पर भी कब्जा जमाया।

क्या आप जानते हैं फ्रांस के शासकों ने सामन्तों से सिक्का बनाने का अधिकार छीन लिया, न्याय के सारे अधिकारों का अपहरण कर लिया और उन्हें राजकीय सुविधाओं के उपभोग से वंचित कर दिया।

बड़े-बड़े सामन्तों ने 'क्यूरिया रेजिस' (Curiaregis) या राजा के दरबार (King's Court) का संगठन कर लिया और अब वे अधिकारी पुरुष (Potentates) की जगह 'दरबारी' (Courtiers) बन गए। उनके गढ़ अब सार्वजनिक भवन या राजा के शयन कक्ष के रूप में परिणत हो गये। सामन्तों के पुत्र-पुत्री राजा-रानी की सेवा में भेजे गये जहाँ वे दरबार के तौर-तरीके सीखने लगे। 'रीम्स' (Reims) में होने वाले फ्रेंच राजा के राज्याभिषेक तथा फ्रांकफोर्ट में होने वाले जर्मन राजा के राज्याभिषेक, राज्यशक्ति की बढ़ती शक्ति तथा सुदृढ़ता के द्योतक हैं। राज्य के सारे बड़े कुलीन तथा नेता ने राज्याभिषेक समारोह में भाग लिया और चर्च ने समारोह का परिसमापन किया। राजा पहले की तरह पुनः दैवी अधिकारों से सम्मानित तथा प्रतिष्ठित हुआ।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. मध्यकालीन यूरोप की विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए ········· का जन्म हुआ।
2. जिस जमीन पर अपने से ऊपर किसी शक्ति को शुल्क देना पड़ता था वह क्षेत्र ········· कहलाता था।
3. सामन्ती व्यवस्था मूलतः ········· थी।
4. सामन्ती व्यवस्था में केन्द्रीय सरकार ········· मात्र बनी रहती थी।
5. औपचारिक रूप से फीफ प्रदान करने का कार्य ········· कहलाता था।
6. सामन्त का अपने अधीश्वर के प्रति मुख्य दायित्व ········· का था।

20.4 सारांश (Summary)

- सामन्तवाद राजनीतिक तथा सामाजिक संगठन की रचना से योगदान करता रहा किन्तु इसका मूल संबंध भूमि से था। इस प्रकार सामन्तवाद में अनेक बातें शामिल थीं। इसके अतिरिक्त सामन्तवाद की जन्मभूमि तथा विकास-स्थल भी एक नहीं है। इसका प्रथम उद्भव फ्रांस में हुआ था और वही वह अपनी स्थिति की पराकाष्ठा पर पहुँच गया।
- मध्यकालीन यूरोप की विशेष परिस्थितियों का सामना करने के लिए सामन्तवाद का जन्म हुआ था। एक विशेष परिस्थिति थी युग की अराजकता तथा अशान्ति। शार्लमाँ की मृत्यु के उपरान्त पश्चिमी यूरोप में

नोट

लगभग दो-तीन शताब्दियों तक घोर अराजक स्थिति बनी रही और केवल नाममात्र को कानून और व्यवस्था रह गयी।

- तत्कालीन समय तथा समाज की आवश्यकताओं के फलस्वरूप सामन्तवाद का जन्म हुआ। यह सब इतिहास में ऐसे समयों में अनेक बार हुआ है, जब केंद्रीय शासन लोगों के जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करने में अक्षम हो गया है। मिसाल के तौर पर, समाज के इस प्रकार की व्यवस्था प्राचीन मिस्र में विद्यमान थी।
- सामन्त को क्षेत्र (फीफ) उसके जीवन भर के लिए ही प्रदत्त होता था। धीरे-धीरे इसके पिता से ज्येष्ठ पुत्र के अधिकार में जाने का रिवाज चल पड़ा। परन्तु हर पीढ़ी में सामन्त होने के समारोह की प्रक्रिया होती थी, आज की तरह जमीन के स्वामित्व या तबादले का नियम तब नहीं था।
- जागीर (फीफ) सामन्तवाद की एक बड़ी विशेषता है और अपनी इसी विशेषता के कारण सामन्तवाद बहुत वर्षों तक एक स्थायी शक्ति (Stabilising Force) के रूप में अपना अस्तित्व कायम रख सका। मध्य काल के अधिकांश लोग अमीर नहीं हुआ करते थे। समाज के पाँच में से चार आदमी सामन्त व्यवस्था को अपने श्रम के बदले पर चलाते थे, क्योंकि अमीर लोग सिवाय सेना में जाने के दूसरा काम नहीं करते थे।
- गढ़ छोटा-सा बढ़िया दुर्ग तो होता ही था, किन्तु मध्ययुगीन मुस्लिम प्रासादों की तुलना में यह निवास-स्थान की दृष्टि से अत्यधिक असुविधाजनक होता था। गन्दी हवा, सील और अंधकार से परिपूर्ण यह गढ़ मनुष्यों की अपेक्षा चूहों के रहने के लिए अत्यधिक उपयुक्त था।
- कृषकदास वस्तुतः दास नहीं थे, किन्तु उन्हें स्वतन्त्रता बहुत कम प्राप्त थी। एक कृषकदास अपने भूमिपति की अनुमति के बिना जागीर को अस्थायी रूप से भी छोड़कर नहीं जा सकता था। उसे अपनी भावी पत्नी के लिए भी अपने भूमिपति की स्वीकृति प्राप्त करनी होती थी। जिस प्रकार वह भूमि के साथ बंधा था, उसी प्रकार उनका मन अंधविश्वास, अज्ञानता तथा निरक्षरता से बंधा हुआ था। उसे न तो विद्यालय में जाकर और न समाज के लोगों के साथ विचार-विनिमय करके ही शिक्षा प्राप्त करने का मौका मिलता था।
- कृषक तथा कृषकदास के बाद अधीश्वर और सामन्त थे जिनको मिला-जुलाकर लॉर्ड या सामन्त कह सकते हैं। सामन्ती यूरोप में मनुष्यों का प्रबंधक बैरोन (Baron) था जिसे लैटिन में डोमिनस (Dominus), फ्रेंच में सीजनियर (Seigneur) जर्मन में हर्र (Herr) अंग्रेजी में लॉर्ड (Lord) कहा जाता था। इनके तीन उत्तरदायित्व थे—अनुचरों या कृषकों तथा उनकी भूमि की रक्षा करना, इन भूमियों पर खेती, उद्योग तथा व्यापार का संगठन करना और युद्ध के समय राजा की सहायता तथा सेवा करना।
- अधीश्वर की पत्नी भी उनके समान ही कार्यों में व्यस्त रहा करती थी। उसकी अनेक संतानें होती थीं, इसलिए वह अपनी सेवा में अनेक सेवकों को रखती थी। सेवक न केवल उसके बच्चों की देखभाल करते थे अपितु उसके रसोई पर सफाई, घर, मुर्गी घर आदि की भी देखभाल करते थे। घी तथा मक्खन तैयार करने के काम, शराब बनाने का काम, जोड़े के लिए मांस बनाने का काम आदि भृत्यों की सहायता से करने में वह व्यस्त रहा करती थी।
- राजाओं से इस व्यापारी वर्ग के लोगों तथा नवोदित नगरों ने गठबंधन करना प्रारंभ किया और कथित वर्ग ने राजा को आर्थिक सहायता देकर उसकी शक्ति की वृद्धि में चार चाँद लगाने लगे। इसके अतिरिक्त सामन्तों द्वारा उत्पीड़ित तथा त्रसित लोग भी त्राण तथा संरक्षण पाने के लिए आशाभरी दृष्टि से राजाओं की ओर देखने लगे। राजा एक था और कानून की परिधि में था। सामन्त अनेक थे और बिखरे हुए थे तथा उनमें से बहुतेरे अत्याचारी तथा संभोगी थे।

20.5 शब्दकोश (Keywords)

- **सामन्तवाद**—इटली, जर्मनी, फ्रांस आदि देशों में मध्यकालीन राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक संरचना।
- **जागीर**—यह एक छोटा गांव था जहाँ कृषकदास रहते थे।
- **किसान**—सामन्ती व्यवस्था में सबसे निम्न बिन्दु पर रहने वाला वर्ग।

नोट

20.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सामन्तवादी व्यवस्था क्या थी? इसका अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी परिभाषा दीजिए।
2. सामन्ती व्यवस्था मूलत: जाति व्यवस्था थी' कथन के आधार पर सामन्तवाद की संरचना बताइए।
3. सामन्तवाद व्यवस्था की विशेषताओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
4. 'सामन्तवादी व्यवस्था पिरामिड की भांति थी' कथन का आशय स्पष्ट कीजिए।
5. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

   (क) नाइट (ख) कृषकदास (ग) अधीश्वर (घ) गढ़ की महिलाएं।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सामन्तवाद 2. फ्यूड 3. जाति-व्यवस्था 4. छाया
5. इन्वेस्टीचर 6. सैनिक सेवा

20.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–21: सामन्तवाद : स्वरूप और संरचना (Feudalism : Form and Structures)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

21.1 सामन्ती संगठन (Feudal Organisation)

21.2 सामन्तवाद का स्वरूप (Structure of Feudalism)

21.3 सारांश (Summary)

21.4 शब्दकोश (Keywords)

21.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

21.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सामन्ती संगठन को समझेंगे;
- सामन्तवाद के स्वरूप को जानेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

सामन्तवादी व्यवस्था मूलतः एक ग्रामीण व्यवस्था थी। पश्चिमी यूरोप में एक केंद्रीय सत्ता के अभाव के परिणामस्वरूप ऐसी राजनीतिक संस्थाओं का उदय हुआ जिन्हें यूरोपीय सामन्तवाद की एक प्रमुख विशेषता माना जाता है। सामन्तवाद को अंग्रेजी में फ्यूडल सिस्टम (Feudal System) कहते हैं। 'फ्यूडल' शब्द की उत्पत्ति फ्युड (Feud) शब्द से हुई है। जिसका अर्थ है जमीन का वह टुकड़ा (Fief) जो सेवा करने की कुछ शर्तों पर उसका स्वामी किसी सामन्त को कृषि-कार्यों के लिए दे देता है। वस्तुतः यूरोपीय सामन्तवादी व्यवस्था का मूल आधार भूमि का स्वामित्व तथा वितरण ही था।

21.1 सामन्ती संगठन (Feudal Organisation)

देश की सारी भूमि राजा की सम्पत्ति मानी जाती थी। वह अपने लिए कुछ भूमि रखकर (जिसे कानन लैण्ड कहा जाता था) शेष अपने मुख्य सामन्तों में बाँट देता था। ये मुख्य सामन्त लॉड, ड्यूक अथवा अर्ल कहलाते थे। ये मुख्य सामन्त राजा से प्राप्त भूमि का एक भाग अपने पास रखकर शेष छोटे सामन्त को दे देते थे। ये छोटे **लॉर्ड बैरन**

नोट

कहलाते थे। बैरन भूमि के बदले में मुख्य सामन्तों को सैनिक सहायता देते थे। इस प्रकार ड्यूक और अर्ल अथवा मुख्य सामन्त राजा के सामन्त (Vassals) होते थे और उसे अपना अधिपति स्वीकार करते थे। नाइटों के नीचे सामन्तों का कोई वर्ग नहीं होता था। सामन्ती व्यवस्था में सबसे नीचे किसान थे। सामन्त अपनी भूमि को किसानों को जोतने के लिए देते थे। किसान अपनी इच्छा से कुछ भी नहीं कर सकते थे। उपज का एक भाग इन्हें अपने सामन्त को देना पड़ता था। सामन्त उनसे बेगारी भी लेते थे। अपने स्वामी की आज्ञा के बिना किसान भूमि छोड़कर कहीं नहीं जा सकता था और तो और वह सामन्त की अनुमति के बगैर अपनी पुत्री की शादी भी नहीं कर सकता था।

क्या आप जानते हैं सामन्तों के अधिक्रम में सबसे छोटी श्रेणी नाइटों (Knights) की होती थी। नाइट बैरन को अपना अधिपति मानते थे और उसे अपनी सैनिक सेवा प्रदान करते थे।

करार की शर्तें—सामन्तवादी व्यवस्था एक प्रकार के करार, समझौता अथवा संविदा (Contract) पर आधारित थी। जैसा कि ऊपर लिखा गया है, सामन्ती व्यवस्था में एक ऐसे अधिक्रम (Hierarchy) की स्थापना हुई जिसमें क्रमशः राजा, अर्ल अथवा ड्यूक बैरन, नाइट तथा अन्त में किसान आते थे। ये सबके सब परस्पर एक जैसी शर्तों के अधीन बँधे होते थे और दोनों पक्ष अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते थे। सामन्तों के तीन प्रमुख कर्तव्य थे : (1) अपनी जागीरों की सुरक्षा करना (2) अपनी जागीरों में कृषि व्यापार और व्यवसाय का प्रबन्ध करना तथा (3) अपने से ऊँचे सामन्त अथवा राजा को युद्ध के समय सहायता करना। इनके अलावा वे जनता के धर्म की भी रक्षा करते थे। दुर्बलों तथा नागरिकों की रक्षा करना भी उनका आदर्श था। न्याय भी सामन्त ही किया करते थे। वे अपनी जागीर की प्रजा से कर वसूलते थे और अपनी सेना रखते थे। **प्रो. ल्यूकस** का मत है कि सामन्त मध्ययुग में वही कार्य करते थे जो आधुनिक युग में संगठित राज्य कर रहे हैं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक सामन्त अपने से ऊँचे सामन्त को अपना अधिपति मानता था तथा अपने से नीचे सामन्तों का अधिपति होता था। राजा का दर्जा सबसे ऊँचा था और देश के सभी वर्ग के लोग उसे अपना अधिपति मानते थे। ऊपर से नीचे तक सारे सम्बन्ध निष्ठा पर आधारित थे। कोई भी सामन्त भूमि का स्वामी नहीं होता था। वह अपने अधिपति की ओर से उसका प्रबंध करता था। सैद्धान्तिक रूप से देश की सारी भूमि राजा की होती थी। आवश्यकता के समय प्रत्येक अधिपति अपने अधीनस्थ सामन्तों से सैनिक सहायता माँग सकता था। जैसे युद्ध के समय राजा ड्यूक तथा अर्लों से, अर्लों-बैरनों से तथा बैरन नाइटों से सैनिक सहायता लेते थे। प्रत्येक सामन्त सैनिकों का एक टुकड़ी अपने अधिपति को देता था। इन सबसे मिलकर ही राजा की सेना बनती थी। यह सामन्ती अधिक्रम इतना शक्तिशाली था कि राजा भी किसी बैरन या नाइट को सीधा नहीं बुला सकता था और न ही उससे सहायता माँग सकता था। प्रत्येक कार्य में इस अधिक्रम का पूरी सावधानी से पालन किया जाता था।

सामन्तों का प्रभावशाली स्थान—प्रत्येक सामन्त अपनी जागीर में सर्वशक्तिशाली होता था। इसका परिणाम यह हुआ कि देश में राजनीतिक एकता लुप्त हो गयी और यूरोपीय देशों में सदियों तक शक्तिशाली केंद्रीय सत्ता स्थापित न हो सकी। कभी-कभी तो मुख्य सामन्त इतने शक्तिशाली हो जाते थे कि वे राजा की आज्ञाओं की अवहेलना भी करने लगते थे। प्रारंभ में यह प्रथा पैतृक नहीं था। किन्तु बाद में यह पैतृक हो गयी। मुख्य सामन्तों के पुत्र सामन्त होते थे।

नियुक्ति समारोह—जब राजा किसी सामन्त को अथवा बड़े सामन्त छोटे सामन्त को जागीर देता था, तो इस अवसर पर एक विशेष समारोह का आयोजन किया जाता था। इसे नियुक्ति समारोह अथवा शरणपूण (Investiture) कहते थे। अधीनस्थ सामन्त (Vassale) अपने स्वामी के सामने घुटने टेककर अपना हाथ स्वामी के हाथ में देकर निष्ठा एवं सेवा की शपथ लेता था। इसी प्रकार राजा भी जागीर के प्रतीक के रूप में सामन्त के हाथ में एक मुट्ठी मिट्टी देता था और वादा करता था कि ज़रूरत पड़ने पर वह उस सामन्त की रक्षा करेगा, उनके परिवार की महिलाओं का सम्मान करेगा और न्याय देगा।

नोट

21.2 सामन्तवाद का स्वरूप (Structure of Feudalism)

सामन्तवाद एक मिश्रित संगठन था। इसके स्वरूप को जानने के लिए इस व्यवस्था की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक ढाँचे को जानना आवश्यक हो जाता है।

सामाजिक ढाँचा–सामन्ती समाज तीन वर्गों में बँटा हुआ था। सबसे ऊपर शासक वर्ग के लोग थे। इनमें राजा, बड़े सामन्त, छोटे सामन्त और अधिकारीगण आते थे। मध्यवर्ग में पादरी और चर्च के लोग, शिक्षक, वकील, डाक्टर, उद्योगपति, व्यापारी आदि आते थे। सबसे नीचे किसान, मज़दूर तथा गुलामों का वर्ग था। इस प्रकार सामन्ती समाज एक पिरामिड के समान था जिसमें ऊपर राजा तथा सबसे निचली सतह पर कम्मी किसान, मज़दूर और गुलाम थे।

उच्च वर्ग शासक वर्ग के लोगों के पास बड़ी जागीरें थीं जो पुश्तैनी थीं। इनका रहन-सहन, खानपान आदि उच्च स्तर का होता था। इनका जीवन विलासमय और ऐश-आराम का था। इनकी जागीरों में जो लोग रहते थे, वे लोग अपने सामंत के अधीन होते थे। सामन्तों के दुर्ग किसी ऊँचे स्थान अथवा पहाड़ी पर बनाए जाते थे। ये दुर्ग के लकड़ी या पत्थर के बने होते थे, जो मज़बूत भव्य तथा विशाल होते थे। दुर्ग के चारों ओर एक मज़बूत प्राचीर होती थी। दुर्ग चारों ओर से गहरी खाई से घिरा होता था, जिसमें पानी भरा रहता था। खाई के ऊपर जगह-जगह पर पुल बने होते थे, जिन्हें आवश्यकता पड़ने पर खोला या बन्द किया जा सकता था। प्राचीर में जगह-जगह सैनिक चौकियाँ होती थी।

मध्य वर्ग पादरी वर्ग के लोगों को जीवन सामान्यत: संतोषजनक था। लगभग हर गाँव-में ईसाइयों का चर्च होता था। इसमें पादरी रहते थे। पादरी वर्ग के लोग धर्म प्रचार का काम करते थे और धार्मिक एवं सामाजिक अनुष्ठानों का सम्पादन करते थे। वे पुरोहित का काम करते थे तथा विवाह, अन्तिम संस्कार आदि कराते थे। समाज में पादरियों का काफी सम्मान था। मध्य वर्ग में शिक्षक डाक्टर, उद्योगपति, सौदागर आदि भी आते थे। ये सुखी तथा सम्पन्न लोग थे। किन्तु सामन्तवादी व्यवस्था में मध्यम वर्ग का विशेष महत्त्व नहीं था। अब तक यह वर्ग संगठित, शक्तिशाली तथा जागरूक नहीं हो पाया था।

निम्न-वर्ग–निम्न वर्ग में किसान, मज़दूर तथा गुलाम सम्मिलित थे। किसान अपने सामन्त के दुर्ग के पास ही छोटे-मोटे मकान अथवा झोंपड़ी बनाकर रहते थे। आक्रमण के समय वे भागकर दुर्ग में शरण लेते थे। किसान सामन्त के खेतों में काम करते थे। यद्यपि संख्या की दृष्टि से किसान सबसे अधिक थे, किन्तु सामन्त-समाज में इनका स्थान सबसे नीचा था किसान तीन वर्गों में बंटे हुए थे-स्वतंत्र किसान, कृषि दास (Villeins) तथा दास-किसान (Serfs)।

स्वतंत्र-किसान–स्वतंत्र किसान अपने सामन्त से भूमि प्राप्त करके उस पर खेती करते थे। वे अपने भूमि का प्रबंध व्यक्तिगत सम्पत्ति की तरह करते थे, यद्यपि भूमि पर उनका कोई हक नहीं होता था। परन्तु वे सामंत के लिए कृषि कार्य नहीं करते थे। हाँ, वे भूमि का निश्चित लगान अवश्य देते थे। ऐसे किसानों की संख्या काफी कम थी। इनकी दशा अपेक्षाकृत अच्छी थी। इन्हें सामन्त के यहाँ बेगारी नहीं करनी पड़ती थी। सामन्त के कारिन्दे आदि भी इन्हें नहीं सताते थे। सामन्त भी इनके प्रति उदारता से पेश आता था।

कृषिदास–किसानों का दूसरा वर्ग कृषि दास (Villeins) का था। उन्हें अपनी उपज का एक निश्चित अंश, अपने अधिपति को देना पड़ता था। उन्हें कुछ निश्चित दिन अपने सामन्त के खेतों पर भी काम करना पड़ता था। बाकी के दिनों में उन्हें सामन्त से प्राप्त अपनी भूमि में काम करने की छूट थी। इनका जीवन स्वतंत्र किसानों की अपेक्षा असंतोषजनक, किन्तु दास किसानों की तुलना में अच्छा था।

दास किसान अथवा सर्फ–जनसंख्या में दास कृषक अथवा सर्फ (Serfs) सबसे अधिक थे। अधिकांश दास-कृषकों का जीवन दासों जैसा था। वे अपने सामन्त के खेतों में काम करते थे और उसकी अनुमति के बिना जमीन छोड़कर कहीं जा नहीं सकते थे। दरबार में जाकर सामन्त के सामने अपनी फरियाद भी पेश नहीं कर सकते थे। इसके अतिरिक्त उनसे तरह-तरह की बेगारी भी ली जाती थी। मकान बनाना या उसकी मरम्मत करना, सड़क बनाना तथा उसकी मरम्मत करना तथा सामन्त के खेतों में बिना मज़दूरी का काम करना आदि बेगारी उनसे ली जाती थी। किसानों को ऐसी सेवाओं के लिए सामन्त जब चाहे बुला सकता था। यदि सामन्त के यहाँ कोई उत्सव या शादी

नोट

ब्याह आदि होता, तो दास कृषकों को उसके यहाँ काम करना पड़ता था। ऐसे अवसरों पर उन्हें उपहार आदि भी देना पड़ता था। इन सबके बदले में उन्हें केवल सुरक्षा का आश्वासन मिलता था। सामन्त तथा उसके कारिन्दे दास-कृषकों का शोषण करते और उन्हें तरह-तरह से सताते थे। अधिकांश सामन्त कृषि-दासों के साथ बड़ी निर्दयता का व्यवहार करते थे। कृषि-दासों का जीवन बहुत कष्टमय था। कभी-कभी जब सामन्त ऐसे दास कृषक से काफी प्रसन्न होता था तो वह उसे मुक्त कर देता और इस प्रकार वह स्वतंत्र किसान बन जाता था।

आर्थिक ढाँचा–सामन्तवादी आर्थिक व्यवस्था भी समाज की भाँति पिरामिडनुमा थी। भूमि इस आर्थिक ढाँचे का आधार थी। उसमें राजा का स्थान सबसे ऊँचा था। वह सर्वश्रेष्ठ भूपति होता था। वह देश की समस्त भूमि का स्वामी होता था, परन्तु वह समस्त भूमि अपने अधीनस्थों, बड़े सामन्तों में बाँट देता था। इसी प्रकार बड़े सामन्त कुछ जमीन को स्वयं अपने लिए रखकर शेष छोटे सामन्तों के बीच बाँट देते थे। इस प्रकार अन्त में किसान आते थे। किन्तु, समस्त भूमि का स्वामी राजा होता था। भूमि पर सामन्तों अथवा किसानों का कोई अधिकार नहीं होता था।

राजनीतिक ढाँचा–सामन्तवाद का राजनीतिक ढाँचा भी पिरामिड की तरह था। राजा सर्वोपरि और सम्पूर्ण भूमि का वह स्वामी था जिन्हें वह बड़े सामन्तों और बड़े सामन्त अपने से छोटे सामन्तों के बीच कुछ शर्तों पर बाँटते चले गये। सामन्त आवश्यकतानुसार राजा की सैनिक सहायता कर देते थे और उनके दरबार में बैठकर आवश्यक परामर्श दिया करते थे परन्तु अपने क्षेत्रों के आन्तरिक प्रशासन में वे पूर्णत: स्वतंत्र होते थे। बाद में पादरी वर्ग के लोगों को भी ये विशेषाधिकार प्राप्त हो गये। प्रशासन एवं सेना पर इनका व्यापक प्रभाव था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

1. सामन्तवादी व्यवस्था मूलत: कृषि-आधारित थी।
2. फ्यूड का अर्थ है–शक्तिशाली सामन्त।
3. प्रत्येक सामन्त अपने से ऊँचे सामन्त को अपना अधिपति मानता था।
4. तीन वर्गों में बंटी सामन्ती व्यवस्था में सामन्त सर्वोच्च था।
5. जनसंख्या की दृष्टि से किसान (सर्फ) ज्यादा थे।

मेनर की व्यवस्था–गाँव की कृषि योग्य भूमि मेनर (Manor) कहलाती थी। मेनर के बीच में सामन्त का दुर्ग होता था। एक सामन्त के पास एक साथ कई मेनर होते थे। खेतों के अतिरिक्त मेनर में एक चारागाह भी होता था जिसमें उस मेनर के पशु चरते थे। मेनर से सटा हुआ जंगल भी रहता था जिससे जलावन मकान और फर्नीचर बनाने के लिए लकड़ी उपलब्ध हो जाती थी। सामन्त के महल के आसपास किसानों के आवास गृह अथवा झोंपड़ी होते थे। एक कारखाना भी होता था जिसमें उन वस्तुओं का उत्पादन किया जाता था, जिनकी आवश्यकता मेनर के लोगों को रहती थी। मेनर में एक चर्च भी होता था।

मेनर की भूमि मेनर के निवासियों के बीच बँटी होती थी। प्राय: प्रत्येक के पास खेतों की तीन पट्टियाँ होती थीं। मेनर का सबसे अधिक उपजाऊ भूमि अधिपति की होती थीं। यह मेनर का 30% से 40% होती। मेनर के अधिपति के लिए किसान इसमें खेती करते थे। अधिपति का सीमित प्रदेश (The Lord's Cross) भी होता था जिसे वह दूसरे किसानों को किराये पर देता था। शेष कृषि योग्य भूमि पट्टियों में किसानों को पट्टे पर दी जाती थी।

21.3 सारांश (Summary)

- सामन्त अपनी भूमि को किसानों को जोतने के लिए देते थे। किसान अपनी इच्छा से कुछ भी नहीं कर सकते थे। उपज का एक भाग इन्हें अपने सामन्त को देना पड़ता था। सामन्त उनसे बेगारी भी लेते थे। अपने स्वामी की आज्ञा के बिना किसान भूमि छोड़कर कहीं नहीं जा सकता था और तो और वह सामन्त की अनुमति के बगैर अपनी पुत्री की शादी भी नहीं कर सकता था।

नोट

- प्रत्येक सामन्त अपने से ऊँचे सामन्त को अपना अधिपति मानता था तथा अपने से नीचे सामन्तों का अधिपति होता था। राजा का दर्जा सबसे ऊँचा था और देश के सभी वर्ग के लोग उसे अपना अधिपति मानते थे। ऊपर से नीचे तक सारे सम्बन्ध निष्ठा पर आधारित थे। कोई भी सामन्त भूमि का स्वामी नहीं होता था। वह अपने अधिपति की ओर से उसका प्रबंध करता था।
- जब राजा किसी सामन्त को अथवा बड़े सामन्त छोटे सामन्त को जागीर देता था, तो इस अवसर पर एक विशेष समारोह का आयोजन किया जाता था। इसे नियुक्ति समारोह अथवा शरणपूण (Investiture) कहते थे। अधीनस्थ सामन्त (Vassale) अपने स्वामी के सामने घुटने टेककर अपना हाथ स्वामी के हाथ में देकर निष्ठा एवं सेवा की शपथ लेता था।
- सामन्तवाद का राजनीतिक ढाँचा भी पिरामिड की तरह था। राजा सर्वोपरि और सम्पूर्ण भूमि का वह स्वामी था जिन्हें वह बड़े सामन्तों और बड़े सामन्त अपने से छोटे सामन्तों के बीच कुछ शर्तों पर बाँटते चले गये।

21.4 शब्दकोश (Keywords)

- **मेनर**—गांव की कृषि योग्य भूमि जो सामन्त के कब्जे में रहती थी।
- **सर्फ**—सामन्ती व्यवस्था में सबसे अधिक जनसंख्या वाला वर्ग (किसान)।

21.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मेनर की व्यवस्था से आप क्या समझते हैं?
2. सामन्ती संगठन की विवेचना कीजिए।
3. 'सामन्तवाद का ढांचा पिरामिडीय था।' विश्लेषण कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य
5. सत्य।

21.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–22: सामन्तवाद के गुण एवं दोष (Merit and Demerit of Feudalism)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
22.1 सामन्तप्रथा के गुण (Merits of Feudalism)
22.2 सामन्तप्रथा के दोष (Demerits of Feudalism)
22.3 सारांश (Summary)
22.4 शब्दकोश (Keywords)
22.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
22.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सामन्तप्रथा के गुण-दोष से अवगत होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

सामन्तवाद का विकास यूरोप में विशेष परिस्थितियों में हुआ था। यद्यपि इस व्यवस्था ने तत्कालीन चुनौतियों का सामना कर काफी हद तक समय की मांग को पूरा किया और इस प्रकार एक ऐतिहासिक भूमिका निभाई, फिर भी इस व्यवस्था में गुण की अपेक्षा दोष ही अधिक थे। वस्तुत: सामंत प्रथा से यूरोप को लाभ कम और हानि अधिक हुई। यह एक ऐसी व्यवस्था थी; जिसमें गुण और दोष दोनों मिश्रित थे।

22.1 सामन्त प्रथा के गुण (Merits of Feudalism)

सामंत-प्रथा के अनेक ऐसे गुण थे जिनसे यूरोप को आशातीत लाभ हुए–

1. **शान्ति सुव्यवस्था की स्थापना**–रोमन साम्राज्य के पतन के पश्चात् अनेक बर्बर जातियों के आक्रमण के कारण यूरोप में जो अशान्ति एवं अव्यवस्था स्थापित हो गयी थी, उसे रोकने तथा पुन: यूरोप में शान्ति-सुव्यवस्था स्थापित कर सामन्त-प्रथा ने ऐतिहासिक भूमिका अदा की। इस प्रकार अब जन-जीवन सुरक्षित हो गया और प्रगति का अवरुद्ध मार्ग पुन: खुल गया।
2. **सैन्य शक्ति का विकास**–सामंतवाद ने सैनिक संगठन को प्रोत्साहन दिया। वस्तुत: सामन्तों की शक्ति का आधार सेना थी। अत: सामंतों ने अपनी सेना को समुचित ढंग से संगठित किया तथा वीरों को प्रोत्साहन दिया। इस प्रकार यूरोप में सामंतों की शक्ति बढ़ी, जो जनसाधारण की सुरक्षा में काफी सहायक सिद्ध हुई।

नोट

3. **प्रशासनिक सुधार**–सामंत अपनी जागीरों की शासन-व्यवस्था के सुधार में भी विशेष रुचि लेते थे। सामंत-प्रणाली में सैद्धान्तिक रूप से राजा की सार्वभौम सत्ता को स्वीकार किया जाता था, किन्तु व्यवहार में सामंत अपनी जागीरों में लगभग स्वतन्त्र थे। इस प्रकार इस व्यवस्था में सत्ता का विकेन्द्रीकरण हुआ जिससे जागीरों में अच्छे शासन, न्याय और रक्षा का पर्याप्त प्रबन्ध हो गया। दूसरी ओर राजा सामंतों पर पूरा नियंत्रण रखकर उनके पारस्परिक झगड़ों और उनकी निरंकुशता व अत्याचारों को भी रोक सकता था।

नोट्स सामंत प्रथा ने राजाओं की निरंकुशता पर नियंत्रण रखा।

4. **राजाओं की निरंकुशता पर नियंत्रण**–सामंतवाद में राजा संविदा (Contract) में उतना ही बँधा हुआ था जितने कि अन्य सामंत। यदि राजा संविदा को शर्तों का उल्लंघन करता था तो तत्कालीन नियमों के अनुसार राजा के विरुद्ध विद्रोह करना न्यायोचित था। राजा मनमानी नहीं कर सकता था। उदाहरणस्वरूप 1215 ई. में सामंतों के दबाव के कारण ही इंग्लैंड का शासक **जॉन** को **मैग्नाकार्टा** पर हस्ताक्षर करना पड़ा था।
5. **नागरिकता का पाठ**–सामंतवाद ने लोगों को नागरिकता का महत्त्वपूर्ण पाठ पढ़ाया। यह व्यवस्था कुछ इस प्रकार की थी कि सभी लोग अधिकार तथा कर्तव्यों की बेड़ियों में जकड़े हुए थे। लोग अब इस सिद्धांत से परिचित हो गये कि कर्तव्य एवं अधिकार दोनों साथ चलते हैं तथा कर्तव्य से ही अधिकारों की प्राप्ति होती है।
6. **आर्थिक प्रगति**–सामंतवाद ने आर्थिक प्रगति का मार्ग भी प्रशस्त किया जो इसके उत्थान के पूर्व रुक-सा गया था। यह व्यवस्था कृषि पर ही आधारित थी, अत: इस व्यवस्था में कृषि की प्रगति पर विशेष ध्यान दिया गया। पुन: कृषि की उपज बढ़ने से ही सामंतों की आय में वृद्धि हो सकती थी। अत: इस कारण भी सामंतों ने कृषि कार्यों में गहरी अभिरुचि का प्रदर्शन किया। कृषि की उन्नति से जन-जीवन में खुशहाली आयी और देश समृद्ध हुआ। सेना के आवागमन के उद्देश्यों से सामन्तों ने पुरानी सड़कों की मरम्मत करवायी तथा नई सड़कों और पुलों का निर्माण करवाया। इस प्रकार आवागमन के साधन भी समुन्नत हुए तथा व्यापार को फलने-फूलने का अवसर भी मिला।
7. **सांस्कृतिक प्रगति में योगदान**–सामंतवाद के कारण यूरोप के विभिन्न देशों में शान्ति एवं सुव्यवस्था की स्थापना हुई। ऐसे वातावरण में प्राय: सांस्कृतिक प्रगति भी देखने को मिलती है। सचमुच ही इस युग में साहित्य एवं विभिन्न कलाओं की काफी उन्नति हुई। सामंत प्रणाली में वीरता तथा शौर्य को प्रोत्साहन मिला। इसका असर साहित्य पर भी हुआ। इस प्रकार वीर-रस की अनेक कहानियाँ तथा कविताएँ लिखी गयीं। **'रौला की कहानी'** सामंत युग की एक अत्यन्त प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय रचना है। इस युग के प्रभाव से कला भी अछूता नहीं रहा। सामंतों ने अपनी रक्षा के उद्देश्य से विशाल, सुदृढ़ एवं सुन्दर दुर्गों का निर्माण करवाया।

क्या आप जानते हैं यूरोप में भवन निर्माण की रोमन तथा गौथिक शैलियों का उत्कर्ष हुआ। इस शैली में निर्मित भवन सुदृढ़ एवं आकर्षक होते थे।

8. **नैतिक गुणों का विकास**–सामंत प्रथा ने यूरोप के लोगों की वीरता के साथ नैतिकता का पाठ भी पढ़ाया। सभी अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करना आवश्यक समझते थे। कुछ उदार विचारों का भी विकास हुआ सेवा, सच्चाई तथा ईमानदारी जैसे गुणों को आदर्श माना गया और समाज में नारी को विशेष सम्मान मिला। इस प्रकार यूरोपीय समाज में नैतिक गुणों के विकास पर काफी जोर दिया जाने लगा।

नोट

22.2 सामन्तप्रथा के दोष (Demerits of Feudalism)

उल्लिखित गुणों के बावजूद इस प्रथा में कुछ ऐसे मौलिक दोष थे, जो सभी दृष्टि से हानिकारक सिद्ध हुए–

1. **केंद्रीय शक्ति का अवसान**–सामंतवाद के कारण यूरोप में केन्द्रीय शक्ति का अवसान हुआ था। सामंतों की शक्ति का व्यापक रूप से बढ़ जाने के कारण राजा की शक्ति जाती रही। राजा स्वयं अपनी सुरक्षा के लिए सामंतों का मोहताज हो गया। वह सामंतों की सेना पर पूर्णत: आश्रित था। जनता तथा सैनिक राजा के प्रति निष्ठावान न होकर अपने सामंतों के प्रति आज्ञाकारिता और स्वामी भक्ति की भावना रखते थे। केन्द्रीय शक्ति की दुर्बलता सदा आंतरिक अशांति एवं बाह्य आक्रमणों को प्रोत्साहित करती है। ये तत्व किसी भी देश के लिए घातक सिद्ध हो सकते थे।
2. **राष्ट्रीय एकता का लोप**–सामंतवादी व्यवस्था ने छोटे-छोटे राज्यों की स्थापना को प्रोत्साहित किया। केन्द्रीय शक्ति के अभाव में सामंत अपनी-अपनी जागीरों में सर्वशक्तिशाली बन बैठे। उनके नेतृत्व में वस्तुत: देश अनेक छोटे-छोटे स्वतंत्र राज्यों का समूह मात्र रह गया। विकेन्द्रीकरण के इस वातावरण में राष्ट्रीय एकता की भावना का पूर्णत: लोप हो गया। राष्ट्रीयता एवं एकता के अभाव में किसी भी देश की प्रगति केवल कठिन ही नहीं, वरन् असंभव हो जाती है।
3. **सामंतों में विद्रोह एवं पारस्परिक संघर्ष की भावना का विकास**–शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता के अभाव में सामंतों में विद्रोह की भावना का बलवती होना तथा पारस्परिक युद्धों को प्रोत्साहन मिलना स्वाभाविक था। एक ओर राजा की शक्ति जाती रही और दूसरी ओर सामंत शक्तिशाली होते चले गये। जागीर की सेना और प्रजा अपने सामंतों के प्रति निष्ठावान थीं। इस कारण शक्तिशाली सामंतों में विद्रोह की भावना पनपती थी। साथ ही ये सामंत इतने महत्त्वाकांक्षी हो गये कि ये अपने पड़ोसी सामंतों पर आक्रमण कर उसकी जागीरें हड़पने के लिए भी लालायित हो उठे। राजा तो इतना शक्तिहीन था कि उसमें मध्यस्थता करने की क्षमता ही नहीं थी। इस प्रकार सामंती व्यवस्था में सामंतों में पारस्परिक संघर्ष की संभावना सदा बनी रहती थी। मध्यकालीन यूरोप का इतिहास ऐसे विद्रोहों तथा सामंतों के बीच होने वाले लम्बे संघर्षों से भरा-पड़ा है।
4. **दोषपूर्ण सैन्य संगठन एवं न्याय**–सामंती-व्यवस्था के कारण यूरोपीय सेना में अनेक दोष उत्पन्न हो गये। एक तो स्थायी कोई सेना नहीं होती थी। दूसरी ओर सामंतों की छोटी सेनाएँ अनेक सांगठनिक दोषों का शिकार बन गयी। सामंत अपने-अपने ढंग से अपनी सेना को संगठित करते थे। इस प्रकार सैनिकों के अस्त्र-शस्त्र, अनुशासन, प्रशिक्षण तथा युद्ध के ढंग अपनी ही तरह के होते थे। ऐसी सेना आपात काल में कारगर सिद्ध नहीं हो सकती थी। न्याय के सिद्धांतों में काफी विषमता थी। सामंत अलग-अलग ढंग से न्याय किया करते थे। कानून और सजाएँ अलग-अलग थीं।
5. **सामाजिक वर्ग-विभेद**–सामन्तवाद ने सामाजिक वर्ग विभेद को काफी बढ़ावा दिया। सामंती समाज स्पष्ट रूप से दो वर्गों में बँट गया। एक ओर सारी सुविधाओं से युक्त सामंत थे जिनका जीवन ऐश-आराम का तथा विलासपूर्ण होता था तो दूसरी ओर गरीब किसानों का जीवन अत्यन्त कष्टदायक एवं निराशापूर्ण था। उनकी अपनी जमीन नहीं थी। दास किसानों की स्थिति तो और भी दयनीय थी। सामंत तथा उसके कारिन्दे तरह-तरह से किसानों का शोषण करते थे। उनसे बेगारी ली जाती थी तथा उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता था। उन्हें दो समय की रोटी भी नसीब नहीं होती थी तथा उनकी फरियादों को सुनने वाला कोई नहीं था। सामाजिक वर्ग विभेद तत्कालीन यूरोपीय समाज के लिए अभिशाप सिद्ध हुआ।

नोट्स सामंती समाज में किसानों की स्थिति बड़ी ही दयनीय थी। किसान पूरी तरह से सामंतों की दया पर निर्भर करते थे।

6. **किसानों की दयनीय स्थिति**—उन्हें अपनी उपज का एक बड़ा अंश सामंत को कर के रूप में देना पड़ता था और अधिपति की बेगारी भी करनी पड़ती थी। सामंत और उसके कारिन्दों द्वारा उन पर तरह-तरह के अत्याचार किये जाते थे। फिर भी वे उनके विरुद्ध न तो शिकायत कर सकते थे और न ही न्याय की मांग।
7. **आर्थिक प्रगति में रुकावट**—आर्थिक प्रगति की दृष्टि से भी सामंतवाद एक अभिशाप था। सामन्त युद्धप्रिय होते थे। युद्धों के समय उनकी सेना किसानों की लहलहाती फसलों को नष्ट कर देती थी। इसकी शिकायत सुनने वाला कोई न था। शिकार खेलते समय सामंत स्वयं किसानों की फसल की परवाह नहीं करते थे। उनके मवेशी किसानों की खेती चट कर जाते, पर इसकी कोई सुनवाई नहीं थी। सामंत अपने ऐशो-आराम तथा विलासपूर्ण जीवन में व्यस्त रहते थे। उन्हें आर्थिक प्रगति की कोई चिन्ता नहीं थी। उन्होंने उद्योग-धन्धों तथा व्यापार की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। ऐसे वातावरण में आर्थिक प्रगति के मार्ग का अवरुद्ध हो जाना स्वाभाविक था।
8. **विलासिता को प्रोत्साहन**—निस्संदेह सामंतवाद ने अनेक नैतिक गुणों को प्रोत्साहन दिया। किन्तु साथ ही शक्तिशाली एवं समृद्ध सामंतों का जीवन ऐशो-आराम का, विलासमय, ऐश्वर्यपूर्ण तथा भ्रष्ट था। समाज की प्रगति में यह तत्व अत्यन्त हानिकारक प्रमाणित हुआ।
9. **सांस्कृतिक प्रगति में रुकावट**—सामंती व्यवस्था में निर्माण की अपेक्षा विनाश के कार्य ही अधिक हुए। युद्ध, सामन्तों का प्रिय मनोरंजन बन गया। सामंती युद्ध सांस्कृतिक प्रगति के मार्ग में बड़े रोड़े-सा सिद्ध हुए। इस प्रकार साहित्य एवं विभिन्न कलाओं को विशेष प्रोत्साहन नहीं मिल पाया। बौद्धिक प्रगति के मार्ग भी अवरुद्ध हो गए।
10. **चर्च एवं राज्य के बीच संघर्ष**—अन्त में हम यह भी कह सकते हैं कि सामन्त-प्रथा के कारण ही भविष्य में चर्च और राज्य के बीच संघर्ष पैदा हुआ जो सदियों तक चलता रहा। चर्च तथा राजा के बीच होने वाला संघर्ष यूरोप के इतिहास का एक अविस्मरणीय परिच्छेद है।

सामंतवाद के गुण तथा दोषों का विश्लेषण करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि यह प्रथा देश तथा समाज के लिए लाभदायक होने की अपेक्षा अधिक हानिकारक ही सिद्ध हुई।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)—

1. सामन्तवाद में गुण की अपेक्षा .... अधिक थे।
2. सामन्तवाद ने .... सैनिक संगठन को प्रोत्साहन दिया।
3. सामन्त प्रथा ने जनता को .... का पाठ पढ़ाया।
4. सामन्ती समाज में किसानों की हालत बड़ी .... थी।
5. .... सामन्तों का प्रिय मनोरंजन था।

22.3 सारांश (Summary)

- सामंत अपनी जागीरों की शासन-व्यवस्था के सुधार में भी विशेष रुचि लेते थे। सामंत-प्रणाली में सैद्धान्तिक रूप से राजा की सार्वभौम सत्ता को स्वीकार किया जाता था, किन्तु व्यवहार में सामंत अपनी जागीरों में लगभग स्वतन्त्र थे। इस प्रकार इस व्यवस्था में सत्ता का विकेन्द्रीकरण हुआ जिससे जागीरों में अच्छे शासन, न्याय और रक्षा का पर्याप्त प्रबन्ध हो गया।
- सामंतवाद ने आर्थिक प्रगति का मार्ग भी प्रशस्त किया जो इसके उत्थान के पूर्व रुक-सा गया था। यह व्यवस्था कृषि पर ही आधारित थी, अत: इस व्यवस्था में कृषि की प्रगति पर विशेष ध्यान दिया गया। पुन: कृषि की उपज बढ़ने से ही सामंतों की आय में वृद्धि हो सकती थी।

नोट

- सामंतवाद के कारण यूरोप में केन्द्रीय शक्ति का अवसान हुआ था। सामंतों की शक्ति का व्यापक रूप से बढ़ जाने के कारण राजा की शक्ति जाती रही। राजा स्वयं अपनी सुरक्षा के लिए सामंतों का मोहताज हो गया।
- सामन्तवाद ने सामाजिक वर्ग विभेद को काफी बढ़ावा दिया। सामंती समाज स्पष्ट रूप से दो वर्गों में बँट गया। एक ओर सारी सुविधाओं से युक्त सामंत थे जिनका जीवन ऐश-आराम का तथा विलासपूर्ण होता था तो दूसरी ओर गरीब किसानों का जीवन अत्यन्त कष्टदायक एवं निराशापूर्ण था। उनकी अपनी जमीन नहीं थी। दास किसानों की स्थिति तो और भी दयनीय थी।
- आर्थिक प्रगति की दृष्टि से भी सामंतवाद एक अभिशाप था। सामन्त युद्धप्रिय होते थे। युद्धों के समय उनकी सेना किसानों की लहलहाती फसलों को नष्ट कर देती थी। इसकी शिकायत सुनने वाला कोई न था। शिकार खेलते समय सामंत स्वयं किसानों की फसल की परवाह नहीं करते थे। उनके मवेशी किसानों की खेती चट कर जाते, पर इसकी कोई सुनवाई नहीं थी।

22.4 शब्दकोश (Keywords)

- **बर्बर**–हिंसक, आक्रांता, आक्रमणकारी।
- **अवसान**–गिरावट, कमी आना।

22.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सामन्त प्रथा के गुणों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. 'अनेक गुणों के बावजूद सामन्तवाद अवगुणों की खान था' समीक्षा कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. दोष 2. सैनिक 3. नागरिकता 4. दयनीय 5. युद्ध।

22.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–23: व्यापार एवं सामंतवाद का पतन (Trade and the Decline of Feudalism)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
23.1 सामन्तकाल में उद्योग एवं वाणिज्य (Trade and Commerce in Feudalism)
23.2 नगरों का महत्त्व एवं प्रभाव (Importance and Effect of Town)
23.3 भौगोलिक खोज (Geographical Discoveries)
23.4 सामन्तवाद का पतन (Decline of Feudalism)
23.5 सामन्त-प्रथा का मूल्यांकन (Evaluation of Feudal System)
23.6 सारांश (Summary)
23.7 शब्दकोश (Keywords)
23.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
23.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सामन्तकालीन उद्योग-व्यापार और नगर आदि से परिचित होंगे;
- भौगोलिक खोज तथा सामन्तवाद के पतन को समझेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

सामन्ती व्यवस्था से जमीन की समस्या का हल बड़ी तत्परता के साथ हुआ। सामंती-व्यवस्था में जमीन के अनेक हिस्सों में बँट जाने से खेती की जोत (Holding) छोटी हो गयी। इससे कृषि के विकास का समुचित अवसर प्राप्त हुआ। बंजर, दलदल, परती, रेतीली और वनाच्छादित जमीन को कृषि की योग्य बनाया गया। उपज में अपेक्षाकृत वृद्धि हुई। लोगों का जीवन सुखी और सम्पन्न हो गया। किन्तु इस व्यवस्था से हानि भी हुई। इसमें किसानों का दोहरा शोषण होता था। उन्हें करों के अतिरिक्त उपहार देने पड़ते तथा बेगारी भी करनी पड़ती थी। उनके साथ अमानवीय बर्ताव किया जाता था और सामंत तथा उसके कारिंदे उन्हें तरह-तरह से सताते थे।

23.1 सामन्तकाल में उद्योग एवं वाणिज्य (Trade and Commerce in Feudalism)

वाणिज्य एवं उद्योगों के प्रति सामन्तों ने पूर्ण उदासीनता दिखलायी। सामंती-व्यवस्था मूलतः भूमि पर आधारित थी। अतः कृषि ही अर्थ-व्यवस्था का आधार बनी रही। सामंतों को उद्योग एवं व्यापार से विशेष सम्बन्ध नहीं था। 'मेनर'

नोट

स्वावलम्बी होते थे। किसान अपने अधिपति के लिए सब कुछ तैयार कर देता था। व्यापार की मात्रा बहुत कम थी। किसान जो थोड़ा-बहुत ज्यादा वस्तुएँ तैयार करते थे उन्हें आसपास के बाजारों में बेच आते थे। पूँजी की कमी के कारण औद्योगिक प्रगति अथवा बड़े पैमाने पर वाणिज्य व्यवसाय की बात सोची भी नहीं जा सकती थी। इस प्रकार व्यापार के विकास का मार्ग पूर्णत: अवरुद्ध रहा। आवागमन के साधनों में किसी प्रकार का कोई भी सुधार नहीं किया गया। सामंतों ने सड़कें अथवा पुल बनवाये या मरम्मत करवाये उनका स्थानीय महत्त्व था। वे इतनी बड़ी नहीं थीं कि व्यापार में सहायक सिद्ध हो सकती। सड़कें तंग तथा खतरनाक थी। चोर-डाकुओं से उनकी सुरक्षा का भी कोई विशेष प्रबन्ध नहीं था।

व्यापार की प्रगति में कुछ अन्य तत्व भी बाधक थे। सामान्ती युग में सिक्कों का सीमित प्रचलन था। सिक्के व्यापार की प्रगति के लिए अनिवार्य माने जाते हैं। ज्यादातर व्यापार सिक्कों के माध्यम से न होकर वस्तु-विनिमय (Exchange of goods) के माध्यम से होता था। दूसरी बात यह थी कि व्यापार पर करों का काफी बोझ था। व्यापारियों से कदम-कदम पर चुँगी वसूल की जाती थी। जिस सामंत की जागीर से व्यापारियों का माल आता-जाता था वहाँ उन्हें सड़क-कर, पुल पार करने, नदी-मार्ग से जाने-हर के लिए व्यापारियों को चुँगी देनी पड़ती थी। इसी प्रकार ऋण की लेन-देन की भी कोई व्यवस्था नहीं थी। व्यापार एवं उद्योग भी इस व्यवस्था में कुण्ठित रहे। अत: नये शहरों की स्थापना भी बहुत कम हो पायी। शहर आर्थिक प्रगति के सूचक होते हैं। इनकी स्थापना से व्यापार, वाणिज्य तथा उद्योग-धन्धों को बढ़ावा मिलता है। ऐसी परिस्थितियों में उद्योग तथा वाणिज्य की प्रगति की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि सामंतवाद के कारण आर्थिक जीवन में किसी प्रकार की प्रगति नहीं हो सकी। किसान और दस्तकार जिस धन का उत्पादन कठिन परिश्रम से करते थे, सामंत उसे भोग विलास के जीवन और अनावश्यक लड़ाइयों में व्यर्थ खर्च कर डालते थे। उद्यम का सर्वथा अभाव था तथा नये तौर-तरीकों की खोज को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था।

क्या आप जानते हैं सामंती सभ्यता ग्राम-प्रधान सभ्यता थी।

पूँजीवाद का उदय—सामन्ती व्यवस्था का पतन होने लगा और इसके स्थान पर एक नयी व्यवस्था का जन्म हुआ जिसे हम पूँजीवाद व्यवस्था के नाम से जानते हैं। सामन्ती अर्थव्यवस्था का आधार जमीन थी। कम्मिया मजदूर कृषि कार्य करते थे और अपने सामन्त-स्वामी की सेवा करते थे। परन्तु सामन्तवाद के पतन काल में एक नयी अर्थ-व्यवस्था ने जन्म लिया। खेतों के छोटे-छोटे टुकड़ों की जगह पर यूरोप के अनेक देशों में बड़े-बड़े स्टेट कायम हुए। उसी समय इंग्लैंड में कृषि-क्रान्ति का जन्म हुआ और कृषि के तरीकों में अभूतपूर्व परिवर्तन हो गये। बड़े स्टेट बन जाने से छोटे किसान बेकार हो गये। अत: वे उद्योग तथा व्यापार की ओर झुके और बड़े स्टेट के स्वामियों तथा व्यापारियां एवं उद्योगपतियों की सेवा में लग गये। उद्योग और व्यापार की प्रगति होती गयी। यूरोपीय व्यापार का विस्तार सुदूरस्थ देशों के साथ होने लगा। अमेरिका की खोज से इस महादेश में तेजी से यूरोपीय देशों का व्यापार बढ़ा। उसी समय बड़े पैमाने पर सिक्कों का प्रचलन हुआ। आधुनिक ढंग से बैंक स्थापित किये गये। सूद पर कर्ज देने की प्रथा का विस्तार हुआ। व्यापारी अपने संघों अथवा श्रेणियों (Guides) के नियमों का पूर्णरूप से पालन करते थे। ये संघ सदस्यों को बीमा की सुविधा भी प्रदान करते थे। व्यापारी संघों ने अपनी सुविधा के लिए राजा, सामन्त तथा चर्च की शक्ति एवं अधिकारों को कम करने का प्रयास किया। जल्द ही धनवान बैंकरों और व्यापारियों के नये सुदृढ़ सामाजिक वर्ग संगठित हो गये। अब सामन्तों की अपेक्षा राजनीति में यह वर्ग अधिक प्रभावशाली हो गया। इस काल में ज्वायंट स्टॉक कम्पनियों का भी जन्म हुआ। इसमें बहुत-से व्यक्ति एक साथ होकर अपनी पूँजी लगाते थे और समान रूप से मुनाफे तथा घाटे के लिए उत्तरदायी होते थे। ये सारे लक्षण आधुनिक पूँजीवाद के थे। अब यूरोप की सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था पूर्णत: पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था पर आधारित हो गयी। इस व्यवस्था ने नयी आवश्यकताओं तथा तत्वों को जन्म दिया जो भविष्य में पुनर्जागरण के महत्त्वपूर्ण कारक तत्व बने।

नोट

व्यापार का उदय तथा नगरों की स्थापना–सामन्तवाद के पतन काल में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यूरोप का व्यापार होने लगा। यूरोप के व्यापारी भारत तथा चीन जैसे सुदूरस्थ देशों तक आने-जाने लगे। धीरे-धीरे यूरोप का व्यापारी वर्ग समृद्ध एवं प्रभावशाली बन बैठा। चर्च तथा सामन्ती प्रथा व्यापार की प्रगति के मार्ग में सबसे बड़े रोड़े थे। चर्च सूद की लेन-देन को अधार्मिक बताया था। दूसरी ओर सामन्त व्यापारियों की मालों पर इतनी चुँगी लगा देते थे कि व्यापारियों को लाभ की आशा नहीं रह जाती थी। अतः व्यापारियों के साथ सामन्तों के अतिरिक्त चर्च का संघर्ष होना भी अनिवार्य हो गया। अब व्यापारी वर्ग चर्च की कटु आलोचना करने लगा। आलोचना के इसी क्रम में तर्क ने विश्वास का स्थान प्राप्त किया। यह तत्त्व पुनर्जागरण को लाने में काफी सहायक सिद्ध हुआ। पुनः व्यापारी समृद्ध थे, अतः उन्हें शिक्षा प्राप्ति की सुविधा थी। शिक्षा ने भी उनकी अज्ञानता तथा अंध विश्वासों का नाश किया। व्यापारी वर्ग को व्यापार के क्रम में पूर्व देशों के साथ सम्पर्क स्थापित करने का भी मौका मिला। उन दिनों सभ्यता-संस्कृति के क्षेत्र में पूर्व देश यूरोप की अपेक्षा काफी आगे थे। अतः उन व्यापारियों ने पूर्व देशों से नवीन ज्ञान की प्राप्ति कर उसे यूरोप के देशों में फैलाया। धनी होने के कारण बड़े-बड़े व्यापारी साहित्य, कला तथा संस्कृति के संरक्षक भी बने।

उद्योग एवं व्यापार की प्रगति के कारण मध्य युग के अन्त में यूरोप में अनेक नगरों की स्थापना हुई। इसी प्रकार जब धर्म युद्धों के कारण सामन्तों के पास धन की कमी हो गयी तो समृद्ध व्यापारियों ने सामन्तों को धन देकर उन्हें नगरों को स्वतंत्र करने के लिए मजबूर किया। ये नगर आधुनिकता के प्रतीक थे। स्वतंत्र नगरों में व्यापार, व्यवसाय तथा उद्योगों की काफी उन्नति हुई। उनका सम्पर्क व्यापार के कारण पूर्व देशों से होता था, अतः उन्होंने पूर्वी सभ्यता-संस्कृति को अपनाने की कोशिश की और उनकी अनेक बातें सीखीं। साथ ही, चूंकि नगर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के केंद्र थे, इसलिए वे बराबर अन्य स्थानों के व्यापारियों और यात्रियों से भरे रहते थे। इस कारण विचारों का आदान-प्रदान शुरू हुआ और ज्ञान की प्रगति हुई। व्यापारी शिक्षा के प्रति भी सचेष्ट हो उठे और यूरोपीय नगर आधुनिक शिक्षा के प्रतिष्ठित केंद्र बन गये। नगरों में काफी समृद्धि आ गयी। अतः नगर के लोग आजीविका की ओर से निश्चित होकर साहित्य, कला, ज्ञान-विज्ञान आदि की प्रगति में गहरी अभिरुचि लेने लगे।

प्राचीन नगरों का पुनरुत्थान एवं नवीन नगरों की स्थापना–रोमन साम्राज्य के पतन के सदियों बाद ग्यारहवीं सदी में पश्चिमी यूरोप के आर्थिक क्षेत्र में पुनरुत्थान की प्रवृत्ति पहली बार देखने को मिली। इस शताब्दी में फिर से औद्योगिक एवं कृषि कार्य-कलापों के प्रति लोगों में गहरी अभिरुचि देखी गयी, दलदल भूमि को पुनः कृषि योग्य बनाया गया, सड़कों तथा नदियों के किनारे नई औद्योगिक एवं वाणिज्य-प्रधान बस्तियाँ स्थापित हुई और वाणिज्य का पुनरुत्थान हुआ। बर्बर आक्रमणकारी जैसे-जैसे यूरोप में बसते गये, जन-जीवन पुनः सामान्य होता गया। दसवीं शताब्दी तक बहुत सारी कठिनाइयों के बावजूद यूरोप का व्यापार फिर से जीवित होने लगा था। सड़कों एवं स्थल मार्गों का महत्त्व बढ़ने लगा था। राजा एवं सामन्त प्रशासनिक कारणों से अपने विभिन्न अधीनस्थ भूखण्डों में आते-जाते रहे थे। साधारण लोग भी, जैसे कम्मिये तथा नौकर-चाकर भी अपने स्वामियों की सेवा के लिए उनके साथ आते-जाते रहते थे। तीर्थ-यात्राओं की लोकप्रियता भी बढ़ रही थी। आठवीं सदी के पूर्वार्द्ध में इंग्लैंड से रोम की तीर्थयात्रा करनेवाले लोगों की संख्या इतनी अधिक थी कि संत पीटर के चर्च के पास उनके विश्राम के लिए विशेष रूप से एक भवन का निर्माण कराया गया। व्यापारी भी ग्राहकों की तलाश से यूरोप के कोने-कोने तक घूमते रहते थे। दसवीं सदी के अन्त में और विशेष रूप से जल दस्यु आक्रमणों के बन्द होने पर यूरोप में जीवन अधिक शांतिपूर्ण हो गया। यातायात के साधनों में भी वृद्धि हुई। व्यापारी समृद्ध होते गये। इन्हीं परिस्थितियों में पश्चिमी यूरोप में न केवल प्राचीन नगरों का पुनरुत्थान हुआ, बल्कि कई नये नगरों की स्थापना भी हुई।

टास्क नए नगरों की स्थापना के पीछे क्या कारण थे?

नगरों के पुनरुत्थान एवं नये नगरों की स्थापना के कारण–जैसा कि उल्लेख किया गया है कि ग्यारहवीं शताब्दी प्राचीन नगरों के पुनरुत्थान एवं नवीन नगरों की स्थापना का काल था। पर यह सब कुछ अचानक अथवा अकारण

नोट

न था। इसके कई कारण थे। इस संदर्भ में इस बात का उल्लेख करना भी अनिवार्य हो जाता है कि यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में स्थापित होने वाले नगरों की स्थापना के भी अलग-अलग कारण थे। कहीं राजनीतिक तत्वों की प्रधानता थी तो कहीं आर्थिक तत्त्वों की और कहीं धार्मिक तथा अन्य तत्वों की। फिर भी, कुछ मुख्य कारण इस प्रकार थे–

वाणिज्य का उत्थान–इस युग में पश्चिमी यूरोप में वाणिज्य एवं व्यापार का पुनरुत्थान हुआ। वाणिज्य और व्यापार की आवश्यकता ने कई नगरों को जन्म दिया। जब उद्योग एवं व्यापार में वृद्धि हुई तब अधिक धन का अर्जन किया जाने लगा। धन की प्रचुरता ने नगरों के निर्माण तथा विकास में काफी सहयोग दिया। अच्छे बन्दरगाहों, जहाजों या नौका चलाने योग्य नदियों और प्रमुख सड़कों को जोड़ने वाले स्थानों पर नये शहर सहज ही उठ खड़े हुए।

> *नोट्स* ऑक्सफोर्ड शहर इसलिए स्थापित हुआ कि चारों दिशाओं से आने वाली सड़कों का संगम-स्थल था। लंदन से लोग आसानी से नौका द्वारा भी यहाँ पहुँच सकते थे।

बर्बर जातियों का ईसाई बनना–कालान्तर में आक्रान्ता बर्बर जातियों ने ईसाई धर्म का आलिंगन किया और अब वे यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में स्थायी तौर पर शान्तिपूर्ण ढंग से बस गये। इस तत्व का भी नगरों के पुनरुत्थान एवं विकास में व्यापक महत्त्व माना जाता है। बर्बरों के जीवन में स्थायित्व आने के दो कारण थे। पहला यह कि विजय प्राप्ति के उपरान्त उन्होंने अपने राज्य स्थापित कर लिए थे जहाँ उन्हीं की सरकारें थीं। और दूसरा यह कि धीरे-धीरे उन्होंने ईसाई धर्म को अंगीकार कर लिया। अब उनका जीवन नियंत्रित हो गया और व्यापार पुन: प्रगति के मार्ग पर बढ़ चला। व्यापार के उत्थान का अर्थ था नगरों का उत्थान एवं विकास।

सुरक्षित स्थानों का महत्त्व–व्यापारी सुदृढ़ दुर्गों के आसपास अधिक सुरक्षित महसूस करते थे। संकट एवं आपत्ति के समय वे दुर्गों के अन्दर अपनी सामग्री को सुरक्षित रख सकते थे। इस प्रकार के सुरक्षित स्थानों पर भी नये शहरों की स्थापना हुई। संकटों तथा आक्रमणों से जो स्थान त्राण दिलाने में समर्थ थे, वहाँ भी नये शहर बसे। पश्चिम में नार्मनों, दक्षिण में अरबों तथा पूर्व में स्लाव आक्रमणों के कारण सर्वत्र ऐसे सुरक्षित स्थानों की आवश्यकता थी, जहाँ किसान संकट के समय आश्रय पाते। यही कारण था कि सम्पूर्ण पश्चिमी यूरोप में दुर्गों का जाल-सा बिछ गया। इन दुर्गों की रक्षा का उत्तरदायित्व नाइटों के जिम्मे लगा दिया गया। सामन्तों ने भी अपने क्षेत्रों में बड़ी संख्या में दुर्गों का निर्माण करवाया। पुराने नगरों में भी चारदिवारी बनाकर इसी प्रकार सुरक्षा की व्यवस्था की गयी थी। शहरों के नाम से 'चेस्टर' तथा 'कास्टर' शामिल रहे का अर्थ है कि उनका प्रारंभ रोमन फौजी छावनियों के रूप में हुआ। स्वयं 'टाउन' शब्द की व्युत्पत्ति 'टुन' शब्द से मानी जाती है जिसका अर्थ है किसी फार्म अथवा जागीर में शामिल समस्त कृषि-क्षेत्र। इस तरह के फार्म या कृषि-भूमि पर बसने वाले व्यक्ति के नाम पर भी नगर बस जाते थे, जैसे एडमंड पर एडमंडटन।

हाट, मेले आदि स्थानों का महत्त्व–उन स्थानों पर भी नये नगर बस गये जहाँ लोग अपनी आवश्यक सामग्री की खरीद-बिक्री के लिए इकट्ठे होते थे, जैसे साप्ताहिक हाट, मेला या कोई तीर्थ स्थान। किलों तथा मठों के आस-पास अनेक लोग पड़े रहते थे। उनकी वजह से व्यापारी भी वहाँ पहुँचते रहते थे। उनके लिए सराय, बाजार आदि की स्थापना होती थी जो धीरे-धीरे नगर का रूप ग्रहण कर लेते थे। इंग्लैंड के राजा एडमंड की कब्र पर फूल चढ़ाने के लिए दूर-दूर से लोग आते थे। इस तरह वहाँ नॉरमन विजय से पहले ही एक अच्छे-खासे नगर की स्थापना हो चुकी थी। इसी प्रकार यूरोप के उन स्थानों पर भी नगर बस गये जहाँ मठ एवं समाधियाँ स्थापित थीं।

उल्लेखित कारणों के अतिरिक्त कुछ अन्य कारणों की भी चर्चा की जा सकती है। दशम शताब्दी के अन्त होने पर और विशेष रूप से उत्तर सागर के जल-दस्यु-आक्रमणों के बंद होने पर यूरोप में जीवन अधिक शांतिपूर्ण हो गया। शान्तिपूर्ण वातावरण में उद्योगों एवं वाणिज्य की काफी प्रगति हुई और नये शहर बसे। इसी प्रकार तीर्थयात्रियों तथा व्यापारियों ने भी नये नगरों की स्थापना में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। उल्लेखित कारणों से एक ओर पुराने नगरों का पुनरुत्थान हुआ और दूसरी ओर नए शहरों की स्थापना भी हुई।

23.2 नगरों का महत्त्व एवं प्रभाव (Importance and Effect of Town)

ग्यारहवीं एवं बारहवीं शताब्दियों की शहरी क्रान्ति ने यूरोपवासियों के जीवन के प्राय: सभी पहलुओं—राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक को अनुप्राणित किया। वस्तुत: मध्यकालीन यूरोपीय सभ्यता-संस्कृति के विकास में नगरों का योगदान बड़े ही महत्त्व का रहा है।

राजनीतिक प्रभाव—मध्यकालीन नगरों का यूरोपीय राजनीति में व्यापक महत्त्व था। तेरहवीं शताब्दी से उनका राजनीतिक महत्त्व काफी बढ़ गया। नगरों ने यूरोप मे निरंकुश राजतंत्र के विकास में सहायता की। सामन्ती अराजकता एवं अनुशासनहीनता के विरुद्ध राजाओं को नगरों में निवास करने वाले मध्यम वर्ग का भरपूर सहयोग मिला। इस वर्ग के लोगों ने राजकीय स्थायी सेना का व्यय भार वहन किया। अत: शासकों को अब सामन्तों की सेना पर निर्भर नहीं रहना पड़ता था।

नगरों ने उत्तर-मध्यकाल तथा आधुनिक काल के राजनीतिक विकास का मार्ग प्रशस्त किया। इंग्लैंड और फ्रांस में नगरवासियों को पार्लियामेंट में बैठने की अनुमति थी और वे उसमें बैठते थे। अत: पार्लियामेंट की शासन नीति तथा निर्णय को उन्होंने काफी दूर तक प्रभावित किया। उनके पास पैसा होता था और राजा यह जानते थे कि अगर उन्हें राष्ट्र में मामलों पर होने वाली बहस में भाग लेने का अवसर दिया जायेगा तो वे कर चुकाने के लिये अधिक तत्पर रहेंगे। इटली के नगरों में शार्लमेन के उत्तराधिकारियों से काफी अंशों में स्वतंत्रता अर्जित कर ली और वे ऐसे गणतंत्रों की स्थापना में सफल हुए जिनमें कुछ अमीर परिवारों का बोलबाला था। फ्रांस तथा इंग्लैंड के नगर इतने स्वतंत्र नहीं हुए, लेकिन इनमें से कुछ ने राजा या अमीरों से अधिकार-पत्र प्राप्त कर लिये। उदाहरण के लिए, राजा रिचार्ड शेर दिल ने लन्दन के नागरिकों से वसूल किये गये धन के एवज में उन्हें स्वशासन का अधिकार-पत्र प्रदान किया, जिसमें उसे तीसरे धर्मयुद्ध के लिये पोतों को सज्जित करना था। कभी-कभी नगर के लोग एक साथ मिलकर अपने अधिकारों के लिये लड़ते थे जिससे उन्हें आमतौर से सामन्तों के करों की चुनौती से छूट मिल जाती थी और अपने कुछ अधिकारियों का चुनाव करने का अधिकार मिल जाता था।

सामन्ती मेनोरियल प्रणाली की परिसमाप्ति में भी नगरों की भूमिका सराहनीय मानी जाती है। मेनरों के महत्त्व के घटने का अर्थ केवल आर्थिक व्यवस्था में ही परिवर्तन नहीं था। इससे राजनीति भी प्रभावित हुई। सामन्तों का यूरोपीय राजनीति में महत्त्व घटता गया और मध्यम वर्ग शक्तिशाली हो चला।

आर्थिक प्रभाव—नगरों ने यूरोप के आर्थिक पहलू को भी गहरे रूप से प्रभावित किया। सच पूछा जाए तो जीवन के इसी बिन्दु पर नगरों के विकास का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। नगरों ने मध्ययुग में अनेक आर्थिक सिद्धांतों तथा आदर्शों का निरूपण कर आधुनिक जगत की अर्थ-व्यवस्था की पृष्ठभूमि के निर्माण में योगदान किया। नगरों ने श्रम को अधिक महत्त्व दिया जिससे दासता तथा कमियापन का शनै: शनै: विलोप होने लगा। नगरों में निर्मित व्यापारिक श्रेणियों तथा श्रेष्ठ निकायों ने नगर के प्रशासन को भी समुचित रूप से प्रभावित किया। श्रमिक वर्गों अथवा श्रेणियों के बन जाने से दो प्रत्यक्ष लाभ हुए। एक तो यह कि, सारे लोग श्रम करना अपना धर्म समझने लगे और दूसरा यह कि, इस वर्ग के लोगों का महत्त्व बढ़ा और अब वे उपेक्षित नहीं रहे। स्वतंत्र श्रम की परिपाटी चलकर नगरों ने आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का पृष्ठाधार तैयार कर दिया। आज का सम्पूर्ण व्यापार मध्ययुग के व्यापार का ही विकसित रूप है। दूसरे शब्दों में, स्वतंत्र श्रम पर आधारित आधुनिक औद्योगिक-व्यवस्था का आरम्भ मध्ययुगीन नगरों से ही माना जा सकता है। आर्थिक दृष्टि से मध्यकालीन नगर तत्कालीन आर्थिक-व्यवस्था को आधुनिक आर्थिक-व्यवस्था से जोड़ने वाली कड़ी थे। आधुनिक व्यापारवाद का उदय भी वस्तुत: मध्यकालीन नगरों से ही हुआ।

क्या आप जानते हैं स्वतंत्र श्रम पर आधारित आधुनिक औद्योगिक-व्यवस्था का आरम्भ मध्ययुगीन नगरों से ही माना जा सकता है।

सामाजिक प्रभाव—मध्यकालीन यूरोपीय समाज भी नगरों के प्रभावों से बचा नहीं रहा। नगरों ने तत्कालीन समाज को अनेक दृष्टिकोण से अनुप्राणित किया। नगरों के कारण यूरोप के समाज में दो नये वर्ग पैदा हुए—श्रमिक वर्ग

नोट

तथा मध्य वित्तवर्ग। प्रथम श्रेणी में कुशल तथा अकुशल श्रेणी के श्रमिक थे। दास तथा मजदूर इसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते थे। दूसरी श्रेणी में धन कमानेवाले श्रमिक थे। ऐसे श्रमिकों में महाजन व्यापारी, उद्योगपति तथा पूँजीपति आते थे। स्मरण रहे कि नगरों के विकास के पूर्व यूरोप का समाज दो वर्गों में विभाजित था। पादरी वर्ग तथा सामन्त वर्ग। इन्हीं दोनों वर्गों के लोग सम्पन्न थे और वे शासन तथा राजनीति को धन-बल के बल पर काफी प्रभावित करते थे। जब नगरों ने धन पैदा करने वाले नये वर्ग (मध्यवित्त) को जन्म दे डाला तब इस वर्ग ने समाज के साथ-साथ प्रशासन में भी अपना प्रभावशाली स्थान बनाना प्रारंभ किया और शीघ्र ही यह वर्ग भी पादरी तथा सामन्त वर्ग की तरह प्रधान हो गया। 13वीं तथा 14वीं शताब्दियों में इस वर्ग के लोगों की प्रधानता इतनी अधिक बढ़ गयी कि वे उन प्रतिनिधि सभाओं की बैठकों में भी शामिल होने लगे जिनमें पादरी तथा सामन्त शामिल होते थे। आज शासन की जिस संसदीय प्रणाली का विकास देखने को मिला है, उसकी नींव मध्य युग में ही नगरों के इस वर्ग के कारण बढ़ चुकी थी। इसी वर्ग के कारण नगरों को स्वतंत्र हवा में सांस लेने का अवसर मिला और इसी कारण सामन्त वर्ग श्रीहीन होने लगा। भू-सम्पत्ति का महत्त्व घटा और व्यापार तथा उद्योग के माध्यम से भी लोग सम्पत्ति का अर्जन करने लगे। भूमि के घटते महत्त्व के क्रम में सामन्तों की शक्ति भी छीनती गयी तथा उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी घटती गयी। लोग विभिन्न उद्योगों से तथा विभिन्न सामग्रियों का व्यापार करके भी ठीक उसी प्रकार धन कमाने लगे जिस प्रकार सामन्त भूमि से धन का अर्जन करते थे। कम्मी लोग तो जैसे जी उठे क्योंकि वे अब कमाकर स्वतंत्र हो सकते थे। नगर में आये कम्मी सामन्ती बंधनों से मुक्त थे। भगोड़े कम्मी नब्बे दिनों तक लगातार शहर में रहकर स्वतंत्र नागरिक बन जाते थे। इसलिए यह कहावत चल पड़ी "शहर की हवा मनुष्य को स्वतंत्र बना देती है।"

सांस्कृतिक प्रभाव—संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को भी मध्यकालीन यूरोपीय नगरों ने गम्भीर रूप से प्रभावित किया। बौद्धिक चेतना के संचालन के अतिरिक्त नगरों ने मध्यकालीन साहित्य एवं विभिन्न कलाओं को अनुप्राणित किया।

सामाजिक विकास तथा परिवर्तन की सभी प्रक्रियाएं पहले से तीव्र हो गयीं। उद्योग एवं व्यापार के प्रसार के साथ-साथ **नवीन विचारों** एवं **आदर्शों** का सर्वत्र प्रचार हुआ। समृद्ध नगरवासियों ने नगरों की शोभा तथा सुविधा में वृद्धि की। नगरों की बढ़ती हुई आबादी के कारण नवीन समस्याओं को सुलझाने के लिए कई प्रकार के कदम उठाये गये। व्यापारी वर्ग ने **कला; साहित्य** तथा **चित्रकारी** को संरक्षण प्रदान किया। फलस्वरूप, सुन्दर भवनों, प्रवेश द्वारों, प्रासादों तथा देवस्थानों का निर्माण सम्भव हुआ। सभी प्रकार की सुविधाओं से युक्त नागरिक जीवन अब लोगों को मठीय तथा संन्यासी जीवन से कहीं अधिक आकर्षक जान पड़ने लगा। समृद्ध इटालियन नगरों के स्वतंत्र, विविध तथा गतिशील जीवन का समवेत प्रभाव पुनर्जागरण के रूप में पड़ा। जिनेवा में अभी भी मध्यकालीन स्थापत्य कला के कई सुन्दर नमूने देखे जा सकते हैं। फ्लोरेंस नगर उत्तर-मध्यकालीन यूरोप में साहित्य तथा कला का केन्द्र था। वहीं के ऊनी तथा रेशमी वस्त्र विश्व-विख्यात थे। किसी भी मध्ययुगीन नगर से इस नगर में रहनेवाले कवियों, इतिहासकारों, वास्तु-शिल्पियों तथा चित्रकारों की संख्या कहीं अधिक थी। एथेंस को छोड़कर अन्य किसी भी मध्यकालीन योरोपीय नगर में इतने महान व्यक्ति नहीं हुए। फ्लोरेंस की श्रेष्ठतम विभूतियों में दाँते, पेत्रांक, बोकासियों, मेकियावेली, माईकेल-एंजेलो, लियोनार्डो-द विंसी, गैलिलियो तथा मेडिसी का नाम सहज ही लिया जा सकता है। **वेनिस नाविकों** तथा व्यापारियों द्वारा फैलाई गई देश-विदेश की कहानियों के लिए विख्यात था। ऐसे लोगों में मार्को पोलो का नाम सर्वाधिक विख्यात हुआ। मार्को पोलो ने चीन सहित ऐसे सुदुर-देशों की यात्रा की जहाँ तक उन्नीसवीं शताब्दी से पहले शायद ही कोई अन्य यूरोपवासी पहुँचा हो।

कागज तथा छापाखाने का प्रभाव—कागज तथा छापेखाने का विकास चीन में हुआ, जिसे बाद में अरबों ने सीखा। अरबों से ही यूरोप के लोगों ने इनका व्यवहार करना सीखा। इटली और जर्मनी में कागज़ निर्माण का कार्य शुरू हुआ। इसके साथ ही छापेखाने का भी प्रचार हुआ। बारहवीं शताब्दी में मुद्रण का काम शुरू हुआ। 1465 ई. में जर्मनी में **गुटेनबर्ग** (Gutenberg) नामक व्यक्ति ने पहला आधुनिक किस्म का छापाखाना खोला। सम्भवत: **गुटेनबर्ग की बाइबिल** आधुनिक मुद्रण-प्रणाली की पहली पुस्तक है। 1476 ई. में विलियम कैक्सटन (William Caxton) ने इंग्लैंड में छापाखाना का विकास किया। बाद में इसका प्रयोग यूरोप के सभी देशों में किया जाने लगा।

नोट्स कागज और छापाखाना को यूरोप में वैचारिक क्रान्ति लाने का बहुत बड़ा श्रेय दिया जाता है।

छापेखाने के कारण पुनर्जागरण के विचारों के प्रचार और प्रसार में अपार सहयोग मिला। पुस्तकों की छपाई का काम तेजी से शुरू हो गया। इससे पुस्तकों के मूल्य कम हुए तथा जनता में शिक्षा के प्रति अभिरुचि बढ़ी। शिक्षा अब केवल पादरियों तक सीमित नहीं रही। बल्कि साधारण जनता भी पठन-पाठन में रुचि लेने लगी। इससे विज्ञान तथा तकनीकी की उन्नति का भी रास्ता खुल गया। बाइबिल की हजारों प्रतियाँ छपीं और लोगों को अपने धर्म को समझने का मौका मिला। यूनान तथा रोम के प्राचीन ग्रन्थों को छापा गया। इस प्रकार यूरोप के लोगों को यूनानी और रोमन ज्ञान-विज्ञान का ज्ञान प्राप्त हुआ। इसी प्रकार अरब की संस्कृति एवं विज्ञान की जानकारी भी यूरोपवासियों को हुई। यूरोप वालों की रुचि साहित्य, दर्शन तथा विज्ञान के प्रति बढ़ी। हजारों की संख्या में विचारोत्तेजक पुस्तकें प्रकाशित हुयीं, जिनके द्वारा नए विचारों तथा वैज्ञानिक अनुसंधानों का तेजी से प्रचार हुआ। इस संदर्भ में एक इतिहासकार ने लिखा है, "अब ज्ञान-विज्ञान एक पतली धारा न रहकर एक बड़ी बाढ़ के रूप में आ गया जिसमें हजारों, करोड़ों दिमाग ने भाग लेना शुरू किया।"

विदेशी पुस्तकों का अनुवाद–छापेखाने की सुविधा हो जाने के बाद पठन-पाठन का काम तेजी से चलने लगा। यूनानी, रोमन तथा अरबी ग्रन्थों का अनुवाद यूरोप की स्थानीय भाषाओं में किया गया तथा उन्हें छापा गया। स्थानीय भाषाओं में छपने के बाद विदेशों का ज्ञान साधारण जनता के लिए भी उपलब्ध हो गया। अब लोग अपनी भाषा में बाइबिल का अध्ययन करके धर्म के सच्चे स्वरूप को पहचानने लगे। लोग धर्म के पाखण्ड, आडम्बर और कुरीतियों के प्रति सावधान हो गये। साथ ही, उनके बीच नयी विचारधाराओं एवं ज्ञान-विज्ञान का प्रचार हुआ।

यूरोपीय शासकों तथा सामन्तों का सहयोग–स्थानीय भाषाओं की उन्नति तथा साहित्य निर्माण में यूरोप के कुछ शासकों और सामन्तों का योगदान भी सराहनीय माना जाता है। फ्रांस के शासक **फ्रांसिस प्रथम** ने इटली के विद्वानों को अपने देश-वासियों को शिक्षित करने के उद्देश्य से आमन्त्रित किया। इसी प्रकार इंग्लैंड के **हेनरी अष्टम** तथा स्पेन के **चार्ल्स पंचम** ने अपने दरबार में विद्वानों को आमंत्रित कर उनको सम्मानित किया। राजाओं तथा बड़े रईसों ने साहित्य के अतिरिक्त विभिन्न कलाओं को भी अपने दरबार में संरक्षण प्रदान किया।

वैज्ञानिक प्रगति–मानवतावाद, बौद्धिक विचारधारा और अरबों के साथ सम्पर्क के कारण यूरोप में विज्ञान की प्रगति शुरू हुई तथा अनेक वैज्ञानिक अन्वेषण हुए। वैज्ञानिकों ने प्राचीन मान्यताओं तथा अन्धविश्वासों पर गहरी चोट की। उन्होंने खुलकर नवीन प्रयोगों द्वारा प्रकृति के रहस्यों का पता लगाया। **रोजक बैकन** (1214-1295) ने बताया कि विज्ञान के अध्ययन के बगैर हम प्राकृतिक शक्तियों एवं रहस्यों को नहीं जान सकते हैं। उसने लोगों को वैज्ञानिक अध्ययन के लिए प्रोत्साहित किया। **कोपरनिकस** ने सिद्ध किया कि पृथ्वी सूर्य से चारों ओर घूमती है, न कि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर, जैसा कि लोग अब तक विश्वास करते थे। **ग्रीवो ने** बताया कि दूसरे नक्षत्र भी सूर्य की भाँति हैं। उस पर नास्तिकता का अभियोग लगाकर पोप की आज्ञा से 1600 ई. में उसे जीवित जला दिया गया। **गैलिलियो** (1564-1642 ई.) ने गतिविज्ञान की नींव डाली और पहला टेलिस्कोप बनाया। **लियोनार्डो-डी-विन्सी** (1452-1519 ई.) ने पानी खींचने का यंत्र, लेंथ मशीन तथा अन्य कई औजारों का आविष्कार किया। उसने शरीर-विज्ञान, जीव-विज्ञान, टेक्नॉलॉजी और रेखा-गणित-संबंधी अनेक खोजें की। **न्यूटन** ने पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति का पता लगाया। इसी प्रकार **कैप्लर, हार्वे, वैसेलियस डिकार्टे, गिलवर्ट, कोड्र्स, हैल्मंट** आदि वैज्ञानिकों ने अपने अन्वेषणों और नये विचारों के द्वारा जन-मस्तिष्क को उद्वेलित किया।

विज्ञान की प्रगति ने पुनर्जागरण के चरणों द्वारा आनेवाले नवीन परिवर्तनों को बनाने के लिए मानव समाज को तैयार किया और पुनर्जागरण में सहायता प्रदान की।

23.3 भौगोलिक खोज (Geographical Discoveries)

नये युग के निर्माण में भौगोलिक अन्वेषणों का भी महत्त्वपूर्ण हाथ था। पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दियों के बीच के वर्षों में यूरोप के साहसी नाविकों ने दूर-दूर तक की सामुद्रिक यात्राएँ कीं। व्यापार के विकास के लिए सामुद्रिक

नोट

मार्गों की खोज शुरू हुई। इन्हीं दिनों कुछ ऐसे वैज्ञानिक आविष्कार भी हुए जिन्होंने सामुद्रिक यात्राओं को सरल बनाया। मैरिनर्स कम्पास के निर्माण से यह काफी आसान हो गया। **वास्को-डी-गामा**, **कोलम्बस** और **मैगलन** ने अनेक देशों तथा नये जल मार्गों का पता लगाया। इस युग के अन्य प्रसिद्ध अन्वेषक और नाविक थे–**वार्थोलोमियो, कैबोज, कोटिस, पिजारो** आदि।

नई खोजों के चलते यूरोप के लोगों की कूपमण्डूकता और अन्धविश्वास को गहरा धक्का लगा। नये मार्गों का पता लगने से न केवल यूरोप के लोगों की व्यापारिक उन्नति हुई बल्कि वे विश्व की अनेक समृद्ध सभ्यताओं के सम्पर्क में भी आए। फलस्वरूप यूरोप के लोगों में नवीन विचार तेजी से पनपने लगे।

स्पष्ट है कि सामन्तवाद के पतन काल में यूरोप में होने वाली वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति ने समाज को गहरे रूप से प्रभावित किया और जीवन के सभी क्षेत्रों में एक नई चेतना पैदा की।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. पूंजी के उदय के साथ सामन्ती व्यवस्था का .... होने लगा।
2. सामन्ती अर्थव्यवस्था का आधार .... थी।
3. वाणिज्य और व्यापार की आवश्यकता ने कई .... को जन्म दिया।
4. कई बर्बर आक्रान्ता जातियों ने .... धर्म स्वीकार कर लिया।
5. इंग्लैण्ड के राजा एडमण्ड की .... पर फूल चढ़ाने लोग दूर-दूर से आते थे।

23.4 सामन्तवाद का पतन (Decline of Feudalism)

यूरोपीय सामन्तवाद का मूल उद्देश्य सुरक्षा एवं शांति व्यवस्था था। काफी हद तक ये उद्देश्य पूरे भी हुए। किन्तु जिस सुख और शांति के इस व्यवस्था की आधारशिला रखी गयी थी, वह पूरी नहीं हो सकी। समाज सामंतों के शोषण का शिकार हो गया। समाज में अशांति एवं कुव्यवस्था-सी फैल गयी। केंद्रीय सत्ता के लुप्त हो जाने से राष्ट्रीय एकता समाप्त हो गयी। सामन्तों की बढ़ती हुई ताकत, प्रभाव, समृद्धि ने उन्हें जरूरत से ज्यादा महत्त्वाकांक्षी बना दिया। अब वे राजा के विरुद्ध षड्यंत्रों तथा विद्रोहों और पारस्परिक संघर्षों में व्यस्त रहने लगे। इससे अशांति और अराजकता बढ़ी। शासन और कानूनों की विभिन्नता के कारण लोगों का जीवन कष्टमय हो गया। सामंतों से उचित एवं निष्पक्ष न्याय की आशा नहीं की जा सकती थी। इस प्रकार चारों ओर अराजकता, अशांति, कुव्यवस्था और असंतोष बढ़ता चला गया। ऐसे वातावरण में आर्थिक, बौद्धिक तथा सांस्कृतिक प्रगति की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। ऐसी स्थिति में सामंतवाद का पतन अनिवार्य हो गया।

पाँचवी शताब्दी में आरंभ होने वाली सामंत प्रथा तेरहवीं शताब्दी तक अपने उत्कर्ष की पराकाष्ठा तक जा पहुंची। किन्तु, तेरहवीं सदी से सामंतवाद के पतन की प्रक्रिया शुरू हो गयी। वैसे तो इस प्रथा के अवशेष अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक वर्तमान रहे, परन्तु पन्द्रहवीं शताब्दी तक यह प्रथा काफी निर्बल हो गयी और जल्द ही सारे यूरोप में सामंती व्यवस्था की समाप्ति हो गयी।

जहाँ तक यूरोप में सामंतवाद के पतन के कारण का प्रश्न है, इस संदर्भ में कुछ खास तत्वों की चर्चा की जा सकती है–

शक्तिशाली राजतन्त्रों का उदय–राष्ट्रीयता की भावना के विकास और नये अस्त्र-शस्त्र एवं बारूदों के आविष्कार के कारण पन्द्रहवीं शताब्दी तक यूरोप में राजाओं की शक्ति काफी बढ़ गयी। इसी शताब्दी में स्पेन, फ्रांस तथा बाद में इंग्लैंड में शक्तिशाली राजतन्त्रों का उदय हुआ। सामंतों से छुटकारा पाने के लिए व्यापारी पैसे से राजा की सहायता करने लगे। जनता भी राजा के पक्ष में थी। ऐसे राज्यों में सामन्तों का कुछ भी महत्त्व नहीं था। यूरोप के शक्तिशाली शासकों ने सामंतों को दबाया और उनकी शक्ति को क्षीण किया।

नोट

राष्ट्रीयता की भावना का विकास—मध्य युग के अन्त में शिक्षा का तेजी से प्रचार हुआ। शिक्षा के प्रसार के कारण लोगों में राष्ट्रीयता की भावना पनपने लगी। यह भावना सामन्तवाद की विरोधी थी। दूसरी ओर सामन्त केवल अपने स्वार्थ-सिद्धि में लगे रहते थे। अत: वे राष्ट्रीयता की भावना के विरोधी थे। राष्ट्रीयता हितों और व्यक्तिगत हितों के बीच जब भी टकराव होता है, विजय राष्ट्रीयता की भावना को ही मिलती है।

स्थानीय सेना की स्थापना—आरंभ में राजा की अपनी सेना केवल नाम मात्र की होती थी। अत: वे प्राय: सामन्तों की सेना पर निर्भर रहते थे। धीरे-धीरे राजाओं ने अपनी स्थायी सेना के महत्त्व को समझा। स्थानीय सेना राजा के प्रति वफादार होती थी। नई भौगोलिक खोजों के कारण तथा वाणिज्य-व्यवसाय एवं उद्योग-धन्धों की प्रगति के चलते राजा की आय में वृद्धि हुई। अब वे अपनी स्थायी सेना रखने लगे। जनता तथा मध्य वर्ग के लोगों ने भी राजा को आर्थिक सहायता दी। इस प्रकार राजा की शक्ति बढ़ती गयी। दूसरी ओर सीमित साधनों के कारण सामन्तों की सेना कमजोर पड़ती गयी। इंग्लैंड में तो हेनरी सप्तम की संसद् ने लिवरी एण्ड मेन्टीनेन्स एक्ट (Livery and Maintenance Act) पास करके सामन्तों को सेना रखने की मनाही कर दी। इस प्रकार कालांतर में राजाओं ने अपनी स्थायी सेना के बल पर सामन्तों की शक्ति को कुचल दिया।

सामन्तों के आपसी संघर्ष—सामन्त युद्धप्रिय और महत्त्वाकांक्षी होते थे। अपनी शक्ति और सम्पत्ति के विस्तार के लिए वे सदा आपस में ही लड़ते-झगड़ते रहते। इससे उनकी शक्ति तो धीरे-धीरे कम हुई ही, साथ ही उनकी लोकप्रियता भी जाती रही। सामन्ती युद्धों के कारण जनता को भी बड़ी कठिनाई होती थी। सैनिक फसलों को बर्बाद कर देते थे और जानमाल की काफी हानि होती थी। अत: सामन्तों की लोकप्रियता घटने लगी थी। दूसरी ओर आपसी युद्धों धर्म-युद्धों, तथा इंग्लैंड के सामन्तों के बीच होनेवाली गुलामों की लड़ाई आदि के कारण सामन्तों की संख्या एवं शक्ति में काफी कमी आयी। युद्धों के कारण उनकी आर्थिक हालत भी खराब हो गयी। ऐसी अवस्था में उनकी शक्ति इतनी कम हो गयी कि वे राजाओं की बढ़ी हुई शक्ति का सामना करने में बिल्कुल असमर्थ हो गये। अन्त में राजाओं ने उनकी रही-सही शक्ति का भी अन्त कर दिया।

धर्म-युद्ध (Crusades)—सामन्त के पतन का एक अन्य महत्त्वपूर्ण कारण धर्म-युद्ध थे। मध्यकाल में जेरूसलेम, नजारेथ आदि धर्मस्थलों को लेकर मुसलमानों तथा ईसाइयों के बीच रक्तरंजित संघर्ष हुए। इन्हें हम धर्म युद्ध के नाम से जानते हैं। इन युद्धों में धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर तथा पोप के आदेश पर बड़ी संख्या में सामन्तों ने भाग लिया। इसमें से अनेक इन युद्धों में काम आये और जो बचे रहे आर्थिक रूप से दिवालिया हो गये। इस प्रकार सामन्तों का प्रभुत्व जाता रहा।

बारूद का आविष्कार—यद्यपि सामन्त युद्ध-प्रिय थे किन्तु उनके अस्त्र-शस्त्र पुराने ढंग के होते थे। बाद में यूरोप में नये ढंग के हथियार बनाये जाने लगे, जो कीमती होते थे। अत: बड़ी मात्रा में सामन्त इन नये अस्त्र-शस्त्रों को खरीदने में असमर्थ थे, दूसरी ओर राजा को पैसे की कमी नहीं थी। अत: वह आसानी से अपने सैनिकों को नये हथियार से सुसज्जित कर सकता था। इसी बीच बारूद, बन्दूक और तोप का आविष्कार हुआ। बारूद और तोपों से अब सामन्तों के दुर्भेद्य किलों को आसानी से तोड़ा जा सकता था। बन्दूकों के प्रचलन से सामन्तों के घुड़सवार सैनिकों का महत्त्व भी जाता रहा। किन्तु ये बड़े ही खर्चीले साधन थे। सामन्त अपनी आर्थिक कठिनाइयों के कारण इनका प्रयोग करने में असमर्थ थे। परिणामस्वरूप इन नये साधनों पर राजा का एकाधिकार हो गया। अत: युद्धों में सामन्तों का महत्त्व घट गया। पुन:, इस कारण से सामन्तों को नियंत्रित करने में भी राजा को सफलता मिली।

रोमन सम्राटों का प्रयास—एक हजार ई. के लगभग पश्चिमी यूरोप में पवित्र रोमन साम्राज्य की स्थापना हुई। सम्राट सामन्ती प्रथा के बाहर थे और वे एक शक्तिशाली केंद्र की स्थापना के पक्षपाती थे। अत: उन्होंने अपने प्रभुत्व काल में सामन्तों की बढ़ती हुई शक्ति पर अंकुश लगाकर रखा। सामन्तों में सम्राटों से लोहा लेने की शक्ति नहीं थी।

छापेखाने का आविष्कार—धर्म-युद्धों के क्रम में अरबों के साथ सम्पर्क के कारण यूरोप में छापेखाने का प्रयोग शुरू हुआ। इस प्रकार बड़ी संख्या में सस्ती पुस्तकें सुलभ हो गयीं। परिणामस्वरूप यूरोप में नये विचारों का तेजी से प्रचार हुआ और अन्ध-विश्वासों में कमी आयी। इस नई चेतना ने लोगों की आँखें खोल दीं और लोग सामन्तवाद की बुराइयों से परिचित हो गये। लोग जल्द से जल्द इस व्यवस्था से मुक्ति प्राप्त करने के लिए लालायित हो उठे।

नोट

चर्च का प्रभाव—मध्यकाल में यूरोप के जन-जीवन पर चर्च का गहरा प्रभाव था। चर्च तथा पोप की आज्ञाओं का उल्लंघन राजा भी नहीं कर सकते थे। जब पोप ने अनुभव किया कि सामन्त प्रजा पर तरह-तरह के अत्याचार करते हैं तथा सामन्ती युद्धों के कारण यूरोप को धन-जन की अपार क्षति उठानी पड़ रही है, तो उसने इस दिशा में आवश्यक कदम उठाए। चर्च के द्वारा एक आदेश निकाला गया जिसे **'ईश्वर की शान्ति'** (Truce of God) कहा जाता था। इस आदेश के अनुसार बुधवार की शाम से लेकर सोमवार की सुबह तक तथा वर्ष के कुछ महीनों में युद्ध न हो सकते थे। सामन्तों को पोप द्वारा अपनी प्रजा पर अत्याचार न करने की भी सलाह दी गयी। चर्च तथा पोप के इन कार्यों ने प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सामन्तों की शक्ति को सीमित किया।

मध्यवर्ग का उत्कर्ष—शिक्षा की प्रगति, छापाखाने का आविष्कार, वाणिज्य-व्यवसाय की उन्नति तथा शहरों की स्थापना के कारण यूरोप के विभिन्न देशों में एक प्रभावशाली मध्यम वर्ग का उत्कर्ष हुआ। शहरों में रहनेवाले लोग स्वतंत्र विचारों के पोषक होते थे। जाग्रत मध्यम वर्ग के लोग कब तक सामन्तों की अधीनता को सहते? ये लोग शान्ति चाहते थे ताकि उद्योग-धन्धों तथा व्यापार का विकास हो। दूसरी ओर सामन्त युद्धप्रिय थे। अत: मध्यम वर्ग के लोग जल्द से जल्द सामन्तों के चंगुल से मुक्त हो जाना चाहते थे। यही कारण था कि इस वर्ग के लोगों ने राजा और मध्यम वर्ग ने मिलकर कालान्तर में सामंतों की शक्ति का दमन किया।

उद्योग और व्यापार की उन्नति—सामन्त प्रथा में उद्योग एवं व्यापार के प्रति उदासीनता बरती गयी। फिर भी यूरोप के देशों में उद्योग एवं व्यापार की उन्नति होती रही। मध्यकाल में धर्म-युद्धों के कारण यूरोपीय देशों को सम्पर्क एशिया और अफ्रीका के देशों के साथ हुआ इससे उद्योग एवं वाणिज्य का तेजी से विकास हुआ। जल्द ही अनेक नए शहर स्थापित हो गये। उद्योग एवं वाणिज्य की प्रगति ने एक अत्यन्त समृद्ध व्यवसायी वर्ग को जन्म दिया। व्यवसायी वर्ग सामन्तों से क्षुब्ध था क्योंकि सामन्त व्यापार के मार्ग में रोड़े अटकाते थे। इस प्रकार नया व्यवसायी वर्ग अपने अधिकारों के प्रति भी सचेष्ट हो उठा। सामन्तवाद की समाधि पर ही यह वर्ग अपनी महत्त्वाकांक्षा के महल का निर्माण कर सकता था। अत: इस वर्ग के लोगों ने राजा का साथ देकर सामन्तों की शक्ति को कुचलने में काफी सहयोग दिया।

नये शहरों की स्थापना—उद्योग एवं वाणिज्य की प्रगति के कारण यूरोप में अनेक नए शहरों की स्थापना हुई। शहरों का वातावरण काफी खुला था। वे नगर आधुनिकता के प्रतीक थे। नगरों में दूर-दूर के व्यापारी आते-जाते थे। अत: नगरों में विचारों का आदान-प्रदान शुरू हुआ और ज्ञान की प्रगति हुई। व्यापारी शिक्षा के प्रति भी सचेष्ट हो उठे और यूरोपीय नगर आधुनिक शिक्षा के प्रतिष्ठित केंद्र बन गये। गाँवों से किसान-मजदूर भागकर नयी आजीविका की खोज में शहरों में आने लगे। यह बात सामंतों को पसंद न आयी। फलत: व्यापारियों और सामंतों के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गयी। सामंतों के विरुद्ध व्यापारियों ने राजा की भरपूर सहायता की। फलस्वरूप सामंतों की शक्ति कम होती गयी।

मुद्रा का प्रचलन—मुद्रा के प्रचलन ने आर्थिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन किया। विनिमय की सामन्ती प्रथा का अन्त हो गया। वस्तुओं को खरीदने के लिए सामन्तों को भी अब मुद्रा की आवश्यकता हुई। अब पैसे लेकर उनहोंने अपने कम्मियों को भी स्वतंत्र करना शुरू कर दिया। इससे उनका प्रभाव घटता गया। दूसरी ओर इससे राजा को सहूलियत हुई। वह वेतन देकर स्थायी सेना रखने लगा और सामन्तों के नियंत्रण से मुक्त हो गया।

किसानों का असंतोष—सामन्तवादी व्यवस्था में किसानों का बेहद शोषण होता था। भला कब तक वे चुपचाप बैठकर अपनी बर्बादी का नजारा देखते रहते। धीरे-धीरे उनके बीच असंतोष की भावना प्रबल होती गयी और अन्त में इस भावना ने सामन्तों के विरुद्ध विद्रोहों को जन्म दिया। 1381 ई. में इस प्रकार का एक भयानक विद्रोह इंग्लैंड में हुआ। 1358 ई. में फ्रांस में भी किसानों का भयंकर विद्रोह हुआ था। ये विद्रोह सामन्तवाद के लिए प्राणघातक सिद्ध हुए।

वस्तुत: सामन्तवाद की आवश्यकता अस्थायी काल के लिए थी। जिन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए इसकी स्थापना की गयी थी, उनकी प्राप्ति के बाद इसका कोई महत्त्व नहीं रह गया था। बाद में तो यह व्यवस्था समाज तथा देश के लिए अत्यन्त हानिकारक हो गयी। समुचित सुधार और परिवर्तनों के द्वारा इसे लाभदायक बनाया जा सकता था।

नोट

किन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। ठीक इसके विपरीत सामन्तों की युद्ध-प्रवृत्ति एवं उनके अत्याचारों ने कुछ ऐसी शक्तियों को जन्म दिया जिसके चलते अन्त में यूरोप में सामन्तवाद का नाश हो गया।

23.5 सामन्त-प्रथा का मूल्यांकन (Evaluation of Feudal System)

सामन्तवाद समय, स्थान और मानव स्वभाव की आवश्यकताओं के अनुकूल विकसित एक ऐसी अवस्था थी जिसने समय की चुनौतियों को सहर्ष स्वीकार किया, उनका समुचित निदान किया तथा सदियों यूरोप के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित किया। सामन्तवाद की प्रणय और शौर्य की परम्पराओं ने कवियों तथा साहित्यकारों को उच्च कोटि की साहित्यिक रचनाओं की प्रेरणा दी। इसके सांस्कृतिक एवं नैतिक महत्त्व भी कम नहीं है। साहस, शौर्य, उच्च चरित्र, सदाचार आदि आदर्शों को स्थापित किया गया। इस प्रथा ने मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति को ऊँचा उठाने का प्रयास किया। उस समय जीवन का कोई ऐसा अंग नहीं था जिस पर व्यवस्था का प्रभाव नहीं पड़ा हो। इस संदर्भ में इतिहासकार **विल डूरेन्ट** ने लिखा है, "इतिहास का अधिकांश आर्थिक और सामाजिक रचनाओं के समान सामन्त-प्रथा भी स्थान, समय और मानव स्वभावों की आवश्यकता के अनुकूल थी।" दुर्भाग्यवश इस व्यवस्था में अनेक मौलिक दोष भी विद्यमान थे। इसने सामाजिक वर्ग-प्रणाली, जन-साधारण के शोषण, अनावश्यक युद्धों, जीवन की विलासिता आदि को प्रोत्साहन देकर उस सामाजिक अशान्ति को जन्म दिया जिसका समाधान अब तक नहीं हो पाया है। राष्ट्रीय एकता पर सामन्तवाद ने भयंकर कुठाराघात किया। सामन्तों ने आर्थिक प्रगति तथा लोकहित की उपेक्षा की। इसी प्रकार साहित्य, ज्ञान विज्ञान, कला एवं संस्कृति के अन्य पक्षों में भी विशेष उन्नति नहीं हो पायी। अत: सामन्तवादी युग को यूरोपीय इतिहास का **अन्धकार युग** (Dark Age) कहा जाता है। सचमुच ही कुछ हद तक यह अंधकार युग था। आमतौर पर जनता का जीवन कष्टदायक था। लोग शिक्षा के अभाव में अज्ञानी तथा अन्धविश्वासी हो गये थे। सामाजिक विषमता ने कालान्तर में वर्ग-संघर्ष का स्वरूप ग्रहण कर लिया। किसानों और मजदूरों का भयंकर रूप से शोषण किया गया। आम जनता पूर्णतया असहाय थी। सामन्तों की शक्ति इतनी बढ़ गयी कि इसने राष्ट्रीय एकता एवं राष्ट्रीयता की भावना का गला घोंट दिया। यह स्थिति सम्पूर्ण यूरोप में लगभग एक हजार वर्ष तक बनी रही। सामन्त-प्रथा के प्रभाव इतने व्यापक स्थायी, सुदूरगामी एवं शक्तिशाली थे कि विश्व के अनेक देश आज भी उसके दोषों से ग्रसित हैं और उनसे मुक्ति पाने के लिए छटपटा रहे हैं।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

6. मध्यकालीन नगरों का यूरोपीय राजनीति में व्यापक महत्त्व था।
7. नगरीकरण ने सामन्ती व्यवस्था को बढ़ावा दिया।
8. छापेखाने की सुविधा के बाद पठन-पाठन का काम तेजी से चलने लगा।
9. चर्च तथा पोप की आज्ञाओं का उल्लंघन राजा भी नहीं करते थे।
10. 1358 में फ्रांस में सामन्तों का भयंकर विद्रोह हुआ था।

23.6 सारांश (Summary)

- सामन्ती व्यवस्था का पतन होने लगा और इसके स्थान पर एक नई व्यवस्था का जन्म हुआ जिसे हम पूँजीवाद व्यवस्था के नाम से जानते हैं। सामन्ती अर्थव्यवस्था का आधार जमीन थी। कम्मिया मजदूर कृषि कार्य करते थे और अपने सामन्त-स्वामी की सेवा करते थे। परन्तु सामन्तवाद के पतन काल में एक नयी अर्थ-व्यवस्था ने जन्म लिया। खेतों के छोटे-छोटे टुकड़ों की जगह पर यूरोप के अनेक देशों में बड़े-बड़े

नोट

स्टेट कायम हुए। उसी समय इंग्लैंड में कृषि-क्रान्ति का जन्म हुआ और कृषि के तरीकों में अभूतपूर्व परिवर्तन हो गये।

- सामन्तवाद के पतन काल में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यूरोप का व्यापार होने लगा। यूरोप के व्यापारी भारत तथा चीन जैसे सुदूरस्थ देशों तक आने-जाने लगे। धीरे-धीरे यूरोप का व्यापारी वर्ग समृद्ध एवं प्रभावशाली बन बैठा। चर्च तथा सामन्ती प्रथा व्यापार की प्रगति के मार्ग में सबसे बड़े रोड़े थे।
- उद्योग एवं व्यापार की प्रगति के कारण मध्य युग के अन्त में यूरोप में अनेक नगरों की स्थापना हुई। इसी प्रकार जब धर्म युद्धों के कारण सामन्तों के पास धन की कमी हो गयी तो समृद्ध व्यापारियों ने सामन्तों को धन देकर उन्हें नगरों को स्वतंत्र करने के लिए मजबूर किया। ये नगर आधुनिकता के प्रतीक थे। स्वतंत्र नगरों में व्यापार, व्यवसाय तथा उद्योगों की काफी उन्नति हुई। उनका सम्पर्क व्यापार के कारण पूर्व देशों से होता था, अत: उन्होंने पूर्वी सभ्यता-संस्कृति को अपनाने की कोशिश की और उनकी अनेक बातें सीखीं।
- रोमन साम्राज्य के पतन के सदियों बाद ग्यारहवीं सदी में पश्चिमी यूरोप के आर्थिक क्षेत्र में पुनरुत्थान की प्रवृत्ति पहली बार देखने को मिली। इस शताब्दी में फिर से औद्योगिक एवं कृषि कार्य-कलापों के प्रति लोगों में गहरी अभिरुचि देखी गयी, दलदल भूमि को पुन: कृषि योग्य बनाया गया, सड़कों तथा नदियों के किनारे नई औद्योगिक एवं वाणिज्य-प्रधान बस्तियाँ स्थापित हुईं और वाणिज्य का पुनरुत्थान हुआ।
- नगरों ने यूरोप के आर्थिक पहलू को भी गहरे रूप से प्रभावित किया। सच पूछा जाए तो जीवन के इसी बिन्दु पर नगरों के विकास का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। नगरों ने मध्ययुग में अनेक आर्थिक सिद्धांतों तथा आदर्शों का निरूपण कर आधुनिक जगत की अर्थ-व्यवस्था की पृष्ठभूमि के निर्माण में योगदान किया। नगरों ने श्रम को अधिक महत्त्व दिया जिससे दासता तथा कमियापन का शनै: शनै: विलोप होने लगा।
- पाँचवी शताब्दी में आरंभ होने वाली सामंत प्रथा तेरहवीं शताब्दी तक अपने उत्कर्ष की पराकाष्ठा तक जा पहुंची। किन्तु, तेरहवीं सदी से सामंतवाद के पतन की प्रक्रिया शुरू हो गयी। वैसे तो इस प्रथा के अवशेष अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक वर्तमान रहे, परन्तु पन्द्रहवीं शताब्दी तक यह प्रथा काफी निर्बल हो गयी और जल्द ही पूरे यूरोप में सामंती व्यवस्था की समाप्ति हो गयी।

23.7 शब्दकोश (Keywords)

- **पतन**–गिरावट, ह्रास, समाप्ति की प्रक्रिया।
- **जल-दस्यु**–समुद्री लुटेरे, पानी का जहाज लूटने वाले डाकू।

23.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. व्यापार के उदय और नगरों की स्थापना का सामन्तवाद पर क्या प्रभाव पड़ा?
2. सामन्तवाद के पतन में नगरीकरण की भूमिका का विवेचन करो।
3. 'कागज तथा छापे-खाने का सामन्तवाद के पतन में उल्लेखनीय योगदान था' कथन का परीक्षण कीजिए।
4. भौगोलिक खोजों का क्या अर्थ है?
5. सामन्तवाद के पतन की प्रक्रिया का विश्लेषण कीजिए।
6. सामन्ती व्यवस्था का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. पतन	2. जमीन	3. नगरों	4. ईसाई	5. कब्र
6. सत्य	7. असत्य	8. सत्य	9. सत्य	10. असत्य।

23.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

नोट

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–24: सामुद्रिक व्यापार (Oceanic Trade)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
24.1 सामुद्रिक व्यापार (Oceanic Trade)
24.2 समुद्रपारीय व्यापार में वृद्धि (Increasement in Trans-Ocean Trade)
24.3 सारांश (Summary)
24.4 शब्दकोश (Keywords)
24.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
24.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- सामुद्रिक व्यापार को जानेंगे;
- समुद्र-व्यापार से जुड़ी बातों को समझेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

पंद्रहवीं शताब्दी में यूरोप की कुछ घटनाएँ परस्पर-विरोधी लगती हैं। एक ओर तो यूरोप आंशिक रूप से ऐसी स्वायत्तशासी इकाइयों के समूह में विभाजित हो गया था जिनकी अर्थव्यवस्थाओं में विकास की अवस्था की दृष्टि से बहुत भिन्नता दिखाई देती थी और दूसरी ओर, इन देशों अथवा क्षेत्रों के बीच का संपर्क यूरोपीय महाद्वीप के व्यापार में बराबर नियमित और अधिक स्थायी होता गया।

24.1 सामुद्रिक व्यापार (Oceanic Trade)

***(i)* भूमध्यसागर-क्षेत्र**–सन् 1500 में भूमध्यसागर-क्षेत्र प्राय: आत्मनिर्भर था। उस क्षेत्र से व्यापार-मार्ग पूर्व में ओरियंट तथा उत्तर में मध्य और पश्चिमी यूरोप तक है। स्थल-मार्ग से मसाले और निर्मित वस्तुएँ दक्षिण जर्मनी ले जाई जाती थीं। व्यापार मुख्यत: यूनान के आसपास और तुर्की में होता था। अधिकांश व्यापार नेपल्स से कुछ दूरी पर एड्रियाटिक सागर क्षेत्र से तथा उत्तर में लीयन्स की खाड़ी से आरंभ होता था। भूमध्यसागर के सभी क्षेत्रों में उत्तरी इटली की गणना सबसे व्यस्त और समृद्ध क्षेत्र के रूप में होती थी। उसके नगरों में आबादी बहुत घनी थी। वैसे तो दक्षिणी फ्रांस और स्पेन में भी बड़े व्यापारिक नगर थे।

क्या आप जानते हैं काहिरा और कुस्तुनतुनिया की गणना भी बड़े व्यापारिक नगरों में होती थी।

इस क्षेत्र में खाद्य-पदार्थों का खूब व्यापार होता था। इनमें अनाज, फल, शराब, चीनी और मछली शामिल थे। कपड़ा, रेशम, कपास, चमड़ा और खनिज पदार्थ आम वस्तुओं में थी। मसाले इस क्षेत्र में एशिया से एलेक्जेंड्रिया और त्रिपोली के रास्ते से आए तथा एशिया के अन्य माल के साथ वेनिस, जेनेवा और पीसा भेजे गए। इन वितरण-केंद्रों से यह आयातित सामान स्थलीय मार्ग से उत्तरी यूरोप अथवा समुद्र-मार्ग से स्पेन पहुँचाया जाता था।

लेकिन धीरे-धीरे भूमध्य सागर क्षेत्र के इस व्यापार में अटलांटिक क्षेत्र के नवोदित राष्ट्र घुसपैठ करने लगे। वैसे पहला हस्तक्षेप भूमध्यसागर क्षेत्र से ही हुआ। पुर्तगाल ने इंडीज़ (Indies) तक के लिए समुद्र मार्ग खोज निकाला और इस कारण वेनिस का यूरोप को मसाले सप्लाई करने का लाभदायक व्यापार खतरे में पड़ गया। पुर्तगाल के मालवाहक जहाज़ 1501 में एन्टवर्प पहुँचे। इससे एन्टवर्प मुख्य वितरण-केंद्र बन गया, यद्यपि केप के रास्ते (समुद्र-मार्ग) मसालों की गुणता के लिए हानिकारक थे। कुछ ही समय के बाद युद्ध और स्पेन के आक्रमण के कारण एन्टवर्प तबाह हो गया और यूरोप को मसाले पहुँचाने का काम फिर वेनिस के हाथ में आ गया। 1580 के आसपास तुर्की और फ़ारस में लड़ाई छिड़ जाने से वेनिस की स्थिति को फिर धक्का लगा और जब 1600 के आसपास यूरोप में मसाले उत्तरी नीदरलैंड लाने लगा तब तो वेनिस का दबदबा अंतिम रूप से खत्म हो गया।

भूमध्यसागर-क्षेत्र में अन्य सूत्रों से व्यापार के ज़रिए घुसपैठ सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अधिक ज़ाहिर होने लगी थी। अपनी कुछ सबसे ज़रूरी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भूमध्यसागर के देश अन्य देशों पर निर्भर करने लगे थे। इस अवधि के दौरान पश्चिमी भूमध्यसागर में अनाज की सप्लाई अस्त-व्यस्त हो गई थी और पहले स्पेन, फिर इटली और अंततः कुस्तुनतुनिया (कॉन्स्टेन्टीनोपल) के नगरों में अकाल और भुखमरी का प्रकोप हो गया।

परिणामतः अनाज का आयात ज़रूरी हो गया। उत्तरी यूरोप से अनाज लेकर उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड के जहाज़ इस क्षेत्र में पहुँचे। उत्तरी नीदरलैंड के जहाज़ उत्तरी सागर से बड़ी मात्रा में मछली भी लाए, पोलैंड और रूस से भारी मात्रा में चमड़ा स्पेन और इटली में आया। इसके बाद उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड भूमध्यसागर-क्षेत्र के कपड़ा बाज़ार में भी दखल देने लगे और इससे उत्तरी तथा दक्षिणी यूरोप के बीच बढ़ते संबंध अधिक मज़बूत हुए। भूमध्य क्षेत्र आत्मनिर्भर क्षेत्र नहीं रह सका। जीवन-निर्वाह के लिए वह बाहर से सप्लाई पर अधिकाधिक निर्भर होता गया।

***(ii)* मध्य यूरोप**–मध्य यूरोप भी सोलहवीं शताब्दी के दौरान यूरोप की व्यापक अर्थव्यवस्था से अधिकाधिक जुड़ता गया। वस्तुतः यह क्षेत्र यूरोप के व्यापक व्यापार में सन् 1500 से ही भाग लेने लगा था। इस क्षेत्र में चाँदी और ताँबे जैसे खनिज पदार्थों की यूरोप की सबसे कीमती खानें थीं। भूमध्यसागर और यूरोप महाद्वीप के बीच पारगमन व्यापार मुख्यतः फ्यूगर परिवार के पास था और उसके मुख्य केंद्र तीन नगरों–आग्सबर्ग, रीगन्सबर्ग और न्यूरमबर्ग में थे।

यूरोप के इस भाग का विशाल व्यापार धातुओं और धातु-पात्रों पर आधारित था। पंद्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जर्मनी ने अपना चाँदी का उत्पादन इटली और निचले देशों की बढ़ती माँग पूरी करने के लिए बढ़ाया। सोलहवीं शताब्दी में भी उत्पादन का विस्तार होता रहा। ऊपर बताया जा चुका है कि खनिज पदार्थों का व्यापार एन्टवर्प में अधिकाधिक केंद्रित होता गया था। अन्य वस्तुएँ भी एन्टवर्प स्थित अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में पहुँची। इटली और एन्टवर्प के बीच स्थलीय पारगमन व्यापार में दक्षिण जर्मनी की फर्मों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

लेकिन, सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में इस क्षेत्र का ह्रास हुआ। जहाज़रानी व्यापार आगे बढ़ गया और महाद्वीप के आर-पार का व्यापार उखड़ गया। जर्मनी की अर्थव्यवस्था पर धार्मिक संघर्षों का बुरा असर पड़ा और शताब्दी के अंतिम एक-चौथाई भाग में इटली के उद्योग पर भूमध्यसागर-क्षेत्र में उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड की सीधी व्यापारिक घुसपैठ का दबाव पड़ना शुरू हो गया। भाग्य ने एन्टवर्प का साथ तभी छोड़ दिया जब युद्ध से क्षतिग्रस्त उसके व्यापार पर 1585 में ड्यूक ऑफ़ परमा ने क़ब्जा कर लिया तथा उसके समुद्री निर्गम मार्ग में उत्तरी नीदरलैंड ने अवरोध खड़े कर दिए।

नोट्स जर्मनी की अर्थव्यवस्था पर धार्मिक संघर्षों का बुरा असर पड़ा।

नोट

***(iii)* बाल्टिक सागर क्षेत्र**–यूरोप की अर्थव्यवस्था के साथ बाल्टिक की अर्थ-व्यवस्था यद्यपि बहुत पहले से जुड़ने लगी थी, लेकिन प्रभावकारी रूप में यह कार्य सोलहवीं शताब्दी में शुरू हुआ। पूर्व अथवा बाल्टिक और पूर्वी यूरोपीय क्षेत्र में सामान्यत: दो प्रकार की व्यापार प्रणालियाँ थीं–समुद्रमार्गी और स्थलमार्गी। दोनों ने रोज़मर्रा के काम आने वाली स्थूल वस्तुओं, जैसे अनाज, नमक, मछली, ऊनी कपड़ा, फ़र, इमारती लकड़ी, कोलतार, पटसन, लोहा और ताँबा का कारोबार सँभाला।

बाल्टिक क्षेत्र उत्तरी यूरोप का अन्न-भंडार था। यह क्षेत्र पंद्रहवीं शताब्दी के अंत से यह भूमिका निभा रहा था, क्योंकि पश्चिमी यूरोप में जनसंख्या बढ़ने लगी थी। बदले में पूर्वी यूरोप के ज़मींदारों ने पश्चिमी यूरोप में बना क़ीमती सामान और आम उपभोग की वस्तुएँ खरीदीं। बाल्टिक सागर में मछली भी उपलब्ध हुई लेकिन सोलहवीं शताब्दी के दौरान इसका निर्यात घट गया। उसके स्थान पर हॉलैंड उत्तरी समुद्र से पकड़ी गई मछलियाँ सप्लाई करने लगा।

समुद्री-मार्ग से व्यापार में दो गुटों–उत्तरी जर्मनी की हैंसलीग और हॉलैंड के बीच प्रतियोगिता चली। पंद्रहवीं शताब्दी में हैंसलीग हावी रहा, क्योंकि यह बाल्टिक, स्कैंडिनेविया और आईलैंड के अधिक निकट था और उसने प्रतियोगियों को उस क्षेत्र में नहीं घुसने दिया था। लेकिन हॉलैंड ने अपनी बढ़ती संपदा और शक्ति के बलबूते पर अंतत: हैंसलीग को हरा दिया। सोलहवीं शताब्दी के दौरान वह अनाज और मछली दोनों के व्यापार में अग्रणी था।

> *क्या आप जानते हैं* हैंसलीग के व्यापारियों को चुनौती देने के लिए अन्य प्रतियोगी भी उठ खड़े हुए। इससे उत्तरी समुद्र-क्षेत्रों में व्यापार बहुत अधिक बढ़ गया और यूरोप की व्यापारिक गतिविधियाँ अधिक जटिल हो गईं।

निचले देशों और इटली के बीच महाद्वीप के आर-पार व्यापार से हैंसलीग द्वारा किया जाने वाला व्यापार घट गया और उनके पुराने केन्द्र ब्रूजेज को, एन्टवर्प ने महत्त्वहीन बना दिया। दक्षिणी जर्मनी का फ़्यूगर-परिवार मध्य यूरोप से एन्टवर्प तक पोलैंड के रास्ते ताँबे के व्यापार पर अपना नियंत्रण स्थापित करने में कामयाब हो गया। इंग्लैंड और स्कैंडिनेवियाई देशों के व्यापारियों ने भी हैंसलीग के व्यापार में से अपना हिस्सा काटना शुरू कर दिया। हैंस के कुछ नगरों ने हॉलैंड के अपने प्रतिद्वंद्वियों को सहयोग दिया, हम्बर्ग जैसे नगर स्वतंत्र रूप से व्यापार करने लगे। लुवेक जैसे कुछ अन्य नगर अलग-थलग पड़ गए और उनका पतन हो गया।

यूरोप की अर्थव्यवस्था में पूर्वी क्षेत्रों के एकीकृत होने का एक अन्य संकेत सन् 1550 के बाद सोवियत संघ के साथ इंग्लैंड के बढ़ते व्यापार से मिला। इंग्लैंड में इमारती लकड़ी और फ़र की वस्तुओं के बदले में सोवियत संघ को कपड़ा बेचा।

***(iv)* अटलांटिक क्षेत्र**–सोलहवीं शताब्दी के दौरान यह क्षेत्र व्यापार की दृष्टि से भूमध्यसागर-क्षेत्र और पूर्वी क्षेत्र के साथ पूरी तरह से जुड़ गया। यह व्यापार भी मुख्यत: कपड़ा, मछली, शराब और नमक जैसी हर रोज काम आने वाली स्थूल वस्तुओं का था।

अटलांटिक क्षेत्र तथा यूरोप के अन्य व्यापारिक क्षेत्रों के बीच वस्तुओं के विनिमय में सबसे अधिक सक्रिय उत्तरी क्षेत्र के व्यापारी ही थे। सोलहवीं शताब्दी में डच और अंग्रेज़ व्यापारी हावी हो गए। नमक और मसाले सप्लाई करने वाले लिस्बन (पुर्तगाल) और अनाज की मुख्य मंडी डेंज़िग (Denzing) के बीच वस्तुओं के विनिमय-व्यापार पर डच व्यापारी कैसे हावी रहे, यह देखकर आश्चर्य ही होता है। इस मध्यवर्ती व्यापार को अपने काबू में करने के लिए हॉलैंड भौगोलिक दृष्टि से बहुत ही अच्छी स्थिति में था।

एन्टवर्प, दक्षिण जर्मनी और इटली के बीच पुराने व्यापारिक संबंध 1550 के आस-पास टूटने लगे थे। अमरीकी चाँदी के आयात से मध्य यूरोप की चाँदी को आघात लगा। एन्टवर्प का ह्रास हो गया। दक्षिण जर्मनी ढीला पड़ गया, स्पेन और इटली या तो बढ़ती माँग पूरी करने में असमर्थ हो गए या उनके परंपरागत बाज़ारों में उत्तरी भाग के प्रतियोगी भी आकर डट गए। इस प्रकार एन्टवर्प का स्थान अम्पसटरडम और लंदन ने ले लिया। इसके परिणामस्वरूप दक्षिण यूरोपीय और भूमध्यसागरीय केंद्र ओझल हो गए तथा यूरोप की अर्थव्यवस्था अधिक जटिल तथा पराश्रित हो गई।

नोट

सन् 1550 तक यूरोप अपने समय का सबसे असाधारण व्यापार करने के लिए कूच करने को तैयार हो गया था। यह था–एशिया और अमरीका के साथ समुद्रपारीय व्यापार। इन दोनों में इवीरियाई (स्पेन, पुर्तगाल) अथवा भूमध्यसागर के देशों ने बढ़-चढ़कर योगदान किया। पंद्रहवीं शताब्दी में पुर्तगाली खोजबीन करने, मछली पकड़ने, उपनिवेश बसाने और व्यापार करने के लिए अटलांटिक क्षेत्र में पहुँच गए और पूर्व के लिए महासागरीय यातायात पर एकाधिकार जमा लिया, जो लगभग 100 साल तक कायम रहा।

24.2 समुद्रपारीय व्यापार में वृद्धि (Increasement in Trans-Ocean Trade)

सन् 1550 तक यूरोप अपने समय का सबसे असाधारण व्यापार करने के लिए कूच करने को तैयार हो गया था। यह था–एशिया और अमरीका के साथ समुद्रपारीय व्यापार। इन दोनों में इवीरियाई (स्पेन, पुर्तगाल) अथवा भूमध्यसागर के देशों ने बढ़-चढ़कर योगदान किया। पंद्रहवीं शताब्दी में पुर्तगाली खोजबीन करने, मछली पकड़ने, उपनिवेश बसाने और व्यापार करने के लिए अटलांटिक क्षेत्र में पहुँच गए और पूर्व के लिए महासागरीय यातायात पर एकाधिकार जमा लिया, जो लगभग 100 साल तक कायम रहा। 1600 में उत्तरी यूरोप के प्रतिद्वंद्वी वहाँ पहुँचे और उन्होंने अगली शताब्दी में अपनी महत्त्वपूर्ण स्थिति बना ली।

एशिया के साथ यूरोप के व्यापार की एक सामान्य विशेषता यह थी कि सोने-चाँदी के बदले यूरोप के लोग मुख्यत: ऐसी वस्तुएँ मँगाते थे, जो उनकी तश्तरी का स्वाद बढ़ाती थीं और शरीर को अलंकृत करती थीं। सोलहवीं शताब्दी में मसालों, खासकर काली मिर्च और कपड़े का व्यापार मुख्य रूप से होता था। सन् 1700 में डच ईस्ट इंडिया कंपनी के निर्यात में 40 प्रतिशत भारतीय कपड़ा था।

नए विश्व (उत्तरी व दक्षिणी अमरीका, New World) में उपनिवेशों की स्थापना के कारण अटलांटिक क्षेत्र का व्यापार एशिया से बहुत भिन्न था। पुराने विश्व (एशिया, अफ्रीका और यूरोप) तथा नए विश्व के बीच संपर्क, भूमि को हस्तगत करने तथा स्थानीय या बाहर से मँगाए गए मज़दूरों के ज़रिये उस ज़मीन से लाभ उठाने के रूप में हुआ। इन क्षेत्रों के बीच संपर्क का एक और साधन था और वह था अमरीकी महाद्वीप की मूल्यवान धातु का दोहन। जिन खानों का 'स्वामित्व स्पेन के पास था वहाँ से पहले और फिर यूरोप में खज़ाना आने लगा। बाद में इस व्यापार में ब्राजील का सोना शामिल कर लिया गया। चीनी, इमारती लकड़ी, तम्बाकू, कपास और मछली जैसी वस्तुओं से व्यापार काफी बढ़ गया।

इसके विपरीत, यूरोप से अमरीका महाद्वीप को भेजी जाने वाली वस्तुएँ गुलाम समुदायों की ज़रूरतों की परिचायक थीं। इनमें सबसे प्रमुख वस्तुएं थीं–कपड़ा, घरेलू फ़र्नीचर और उपकरण, शराब तथा उपभोक्ता सामान। एक और खास व्यापार होता था–इंसानों का। स्पेनवासी और पुर्तगाली अमरीकी महाद्वीप में बस गए, आइलैंड और ब्राजील में चीनी के लिए गन्ने की बढ़ती खेती के लिए नीग्रो गुलामों का आयात किया गया।

सत्रहवीं शताब्दी के दौरान हॉलैंड और इंग्लैंड महाद्वीप के आर-पार बढ़ते व्यापार में अधिक भाग लेने लगे। हॉलैंड ने 1602 में अपनी ईस्ट इंडिया कंपनी स्थापित की। इसका मकसद यह था–एशिया के साथ महासागरीय व्यापार पर पुर्तगाल का एकाधिकार खत्म करना तथा हॉलैंड के नगरों के संसाधनों को पूर्व के संसाधनों के साथ एकीकृत करना। ये दोनों कंपनियाँ यूरोप तथा विश्व के अधिक व्यापक भाग के बीच समुद्रपारीय व्यापार बढ़ने की सूचक थीं। इनसे उन परिवर्तनों का भी संकेत मिला, जो सत्रहवीं शताब्दी में होने वाले थे।

> *नोट्स* इंग्लैंड ने अपनी ईस्ट इंडिया कंपनी 1599 में स्थापित की ताकि अपने देश में प्रतियोगिता और कीमतें तय करने में पुर्तगाल का एकाधिकार खत्म किया जा सके।

इस प्रकार यूरोप के इतिहास में पहली बार महाद्वीपों के बीच नियमित ढंग का व्यापार शुरू हो गया। भले ही यह स्पेन या पुर्तगाल के ज़रिए हुआ हो अथवा हॉलैंड या इंग्लैंड के ज़रिए। यूरोप अपने तक सीमित अलग-थलग महाद्वीप नहीं रहा, बल्कि वह विश्व अर्थव्यवस्था का एक हिस्सा बनता गया।

नोट

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following Statements are True/False)–

1. समुद्री मार्ग से व्यापार करने को लेकर प्रतिस्पर्धा शुरू हो गई थी।
2. अमेरिका ने इन्डीज तक समुद्र मार्ग खोज निकाला।
3. यूरोप का विशाल व्यापार धातुओं और धातु-पात्रों पर आधारित था।
4. हैंसलीग के व्यापारियों को कोई किसी प्रकार की चुनौती नहीं दे पाया।
5. गन्ने की बढ़ती खेती के लिए नीग्रो गुलामों का आयात किया जाने लगा।

24.3 सारांश (Summary)

- अटलांटिक क्षेत्र तथा यूरोप के अन्य व्यापारिक क्षेत्रों के बीच वस्तुओं के विनिमय में सबसे अधिक सक्रिय उत्तरी क्षेत्र के व्यापारी ही थे। सोलहवीं शताब्दी में डच और अंग्रेज़ व्यापारी हावी हो गए।
- सन् 1550 तक यूरोप अपने समय का सबसे असाधारण व्यापार करने के लिए कूच करने को तैयार हो गया था। यह था–एशिया और अमरीका के साथ समुद्रपारीय व्यापार। इन दोनों में इवीरियाई (स्पेन, पुर्तगाल) अथवा भूमध्यसागर के देशों ने बढ़-चढ़कर योगदान किया। पंद्रहवीं शताब्दी में पुर्तगाली खोजबीन करने, मछली पकड़ने, उपनिवेश बसाने और व्यापार करने के लिए अटलांटिक क्षेत्र में पहुँच गए और पूर्व के लिए महासागरीय यातायात पर एकाधिकार जमा लिया, जो लगभग 100 साल तक कायम रहा।

24.4 शब्दकोश (Keywords)

- **सामुद्रिक व्यापार**–समुद्र के जलमार्ग के रास्ते किया जाने वाला व्यापार।
- **निर्यात**–अपना माल बेचने के लिए दूर देश में भेजना।

24.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सामुद्रिक व्यापार का अर्थ स्पष्ट कीजिए। इसे क्यों शुरू किया गया।
2. समुद्र व्यापार से जुड़े प्रमुख देशों की गतिविधियों का उल्लेख करें।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य
5. सत्य।

24.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।

नोट

इकाई–25: व्यापारिक समुदाय (Business Communities)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
25.1 व्यापारिक संगठनों का उदय (Rise of Business Organisation)
25.2 चाँदी की आमद (Import of Silver)
25.3 मूल्यों में वृद्धि (Price Hike)
25.4 सारांश (Summary)
25.5 शब्दकोश (Keywords)
25.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
25.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- व्यापारिक संगठनों के बारे में जानेंगे;
- चाँदी की आमद और मूल्यों में वृद्धि से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

आधुनिक काल के प्रारंभ में यूरोप के उद्यमी आमतौर से व्यक्तिगत रूप में अथवा अपने ही परिवार की साझेदारी में व्यापार करते थे। अनेक समुद्रपारीय उद्यमों में अलग-अलग व्यापारी हैनसिएरिक लीग अथवा मर्चेन्ट एडवेंचरर्स जैसे बड़े इज़ारेदारों के निर्देशन में काम करते थे। इनमें भी वे मूलतः खुद ही काम करते थे, अपना ही माल बेचते थे और पूँजी भी अपनी ही लगाते थे। जो व्यापारी स्वयं विदेश नहीं जा पाते थे, वे एजेंटों के ज़रिए विदेशों के व्यापारियों से संपर्क करते थे। स्वाभाविक रूप से उनमें जोखिम बहुत अधिक था। एजेंट अकसर अपने व्यापारी का अहित कर देते थे, जहाज़ डूब जाते थे, बाज़ार के हालात बदल जाते थे।

25.1 व्यापारिक संगठनों का उदय (Rise of Business Organisation)

सोलहवीं शताब्दी में भी यद्यपि ऐसे व्यापारी थे, लेकिन तभी नए प्रकार के व्यापारिक संगठनों का जन्म हुआ। जहाज़ की क़ीमत और उसकी खेप में कई व्यापारियों की साझेदारी की प्रथा चल पड़ी और इस कारण समुद्र-मार्ग से व्यापार में छोटे-छोटे व्यापारी अधिक संख्या में शामिल होने लगे थे। इस तरह की साझेदारी भूमध्य सागर और एलिजाबेथ

नोट

काल के इंग्लैंड में बहुत प्रचलित थी। आमतौर से एक साझेदार जहाज़ को ले जाता और उसका माल बेच आता था। अन्य साझेदार अपना माल और पूँजी देते थे और उसके लाभ अथवा हानि में हिस्सा बाँटते थे। ऐसे समय में, जब खतरे अधिक थे और बीमा-व्यवस्था कमज़ोर थी, एक जहाज़ का अकेला मालिक होने की बजाय कई जहाज़ों का साझीदार होना अधिक विवेकपूर्ण भी था।

जहाज़ में साझेदारी आमतौर से एक बार की यात्रा के लिए होती थी लेकिन अधिक स्थायी आर्थिक गतिविधियों में लंबी साझेदारी भी चल पड़ी। इन साझेदारों में स्थानीय खुदरा व्यापारी, कारखानेदार और बैंकर शामिल थे। इन अधिक स्थायी संगठनों में से कई संगठन सोलहवीं शताब्दी में परिवार की विस्तृत साझेदारी के रूप में थे। कुछ संगठन तो बहुत ही केंद्रीकृत थे, जैसे संयुक्त पूँजी कंपनी (Joint Stock Company)। आग्सबर्ग की एंटन फ्यूगर कंपनी ने यद्यपि एजेंट रखे हुए थे और पूरे यूरोप में उसकी शाखाएँ थीं, लेकिन उसका निर्देशन मुख्यालय से ही होता था। अन्य संगठनों ने कुछ अधिक अधिकार प्रदान किए हुए थे। इन कंपनियों की आधारभूत शेयर पूँजी होती थी, जिसे साझीदार देते थे, लेकिन बाद में बाहर के लोगों को भी शामिल कर लिया गया। मूल पूँजी शेयरधारी कंपनी के लाभ या हानि में अपना हिस्सा बंटाता था, लेकिन जो लोग बाद में शामिल हुए उन्हें अपनी जमा रक़म पर सीमित ब्याज ही मिलता था।

> *नोट्स* सोलहवीं शताब्दी में साझेदारी संगठन का सर्वोत्तम उदाहरण 'संयुक्त पूंजी कम्पनी' था।

इस तरह के व्यापारिक संगठन में आधुनिक काल के प्रारंभ में अनेक परिवर्तन आए। इनमें संभवत: सबसे महत्त्वपूर्ण है–संयुक्त पूँजी कंपनी (Joint Stock Company)। इसमें शेयर हस्तांतरित करने की सुविधा दी गई। ऐसी कंपनियों में साझेदारी पंद्रहवीं शताब्दी में जर्मनी और इटली में थी, लेकिन यह अगली शताब्दी, खासकर 1550 के बाद उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड में बहुत प्रचलित हो गई। इंग्लैंड का पहला संयुक्त उद्यम रूस और गुयाना के लिए 1550 से आरंभ होने वाले दशक में शुरू हुआ। दोनों सुदूरवर्ती व्यापार के सिलसिले में सामने आए–इसमें जोखिम बहुत अधिक और संचालन-लागत बहुत ऊँची थी। इसीलिए शेयरधारी पूँजी इकट्ठी कर पूरे संयुक्त उद्यम की लागत को आपस में बाँट लेते थे। 1600 में इस तरह की लगभग बारह संयुक्त पूंजी कंपनियाँ इंग्लैंड में थीं।

ऐसी कंपनियों का संगठन स्वाभाविक रूप से आरंभिक अवस्था में ही था। व्यापारिक कंपनियाँ केवल एक यात्रा के लिए माल देती थीं। यात्रा पूरी होने पर लाभांश का भुगतान पूँजी और लाभ के रूप में होता था। कंपनियों ने शेयरों की संख्या सीमित कर दी। उन्हें जब कभी अधिक पूंजी की ज़रूरत होती वे बाहर शेयर जारी करने के बजाय अपने शेयरधारियों (share holders) से ही शेयर बढ़ाने के लिए अनुरोध करतीं। शेयरों के लिए आवेदन पत्र प्रार्थी को स्वयं देने होते थे। इनसे वह काम लंदन में अथवा उसके आसपास रहने वालों तक सीमित हो गया। लेकिन जल्दी ही ऐसे शेयरों के हस्तांतरण के लिए बाज़ार बन गया। 1623 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने शेयर जनता को बेंचे। इस प्रकार वह काफ़ी शेयर पूँजी जमा करने में सफल हुई।

संयुक्त पूँजी कंपनी एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक घटना थी। उसके अंतर्गत व्यापारियों को कुछ खास क्षेत्रों में व्यापार करने का एकाधिकार मिला। सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि उन्होंने बहुत बड़ी संख्या में लोगों की बचत का फ़ायदा उठाया और बड़े उद्यम की स्थापना लायक रक़म जमा कर ली। अकेले व्यक्ति को सारी जोखिम उठाने में हिचकिचाहट होती थी। इस समस्या का भी निराकरण हो गया। इनसे लोगों को अपनी छोटी रक़म भी बहुत झमेले में पड़े बिना काम में लाने की प्रेरणा मिली। शेयरधारी को भी ज़रूरत पड़ने पर अपने कुछ अथवा सभी शेयर बेंचकर नक़द राशि प्राप्त करने की सुविधा मिल गई। यही नहीं, शेयरधारी की मृत्यु हो जाने पर संयुक्त पूँजी कंपनी खत्म नहीं हो जाती थी। मृतक शेयरधारी के शेयर जिस किसी को भी विरासत में मिले अथवा जो व्यक्ति उन शेयरों को खरीदे, वह उनका नया स्वामी बन जाता था।

नोट

ईस्ट इंडिया कंपनी इस काल में सबसे साफ़-सुथरी संयुक्त पूँजी कंपनी थी। अपनी पूर्ववर्ती कंपनियों की भाँति उसे भी ईस्ट इंडिया से व्यापार करने का एकाधिकार प्राप्त था। इंगलिश कंपनी पर नियंत्रण शेयरधारियों का था जो अपना बोर्ड चुनते थे। इसके विपरीत डच कंपनी राजनीतिक नियंत्रण में थी।

> *क्या आप जानते हैं* संयुक्त पूँजी कंपनी एक महत्त्वपूर्ण व्यापारिक घटना थी। उसके अंतर्गत व्यापारियों को कुछ खास क्षेत्रों में व्यापार करने का एकाधिकार मिला।

25.2 चाँदी की आमद (Import of Silver)

यूरोप की सोलहवीं शताब्दी की अर्थव्यवस्था में इस कीमती धातु का महत्त्व था, यद्यपि यह उतना महत्त्वपूर्ण नहीं था, जितना पहले समझा गया था।

पहली छोटी खेप सोलहवीं शताब्दी में पहुँची। 1550 तक उनमें सोना और चाँदी दोनों शामिल थे, लेकिन शताब्दी के उत्तरार्ध में सोने के आयात का महत्त्व अपेक्षाकृत कम हो गया। बड़ी भारी मात्रा में चाँदी जहाज़ों से सेविले भेजी गई। पारे से चाँदी को साफ़ करने का तरीका मालूम होने पर तो इस बहुमूल्य धातु का लदान और बढ़ गया तथा 1580 से 1620 के बीच वह चोटी पर जा पहुँचा।

यह चाँदी ऐसे देश में पहुँच रही थी जो सरकारी तौर पर संरक्षणवादी (Protectionist) था। कस्टम की अनेक बाधाएँ थीं। सरकार की स्वीकृति के बिना स्पेन में न कुछ आ सकता था और न उससे बाहर जा सकता था, यद्यपि चाँदी तथा अन्य वस्तुओं के व्यापार में खूब तस्करी होती थी। अनाज के भुगतान आदि के लिए भी सोना और चाँदी देश से बाहर जाने लगी। सबसे बड़ा संकट तो उत्तरी नीदरलैंड में खर्चीले युद्ध के कारण पैदा हुआ।

स्पेन के अलावा, बहुमूल्य धातु से खजाना एन्टवर्प में भी पहुँचा जहाँ उसका विनिमय तोपों और गोला-बारूद से होता था। फिलिप द्वितीय की मेरी ट्यूडर के साथ शादी के बाद इंगलैंड ने भी बड़ी मात्रा में चाँदी मँगवाई, जिससे वहाँ की शिथिल अर्थव्यवस्था को कुछ सहारा मिला, लेकिन इनमें सबसे अधिक महत्त्व एन्टवर्प का था। वहाँ से चाँदी जर्मनी और मध्य यूरोप, उत्तरी यूरोप और ब्रिटिश द्वीप समूह भेजी गई। इससे यूरोप की आर्थिक गतिविधियों को बहुत बड़ा सहारा मिला।

सन् 1568 के लगभग अँग्रेज़ जल-दस्युओं की गतिविधियों तथा स्पेनी नीदरलैंड में विद्रोह भड़क उठने के कारण सोने-चाँदी की आमद में बाधा पड़ी और स्पेन अपना सोना-चाँदी फ्रांस के रास्ते स्थल मार्ग से भेजने लगा।

एक और महत्त्वपूर्ण मार्ग बारसीलोना से जेनेवा तक था जो 1570 से आरंभ होने वाले दशक में महत्त्वपूर्ण हो गया था। इटली की अर्थव्यवस्था न केवल स्पेन, बल्कि जर्मनी, पूर्वी यूरोप, फ्रांस और उत्तरी नीदरलैंड के साथ व्यापार संतुलन बनाए रखने में समर्थ थी। अत: स्पेन अपना सोना इटली को भेजने लगा। यह सोलहवीं शताब्दी में अधिक बढ़ गया। नए विश्व (उत्तर-दक्षिण अमरीका) से यूरोप में सोने चाँदी की आमद बहुत व्यापक थी।

25.3 मूल्यों में वृद्धि (Price Hike)

सोलहवीं शताब्दी में क़ीमतों में जो आम वृद्धि हुई, उसका काफ़ी असर यूरोप के देशों में पंद्रहवीं शताब्दी के मध्य से ही महसूस किया जा रहा था। मूल्यवृद्धि का असर इतना अधिक था कि सोलहवीं शताब्दी का आदमी तो स्तब्ध रह गया था। ऐसा तो पहले कभी नहीं हुआ था। पुराने समय में वस्तु-विनिमय लगभग बिना तामझाम के हो जाता था, उसके स्थान पर ऐसे संकट के वर्ष आए जब महँगाई आसमान छूने लगी। इसका कारण समझने में असमर्थ आदमी तो जैसे संज्ञाहीन हो गया था।

मूल्यों में यह वृद्धि सोने-चाँदी की आमद से बहुत पहले ही होने लगी थी। ये सोलहवीं शताब्दी के बाद भी अगली शताब्दी तक होती रही। फ्रांस में गेहूँ के भाव 1451-1500 की तुलना में 1501-1550 तक दुगुने हो गए और फिर 1501-1550 की तुलना में 1551-1600 में तिगुने तक पहुँच गए। इंग्लैंड में भी गेहूँ के भाव दुगुने हो गए।

नोट

पूरे यूरोप में मुद्रा का मूल्य महँगाई बढ़ने के साथ गिरता गया। यही नहीं, मूल्य-स्तर तथा मुद्रा की क्रय-शक्ति में परिवर्तन के साथ ही विभिन्न आर्थिक वर्गों की संपत्ति में उथल-पुथल आई। कुछ तबाह हो गए कुछ अचानक समृद्ध बन गए। बँधी आय वालों की क्रय-शक्ति पहले से कम हो गई। आम ज़मीदारों और किसानों का जीवन-निर्वाह कठिन हो गया, लेकिन व्यापारी वर्ग फलने-फूलने लगे। इससे शहरों में मध्य वर्ग बढ़े। मज़दूरी पाने वालों ने देखा कि महँगाई की तुलना में उनकी मज़दूरी बहुत पीछे रह गई है। औद्योगिक कर्मचारी ऐसे देशों में वास्तविक मज़दूरी में ह्रास की चपेट में आ गए, जहाँ ज़रूरत से अधिक श्रमिक उपलब्ध थे। इस संबंध में इंग्लैंड का उदाहरण दिया जा सकता है।

अब प्रश्न यह है कि इस महँगाई का दोष क्या अमरीकी सोने-चाँदी पर है? आधुनिक इतिहासकार **ई. जे. हेमिल्टन** का कहना है कि यूरोप में सोलहवीं शताब्दी में मुद्रा-स्फीति का कारण समुद्रपार से बड़ी भारी मात्रा में सोने-चाँदी का आयात था। ऐसे ही इतिहासकार **सेविले** में सोने-चाँदी के आयात तथा स्पेन में व उसके बाहर मूल्यों में वृद्धि के बीच सीधा संबंध बताते हुए यह निष्कर्ष निकालते हैं कि सोने-चाँदी की आमद से प्रचलित मुद्रा में भारी वृद्धि हुई। इस प्रकार यह तर्क दिया जा सकता है कि (क) वस्तुओं के भंडार की अपेक्षा सोने व चाँदी की सप्लाई अधिक तेज़ी से बढ़ी और उसके दबाव से मूल्य बढ़ गए, (ख) व्यापारिक सौदों में भारी वृद्धि होने से मुद्रा-चलन की दर तेज़ हो गई और (ग) लोगों ने वस्तुओं की कमी अथवा उनके महँगी होने की आशंका से अपना नक़द धन तुरंत खरीद में लगा दिया। ऐसे इतिहासकार यह तर्क भी देते हैं कि सोने-चाँदी की आमद घटते ही व्यापार घटा और मुद्रा-चलन की दर भी घट गई। इसका प्रभाव यह हुआ कि सबसे पहले स्पेन में वृद्धि रुक गई।

इस संबंध में एक बात यह स्पष्ट करनी है कि मुद्रा-स्फीति के मामले में अमरीकी सोने-चाँदी के बजाय यूरोप की अर्थव्यवस्था अधिक उत्तरदायी रही है। यूरोप में आर्थिक विकास से माँग पैदा हुई और इसकी पूर्ति विदेशी सोने-चाँदी से की गई। यदि माँग ही न होती तो संभव था कि सोना-चाँदी यूरोप में आता ही नहीं। इसलिए पहली बात तो यह है कि मुद्रा-स्फीति का मुख्य कारण अमरीकी धन नहीं, बल्कि यूरोपीय अर्थव्यवस्था में उत्पन्न माँग और आवश्यकताएँ थीं।

क्या आप जानते हैं यूरोप में सोलहवीं शताब्दी में मुद्रा-स्फीति का कारण समुद्रपार से बड़ी भारी मात्रा में सोने-चाँदी का आयात था।

दूसरी बात यह है कि यूरोप में सन् 1500 से पहले भी सोना-चाँदी आ रहा था। सहारा का सोना-दसवीं शताब्दी से पहले यूरोप में आने लगा था, यद्यपि सोलहवीं शताब्दी के मध्य से अमरीका के सोने-चाँदी के मुक़ाबले में सहारा के सोने का आयात खत्म हो गया था। पुर्तगालियों ने भी पंद्रहवीं शताब्दी के मध्य में गुयाना से गुलामों, हाथी दाँत और काली मिर्च के साथ ही सोना भी लिया था। सहारा से भूमध्यसागर में सोने की आमद सोलहवीं शताब्दी तक चली। हाँ, 1520-40 के बीच कुछ समय के लिए यूरोप और बारबेरी के मध्य सोने का व्यापार रुक गया था, क्योंकि त्रिपोली पर स्पेन ने क़ब्जा कर लिया था और इस्लाम के विजेता मिस्र और तुर्की से विभिन्न क्षेत्रों में फैल रहे थे। इस प्रकार पश्चिमी भूमध्यसागर से सोना आना बंद हो गया। लेकिन सूडान का सोना उत्तरी अफ्रीका को सप्लाई किया जाता रहा और वह नए विश्व (उत्तरी व दक्षिणी अमरीका) से अधिक मात्रा में आए सोने-चाँदी में विलीन हो गया। अमरीका से पहले की मुद्रा वेतनभोगी सेनाओं और अफ़सरों पर खर्च की गई और ऐसा लगता है कि पंद्रहवीं शताब्दी वालों को पिछली शताब्दियों से विरासत में जो सोना-चाँदी प्राप्त हुआ था उसका भंडार काफ़ी विशाल था। अमरीकी सोने-चाँदी ने प्रचलित मुद्रा की मात्रा ही बढ़ाई। यदि पहले के सोने-चाँदी के आयात से मुद्रा-स्फीति पैदा नहीं हुई तो फिर हम कैसे यह दावा कर सकते हैं कि अमरीकी सोने से मुद्रा-स्फीति बढ़ी।

मुद्रा-स्फीति के बारे में कुछ अन्य जटिल बातें भी हैं, जिनसे अमरीकी सोने की कथित महत्त्वपूर्ण भूमिका के बारे में संदेह ही होता है। उदाहरणार्थ सुदूरवर्ती बाज़ारों के लिए उत्पादित वस्तुओं की अपेक्षा स्थानीय खपत के लिए स्थानीय केंद्रों में उत्पादित वस्तुओं के मूल्य कम तेज़ी से बढ़े। बढ़िया ऊनी कपड़े के मूल्य जितनी तेज़ी से बढ़े, उतने गेहूँ के नहीं, औज़ारों और आयुधों के मूल्य तेज़ी से बढ़े, लेकिन मांस के उतनी तेज़ी से नहीं।

इंग्लैंड में 1640 तक क़ीमतों में भारी वृद्धि हुई थी। वहाँ खाद्य-पदार्थों के मूल्य निर्मित माल की तुलना में अधिक बढ़े, इसमें स्पेन के सोने की क्या भूमिका है? वह कब, कैसे और कितनी मात्रा में इंग्लैंड पहुँचा और उसे मुद्रा के रूप में ढालने में कितना समय लगा? अन्य देशों की तरह यहाँ भी मुद्रा के प्रचार में वृद्धि से पहले ही मूल्यों में वृद्धि होने लगी थी। हेनरी अष्टम और एडवर्ड के शासनकाल में अपकर्ष से समस्या और जटिल हो गई।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks)–

1. जहाज की कीमत और उसकी खेप में कई व्यापारियों की ………… की प्रथा चल पड़ी।
2. जहाज में साझेदारी आमतौर से एक बार की ………… के लिए होती थी।
3. कीमतों में वृद्धि का असर पूरे ………… में महसूस किया गया।
4. फ्रांस और इंग्लैण्ड में गेहूं के दाम ………… हो गए।
5. अमरीकी सोने-चाँदी ने प्रचलित ………… की मात्रा और बढ़ा दी।

25.4 सारांश (Summary)

- सोलहवीं शताब्दी में भी यद्यपि ऐसे व्यापारी थे, लेकिन तभी नए प्रकार के व्यापारिक संगठनों का जन्म हुआ। जहाज़ की क़ीमत और उसकी खेप में कई व्यापारियों की साझेदारी की प्रथा चल पड़ी और इस कारण समुद्र-मार्ग से व्यापार में छोटे-छोटे व्यापारी अधिक संख्या में शामिल होने लगे थे।
- ईस्ट इंडिया कंपनी इस काल में सबसे साफ़-सुथरी संयुक्त पूँजी कंपनी थी। अपनी पूर्ववर्ती कंपनियों की भाँति उसे भी ईस्ट इंडिया से व्यापार करने का एकाधिकार प्राप्त था। इंगलिश कंपनी पर नियंत्रण शेयरधारियों का था जो अपना बोर्ड चुनते थे। इसके विपरीत डच कंपनी राजनीतिक नियंत्रण में थी।
- स्पेन के अलावा, बहुमूल्य धातु से खजाना एन्टवर्प में भी पहुँचा जहाँ उसका विनिमय तोपों और गोला-बारूद से होता था। फिलिप द्वितीय की मेरी ट्यूडर के साथ शादी के बाद इंग्लैंड ने भी बड़ी मात्रा में चाँदी मँगवाई, जिससे वहाँ की शिथिल अर्थव्यवस्था को कुछ सहारा मिला।
- सन् 1568 के लगभग अँग्रेज़ जल-दस्युओं की गतिविधियों तथा स्पेनी नीदरलैंड में विद्रोह भड़क उठने के कारण सोने-चाँदी की आमद में बाधा पड़ी और स्पेन अपना सोना-चाँदी फ्रांस के रास्ते स्थल मार्ग से भेजने लगा।
- पूरे यूरोप में मुद्रा का मूल्य महँगाई बढ़ने के साथ गिरता गया। यही नहीं, मूल्य-स्तर तथा मुद्रा की क्रय-शक्ति में परिवर्तन के साथ ही विभिन्न आर्थिक वर्गों की संपत्ति में उथल-पुथल आई। कुछ तबाह हो गए कुछ अचानक समृद्ध बन गए। बँधी आय वालों की क्रय-शक्ति पहले से कम हो गई।
- यूरोप में सन् 1500 से पहले भी सोना-चाँदी आ रहा था। सहारा का सोना-दसवीं शताब्दी से पहले यूरोप में आने लगा था, यद्यपि सोलहवीं शताब्दी के मध्य से अमरीका के सोने-चाँदी के मुक़ाबले में सहारा के सोने का आयात खत्म हो गया था। पुर्तगालियों ने भी पंद्रहवीं शताब्दी के मध्य में गुयाना से गुलामों, हाथी दाँत और काली मिर्च के साथ ही सोना भी लिया था।

25.5 शब्दकोश (Keywords)

- **साझेदार**–भागीदार, किसी कंपनी में शामिल हिस्सेदार।
- **शेयर**–कम्पनी के लाभांश या हानि में हिस्सेदारी, हिस्सा।

नोट

25.6 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सोलहवीं शताब्दी में व्यापारिक संगठनों के उदय का वर्णन कीजिए।
2. चांदी की आमद का क्या अर्थ है? 16वीं शताब्दी में यह धातु इतनी महत्त्वपूर्ण क्यों थी?
3. 16वीं शताब्दी में अचानक मूल्यों में आई वृद्धि का क्या कारण था?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. साझेदारी 2. यात्रा 3. यूरोप 4. दोगुने
5. मुद्रा।

25.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–26: वाणिज्यिक पद्धति (Commercial Systems)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
26.1 वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था में तीव्रता (Intensity in Commercial Economy)
26.2 व्यापारिक संचार (Commercial Communication)
26.3 सारांश (Summary)
26.4 शब्दकोश (Keywords)
26.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
26.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- व्यापारिक संचार तथा वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था को जानेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

यूरोप में सोलहवीं शताब्दी में दूसरी प्रमुख आर्थिक, घटना है—व्यापार में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन। इनके परिणामस्वरूप उस शताब्दी तथा बाद की शताब्दियों में यूरोपीय व्यापार का स्वरूप निर्धारित हुआ। इन परिवर्तनों में अधिक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन थे—अंत:क्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि, स्थानीयतावाद की समाप्ति, समुद्रपारीय व्यापार का विकास, बाज़ार का व्यापक और बढ़ता हुआ प्रभाव और नए प्रकार के व्यापारिक संगठनों का गठन और विकास।

26.1 वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था में तीव्रता (Intensity in Commercial Economy)

आधुनिक युग के प्रारंभ में मौद्रिक अर्थव्यवस्था का विकास विशेष प्रभावकारी था। यूरोप के कुछ हिस्सों में यद्यपि सत्रहवीं शताब्दी में भी वस्तु-विनिमय प्रथा (barter system) चल रही थी, लेकिन यूरोप के अधिकतर विकासशील क्षेत्रों में मौद्रिक अर्थव्यवस्था का पूरी तरह विकास हो चुका था। विभिन्न प्रकार के भुगतान करने में मुद्रा का अधिकाधिक प्रयोग किया जाने लगा था। उधार लेन-देन की सुविधा का विकास हुआ। हुंडी (draft), ऋण-पत्र (letters of credit) तथा विनिमय-पत्र व्यापक रूप से स्वीकार किए जाने लगे। साख-व्यापार (credit trading) भी बढ़ गया। लेकिन मूल्य-निर्धारण पूरी तरह युक्तिसंगत नहीं हो सका। वस्तुओं के मूल्य में स्थान-देश

नोट

आदि के अनुसार परिवर्तन होता रहता था। वस्तुओं के मूल्य को लेकर स्थानीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर परंपरा से चली आ रही खींचातानी चलती रही।

वितरण में भी कुछ खास परिवर्तन आए। साप्ताहिक हाट-बाज़ार लगने लगे और मेलों में कमी आ गई। इससे अधिक व्यापक तथा स्थायी बाज़ार स्थापित करने में मदद मिली। एन्टवर्प में 1550 तक व्यापार का जो विकास हुआ, उससे वर्ष में दो बार होने वाले मेले का स्थान एक बाज़ार ने ले लिया जो प्रायः लगातार ही चलता रहता था। परिवर्तन पेरिस, लंदन तथा एम्सटरडम जैसे बड़े शहरों में भी आया और ये स्थायी मेलों जैसा काम करने लगे। यहाँ व्यापार वस्तुतः व्यापारियों अथवा उनके प्रतिनिधियों के बीच होता था। खुले बाज़ारों से हटकर व्यापार माल-गोदामों में पहुँच गया। माल बेचने के लिए नीलामी होने लगी। थोक व्यापार बढ़ा तो बिचौलियों की संख्या तेज़ी से बढ़ गई और खुदरा व्यापारियों ने अपना अलग वर्ग बना लिया।

26.2 व्यापारिक संचार (Commercial Communication)

शहरीकरण के चलते और बढ़े हुए व्यापार अथवा व्यापार संबंधी सूचनाओं के लिए संचार-साधनों में सुधार किए गए। डाक-सेवाएं सुधारी गईं। सन् 1500 तक स्पेन, फ्रांस और इंग्लैंड में सरकारी डाक-सेवाएँ शुरू हो चुकी थीं। सन् 1600 तक यूरोप के सभी प्रमुख नगर डाक-सेवा से जुड़ गए थे। इन सुविधाओं का विकास होने से व्यापार एवं वाणिज्य संबंधी समाचार अधिकाधिक मिलने लगे। अखबारों का प्रचलन मुख्यतः सत्रहवीं शताब्दी में हुआ था। लेकिन परिवहन-सेवाओं में सीमित सुधार ही हो सके। वर्षा और हिमपात के मौसम (शीतकाल) में स्थानीय यातायात अस्त-व्यस्त हो जाता था। समुद्र मार्ग से व्यापार के लिए उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड ने हल्के वज़न के जहाज़ बना लिए थे। लेकिन स्थलीय परिवहन की हालत बहुत खस्ता थी—वही खराब सड़कें और वही भारवाही पशु। स्थलीय परिवहन की ये कठिनाइयां कुछ हद तक उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड जैसे देशों के सामने नहीं थी, क्योंकि इनका व्यापार मुख्यतः समुद्री-मार्गो से होता था।

कृषि, उद्योग और व्यापार पर भी बाज़ार-व्यवस्था का असर पड़ा। सोलहवीं शताब्दी में इंग्लैंड की कृषि ने ऊन और कपड़े की माँग पूरी करने के लिए व्यापक स्तर पर बाड़बंदी का सहारा लिया तो लंदन जैसे नगरों ने बाग़बानी जैसे विशेष कृषि-कार्य को प्रोत्साहन दिया।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

1. व्यापार में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन, 16वीं शताब्दी की प्रमुख घटना थी।
2. इस काल में अभी तक मुद्रा का प्रचलन शुरू नहीं हुआ था।
3. इस समय साप्ताहिक बाजार, हाट आदि में कमी आने लगी थी।
4. बाजार-व्यवस्था का असर कृषि, उद्योग, व्यापार आदि पर नहीं पड़ा।

26.3 सारांश (Summary)

- आधुनिक युग के प्रारंभ में मौद्रिक अर्थव्यवस्था का विकास विशेष प्रभावकारी था। यूरोप के कुछ हिस्सों में यद्यपि सत्रहवीं शताब्दी में भी वस्तु-विनिमय प्रथा (barter system) चल रही थी, लेकिन यूरोप के अधिकतर विकासशील क्षेत्रों में मौद्रिक अर्थव्यवस्था का पूरी तरह विकास हो चुका था।
- सुविधाओं का विकास होने से व्यापार एवं वाणिज्य संबंधी समाचार अधिकाधिक मिलने लगे। अखबारों का प्रचलन मुख्यतः सत्रहवीं शताब्दी में हुआ था। लेकिन परिवहन-सेवाओं में सीमित सुधार ही हो सके। वर्षा

नोट

और हिमपात के मौसम (शीतकाल) में स्थानीय यातायात अस्त-व्यस्त हो जाता था। समुद्र मार्ग से व्यापार के लिए उत्तरी नीदरलैंड और इंग्लैंड ने हल्के वज़न के जहाज़ बना लिए थे।

26.4 शब्दकोश (Keywords)

- **हाट-बाजार**—दैनिक व स्थानीय बाजार आदि।
- **वस्तु विनिमय**—सामान के बदले सामान लेना-देना।

26.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. सोलहवीं शताब्दी में व्यापार में क्या प्रमुख परिवर्तन आए?
2. व्यापार सम्बन्धी सूचनाओं के लिए कौन-से माध्यम विकसित किए गए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. असत्य।

26.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–27: कृषि-उत्पादन एवं पद्धतियाँ (Agriculture Productions and Methods)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

27.1 कृषि-क्षेत्र में असमानताएँ (Inequality in the field of Agriculture)

27.2 कृषि की विभिन्न पद्धतियाँ (Different Methods of Agriculture)

27.3 सारांश (Summary)

27.4 शब्दकोश (Keywords)

27.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

27.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- कृषि क्षेत्र की असमानताओं को जानेंगे;
- कृषि की विभिन्न पद्धतियों से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

पंद्रहवीं शताब्दी के अंत में भूमध्यसागरीय क्षेत्र पश्चिमी यूरोप का सर्वाधिक विकसित क्षेत्र बन चुका था। अमरीकी धन की आमद से आर्थिक श्रेष्ठता की यह स्थिति सोलहवीं शताब्दी में कुछ समय तक कायम रही। किंतु इस शताब्दी के अंत में इस क्षेत्र का पतन आरंभ हो गया तथा आर्थिक संतुलन उत्तर-पश्चिमी एवं अटलांटिक क्षेत्र के पक्ष में हो गया। सबसे पहले यूरोप में कृषि-क्षेत्र में हुई उन मुख्य घटनाओं का विवेचन आवश्यक है जिनका सोलहवीं शताब्दी में यूरोप की अर्थव्यवस्था के लिए निश्चित महत्त्व था। ऐसा करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि इस शताब्दी में व्यापारिक एवं औद्योगिक प्रगति जिन क्षेत्रों में हुई उनमें ही कृषि-विकास भी हुआ और जहाँ भूमध्यसागरीय क्षेत्र के पतनशील इलाकों तथा पोलैंड में कृषि में परिवर्तन और विकास हुआ वहाँ इन क्षेत्रों में अगली शताब्दी के संकटकाल के दौरान कृषि-विकास का क्रम ही पलट गया।

कृषि-क्षेत्र की घटनाएँ व्यापारिक घटनाक्रम की तुलना में सामान्य ही थीं और इनसे मध्ययुग के उत्तरकाल में उभरे विकास के स्वरूप में प्राय: कोई परिवर्तन नहीं हुआ। पुरानी कृषि से 'वर्धमान प्रतिफल नियम' (law of increasing return) को लागू करने की कोई बड़ी संभावना उत्पन्न नहीं हुई यद्यपि संपत्ति के उत्पादन वितरण एवं उपभोग के विषय में इसकी बुनियादी भूमिका बनी रही।

इन बातों के अलावा दूसरी ओर मौद्रिक अर्थव्यवस्था का विस्तार गाँवों तक पहुँच गया जिससे यहाँ के परंपरागत मूल्य प्रभावित हुए। इस मूल्य-क्रांति का प्रभाव संपत्ति के बाजार में भी अनुभव किया गया, जब कि विभिन्न क्षेत्रों में किसानों ने अनाज के बढ़ते हुए मूल्यों और गोश्त तथा डेरी-उत्पादों की विकासशील मंडी से लाभ उठाने का प्रयास किया।

27.1 कृषि-क्षेत्र में असमानताएं (Inequality in the field of Agriculture)

यूरोप में कृषि-क्षेत्र में क्षेत्रीय असमानताएँ बनी रहीं तथा कहीं-कहीं वे बढ़ भी गईं। इसके निम्नलिखित कारण थे—

1. **भूगोल तथा जलवायु**—भूगोल और जलवायु दोनों ही ग्रामीण कार्य-कलापों का आधार बनी हुई थीं और उनके परिणामों को भी प्रभावित करती थीं। कुछ स्थानों पर इस क्षेत्र में सुधार भी किया गया, पर यह इतने छोटे पैमाने पर था कि इससे यूरोप की कृषि को प्राकृतिक बाधाओं से मुक्त नहीं किया जा सका। हाल में किए गए कुछ अध्ययनों से इस तथ्य की पुष्टि हुई है कि सोलहवीं शताब्दी में जलवायु-संबंधी कुछ निश्चित परिवर्तन हुए जिनसे भूमध्यसागरीय क्षेत्रों में बार-बार सूखा पड़ने से स्थिति गंभीर होती गई तथा मध्यवर्ती इलाकों में आर्द्रता की स्थिति पर प्रभाव पड़ा जिससे कृषि की उपज के विषय में अनिश्चितता पहले से भी अधिक बढ़ गई।
2. **आर्थिक और सामाजिक विकास स्तर**—अभी तक अग्रणी बने रहे कुछ क्षेत्रों में प्रगति का क्रम टूट गया। उदाहरणार्थ स्पेन, पुर्तगाल और इटली का ह्रास होने लगा जब कि इंग्लैंड और निचले देश (low countries) आर्थिक रूप से विकसित होने लगे। विकसित होने वाले देशों में पूँजीवाद ने कृषि-संबंधी कार्यों की गति को नियमित करने का काम किया; पूँजीवाद ने कृषि-क्षेत्र के लिए एक ढाँचे का निर्माण करने में अपना योग दिया तथा ब्रिटेन, फ़्लैमिश क्षेत्रों, उत्तरी इटली और उत्तरी फ्रांस के कृषि-प्रधान स्वरूप को बदलने में अपनी भूमिका अदा की जब कि स्पेन, दक्षिणी फ्रांस, पुर्तगाल व पोलैंड में और इटली के कुछ क्षेत्रों में, पूँजीवाद कृषि पर कुछ भी प्रभाव नहीं डाल पाया।
3. **भू-स्वामित्व**—इस काल में ग्रामीण यूरोप में जो विविधताएँ देखने को मिलती हैं वे सर्वाधिक स्पष्ट रूप से भू-स्वामित्व के कानूनी और सामाजिक ढाँचे में विद्यमान गहरे अंतर में परिलक्षित हुई। हम सीमारेखा के रूप में एल्ब नदी को लेंगे—इसके पूर्वी क्षेत्र में ज़मींदार अपनी जायदाद की स्वयं देख-रेख करता था जब कि पश्चिमी क्षेत्र में भू-स्वामी अपनी जायदाद का प्रबंध पट्टा, लगान अथवा नक़द या वस्तुओं की प्राप्ति के बदले में अन्य व्यक्तियों के सुपुर्द कर देता था।

सोलहवीं शताब्दी के आरंभ से मध्य तथा पूर्वी यूरोप में भू-स्वामी, चाहे वे धार्मिक हो या धर्मनिरपेक्ष, अपनी भूमि की सीमा बढ़ाने का प्रयत्न करने लगे। किसानों की भूमि पर अधिकार जतलाकर वे उनसे भूमि ले लेते थे और उसकी कम क़ीमत अदा करते थे। यह बात पोलैंड में विशेष रूप से थी। सोलहवीं शताब्दी के दौरान निर्धनतम ग्रामीण किसानों की संख्या काफी अधिक बढ़ गई जबकि अमीर किसानों की संख्या में कमी हुई। यह सिलसिला सत्रहवीं शताब्दी में और भी बिगड़ गया। ज़मींदार लोग इन दोनों वर्गों के हितों को हानि पहुँचाकर अपनी ज़मीन-जायदाद का विस्तार करते थे; वे भूमि-प्रबंधकों की नियुक्ति कर देते थे जो काम की देखभाल करते थे। वे ही भूमि पर काम करने वाले गुलाम जैसे सेवकों पर नियंत्रण रखते थे और उनसे वे सभी सेवाएँ कराते थे जो पट्टेदारों को उच्च वर्ग के लोगों की करनी चाहिए। ज़मीन के पट्टे बहुत ही कठोर शर्तों पर बढ़ाए जाते थे, जिससे क़ाश्तकारों की स्थिति धीरे-धीरे गुलामों जैसी हो जाती थी। जागीरदारी की यह कठोरता न केवल पोलैंड में बल्कि एल्ब नदी के पूर्व में स्थित जर्मन क्षेत्र, बोहेमा, सिलेसिया, लियोनिया, हंगरी और रूमानिया में भी स्पष्ट रूप से थी। इन सभी क्षेत्रों में किसानों की स्थिति ज़मींदार साहबों के दासों से कुछ ही बेहतर थी। इन ज़मींदारों ने गुलामों के बिना भूमि बेचने अथवा भूमि के बिना गुलामों को बेचने का अधिकार स्वयं ही ग्रहण कर लिया। इस नई व्यवस्था को कायम रखने के लिए कानून भी बनाए गए। ओटोमन साम्राज्य के बलवान क्षेत्रों में भी किसानों की स्थिति सोलहवीं शताब्दी के मध्य से बिगड़ने लगी। रूस में नक़द या वस्तुओं के रूप में भुगतान का स्थान ज़मींदार की भूमि पर किए गए काम

नोट

और अन्य सेवाओं ने ले लिया। इस शताब्दी के दौरान कृषक द्वारा ज़मींदार की भूमि पर किए जाने वाले श्रम का समय दुगुना हो गया।

> *नोट्स* जर्मन क्षेत्र, बोहेमा, सिलेसिया, लियोनिया, हंगरी और रूमानिया में किसानों की स्थिति ज़मींदार साहबों के दासों से कुछ ही बेहतर थी।

एल्ब नदी के दक्षिण और पश्चिम में, इस सबके विपरीत, पुरानी सामंतीय ज़ायदादों के उन्मूलन का सिलसिला ज़ोर पकड़ने लगा। युद्ध, मुद्रा के अवमूल्यन, नागरिक और धार्मिक कलह तथा कृषकों के विद्रोह–इन सब कारणों से जागीरदारों के अधिकारों का ह्रास हुआ तथा भूमि का हस्तांतरण अधिक आसान हो गया। फ्रांस तथा मध्य और पश्चिमी जर्मनों में सामंतीय अधिकार बराबर कम होते चले गए। व्यावहारिक रूप में छोटे कृषकों को हस्तांतरित भूमि पर सामंतों के नियंत्रण की मान्यता ही शेष रही। ज़मींदार की भूमि पर कृषक के लिए अनिवार्य रूप से श्रम करने की प्रथा का या तो अंत हो गया या यह परंपरा नाममात्र के लिए शेष रह गई। इसका स्थान छोटी-छोटी भेंटों ने ले लिया। भूमि के स्वामी कृषक को भूमि का अपनी इच्छानुसार प्रयोग करने का हक़ मिल गया। इस प्रकार छोटे किसानों के भू-स्वामित्व का प्रचलन फ्रांस और जर्मनी में अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक व्यापक रूप से हो गया। यही प्रक्रिया इंग्लैंड में भी बन रही थी क्योंकि वहाँ भूमि पर श्रम का स्थान लगान ने ले लिया था तथा भूमि की बिक्री भी होने लगी थी।

निचले देशों के विषय में भी कुछ प्रकाश डालना उचित होगा। इन देशों के दक्षिणी क्षेत्रों में भूमि की स्थिति पश्चिमी जर्मनी और उत्तरी फ्रांस में विद्यमान विशेषताओं जैसी ही थी। इन देशों के उत्तरी क्षेत्र में 1579 में मिली स्वतंत्रता के बाद कुछ उल्लेखनीय सुधार लागू किए गए। आंतरिक अंचल के राज्यों में उच्च-वर्ग और पादरी वर्ग के अधिकार में विशाल ज़मीन-जायदाद होने के उदाहरण कम नहीं थे; इनका कोई विघटन भी नहीं हुआ, तथापि छोटी और दरमियानी जायदादों के स्वामित्व का भी काफी प्रचलन था और यह अधिक व्यापक होता चला गया। नए संयुक्त प्रांतों में सुधार आंदोलन तथा स्वाधीनता-संग्राम के बाद हुए राजनैतिक तथा सामाजिक-परिवर्तनों का परिणाम यह हुआ कि सामंतीय अधिकारों का सामान्य रूप में ह्रास होने लगा और भूमि का व्यापक पैमाने पर हस्तांतरण हुआ एवं इसका अधिकांश अमीर बुर्जुआ लोगों के हाथ लगा। इसका यह परिणाम हुआ कि खेतों के प्रबंध के लिए ऐसी आधुनिक तथा लाभकारी पद्धतियाँ लागू की गई जिनको बदलती हुई आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार ढालना अधिक आसान था। नई भूमि को कृषियोग्य बनाने के कार्य पर भी काफी मात्रा में पूँजी खर्च की गई।

इतालवी प्रायद्वीप में भी भू-धारण की विभिन्न पद्धतियों में क्षेत्रीय आधार पर काफी अंतर था। पीडमॉन्ट (Piedmont) में कुछ बड़ी जायदादें बनी रहीं, पर भूमि को प्रायः छोटे-छोटे खेतों में बाँटने की प्रवृत्ति अधिकाधिक बढ़ती गई और उनका प्रबंध साझीदार-काश्तकारों को सौंप दिया गया। सिसली में इसके सर्वथा विपरीत पद्धति जागीरदारी जायदाद का विकास हुआ। दोनों सिसलियों में और पोप के राज्यों में भी यही स्थिति थी, पर यहाँ भी समुद्र-तट के पास वाले इलाकों में कृषकों के पास छोटी-छोटी जायदादें थीं। अंब्रिया के पर्वतीय क्षेत्रों में भी इसी पद्धति के छोटे-छोटे खेत अधिक संख्या में थे और समीपवर्ती टस्कैनी में भी ऐसे ही खेतों की अधिकता थी।

> *क्या आप जानते हैं* दक्षिणी फ्रांस में भू-धारण की पद्धति मध्य और उत्तरी इटली की पद्धति से मिलती-जुलती थी।

यहाँ साझीदार-भू-धारण पद्धति या एक विशेष कर लगाने वाली पद्धति, पट्टे के आधार पर भूमि-धारण की तुलना में, निश्चित रूप से अधिक प्रचलित थी और ग्रामीण जायदादें प्रायः छोटे-छोटे भागों में बँटी हुई थीं। सत्रहवीं-शताब्दी में मंदी के दौर के कारण भूमि-संबंधी जायदादें पुनः बुर्जुआ पट्टेबाजों के हाथों में केंद्रित हो गई जिससे सामंतीय शोषण और निर्धनता का दौर फिर से चालू हो गया।

स्पेन में सोलहवीं शताब्दी में धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष दोनों आधारों पर सामंतीय भू-स्वामित्व की प्रणाली मज़बूत हो गई। अपने समृद्ध आर्थिक स्वरूप से लाभ कमाने के लिए जायदाद का विस्तार करने के कारण भू-स्वामियों से न केवल सांप्रदायिक भूमि और चरागाहों पर अनधिकृत कब्जा किया अपितु ज़मींदारों को भी किसानों के खेतों पर अपनी शर्तों के अनुकूल दावे करने को उकसाया। उन्होंने कुछ नये दायित्व लागू किए जिससे उनके पुराने सामंतीय अधिकारों का, परंपरागत निर्ममता के साथ, फिर उदय हुआ यथापि सोलहवीं शताब्दी तक इनका सांकेतिक मंडल ही शेष रह गया था। भूमिगत यह विकेंद्रीकरण सत्रहवीं शताब्दी में भी चालू रहा।

इंग्लैंड में इसी दौरान हमें एक ऐसे ग्रामीण-समाज के दर्शन होते हैं जो यूरोप महाद्वीप के निचले क्षेत्रों को छोड़कर बाकी क्षेत्रों से बहुत अधिक विकसित और गतिशील था। यहाँ मध्यकालीन युग के आरंभ से भू-स्वामित्व के पुनर्गठन का सिलसिला चालू रहा। सामंतीय ढाँचे के टूट जाने के साथ भू-स्वामित्व में समय-समय पर परिवर्तन होने लगे तथा कृषि-वर्ग अधिक लाभकारी सिद्ध होने लगा। इस घटनाक्रम को शहर की मंडियों के विकास तथा अंत:क्षेत्रीय और विदेशी व्यापार, मौद्रिक अर्थव्यवस्था के उदय, ऊन-उद्योग के विस्तार तथा पूँजीवादी वर्ग के आविर्भाव से और अधिक बल मिला। भूमि की बाड़बंदी की प्रथा ने (यद्यपि यह मध्यवर्ती देशों तक ही सीमित थी) गिरजाघरों की संपत्ति के अधिग्रहण के साथ मिलकर विशाल जमीन-जायदादों में वृद्धि की तथा भू-स्वामियों और किसानों के मध्य संबंधों को ही बदल दिया। लेकिन इसके साथ ही, जनता की भूमि के अधिग्रहण एवं ज़मींदारों तथा बड़े किसानों द्वारा छोटे किसानों के खेतों की बेदखली से, ग्रामीण लोगों के कुछ अधिकारों के उन्मूलन से, भूमि-संबंधी समझौतों का श्रमजीवी किसान के प्रतिकूल शर्तों पर नवीकरण और कृषि-योग्य भूमि के चरागाहों में बदलाव से कृषक-वर्ग निर्धन होता गया और धीरे-धीरे उसका लोप हो गया।

यूरोप में भू-स्वामी के साथ अपने संबंधों में कृषक अपने अधिकारों का समर्पण कर रहे थे। ब्रिटेन में ग्रामीण-समाज जैसे-जैसे त्रिस्तरीय (ज़मींदार, लगान अदा करने वाला कृषक तथा कृषि-मज़दूर जिनके पास भूमि नहीं होती थी) बनता गया, वैसे-वैसे छोटे-छोटे भू-स्वामी किसानों का लोप होता गया। फिर भी छोटे किसानों के लोप के लिए केवल उनके खेतों को ज़मीदारों द्वारा बेदखली को ही जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता।

नोट्स जायदादों के विक्रय ने भी ग्रामीण इंग्लैंड के कृषि-संबंधी और सामाजिक ढाँचे के बदलाव में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

यह सिलसिला लगभग 1550 से आरंभ हुआ। अभी तक केवल वे ही काश्तकार किसान खेतों को अपने हाथ से निकल जाने का खतरा मोल लेते थे जिनके पास खेत एक निश्चित अवधि तक या जीवनभर के लिए थे और जिनके पट्टों के नवीनीकरण की कोई संभावना नहीं थी। माफ़ीदारों (freeholders) को अपनी भूमि की बेदखली न होने की पूरी गारंटी प्राप्त थी। इस प्रकार भूमि की बेदखली से एक-तिहाई कृषक-वर्ग का लोप हुआ। इस संदर्भ में भूमि की खरीद का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। बाजार की स्थिति, मूल्यों में वृद्धि और बढ़ते हुए उत्पादन ने पुराने उच्च-वर्ग को भूमि खरीदने की अपेक्षा बेचने के लिए विवश कर दिया। इस प्रकार एक नए पूँजीवादी बुर्जुआ वर्ग (व्यवसाय, साग, नागरिक, कर्मचारी तथा व्यापारी) के उदेय तथा भूमि के अच्छे-खासे हिस्से भी प्राप्त कर लेने वाले कुछ किसानों के अस्तित्व के कारण उच्च-वर्ग की संख्या में वृद्धि हुई। स्पष्टत: सन् 1660 तक छोटे किसानों की भूमि-बेदखली के मामले कृषकों को सामंतीय भूमि की बिक्री के मामलों से कम थे।

27.2 कृषि की विभिन्न पद्धतियाँ (Different Methods of Agriculture)

क्या आप जानते हैं सोलहवीं से अठारहवीं शताब्दी तक की कृषि को प्रधानत: गुज़र-बसर वाली खेती कहना उचित होगा क्योंकि यह ऐसी फसलों पर आधारित थीं जिससे स्थानीय जनसंख्या को खाद्य-आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके।

नोट

तीस वर्षीय युद्ध के छिड़ने तक बढ़ते हुए मूल्यों के प्रभाव से नार्वे तथा उत्तर-पश्चिमी जर्मनी में अनाजों के उत्पादन-क्षेत्र में अस्थायी तौर पर वृद्धि हुई तथा अनाज का काफी निर्यात भी किया गया। इस क्षेत्र में कुछ स्थानों पर सोलहवीं शताब्दी में पशुधन की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए चक्रानुवर्ती फ़सलें उगाने का परीक्षण किया गया। एल्ब नदी से सोवियत रूस तक फैले हुए विशाल क्षेत्र में अनाज को खेती में अधिक भूमि का उपयोग किया गया, क्योंकि अनाज के मूल्य बढ़ गए थे तथा सत्रहवीं शताब्दी के मध्य तक अनाजों की अंतर्राष्ट्रीय माँगों में भी काफी वृद्धि हो चुकी थी। वास्तव में पोलैंड में सोने-चांदी की आमद से कृषि-उपज के मूल्य मध्य और पूर्वी यूरोप के अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा काफी बढ़ गए जिससे सामंतीय जायदादों का विस्तार हुआ तथा गुलाम कृषि-मज़दूरों की प्रथा का फिर से उदय हुआ। फिर भी इन जायदादों की लाभकारिता में उनके आकार में वृद्धि के अनुपात में बढ़ोतरी नहीं हुई। सामंतीय जायदाद का इस प्रकार से विस्तार पहले सन् 1650 तक काफी घट चुका था। इस बारे में पोलैंड का अनुभव मध्य और दक्षिण-पूर्वी यूरोप से मिलता-जुलता था। रूस में 1550 तक कृषि-भूमि के विस्तार के बावजूद तथा ग्रामीण लोगों की निर्धनता के कारण यह सिलसिला उलट गया।

> *नोट्स* एल्ब नदी से सोवियत रूस तक फैले हुए विशाल क्षेत्र में अनाज की खेती में अधिक भूमि का उपयोग किया गया, क्योंकि अनाज के मूल्य बढ़ गए थे।

उत्तरी तथा पश्चिमी यूरोप

उत्तरी फ्रांस, फ्लैडर्स, उत्तरी राइन, पश्चिमी टफैलिन, नीदरलैंड तथा इंग्लैंड—में भी अन्य स्थानों की तरह युद्धों और बढ़ते हुए मूल्यों का प्रभाव अनुभव किया गया। पर इस क्षेत्र की एक विशिष्ट बात यह थी कि 1560-70 की प्रारंभिक मंदी के बाद कृषि का काफी विकास हुआ। इसमें कोई संदेह नहीं कि मूल्यों की बढ़ोत्तरी के दौरान भूमि को कृषि-योग्य बनाने का कार्य उत्साहपूर्वक किया जाता था जबकि मूल्यों के घटने पर इसे रोक दिया जाता था—अर्थात् कृषि का विस्तार, लाभ कमाने से जोड़ दिया गया। आमदनी के स्तर का कृषि के विकास और पतन पर अनिवार्य प्रभाव पड़ता था। यह बात विशेष रूप से उत्तर के निचले क्षेत्रों में देखी जा सकती थी। इसी अवधि के दौरान फ्लैपिन क्षेत्रों और निचले देशों में कृषि का सर्वाधिक विकास हुआ। इंग्लैड में भी और मध्य-पश्चिमी व उनकी फ्रांस में कृषि में काफी प्रगति हुई। इसकी प्रेरणा अंततः कृषि-क्षेत्र में नीदरलैंड द्वारा लागू नए तौर-तरीकों से प्राप्त हुई जो काफी प्रसिद्ध हो चुके थे।

जहाँ तक इंग्लैंड का संबंध है, पशु-पालन का लंदन के समीपवर्ती क्षेत्रों में विकास होता रहा। धीरे-धीरे व्यापारी-पूँजीपतियों और नए बुर्जुआ वर्ग ने कृषि-प्रबंध में नई व्यापार-पद्धतियाँ लागू कर दीं। कृषि-उपज को बाजार की परिस्थितियों के अनुसार ढालने के सतत् प्रयत्न किए गए, सिंचाई और पशु-संबंधी कृषि-संपत्ति को सुधारने पर काफी पूँजी खर्च की गई तथा फ्लैडर्स और निचले देशों में किए जा रहे लाभकारी कृषि-परीक्षणों में गहरी रुचि प्रदर्शित की गई। सन् 1565 में फ्लैमिशी आयोजकों ने इंग्लैंड में पहली बार शलजम की फसल उगाई। सोलहवीं शताब्दी में भी तिपत्तिया घास तथा शमीमा धान्य जैसी चारा-फ़सलों का आरंभ काफी प्रचलित हो गया। इसी प्रकार सिंचित चरागाहों या एलिजाबेथ-युग के तथाकथित 'जल-चरागाहों (water meadows), का भी प्रचलन कम नहीं था। फ़सलों के चक्रानुवर्तीय के विस्तार के रूप में गेहूँ के स्थान पर कुछ क्षेत्रों में अन्य फसलें उगाने का प्रमाण भी मिलता है। निष्कर्ष रूप में, सोलहवीं और अठाहरवीं शताब्दियों के मध्य इंग्लैंड में कृषि के स्वरूप में भारी परिवर्तन हुए।

फ्रांस के उत्तरी इलाके की स्थिति इस संबंध में इंग्लैंड और निचले देशों से मिलती-जुलती थी, पर मध्य फ्रांस में जाने पर इसके विपरीत स्थिति देखने को मिलती थी। इंग्लैंड और नीदरलैंड का प्रभाव इस क्षेत्र में पड़ा, और पशुओं द्वारा खेती तथा इसी कारण चारा उगाने को अधिक महत्त्व दिया गया। जिन स्थानों पर जलवायु और भूमि की स्थिति जोतकर खेती करने (arable farming) के अनुकूल थी, वहाँ पशुधन विशुद्ध रूप से आमदनी का एक गौण स्रोत बना रहा। लेकिन ऐसे क्षेत्रों में जहाँ अनाज उगाने की इतनी अनुकूल स्थिति नहीं थीं, पशु-पालन ही ग्रामीण जनसंख्या

नोट

की मुख्य गतिविधि था और यही मंडी-अर्थव्यवस्था के संवर्द्धन का साधन या क्योंकि दुग्ध-जन्य पदार्थों के विक्रय से ही स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अनाज का भंडार उपलब्ध हो सकता था। इस प्रकार मैदानों की अपेक्षा पहाड़ी क्षेत्र व्यापारिक रूप से अधिक जागरुक थे क्योंकि मैदानी क्षेत्र में कृषक को अनाज उगाने की धुन-सी थी। नारमंडी, ब्रिटानी, बोलोन, लिमोग्स तथा पॉइटू में जलवायु तथा भूमि की हालत अनुकूल होने के कारण अच्छे प्राकृतिक चरागाहों का विकास हुआ और पशु-पालन में अधिक रुचि के कारण यह खेती की मुख्य गतिविधि हो गई यद्यपि अनाजों की खेती को भी कुछ महत्त्व दिया जाता था। यहाँ चारा-फसलें बदल-बदलकर फसलें उगाने का एक नियमित भाग बन गई।

टास्क फ्रांस में किन-किन फसलों की खेती होती थी? पता लगाइए।

पश्चिमी और दक्षिण-पश्चिमी फ्रांस की तरह अनाज पैदा करने के प्रति प्रबल आकर्षण के कारण तथा कृषि-उत्पादनों के मूल्य बढ़ जाने के कारण अंगूरों की खेती में भी कमी आई। दक्षिण-पश्चिमी फ्रांस में कई प्रकार की खेती की जाती थी। सोलहवीं शताब्दी में खेत छोटे-छोटे थे पर ग्रामीण क्षेत्र में परिवर्तन होने के साथ उनकी प्रवृत्ति विस्तार की ओर हो गई। अब इन खेतों में कई फसलें उगाई जाती थीं जिससे फसलें चौपट होने के खतरे को यथाशक्ति कम किया जा सके।

जहाँ तक भूमध्यसागरीय यूरोप का संबंध है, सागर-तट के समीपवर्ती क्षेत्र में खेतों के तरीकों में बहुत अंतर था। कुछ स्थानों में उत्साहपूर्ण पुनरुत्थान के चिह्न नज़र आते थे जब कि दूसरे स्थानों ने उन पद्धतियों को फिर से अपना लिया जो पहले से ही घिसी-पिटी समझी जाती थीं। कास्तील के पठारी क्षेत्र मीस्टा में 1550 तक अनाजों के बढ़ते हुए मूल्यों से आकर्षित होकर किसान चरागाहों पर अधिकार करके उन्हें कृषि-भूमि में बदलने लगे थे। सोलहवीं शताब्दी में रोमन काम्पान्या में भूमि को कृषि-योग्य बनाने के कार्य में भी कुछ प्रगति हुई, किंतु इससे कृषि को अस्थायी लाभ ही हुआ क्योंकि अगली शताब्दी में यह कार्य रुक गया। दक्षिण फ्रांस में भी पंद्रहवीं शताब्दी में लाभकारी कृषि का समृद्ध दौर आया जब वहाँ के किसानों ने अमरीका से आयातित नई मक्का और फलियों के साथ अपनी परंपरागत फसलें उगाई। अंगूरों और जैतून के निर्यात से कैटलोनिया, बेलेसिया तथा अंडालूसिया के मैदानों में मिली-जुली खेती होने लगी। पो घाटी और लोम्बार्डी में चारे की फसलें अन्य फसलों के साथ उगाई गई—यद्यपि अगली शताब्दी में लोम्बार्डी सहित पो घाटी को छोड़कर, इनमें से अधिकतर क्षेत्रों में गिरावट आ गई।

कृषि-उत्पादन-क्षमता

उस समय यूरोप के विभिन्न देशों में उगाई जाने वाली मुख्य फ़सलों की उपज कितनी थी? जहाँ तक पोलैंड और डैन्यूब नदी के समीपवर्ती देशों का संबंध है, पूर्वी यूरोप के देशों की कृषि-उपज का अनुपात उत्तरी यूरोप के औसत उपज वाले क्षेत्रों की कृषि-उपज के अनुपात से विशेष भिन्न नहीं था। रूस और बल्कान क्षेत्र में कृषि-उपज ज़रूर बहुत कम थी।

नोट्स रूस की अपेक्षा पोलैंड में पटसन की उपज की मात्रा अधिक थी।

निचले देशों में अनाज की फ़सलों से काफ़ी उपज होती थी। औसतन इस क्षेत्र की कृषि उपज का अनुपात यूरोप के अन्य क्षेत्रों की कृषि-उपज के अनुपात से सत्रहवीं शताब्दी में भी कहीं अधिक अच्छा प्रतीत होता है जबकि इस अवधि में समस्त महाद्वीप में कृषि-उपज में गिरावट आई। मटर और फलियों की फ़सल से होने वाली अधिक उपज का प्रमाण उत्तरी नीदरलैंड तथा कुछ ही कम स्तर पर इंग्लैंड में भी मिलता है। फिर भी इंग्लैंड में अनाजों की उपज यूरोपीय महाद्वीप के अन्य क्षेत्रों की उपज से तो सामान्यत: कुछ अधिक थी पर यह स्पष्ट रूप से फ़्लैमिश क्षेत्रों की उपज से कम थी क्योंकि उनमें दालों की उपज इंग्लैंड से अधिक होती थी। अटलांटिक के निकटवर्ती फ्रांसीसी

नोट

क्षेत्र के विशेष आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। अटलांटिक के समीपवर्ती स्पेन और पुर्तगाल के बारे में भी विशेष आँकड़े नहीं हैं पर जो थोड़े-बहुत आँकड़े उपलब्ध हैं, उनके आधार पर यह अनुमान लगाना तर्कसंगत होगा कि इन क्षेत्रों में मुख्य फ़सलों की उपज-दर उत्तरी नीदरलैंड, इंग्लैंड और उत्तरी यूरोप की कृषि-उपज की आधी थी। कृषि-उत्पादन-क्षमता के बारे में फ्रांस की स्थिति मध्यम थी। जहां तक भूमध्यसागरीय क्षेत्रों का संबंध है, हमारे पास सर्वाधिक सूचना इटली के बारे में है। सोलहवीं शताब्दी के बाद से उत्तरी इटली में चावल की खेती से निश्चित ही अधिक उपज होने लगी यद्यपि इस क्षेत्र में भूमि की उत्पादन-क्षमता सामान्यत: कम थी।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. मौद्रिक अर्थव्यवस्था का विस्तार ………… तक पहुँच गया।
2. सोलहवीं शताब्दी में निर्धन ग्रामीण किसानों की संख्या में ………… हुई।
3. जर्मनी में सामन्तीय अधिकार लगातार ………… होते चले गए।
4. इंग्लैण्ड में भूमि पर श्रम का स्थान ………… ने ले लिया।
5. ब्रिटेन में ग्रामीण समाज धीरे-धीरे ………… बनता गया।

27.3 सारांश (Summary)

- मौद्रिक अर्थव्यवस्था का विस्तार गाँवों तक पहुँच गया जिससे यहाँ के परंपरागत मूल्य प्रभावित हुए। इस मूल्य-क्रांति का प्रभाव संपत्ति के बाजार में भी अनुभव किया गया, जब कि विभिन्न क्षेत्रों में किसानों ने अनाज के बढ़ते हुए मूल्यों और गोश्त तथा डेरी-उत्पादों की विकासशील मंडी से लाभ उठाने का प्रयास किया।
- भूगोल और जलवायु दोनों ही ग्रामीण कार्य-कलापों का आधार बनी हुई थीं और उनके परिणामों को भी प्रभावित करती थीं। कुछ स्थानों पर इस क्षेत्र में सुधार भी किया गया, पर यह इतने छोटे पैमाने पर था कि इससे यूरोप की कृषि को प्राकृतिक बाधाओं से मुक्त नहीं किया जा सका।
- सोलहवीं शताब्दी के आरंभ से मध्य तथा पूर्वी यूरोप में भू-स्वामी, चाहे वे धार्मिक हो या धर्मनिरपेक्ष, अपनी भूमि की सीमा बढ़ाने का प्रयत्न करने लगे। किसानों की भूमि पर अधिकार जतलाकर वे उनसे भूमि ले लेते थे और उसकी कम क़ीमत अदा करते थे। यह बात पोलैंड में विशेष रूप से थी।
- एल्ब नदी के दक्षिण और पश्चिम में, इस सबके विपरीत, पुरानी सामंतीय ज़ायदादों के उन्मूलन का सिलसिला ज़ोर पकड़ने लगा। युद्ध, मुद्रा के अवमूल्यन, नागरिक और धार्मिक कलह तथा कृषकों के विद्रोह–इन सब कारणों से जागीरदारों के अधिकारों का ह्रास हुआ तथा भूमि का हस्तांतरण अधिक आसान हो गया।
- इतालवी प्रायद्वीप में भी भू-धारण की विभिन्न पद्धतियों में क्षेत्रीय आधार पर काफी अंतर था। पीडमॉन्ट (Piedmont) में कुछ बड़ी जायदादें बनी रहीं, पर भूमि को प्राय: छोटे-छोटे खेतों में बाँटने की प्रवृत्ति अधिकाधिक बढ़ती गई और उनका प्रबंध साझीदार-काश्तकारों को सौंप दिया गया।
- सामंतीय ढाँचे के टूट जाने के साथ भू-स्वामित्व में समय-समय पर परिवर्तन होने लगे तथा कृषि-वर्ग अधिक लाभकारी सिद्ध होने लगा। इस घटनाक्रम को शहर की मंडियों के विकास तथा अंत:क्षेत्रीय और विदेशी व्यापार, मौद्रिक अर्थव्यवस्था के उदय, ऊन-उद्योग के विस्तार तथा पूँजीवादी वर्ग के आविर्भाव से और अधिक बल मिला। भूमि की बाड़बंदी की प्रथा ने (यद्यपि यह मध्यवर्ती देशों तक ही सीमित थी) गिरजाघरों की संपत्ति के अधिग्रहण के साथ मिलकर विशाल जमीन-जायदादों में वृद्धि की तथा भू-स्वामियों और किसानों के मध्य संबंधों को ही बदल दिया।

- जहाँ तक इंग्लैंड का संबंध है, पशु-पालन का लंदन के समीपवर्ती क्षेत्रों में विकास होता रहा। धीरे-धीरे व्यापारी-पूँजीपतियों और नए बुर्जुआ वर्ग ने कृषि-प्रबंध में नई व्यापार-पद्धतियाँ लागू कर दीं। कृषि-उपज को बाजार की परिस्थितियों के अनुसार ढालने के सतत प्रयत्न किए गए, सिंचाई और पशु-संबंधी कृषि-संपत्ति को सुधारने पर काफ़ी पूँजी खर्च की गई।

27.4 शब्दकोश (Keywords)

- **अवमूल्यन**–कीमत, मूल्य आदि में गिरावट, ह्रास।
- **चक्रानुवर्तीय**–चक्रीय क्रम के अनुसार, चक्रीय।

27.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. कृषि क्षेत्र में व्याप्त क्षेत्रीय असमानताओं का वर्णन करो।
2. भू-स्वामित्व के कानूनी और सामाजिक ढांचे का विवेचन कीजिए।
3. 16वीं सदी से 18वीं सदी के बीच प्रचलित विभिन्न कृषि पद्धतियों की समीक्षा कीजिए।
4. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखें–

   (क) कृषि उत्पादन क्षमता (ख) चक्रानुवर्तीय कृषि।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. गांवों 2. वृद्धि 3. कम 4. लगान
5. त्रिस्तरीय।

27.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–28: विज्ञान एवं तकनीक : ज्ञान का विस्तार (Science and Technology : Expansion of Knowledge)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
28.1 मध्यजगत में प्रवेश (Enterance in Medieval World)
28.2 सारांश (Summary)
28.3 शब्दकोश (Keywords)
28.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
28.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- मध्यजगत की विज्ञान एवं तकनीक के विषय में जानेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्यकाल में चर्च की ओर से विज्ञान के अध्ययन को प्रोत्साहन नहीं दिया जाता था। मध्य युग में विज्ञान के क्षेत्र में केवल अरस्तू की कुछ पुस्तकों का अध्ययन होता था, जो अरबों से यूरोप को प्राप्त हुई थीं। अरस्तू को पूर्णरूप से ठीक लिखने वाला लेखक माना जाता था तथा उसके विरुद्ध कुछ भी कहना एक भयंकर अपराध था। फ्लोरेंस निवासी सेवानरोला को इसी अपराध में मृत्युदण्ड दिया गया था। फिर भी इस पुनर्जागरण में अच्छे-अच्छे वैज्ञानिक हुए, जिनके विचारों ने संसार में एक अद्भुत परिवर्तन कर दिया।

28.1 मध्यजगत में प्रवेश (Enterance in Medieval World)

विज्ञान का पुनर्जागरण–चौदहवीं, पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी का काल विज्ञान की खोज का काल माना जाता है। इस काल में वैज्ञानिकों का ध्यान प्रकृति की गतिविधियों की ओर गया और उन्होंने उसके रहस्यों का पता लगाने का प्रयत्न किया। लोगों की रुचि विज्ञान के प्रति बढ़ी और वैज्ञानिक अध्ययन व अनुसंधान के लिए अनेक उपकरण (Instruments) तैयार किये गये। यहाँ कुछ वैज्ञानिकों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है–

रोजर बेकन (1214-1295 ई.)–यह प्रथम वैज्ञानिक माना जाता है इसने बताया कि विज्ञान के अध्ययन के बिना हम प्रकृति की शक्तियों एवं रहस्यों को नहीं जान सकते। इसने विज्ञान के क्षेत्र में इतना कार्य किया कि उस समय

के साधारण व्यक्तियों के मन से अन्ध-विश्वास और कट्टर धर्म के प्रति श्रद्धा पूर्णरूप से उठ गई। यद्यपि उसके समय में वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले व्यक्तियों को मृत्युदण्ड, कारावास एवं देश निकाले का भय लगा रहता था। रोजर बेकन को भी अनेक कष्ट उठाने पड़े परन्तु उसने इस बात की कोई चिन्ता नहीं की और विज्ञान के अध्ययन की ओर लोगों का ध्यान भली-भाँति आकर्षित किया।

नोट्स रोजर बेकन को प्रथम वैज्ञानिक माना जाता है।

कॉपरनिकस (Copernicus, 1473-1553 ई.)–कॉपरनिकस पोलैण्ड का निवासी था। कोपरनिकस ने आकाश के नक्षत्रों की चाल का गहरा अध्ययन किया और यह सिद्ध किया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है न कि सूर्य पृथ्वी के चारों ओर, जैसा कि ईसाई लोग विश्वास करते थे। यूनानी विद्वान् टाल्सी ने मध्य युग में यह सिद्धान्त रखा था कि पृथ्वी अचल है और सूर्य उसकी परिक्रमा करता है तथा अन्य ग्रह, नक्षत्र आदि पृथ्वी की परिक्रमा कर रहे हैं। चूँकि कॉपरनिकस के विचार ईसाई धर्म के विचारों से मेल नहीं खाते थे अत: ईसाइयों ने उसका घोर विरोध किया।

गैलिलियो (Galileo, 1564-1642 ई.)–गैलिलियो इटली का निवासी था उसने 'गति-विज्ञान' (Science of Dynamics) की नींव डाली और सबसे पहला दूरदर्शक यन्त्र (Telescope) बनाया। इस दूरदर्शक यन्त्र से वह आकाश के नक्षत्रों का अध्ययन करता था। अपने अध्ययन के बल पर उसने खगोल शास्त्र (Astronomy) के सम्बन्ध में अनेक वैज्ञानिक बातें संसार के सामने रखीं। ये सारी बातें ईसाई धर्मावलम्बियों के विश्वास के विरुद्ध थीं, अत: ईसाईयों ने गैलिलियो का कड़ा विरोध किया। उन्होंने गैलिलियो से कहा कि वह इस प्रकार की खोजें न करे किन्तु गैलिलियो न माना। अत: गैलिलियो को सजा भोगनी पड़ी।

ग्रीवो (1550-1600 ई.)–ग्रीवो ने यह बताया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है और दूसरे नक्षत्र भी सूर्य की भाँति है। चूँकि वह डोमीनिकन सम्प्रदाय का एक भिक्षु था, अत: उस पर नास्तिकता का अपराध लगा कर पोप ने उसको 1600 ई. में जीवित ही चिता में जलवा दिया।

लियोनार्डो-दी-विंसी–लियोनार्डो-दी-विंसी बहुमुखी प्रतिभा का मनुष्य था। कला के प्रति उसकी जितनी रुचि थी, उतनी ही रुचि उसे विज्ञान में भी थी। वह एक वैज्ञानिक के रूप में भी विख्यात है क्योंकि उसने इस दिशा में बहुत योगदान किया। उसने मानव के शरीर की रचना (Anotomy) का खूब अध्ययन किया। मानव शरीर के विभिन्न अंगों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में भी उसने लोगों को बताया। इतना ही नहीं पक्षियों के शरीर की रचना और उनकी उड़ान का अध्ययन करके उसने कुछ तथ्य सामने रखे।

उसने पम्पों और खरादों के कुछ रेखा-चित्र बनाये और रेखागणित की भी एक रोचक पुस्तक तैयार की। इस प्रकार लियोनार्डो-दी-विंसी ने शरीर-विज्ञान, जीव विज्ञान, टेक्नोलॉजी और रेखागणित के सम्बन्ध में खोज करके लोगों को ज्ञान दिया।

कैपलर (Kepler, 1571-1630 ई.)–कैपलर एक जर्मन वैज्ञानिक था। उसने कॉपरनिकस की खोज पर आगे काम किया। कैपलर का कहना था कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर चक्कर काटती है लेकिन साथ ही उसने यह भी बताया कि ये चक्कर बिल्कुल गोलाई में नहीं होते बल्कि दीर्घवृत अर्थात् (Elliptical) होते हैं।

अन्य वैज्ञानिक–डा. विलियम हार्वी ने बताया कि रक्त मानव के शरीर में घूमता रहता है। इंगलैण्ड के प्रसिद्ध गणित के विद्वान सर आइजेक न्यूटन ने गुरुत्वाकर्षण-सिद्धान्त (Law of Gravitation) का प्रतिपादन किया। इस युग में रसायन शास्त्र और भौतिक शास्त्र की भी बहुत उन्नति हुई। प्राचीन ग्रीक विद्वान् गलन तथा हिप्पोक्रेटीज के ग्रन्थों का फिर से प्रकाशन किया गया और उनके मौलिक सिद्धान्तों का अध्ययन किया गया। हालैंड निवासी वैसेलियस (Vesalius I : 1514-1564 ई.) ने मनुष्य की शारीरिक बनावट पर पर्याप्त प्रकाश डाला। अन्य विद्वानों ने भौतिक शास्त्र के सम्बन्ध में कई महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त ज्ञात किए। गणित शास्त्र और पदार्थ विज्ञान के सम्बन्ध में भी महत्त्वपूर्ण खोज की गयी और नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ। गणित की उन्नति में यशेलिया, कैपलर, डिकार्टे, न्यूटन आदि

नोट

के नाम प्रसिद्ध हैं। एक विद्वान ने यह बताया कि रसायन शास्त्र और चिकित्सा शास्त्र में गहरा सम्बन्ध है। गैलिलियो ने दूरबीन के अतिरिक्त हवाई थर्मामीटर और पेण्डुलम घड़ी का भी आविष्कार किया। इसी समय वैज्ञानिकों ने वायु भारमापक यंत्र (Barometer) एवं भौतिक तुला (Physical Balance) का निर्माण किया। इसी समय ग्लिबर्ट नामक विद्वान ने चुम्बक का आविष्कार किया। स्टीवन ने द्रव्यों के दबाव का अध्ययन किया और लॉगरिथम (Logarithms) का प्रतिपादन किया।

क्या आप जानते हैं इंग्लैंड में विज्ञान को प्रोत्साहन देने के लिए सन् 1632 ई. में रायल सोसायटी की स्थापना हुई।

इस वैज्ञानिक उन्नति के कई कारण थे। मानववादी शास्त्रों के अध्ययन से लोगों को इस संसार की अनेक वस्तुओं से प्रेम हो गया और वे उनकी वास्तविकता जानने के लिए खोज करने लगे। इस समय के इंग्लैंड और फ्रांस के राजाओं ने विज्ञान में बहुत रुचि प्रकट की और विज्ञान के अध्ययन को हर प्रकार से प्रोत्साहन दिया।

चिकित्सा और औषधि के विषय में भी नवीन तत्वों का पता लगाया गया। शल्य चिकित्सा के नये नियम बनाये गए। पैरसिल्मस ने औषधि एवं रासायनिक द्रव्यों का सम्बन्ध बतलाया। कोड्र्स और हैल्मोन्ट नामक वैज्ञानिकों ने रासायनिक अम्ल (Acid) तथा गैस के विषय में ज्ञान कराया।

दर्शन में पुनर्जागरण–इस काल में पुरानी चिन्तन प्रणाली समाप्त हो गई। अब हर बात को तर्क की कसौटी पर कसने के बाद ही सच माना जाता था। चर्च और उसकी कुरीतियों पर स्वतन्त्र रूप से विचार होने लगा और लोगों ने उनकी कटु आलोचना भी की। इरास्मस और वाईक्लिफ दो महान दार्शनिक और सुधारक हुए। इरास्मस ने न्यु टेस्टामेंट का अनुवाद किया। एलबर्ट मैगनस, पीटर एवीलार्ड और थामस एक्विनास आदि अन्य महत्त्वपूर्ण विचारक और दार्शनिक थे। इन सभी विचारकों ने मुख्य रूप से चर्च और धार्मिक विषयों के बारे में नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित किए और धर्म के पाखण्ड, आडम्बर और ढोंग की पोल खोली। इस प्रकार इनके प्रयत्नों से धर्म के प्रति एक नया वैज्ञानिक दृष्टिकोण जन्मा और पनपा। इसी ने आगे चल कर धर्म सुधार आन्दोलन (Reformation) का पथ प्रदर्शन किया।

छापेखाने का आविष्कार–नए विचारों, नई खोजों और नए अनुसंधानों को अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाने और उन पर उन्हें विचार व मनन करने का अवसर देने का मुख्य साधन पुस्तकें थीं। जर्मनी में गुटनबर्ग में पहला छापाखाना खुला और उसके बाद इंग्लैंड में कैक्सटन का छापाखाना खुला। कागज बनने लगा और अधिकाधिक सामग्री व पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं। नये विचारों तथा ज्ञान-विज्ञान से पूर्ण इन पुस्तकों ने मानव-विचारों में क्रान्तिकारी परिवर्तन किए। छापाखाने का आविष्कार पुनर्जागरण को गति प्रदान करने वाला एक मुख्य साधन था।

नई भौगोलिक खोजें–भौगोलिक खोजों ने भी पुनर्जागरण की भावना को बल दिया। **मार्कोपोलो** (1250-1323 ई.) ने चीन और दक्षिणी पूर्वी एशिया के कुछ भागों का पता लगाया। समुद्री खोजों में स्पेन और पुर्तगाल ने अगुवाई की। पुर्तगाल के शासक हेनरी दी नेवीगेटर के प्रोत्साहन से इस काम को बढ़ावा प्रोत्साहन मिला।

क्या आप जानते हैं हेनरी नेवीगेटर इसी कारण विख्यात है कि उसने नाविकों को प्रोत्साहन तथा सहायता देकर समुद्री खोजों के लिए भेजा।

उसके प्रोत्साहन से ट्रेनिंग लेकर नाविकों ने अटलांटिक महासागर में अर्जोर्स तथा मदिरा द्वीपों की खोज की तथा अफ्रीका महाद्वीप के पश्चिमी तट के किनारे-किनारे दूर तक खोज की। 1486 ई में उत्तमाशा अन्तरीप (Cope of Goodhope) का पता लगाया गया। 1479 ई. में वास्कोडिगामा नामक पुर्तगाली ने भारत का मार्ग ढूँढ़ निकाला। कोलम्बस ने 1492 में वेस्ट इन्डीज का पता लगाया। मेगेलन ने पृथ्वी की परिक्रमा कर डाली। 1492 ई. में अमरीका

नोट

की भी खोज की गई। इन खोजों से व्यापार और उसकी भावी संभावनाएँ बहुत बढ़ गई। इसके अतिरिक्त विश्व के प्रत्येक भाग का ज्ञान-विज्ञान और उसकी सभ्यता व संस्कृति ने दूसरे भागों पर प्रभाव डाला। उपनिवेशवाद का आधार यही भौगोलिक खोजें थीं।

समुद्री यात्रा को सरल, सुरक्षित और सुविधापूर्ण बनाने के लिये अच्छी किस्म की नावें बनने लगीं, दिशासूचक़ यन्त्रों का अधिकाधिक प्रयोग होने लगा और अन्य यन्त्र आदि भी बनाये गये।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. मध्य युग में विज्ञान के क्षेत्र में केवल .... की कुछ पुस्तकों का अध्ययन होता था।
2. रोजर बेकन को प्रथम .... माना जाता था।
3. गैलिलियो के वैज्ञानिक सिद्धान्तों का .... ने कड़ा विरोध किया।
4. इंग्लैण्ड और फ्रांस के राजाओं ने विज्ञान में बहुत .... दिखाई।
5. .... ने 1492 में वेस्ट-इण्डीज का पता लगाया।

28.2 सारांश (Summary)

- चौदहवीं, पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी का काल विज्ञान की खोज का काल माना जाता है। इस काल में वैज्ञानिकों का ध्यान प्रकृति की गतिविधियों की ओर गया और उन्होंने उसके रहस्यों का पता लगाने का प्रयत्न किया।
- गैलिलियो इटली का निवासी था उसने 'गति-विज्ञान' (Science of Dynamics) की नींव डाली और सबसे पहला दूरदर्शक यन्त्र (Telescope) बनाया। इस दूरदर्शक यन्त्र से वह आकाश के नक्षत्रों का अध्ययन करता था। अपने अध्ययन के बल पर उसने खगोल शास्त्र (Astronomy) के सम्बन्ध में अनेक वैज्ञानिक बातें संसार के सामने रखीं।
- लियोनार्डो-दी-विंसी बहुमुखी प्रतिभा का मनुष्य था। कला के प्रति उसकी जितनी रुचि थी, उतनी ही रुचि उसे विज्ञान में भी थी। वह एक वैज्ञानिक के रूप में भी विख्यात है क्योंकि उसने इस दिशा में बहुत योगदान किया। उसने मानव के शरीर की रचना (Anotomy) का खूब अध्ययन किया। मानव शरीर के विभिन्न अंगों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में भी उसने लोगों को बताया।
- मानववादी शास्त्रों के अध्ययन से लोगों को इस संसार की अनेक वस्तुओं से प्रेम हो गया और वे उनकी वास्तविकता जानने के लिए खोज करने लगे। इस समय के इंग्लैंड और फ्रांस के राजाओं ने विज्ञान में बहुत रुचि प्रकट की और विज्ञान के अध्ययन को हर प्रकार से प्रोत्साहन दिया।
- विचारकों ने मुख्य रूप से चर्च और धार्मिक विषयों के बारे में नवीन सिद्धान्त प्रतिपादित किए और धर्म के पाखण्ड, आडम्बर और ढोंग की पोल खोली। इस प्रकार इनके प्रयत्नों से धर्म के प्रति एक नया वैज्ञानिक दृष्टिकोण जन्मा और पनपा। इसी ने आगे चल कर धर्म सुधार आन्दोलन (Reformation) का पथ प्रदर्शन किया।

28.3 शब्दकोश (Keywords)

- **गुटनबर्ग**–जर्मनी का पहला शहर जहां छापेखाने का आविष्कार हुआ था।
- **प्रोत्साहन**–उत्साह बढ़ाना, बढ़ावा देना।

नोट

28.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मध्य जगत की प्रमुख घटनाओं का वर्णन करो।
2. मध्यकाल की मुख्य भौगोलिक खोजों का विवेचन कीजिए।
3. मध्यकाल के प्रमुख वैज्ञानिकों का परिचय दीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. अरस्तू 2. वैज्ञानिक 3. ईसाइयों 4. रुचि
5. कोलम्बस।

28.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–29: साहित्य और शिक्षण संस्थाएँ (Literature and Institutions of Learnings)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
29.1 पुनर्जागरण काल में साहित्य और शिक्षण (Education and Literature in Renaissance)
29.2 सारांश (Summary)
29.3 शब्दकोश (Keywords)
29.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
29.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पुनर्जागरण काल के शिक्षण और साहित्य से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्य युग में लोगों की रुचि आत्मा, मुक्ति, ईश्वर, चर्च और शासक के सम्बन्ध में विचार करने के प्रति थी। मनुष्य का व्यक्तित्व उस काल में तनिक भी महत्त्वपूर्ण नहीं था, किन्तु पुनर्जागरण के प्रभाव से अब लोगों का दृष्टिकोण बिल्कुल बदल गया। अब स्वर्ग-नरक और ईश्वर तथा धर्म के प्रति लोगों का आकर्षण बहुत कम हो गया और उन्होंने व्यक्ति तथा संसार की प्रगति की ओर अपना ध्यान केन्द्रित किया।

29.1 पुनर्जागरण काल में साहित्य और शिक्षण (Education and Literature in Renaissance)

सामान्यतया इटली को पुनर्जागरण का जन्म-स्थान माना जाता है। इसका कारण यह बताया जाता है कि कुस्तुनतुनिया से भाग कर आने वाले बहुत से विद्वान मूल्यवान पुस्तकें तथा पाण्डुलिपियाँ लेकर इटली आ गए। इन लोगों का यहाँ स्वागत हुआ क्योंकि दाँते और पैट्रार्क व बोकासियो जैसे विद्वान यहाँ तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी में अपनी रचनाओं से लोगों पर प्रभाव डाल चुके थे।

साहित्य में पुनर्जागरण–अब हम पुनर्जागरण युग के कुछ बड़े साहित्यकारों का उल्लेख करेंगे, जिनके कार्य आज भी संसार की दृष्टि में आदर्श स्वरूप माने जाते हैं।

दाँते (Dante 1265-1321 ई.)–वह फ्लोरेंस निवासी था। उसका विख्यात महा-काव्य 'डिवाइन कॉमेडी (Divine Comedy) था। यह इस काल का सबसे बड़ा साहित्यिक ग्रन्थ माना जाता है। यह ग्रन्थ लैटिन में नहीं बल्कि इटैलियन भाषा में लिखा गया। इटैलियन भाषा उस समय की जन भाषा थी। यद्यपि इस ग्रन्थ में एक तीर्थ यात्रा का वर्णन है किन्तु देश-प्रेम, प्रकृति, निरीक्षण, मानव प्रेम और स्वतन्त्र अभिरुचि आदि के कारण यह पुनर्जागरण का मार्ग दिखलाने वाला था।

क्या आप जानते हैं पुनर्जागरण काल के महाकाव्य 'डिवाइन कॉमेडी' को इस काल का सबसे बड़ा साहित्यिक ग्रन्थ माना जाता है।

पैट्रार्क (Patrarch, 1304-1374 ई.)–इटली निवासी पैट्रार्क मानववाद (ह्यूमैनिज्म) का सबसे पहला एवं बड़ा प्रतिनिधि है। वह पहला विद्वान् था जिसने यूनान एवं रोम के प्राचीन साहित्य के मूल ग्रन्थों के महत्त्व को पहचाना और दूसरों को बताया। प्राचीन लैटिन साहित्य से उसे बड़ा प्रेम था। बर्जिस, सिसरो और लिवि की रचनाओं के प्रति जनता में रुचि पैदा करने हेतु उसने बड़ा प्रयत्न किया। वह एक कवि था और लैटिन और देशीय भाषाओं में कविता लिखता था।

बुकेशियो (Boccaccio, 1331-1375 ई.)–बुकेशियो एक विख्यात लेखक था। उसका ग्रंथ डेकैमरान (Decameron) विख्यात है। इसमें कुछ बड़ी रोचक कहानियाँ हैं। इंग्लैंड के प्रसिद्ध कवि चासर ने बुकेशियो के इसी ग्रंथ से प्रेरित होकर "कैण्टरबरी टेल्स" की रचना की।

लौरेंजो डी मैडीसी–इस युग का सबसे बड़ा गद्य लेखक लौरेंजो-डी-मैडीसी था। यह फ्लोरेंस का राजनैतिक नेता था। यह भी लैटिन भाषा का अच्छा विद्वान् और कवि था। इसने फ्लोरेंस में एक पुस्तकालय और एक विद्यालय खोला, जहाँ ग्रीक ग्रन्थ पढ़ाये जाते थे।

इटली के अन्य विद्वान–अन्य लेखक कौसीमो डी मैडीसी और मिरडोन्लो थे, जो कई भाषाओं के अच्छे विद्वान् और लेखक थे। इनके अतिरिक्त दो कवि एवं लेखक टैमो और एरियस्टो (1474-1533 ई.) थे। राजनीति का सबसे बड़ा लेखक मैकियावेली (Machiavelli, 1469-1527 ई.) था। उसके लिखे ग्रन्थ 'दी प्रिंस' और "दी आर्ट आफ वार" बहुत ही विख्यात हैं। इनमें राजनीति के जिन सिद्धान्तों की चर्चा की गई है, इनकी तुलना चाणक्य के अर्थशास्त्र से की जा सकती है।

डेसीडेरियस इरास्मस (1479-1536 ई.)–यह हालैंड का विख्यात विद्वान् था। उसका लिखा एक ग्रंथ "दी प्रेज ऑफ फॉली" (The Praise of Folly) बहुत ही विख्यात है। यह एक व्यंग्यात्मक कविता या सेटायर (Satire) है जिसमें इसने पादरियों के दुराचारों और ईसाई धर्म की कुरीतियों की खुले एवं जोरदार शब्दों में निन्दा की है। इस कारण बहुत से विद्वानों का यह कहना है कि इरास्मस के इस लेख ने चर्च एवं पादरियों के लिए साधारण लोगों की श्रद्धा और सम्मान बहुत कम कर दिये। इरास्मस ने यूरोप के कई देशों की यात्रा की थी। इंग्लैंड के पुनर्जागरण एवं धर्म-सुधार का तो उसे मार्गदर्शक कहना ही उचित है। इंग्लैंड के विद्वान् भी उसे अपना नेता मानते थे।

चासर (Chaucer, 1340-1400 ई.)–चासर का पूरा नाम जियोफरी चासर था। वह इंग्लैंड का जन भाषा का लेखक था। वह कई बार इटली गया था और बोकेशियो से बहुत प्रभावित था। उसकी प्रसिद्ध पुस्तक कैंटरबरी टेल्स (Canterbury Tales) है। यह पुस्तक मध्य युग और आधुनिक युग के बीच की कड़ी मानी जा सकती है।

सरवेन्टीज (Cervantez, 1247-1616 ई.)–यह स्पेन का एक प्रसिद्ध लेखक था। इसकी प्रसिद्ध रचना 'डान क्विकजॉट' (Don-Quixote) है। इस पुस्तक में एक शेखचिल्ली की कहानी के माध्यम से मध्य युगीन सामन्तों का खूब मजाक उड़ाया गया है।

सर टामस मूर (Sir Thomas Moore)–यह एक अंग्रेज विद्वान तथा मानववादी था। उसकी प्रसिद्ध रचना 'यूटोपिया' (Utopia) है। इस पुस्तक में उसने एक ऐसे राज्य की कल्पना की है जो उसकी दृष्टि में आदर्श राज्य है। मूर का यूटोपिया एक कल्पनामय राज्य था। यूटोपिया में वर्णित समाज एक उत्तम समाज है जिसमें नागरिकों को पूर्ण

नोट

स्वतन्त्रता है। लोगों का अनुमान है कि मूर को इस पुस्तक के लिखने की प्रेरणा प्लेटो की पुस्तक रिपब्लिक (Republic) से मिली थी। फ्रांसिस बेकन और स्पेंसर आदि पर मूर का काफी प्रभाव पड़ा।

फ्रांसिस रबेले (Francis Rabelais, 1945-1553 ई.)—फ्रांसिस रबेले एक महान मानववादी था। यह फ्रांसीसी लेखक व्यक्ति की महत्ता और उसकी प्राकृतिक प्रवृत्तियों का समर्थक था। उसका कहना था कि अपनी सहज प्रवृत्ति के अनुसार मनुष्य जो कुछ भी करता है, उसमें कोई बुरी बात नहीं है। वह एक पादरी था और पादरियों के जीवन के सम्बन्ध में उसे काफी ज्ञान था। उसने पाखण्डी पादरियों की कटु आलोचना की।

नोट्स राजनीति का सबसे बड़ा लेखक मैकियावेली (Machiavelli, 1469-1527 ई.) था। उसके लिखे ग्रन्थ 'दी प्रिंस' और "दी आर्ट आफ वार" बहुत ही विख्यात हैं। इनमें राजनीति के जिन सिद्धान्तों की चर्चा की गई है, उनकी तुलना चाणक्य के अर्थशास्त्र से की जा सकती है।

अन्य विद्वान लेखक—इनके अतिरिक्त डीन कॉलेट, जानफिश, कार्डीनल वुल्जे आदि लेखक और मानववादी थे। महाकवि एडमड स्पैन्सर (1552-1599 ई.) एवं नाटकाचार्य शेक्सपीयर (1564-1616 ई.) इंग्लैंड के प्रसिद्ध कवि हुए हैं। इस काल में नाटकों का विषय शिक्षा सम्बन्धी तथा पुराना ही था किन्तु विषय का प्रतिपादन और उसकी शैली बदली हुई थी। मानव जीवन, मानव की महत्ता और वैज्ञानिक विचारों को लेकर नाटकों की रचना की गई। शेक्सपीयर के अलावा मार्लो और राबर्ट ग्रीन भी प्रसिद्ध नाटककार हुए। फ्रांसिस बेकन अपने समय का सबसे बड़ा दार्शनिक, राजनीतिज्ञ और अंग्रेजी भाषा में निबन्ध का जन्मदाता माना जाता था। मौन्टेन (Montaigne, 1533-1592 ई.) इस समय फ्रांस का सबसे बड़ा लेखक है जिसकी शैली पर इंग्लैंड में बेकन (Bacon) ने निबन्ध साहित्य को जन्म दिया।

देशी भाषाएं या स्थानीय भाषाएं—पुनर्जागरण का एक प्रभाव यह पड़ा कि हर देश में वहाँ की देशी भाषाओं या स्थानीय भाषाओं का प्रयोग बढ़ा और उनकी उन्नति हुई। इटली, फ्रांस, स्पेन, इंग्लैंड, जर्मनी आदि सभी देशों में वहाँ की भाषाओं में साहित्य की रचना हुई। इस युग में धर्म और दर्शन का प्रभाव समाप्त होने लगा था और व्यक्तियों और सांसारिक विषयों पर लिखा जाने लगा। लेखकों की कहानियों के विषयों के लिए धार्मिक बातों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता था। वे जीवन की साधारण घटनाओं को लेकर साहित्य का निर्माण करने लगे और लैटिन भाषा के स्थान पर देशी भाषाओं में ग्रन्थ लिखने लगे।

नाटक—मध्य काल के अन्त में एवं पुनर्जागरण काल में नाटकों की बड़ी उन्नति हुई। अधिकतर नाटक धर्म सम्बन्धी विषयों पर और गिरजे के मंच पर ही खेले जाते थे। इन नाटकों द्वारा महात्मा ईसा के जीवन की घटनायें, उनके चमत्कार और शिष्टाचार की बातें प्रदर्शित की जाती थीं। इन सब नाटकों का तात्पर्य केवल मनोरंजन ही नहीं था। इनका वास्तविक उद्देश्य लोगों की धर्मात्मा, पुण्यात्मा, श्रेष्ठ आचरण वाले और अनुशासनपूर्वक जीवन बिताने की शिक्षा देना था। पुनर्जागरण के समय धार्मिक कहानियों या रहस्यात्मक और चमत्कार पूर्ण नाटकों के स्थान पर मानव के प्रतिदिन के जीवन की घटनाओं, मानव भावनाओं जैसे विषयों पर नाटक लिखे जाने लगे। मानवीय तत्वों और वैज्ञानिक विचारों के विकास के लिये भी नाटकों की रचना होने लगी। इंग्लैंड में भी आधुनिक नाटक का युग आरम्भ हुआ तथा जॉन रोबर्ट ग्रीन, मार्लो इत्यादि ने आधुनिक नाटकों की रचना की।

पुनर्जागरण के संरक्षक—इस समय के पोप निकोलस पंचम (1447-1475 ई.), जूलियस द्वितीय (1503-1513 ई.) एवं लियो दशम नई शिक्षा के बड़े पक्षपाती, प्रेमी एवं प्रोत्साहन देने वाले थे। पोप निकोलस पंचम ने अपने महल वैटिकन में एक पुस्तकालय स्थापित किया, जो आज भी विश्व के सर्वोच्च पुस्तकालयों में माना जाता हैं उसी ने रोम में विख्यात गिरजा 'सेन्ट पीटर्स' बनवाना आरम्भ किया। इसके लिए उसने दूर-दूर से उच्चकोटि के कारीगर, चित्रकार, शिल्पकार तथा बहुमूल्य निर्माण सामग्री मँगाई।

कला में पुनर्जागरण—पुनर्जागरण का प्रभाव कला के प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ा। **डेविस** का कहना है कि पुनर्जागरण मध्यकाल के नियमों और परम्पराओं के बन्धनों के विरुद्ध एक विद्रोह था और कला के क्षेत्र में यह विद्रोह सबसे

नोट

अधिक उभरा हुआ दिखाई पड़ता है। इस समय की कला नवीन विचारों की प्रतीक है। उसमें मध्य युग की कृत्रिमता के स्थान पर स्वाभाविकता है। इस काल की कला में नई टेकनीक और रंग, प्रकाश व छाया (Light and Shade) की ओर ध्यान दिया गया। सजीवता इस काल की कला का एक विशिष्ट लक्षण है।

(1) चित्रकला—मध्य युग में तथा पुनर्जागरण युग के आरम्भ में कला पर ईसाई धर्म का बड़ा प्रभाव था। ईसाई कला की कोमल और मानवीय भावनाओं को ईसा के चित्रों में प्रदर्शित किया जाता था। परन्तु धीरे-धीरे धर्मशास्त्रियों ने कला को धार्मिक रूप दे दिया। अत: कला की मौलिकता जाती रही। केवल धार्मिक भावना के चित्रों में उलझ कर कला की उन्नति और विकास का मार्ग रुक गया। इटली में कला का पुनर्जागरण बाइजेन्टियन परम्पराओं के विरोध में हुआ था। सिम्बेयु और गिटो ने नवीन शैली को जन्म दिया। गिटो ने धार्मिक एवं घरेलू विषयों को लेकर चित्र बनाये। इटली में चित्रकला का खूब विकास हुआ तथा यह पुनर्जागरण का प्रतीक बन गई। रैफेल और लिओनार्डो दी विंसी के चित्रों ने इटली को कला की नई पद्धति या शैली से परिचित कराया। मसाचिओ ने अपने चित्रों में यथार्थवाद (Realism) को मुख्य स्थान दिया।

लियोनार्डो-दी-विन्सी (Leonardo da Vinci, 1452-1519 ई.)—लियोनार्डो-दी-विन्सी इटली का एक कुशल पेंटर, भवन-निर्माता तथा महान चित्रकार था। उसके चित्रों में उसका महान कलाकार मुखर हो उठा है। उसका भित्ति चित्र (Mural Painting) 'दी लास्ट सपर' आज भी विश्व का महान चित्र माना जाता है। इसकी दूसरी महान कृति एक महिला का चित्र है। इस चित्र का नाम 'मोनालिसा' है। इस चित्र की कुछ विशिष्टताएँ आज भी कलाकारों को आश्चर्य में डाल देती हैं। मुस्कुराती हुई महिला के इस चित्र में उसकी आँखें और ओठों पर मुस्कान का भाव ऐसा हृदयस्पर्शी तथा विस्मयकारी है कि एक सच्चा कलाकार उसे देखता ही रह जाए। यह चित्र भी विंसी का एक अमर चित्र है। विंसी ने पेड़-पौधों और मनुष्यों के अनेक चित्र बनाये जिनमें उसने प्रकाश तथा छाया का पुट देकर नई चित्रकला का मार्ग प्रशस्त किया। अपने जीवन के अन्तिम दिनों में विंसी इटली छोड़कर फ्रांस चला गया था और फ्रांस के सम्राट फ्रांसिस ने उसका बहुत सम्मान किया।

माइकेल एंजिलो (Michael angelo, 1475-1564 ई.)—माइकेल एंजिलो इटली का निवासी था। वह एक महान चित्रकार, मूर्तिकार तथा स्थापत्यकला विशेषज्ञ था। रोम में पोप के राजप्रासाद तथा गिरजाघर में उसने अनेक भित्ति चित्र बनाए। गिरजाघर में 6 हजार वर्गफुट स्थान में उसने लगभग 145 चित्र अंकित किये, जो मानव जीवन की साकार प्रतिमा लगते हैं। कला का जैसा सुघर निखार माइकेल एंजिलो की चित्रकारी में मिलता है, वैसा अन्यत्र मुश्किल से ही मिलता है।

रफेल (Raphael, 1483-1520 ई.)—इटली के चित्रकारों में रफेल का अपना विशिष्ट स्थान है, उसने भी पोप के राजप्रासाद और गिरजाघर को सजाने के लिए अनेक चित्र बनाए। कला के क्षेत्र में वह लियोनार्डो-दी-विंसी और माइकेल एंजिलो से प्रभावित था किन्तु उसमें अपनी मौलिकता भी थी। रफेल के चित्रों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उनमें लम्बाई और चौड़ाई के साथ गहराई (Depth) का भी अंकन है अनुपात, भाव, अंकन, गाम्भीर्य, सरलता और यथार्थ प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से रफेल के चित्र अनुपम हैं। उसका मडोनास (Madonnas) चित्र अत्यन्त प्रसिद्ध है। Sistine Madonna नामक चित्र उसका सबसे विख्यात चित्र है।

इस काल में जर्मनी में अलब्रेच्ट ड्युरेर व हालबिन, हालैंड में हूबर्ट-वान-इक व रुबेन्स और रैमब्राण्ट और स्पेन में बेलासक्वेज नामक प्रसिद्ध चित्रकार हुए। इस काल में इंग्लैंड के मुख्य कलाकारों में ओडो और गोल्डस्मिथ थे।

(2) मूर्तिकला तथा वास्तुकला—मूर्तिकला और वास्तुकला पुनर्जागरण के दो मुख्य अंग थे। घीबर्टी (Ghiberti) और डोनाटेला ने यथार्थवाद शैली का अनुकरण किया, रोव्विया ने अलंकारयुक्त मूर्तियाँ बनाईं। वास्तुकला के क्षेत्र में गोथिक शैली का ह्रास होने लगा। इटली में एक नवीन शैली का विकास हुआ, जिसमें प्राचीन और नवीन ढंग मिले-जुले थे। उस शैली का ज्वलंत नमूना रोम का 'सैंट पीटर्स' का प्रसिद्ध गिरजाघर है। गिरजाघर ही इस युग की सबसे बड़ी शान की वस्तुएँ हैं। प्रत्येक ग्राम एवं नगर में एक गिरजाघर अवश्य होता था। आरम्भ में ये गिरजाघर रोमन शैली पर और उसके पश्चात् गोथिक ढंग से बनाये जाने लगे। इन गिरजाघरों में बड़ा बहुमूल्य और सुन्दर सजावट का सामान, फर्श, कालीन, झाड़-फानूस लगाये जाते थे। लकड़ी के सामान पर बढ़िया खुदाई का काम होता था और गिरजा में काम आने वाले बर्तन बड़े बहुमूल्य और रत्नजड़ित होते थे। गिरजाघरों की खिड़कियों आदि में बेल-बूटेदार काँच लगाये जाते थे।

पुनर्जागरण के समय के गिरजाघर या अन्य भवन एकदम ऊँचे और एक साथ आकाश की ओर उठते हुए भवनों के स्थान पर यूनानी देवालयों की तरह सीधे और रोमन प्रणाली के अनुसार औसत दर्जे की ऊँची गुम्बद वाले बनाए गए। गोल-गोल मेंहराबों का स्थान उन्नत मेहराबों ने ले लिया। उस समय के तीन मुख्य गिरजाघर रोम में सेन्ट पीटर्स, लन्दन में सेन्ट पॉल, वेनिस में सेन्ट मार्क हैं।

फ्लोरेंस नगर में इस समय के तीनों विश्वविख्यात कलाकार लिओनार्डो-दी-विंसी, माइकेल एंजिलो और रेफेल हुये। ये सब कई कलाओं में प्रवीण थे। माइकेल एंजिलो एक बड़ा अच्छा चित्रकार, शिल्पकार एवं मूर्तिकार था। इसके चित्रों एवं मूर्तियों में शरीर की बनावट और उसके अंग-प्रत्यंग की स्वच्छता इसकी उत्तमता के अच्छे प्रमाण हैं। इनको देखकर आजकल के चित्रकार भी चकित रह जाते हैं। इसके अलावा हालैंड में बड़े चित्रकार दो सगे भाई हूबर्ट एवं जॉन हुये हैं। उनके चित्र बड़े नए ढंग से सुन्दर एवं मनोरंजक हैं। स्पेन में बेलासक्वेज और म्यूरिलो अच्छे कलाकार थे। जर्मनी में अलब्रेच्ट ड्युरेर (1471-1528 ई.) और हालबिन (1497-1523 ई.) हुये हैं। इनके चित्रों में अधिकतर महात्मा ईसा के जीवन सम्बन्धी दृश्य, नरक, स्वर्ग आदि दिखाये गये हैं। कहीं-कहीं इसमें संसारी जीवन एवं घरेलू पारिवारिक जीवन सम्बन्धी विषयों तथा भावनाओं का भी चित्र खींचा गया है। इससे प्रतीत होता है कि कला में अब केवल ईसाई धर्म का ही एकाधिपत्य नहीं था। सब चित्रकार अपने चित्रों में, शिल्पकार अपनी मूर्तियों में, नई शैली एवं नई बातों व नये विषयों का रूप दिखाते थे। यूरोप के बहुत से नगरों, महलों, गिरजाघरों, अजायबघरों आदि में इन कलाकारों की कला की वस्तुएँ आज तक देखी जा सकती हैं।

(3) संगीत–इस काल में संगीत में भी अच्छी उन्नति हुई। मध्यकालीन युग के ऐसे यन्त्रों में सुधार किया गया, जो अधिक अच्छे न लगते थे। नये ढंग से अच्छी मधुर आवाज पैदा करने वाले वाद्य यन्त्र बनाये गए। वायलिन और पियानों का आविष्कार भी इसी काल में हुआ था। इस युग के संगीत के विशेषज्ञों में पैलेसट्रीनो (Palestrino) का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। उसने पोप की छत्र-छाया में शिक्षा प्राप्त की थी और अपनी योग्यता के कारण वह आधुनिक चर्च-संगीत का जन्मदाता कहलाता है। उसके प्रभाव और प्रेरणा से 17वीं शताब्दी में इटली में और 18वीं शताब्दी में जर्मनी में संगीत का विकास हुआ। इस काल में चर्च के प्रोत्साहन से धार्मिक गीत लिखे गये और उन्हें बड़े लय-स्वर और वाद्य यंत्रों के साथ गाया जाता था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

1. इटली को पुनर्जागरण का जन्म-स्थान माना जाता है।
2. दाँते अमेरिका का निवासी था।
3. चासर पुनर्जागरण काल का प्रसिद्ध जनभाषा लेखक था।
4. फ्रांसिस रबेले महान मानववादी था।
5. मध्यकाल के अन्त में एवं पुनर्जागरण काल में नाटकों में ह्रास होने लगा।
6. यूटोपिया सर टामस मूर की प्रसिद्ध रचना है।

29.2 सारांश (Summary)

- पुनर्जागरण का एक प्रभाव यह पड़ा कि हर देश में वहाँ की देशी भाषाओं या स्थानीय भाषाओं का प्रयोग बढ़ा और उनकी उन्नति हुई। इटली, फ्रांस, स्पेन, इंग्लैंड, जर्मनी आदि सभी देशों में वहाँ की भाषाओं में साहित्य की रचना हुई।
- मध्य काल के अन्त में एवं पुनर्जागरण काल में नाटकों की बड़ी उन्नति हुई। अधिकतर नाटक धर्म सम्बन्धी विषयों पर और गिरजे के मंच पर ही खेले जाते थे। इन नाटकों द्वारा महात्मा ईसा के जीवन की घटनायें, उनके चमत्कार और शिष्टाचार की बातें प्रदर्शित की जाती थीं।

नोट

- पुनर्जागरण का प्रभाव कला के प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ा। **डेविस** का कहना है कि पुनर्जागरण मध्यकाल के नियमों और परम्पराओं के बन्धनों के विरुद्ध एक विद्रोह था और कला के क्षेत्र में यह विद्रोह सबसे अधिक उभरा हुआ दिखाई पड़ता है। इस समय की कला नवीन विचारों की प्रतीक है। उसमें मध्य युग की कृत्रिमता के स्थान पर स्वाभाविकता है।
- मध्य युग में तथा पुनर्जागरण युग के आरम्भ में कला पर ईसाई धर्म का बड़ा प्रभाव था। ईसाई कला की कोमल और मानवीय भावनाओं को ईसा के चित्रों में प्रदर्शित किया जाता था। परन्तु धीरे-धीरे धर्मशास्त्रियों ने कला को धार्मिक रूप दे दिया।
- इटली के चित्रकारों में रफेल का अपना विशिष्ट स्थान है, उसने भी पोप के राजप्रासाद और गिरजाघर को सजाने के लिए अनेक चित्र बनाए। कला के क्षेत्र में वह लियोनार्डो-दी-विंसी और माइकेल एंजिलो से प्रभावित था किन्तु उसमें अपनी मौलिकता भी थी।
- मूर्तिकला और वास्तुकला पुनर्जागरण के दो मुख्य अंग थे। घीबर्टी (Ghiberti) और डोनाटेला ने यथार्थवाद शैली का अनुकरण किया, रोव्विया ने अलंकारयुक्त मूर्तियाँ बनाईं। वास्तुकला के क्षेत्र में गोथिक शैली का ह्रास होने लगा। इटली में एक नवीन शैली का विकास हुआ, जिसमें प्राचीन और नवीन ढंग मिले-जुले थे।
- इस काल में संगीत में भी अच्छी उन्नति हुई। मध्यकालीन युग के ऐसे यन्त्रों में सुधार किया गया, जो अधिक अच्छे न लगते थे। नये ढंग से अच्छी मधुर आवाज पैदा करने वाले वाद्य यन्त्र बनाये गए। वायलिन और पियानों का आविष्कार भी इसी काल में हुआ था।

29.3 शब्दकोश (Keywords)

- **मोनालिसा**–लियोनार्डो द्वारा बनाया गया एक प्रसिद्ध चित्र।
- **रफेल**–इटली का प्रसिद्ध चित्रकार।

29.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. पुनर्जागरण का आरम्भ कब से माना जाता है।
2. पुनर्जागरण काल में कला, साहित्य, संगीत व चित्रकला आदि के क्षेत्र में हुई उन्नति का विवेचन कीजिए।
3. पुनर्जागरण काल की उपलब्धियों का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य	2. असत्य	3. सत्य	4. सत्य
5. असत्य	6. सत्य।		

29.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–30: धार्मिक संस्था (Religious Establishment)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
30.1 कैथोलिक चर्च (Catholic Church)
30.2 धर्म सुधार आन्दोलन का अर्थ (Meaning of Religious Reforms)
30.3 आन्दोलन के कारण (Causes of Reforms)
30.4 प्रमुख समाज सुधारक (Prime Social Reformers)
30.5 सारांश (Summary)
30.6 शब्दकोश (Keywords)
30.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
30.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- कैथोलिक चर्च से परिचित होंगे;
- धर्म सुधार आन्दोलन को जानेंगे;
- आन्दोलन के कारणों को समझेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में लिथुआनिया से आयरलैण्ड तक और नार्वे तथा फिनलैण्ड से लेकर पुर्तगाल और हंगरी तक सम्पूर्ण पश्चिमी और मध्य यूरोप में कैथोलिक ईसाई चर्च का पूर्ण वर्चस्व था। ईसाई परिवार में उत्पन्न प्रत्येक शिशु इसका सदस्य समझा जाता था। चर्च सार्वजनिक तथा विभागीय संस्था थी, न कि व्यक्तिगत और ऐच्छिक। इसकी व्यवस्था करों तथा देय धन से की जाती थी। प्रत्येक राज्य चर्च का समर्थक था और चर्च के संगठन तथा उसके पदाधिकारियों की तरफ अँगुली उठाने वालों को राज्य की ओर से उचित सजा दी जाती थी। चर्च, ईसाई धर्म के परम्परागत विश्वासों तथा आस्थाओं का प्रतीक समझा जाता था। वह धार्मिक संस्कारों तथा नैतिक मापदण्डों का संरक्षक माना जाता था।

नोट

30.1 कैथोलिक चर्च (Catholic Church)

ईसाई जगत् के धार्मिक साम्राज्य के संगठनातमक ढाँचे का अध्यक्ष रोम का बिशप होता था जिसे 'पोप' के नाम से पुकारा जाता था। उसका निर्वाचन कुछ खास पादरियों द्वारा किया जाता था, जिन्हें 'कार्डिनल' कहा जाता था। पोप कैथोलिक चर्च का सर्वोच्च नियत-निर्माता, सर्वोच्च न्यायाधीश और चर्च की सम्पूर्ण गतिविधियों तथा वित्त-व्यवस्था का सर्वोच्च प्रशासक होता था। अपने विशिष्ट धार्मिक कार्यों के अलावा वह अन्य क्षेत्रों में भी विशेषाधिकार रखता था अथवा रखने का दावा करता था। वह रोम नगर और उसके आस-पास की 'पेपल स्टेट्स' का शासक था। वह यूरोप के किसी भी ईसाई राज्य के शासक को पदच्युत करने की क्षमता रखता था और मध्ययुग में कुछ पोपों ने इस अधिकार का प्रयोग भी किया था। वह किसी भी ईसाई देश के किसी भी ऐसे सिविल कानून को जो उसकी निगाह में अनुचित हो, रद्द कर सकता था। वह सम्पूर्ण ईसाई भूमि से कर वसूल करता था और विवाह, तलाक, वसीयत, उत्तराधिकार सम्बन्धी कई वैधानिक मामले अन्तिम निर्णय के लिए उसी के सामने प्रस्तुत किये जाते थे। वे विभिन्न यूरोपीय कैथोलिक राज्यों में सर्वोच्च धर्माधिकारियों की नियुक्ति भी करता था। स्पष्ट है कि पोप के अधिकारों की कोई सीमा न थी। मध्ययुग में समय-समय पर पोप के अधिकारों को कम करने के प्रयास किये गये थे, परन्तु किसी भी प्रयास को सफलता न मिली और ईसाई जगत् पर पोप का वर्चस्व बना रहा।

रोमन कैथोलिक चर्च की संगठनात्मक व्यवस्था बहुत विशाल एवं व्यापक थी। चर्च के प्रशासन में पोप की सहायता के लिए एक 'उच्चतम सभा' थी जिसमें 12 सदस्य होते थे और जिन्हें 'कार्डिनल' कहा जाता था। प्रारम्भ में एक कार्डिनल एक राज्य का सर्वोच्च धर्माधिकारी होता था। इनकी नियुक्ति पोप के द्वारा की जाती थी और इन लोगों को रोम में ही रहना पड़ता था। एक विशाल साम्राज्य की भाँति ईसाई जगत् भी प्रान्तों में विभाजित था। प्रान्तों के सर्वोच्च धर्माधिकारियों की नियुक्ति भी पोप करता था। बड़े प्रान्तों के सर्वोच्च धर्माधिकारी को 'पेट्रियाक' कहा जाता था, जबकि छोटे प्रान्तों के धर्माधिकारी को 'आर्क बिशप'। एक प्रान्त में कई 'डायोसीज' नामक इकाइयाँ होती थीं। डायोसीज के अन्तर्गत एक नगर अथवा कस्बा होता था और इस इकाई के धर्माधिकारी को 'बिशप' कहा जाता था। एक डायोसीज में बहुत से 'पेरिश' होते थे। पेरिश का धर्माधिकारी 'पादरी' कहलाता था। सहायक पादरी को 'डिकन' कहा जाता था। पादरियों की दो श्रणियां थीं–एक, 'सेकुलर क्लर्जी' अर्थात् वे पादरी जिनका जनता से सीधा सम्बन्ध रहता था और दूसरे, 'रेगुलर' अर्थात् वे पादरी जो मठों में रहकर धर्मगंथों का पठन-पाठन किया करते थे।

क्या आप जानते हैं पोप यूरोप के किसी भी ईसाई राज्य के शासक को पदच्युत करने की क्षमता रखता था।

मध्यकाल के उत्तरार्द्ध में कैथोलिक चर्च को कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ा। कुछ लोगों जिन्हें 'धर्मद्रोही' कहकर पुकारा गया था, ने चर्च की कुछ खास शिक्षाओं को चुनौती देना शुरू कर दिया था और अनेक स्थानों पर दूसरी बातों को मानना शुरू कर दिया गया। अधिकांश धर्मद्रोहियों को समझा-बुझा कर अथवा अन्य दबाव डाल कर चुप करा दिया गया और कुछ अधिक हठी लोगों को मौत की सजा देकर शान्त कर दिया गया। चर्च के निम्न पादरियों के आलसी तथा भ्रष्ट बन जाने से भी चर्च के सामने संकट उठ खड़ा हुआ था। परन्तु आंतरिक सुधारों के माध्यम से जैसे-तैसे इस संकट से भी निपट लिया गया। 1378 से 1417 ई. के मध्य चर्च को आंतरिक विघटन का सामना करना पड़ा जबकि एक ही समय में दो व्यक्ति अपने-अपने को पोप कहते रहे। कौन्सिल आन्दोलन ने पोप की असीम सत्ता को कम करने का सबल प्रयास किया था। कई प्रमुख विद्वानों तथा बिशपों ने यह सुझाव रखा था कि सम्पूर्ण ईसाई जगत् के प्रतिनिधियों की सभा के अधिकार पोप के अधिकारों से सर्वोच्च माने जाएं। परन्तु इस आन्दोलन को भी शान्त कर दिया गया परन्तु चर्च के भीतर सब कुछ ठीक नहीं था और कई ऐसी बातें थीं जिनसे निष्ठावान ईसाई भी अत्यधिक क्षुब्ध थे। पन्द्रहवीं सदी के कुछ पोप अत्यधिक सांसारिक निकले और उन्हें धार्मिक मामलों की अपेक्षा धन-सम्पदा, साहित्य एवं कला में अधिक रुचि रही। उनमें से एक, अलेक्जेण्डर षष्ठ (1491-1503) अपने विलासी तथा भ्रष्ट जीवन के लिये सम्पूर्ण यूरोप में कुख्यात हो गया था। वह अपने महत्त्वाकांक्षी लड़के सीजर बोरगिया और अपनी बदचलन लड़की के लाभ के लिए नाना प्रकार की योजनाएं बनाता

नोट

रहता था। रोम में जिस अनैतिकता और सांसारिकता का बोलबाला था, उसकी झलक अन्य क्षेत्रों में भी दिखाई देने लग गई थी। कुछ बिशपों, एबाटों और पादरियों ने तो अपने धार्मिक कर्तव्यों को निभाना ही बन्द कर दिया था। कुछ धनी और आलसी बन गये थे, कुछ भोगविलास में लिप्त थे तो कुछ अज्ञानी अथवा पापी थे। ऐसे धर्माधिकारियों की संख्या यद्यपि कम थी, फिर भी वे शीघ्र ही सभी की चर्चा का विषय बन गये थे। चर्च की वित्तीय स्थिति को लेकर भी भारी असंतोष फैला हुआ था। जर्मनी में तो बाकायदा छपे हुए पर्चे वितरित किये गये थे, जिनमें कहा गया था कि जर्मनी का धर्म रोम के भ्रष्ट दरबार को कायम रखने के लिये रोम भेजा जाता है। चूँकि इस समय तक राष्ट्रीय राज्यों की नीवें मजबूत हो चुकी थीं और राजाओं की शक्ति काफी बढ़ गई थी; अत: एक तरफ तो राजा लोग पोप के प्रभुत्व से मुक्ति पाने की इच्छा करने लगे थे और दूसरी तरफ लोगों में भी राष्ट्रीयता की भावना का संचार हो चुका था। उन्हें अब ईसाई कहलाने की अपेक्षा फ्रेंच या इंगलिश नाम से पुकारा जाना अधिक पसन्द था। ऐसी स्थिति में यूरोप में धर्म सुधार आन्दोलन का सूत्रपात हुआ।

30.2 धर्म सुधार आन्दोलन का अर्थ (Meaning of Religious Reforms)

महात्मा ईसा द्वारा संस्थापित ईसाई धर्म के विभाजन की कहानी बहुत पुरानी है। उनकी मृत्यु के तीन-चार सौ वर्षों के बाद ही ईसाई धर्म दो शाखाओं-रोमन कैथोलिक चर्च और ग्रीक ओर्थोडक्स चर्च में विभाजित हो गया था। यूरोप में रूस तथा बाल्कन क्षेत्र के अलावा अन्य सभी राज्यों में रोमन कैथोलिक चर्च का वर्चस्व कायम रहा। उसका यह वर्चस्व सोलहवीं सदी के प्रारम्भिक दशकों तक बना और जैसा कि बतलाया जा चुका है कि इस युग में पोप तथा धर्माधिकारी लोग अपने विरुद्ध उठने वाली आवाजों को शान्त करने में सफल रहे थे। परन्तु सोलहवीं सदी में जब चर्च की कुछ धार्मिक बातों एवं विचारों के विरुद्ध जबरदस्त विद्रोह उठ खड़ा हुआ तो चर्च उसे न तो दबाने में सफल रहा और न ही विद्रोहियों की माँग पूरी कर पाया। दूसरी तरफ विद्रोहियों (धर्मसुधारकों) ने भी अपने सिद्धान्तों एवं विचारों को छोड़ना उचित नहीं समझा और विरोधस्वरूप रोमन चर्च को छोड़कर अपने निजी चर्च की स्थापना करना उचित समझा। इस प्रकार कैथोलिक चर्च का विभाजन हो गया। चूँकि आन्दोलनकारियों ने कैथोलिक चर्च का प्रोटेस्ट (विरोध) किया था, अत: उनके द्वारा नवस्थापित धर्म 'प्रोटेस्टैन्ट धर्म' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस आन्दोलन का प्रारम्भिक ध्येय कैथोलिक चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार और आडम्बरपूर्ण कर्मकाण्डों को दूर करके धर्म में सुधार करना था। परन्तु समय के साथ-साथ इसका प्रारम्भिक ध्येय बदल गया और सुधार के स्थान पर एक नये धर्म की स्थापना हुई और यूरोपीय इतिहास में यह घटना 'धर्म सुधार आन्दोलन' के नाम से विख्यात हुई।

नोट्स धर्म के क्षेत्र में सुधारों की माँग को लेकर जो जन-आन्दोलन चला, उसे अंग्रेजी भाषा में 'रिफॉरमेशन' कहते हैं।

30.3 आन्दोलन के कारण (Causes of Reforms)

पुनर्जागरण, व्यापारिक क्रान्ति, वैज्ञानिक प्रगति, राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना आदि के परिणामस्वरूप यूरोप में जो नया वातावरण बना, वही इस आन्दोलन का मूल कारण था, अन्यथा चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार के विरुद्ध तो 11वीं सदी से ही आवाजें उठने लग गई थीं। 16वीं सदी के सुधारकों को इसलिए सफलता मिल गई थी कि यूरोप का वातावरण बदल चुका था और सर्वसाधारण भी उस माँग के समर्थन में आ जुटा था। अत: इस आन्दोलन के मुख्य कारणों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक सन्दर्भ में ढूँढ़ना चाहिए। संक्षेप में इस आन्दोलन के मुख्य कारण इस प्रकार थे–

(1) पुनर्जागरण का प्रभाव–पुनर्जागरण ने धर्म के बन्धनों से जकड़ी हुई मध्यकालीन मान्यताओं एवं अन्धविश्वासों को समाप्त करके लोगों को स्वतन्त्र चिन्तन, मानववादी विचारधारा और वैज्ञानिक मार्ग की ओर अग्रसर किया। अब धार्मिक आस्था का स्थान तर्कवाद ने ले लिया। परिणामस्वरूप लोगों को धर्म का सही रूप समझ में आने लगा और

नोट

अन्धविश्वासों तथा चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार से अरुचि उत्पन्न होने लगी। धर्म निरक्षेप शिक्षा ने व्यक्ति और इस संसार को समझने की आवश्यकता पर जोर दिया। इससे शताब्दियों से स्थापित विश्वासों की नींव हिलने लग गई। धर्म सुधारकों ने रोमन चर्च के सिद्धान्तों एवं अनुशासन के बारे में भी वैज्ञानिक और तार्किक दृष्टि से विचार-विमर्श करने की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने धार्मिक पद्धति से दी जाने वाली स्कूली शिक्षा पर भी घातक प्रहार किया। कागज, छापाखाना और धार्मिक ग्रन्थों के लोक भाषाओं में अनुवाद ने धर्म सुधार आन्दोलन की गति को उत्साहित एवं प्रेरित किया।

(2) चर्च की आन्तरिक कमजोरियाँ–रोमन चर्च की आंतरिक कमजोरियाँ सुधारवादी आन्दोलन की मुख्य आधारशिला थीं। सामान्य लोग पोप को ईसा का प्रतिनिधि मान कर उसमें आस्था रखते थे। परन्तु 1378 ई. में पोप ग्रेगरी की मृत्यु के बाद पोप पद को लेकर कैथोलिक जगत् में जो गम्भीर विवाद उत्पन्न हुआ उससे पोप पद की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा। ग्रेगरी की मृत्यु के बाद कार्डिनलों ने उरबन षष्ठ को पोप चुना, परन्तु उसके क्रूर तथा बुद्धिहीन कार्यों ने बहुत से कार्डिनलों को उसका विरोधी बना दिया। फ्रांसीसी कार्डिनल रोम से भाग कर नेपल्स चले गये और उन्होंने क्लीमेन्ट सप्तम को नया पोप घोषित कर दिया। इस प्रकार अब दो पोप हो गये। उरबन का केन्द्र रोम था और क्लीमेन्ट का फ्रांस में एविगन। उरबन को रोमन पदाधिकारियों, इंग्लैण्ड, फ्लैण्डर्स तथा स्केण्डेनेवियन देशों का समर्थन प्राप्त था तो क्लीमेन्ट को फ्रांस, स्पेन, नेपल्स, सिसली, स्कॉटलैण्ड आदि देशों का अर्थात् अब किसी भी पोप को सम्पूर्ण कैथोलिक चर्च पर एकाधिकार नहीं रहा। यह स्थिति 1417 ई. तक बनी रही। अन्त में मार्टिन पंचम को सर्वसम्मति से पोप चुना गया और मतभेद का समय समाप्त हुआ। परन्तु पोप पद के लिए हुए इस संघर्ष ने जनता के मन में पोप के प्रति श्रद्धा एवं निष्ठा को कम कर दिया। अब वे सोचने लगे कि पोप धरती पर ईश्वर का प्रतिनिधि कैसे हो सकता है, जबकि उनका निर्वाचन फ्रांसीसी राजा करा सकते हैं। इस घटना से चर्च की एकता को भी भारी धक्का लगा था।

चर्च की आंतरिक कमजोरी का एक कारण चर्च की उच्च सभा थी जिस पर इटली के कार्डिनलों का प्रभाव था। यूरोप के अन्य देशों में जब धर्माधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी, तो पोप स्थानीय लोगों को नियुक्त न करके इटली के कार्डिनलों के सम्बन्धियों को ही नियुक्त करता था। चर्च के संगठनात्मक पदों पर इटलीवासियों के वर्चस्व को अन्य देशों के लोग ईर्ष्या एवं द्वेष की भावना से देखते थे। एक अन्य कारण पोप तथा उसके अधिकारियों का ऐश्वर्य एवं विलासितापूर्ण भ्रष्ट जीवन था। यद्यपि धर्माधिकारियों तथा पादरियों के लिए अविवाहित रहना आवश्यक था, परन्तु इस काल के बहुत से पोप तथा अन्य धर्माधिकारी अवैध सन्तानों के पिता थे। धर्माधिकारियों की अवैध पुत्र-पुत्रियों की समस्या ने समूचे यूरोप में अशान्त वातावरण उत्पन्न कर दिया था।

टास्क धर्माधिकारियों के लिए विवाह की मनाही क्यों थी?

विरोध का एक कारण यह भी था कि बहुत से धर्माधिकारियों ने अपने धार्मिक कर्त्तव्यों का पालन करना ही बन्द कर दिया था। इंग्लैण्ड, जर्मनी, फ्रांस तथा अन्य देशों में नियुक्त धर्माधिकारियों में से अधिकांश इटालियन थे और वे इटली में ही रहना पसन्द करते थे और धार्मिक अनुष्ठानों को करने के लिए भी कभी अपने कार्यक्षेत्र में नहीं जाते थे, जबकि उन्हें अपना पद सम्बन्धी धन अपने कार्यक्षेत्र से मिलता था। इससे लोगों ने यह कहना शुरू कर दिया कि जब ये लोग अपने कर्तव्य का पालन ही नहीं करते तो इन लोगों के ऐश्वर्यपूर्ण जीवन पर हमारा धन क्यों व्यय किया जाए? कुछ प्रगतिशील पादरियों के हस्तक्षेप से फ्लोरेन्स आदि नगरों में राष्ट्रीय तथा स्थानीय देशभक्ति का प्रादुर्भाव हुआ और वहाँ के निवासी रोम के पोप के प्रभुत्व से मुक्त होने का प्रयास करने लगे। इसका प्रभाव अन्य देशों के लोगों पर भी पड़ा।

संगठन में सुधार की दृष्टि से पिछली शताब्दियों में कुछ धर्मनिष्ठ लोगों ने पोप तथा उच्चसभा का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास किया था परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। सर्वप्रथम इंग्लैण्ड के वाइक्लिफ ने पादरियों के ऐश्वर्यमय विलासी जीवन के विरुद्ध आवाज उठाते हुए सुधारों की माँग की थी। बोहेमिया के जॉन हस ने भी उनकी गतिविधियों की आलोचना की थी, परन्तु दोनों को दंडित किया गया। पन्द्रहवीं सदी में कौंसिलर आन्दोलन हुआ जिसने चर्च में

आन्तरिक सुधारों की योजना तैयार की थी, परन्तु पोप के व्यक्तिगत हस्तक्षेप के कारण यह योजना भी असफल रही। बाद में इरेस्मस जैसे विद्वानों ने भी चर्च के क्रिया-कलापों में सुधारों की आवश्यकता पर जोर दिया। इस प्रकार सोलहवीं सदी के प्रारम्भ में धर्म सुधार की अत्यधिक आवश्यकता अनुभव की जा रही थी और इसकी पृष्ठभूमि मजबूत बन चुकी थी।

(3) राजनीतिक कारण–धर्मसुधार आन्दोलन का एक प्रमुख कारण पोप का राजनीतिक प्रभाव तथा राजाओं द्वारा पोप के प्रभाव से स्वतन्त्र होने की आकांक्षा थी। रोमन कैथोलिक चर्च को मानने वाले सभी राजाओं का राज्याभिषेक पोप या उसके प्रतिनिधि के द्वारा अथवा पोप की स्वीकृति से किया जाता था। पोप को राज्य के घरेलू तथा वैदेशिक मामलों में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार था। पोप अपने आदेश के द्वारा किसी कैथोलिक शासक को धर्म से बहिष्कृत कर सकता था और उस शासक की जनता को उसके विरुद्ध करने का आदेश भी दे सकता था। इस प्रकार पोप के पास असीमित राजनीतिक अधिकार थे। दूसरी तरफ सोलहवीं सदी तक यूरोप में राष्ट्रीय राज्यों और निरंकुश राजतन्त्रों का उदय हो चुका था और राजाओं की शक्ति काफी सबल हो चुकी थी। राजाओं को पोप की राजनीतिक प्रभुता पसन्द न थी, क्योंकि इससे उनकी संप्रभुता को चोट पहुँचती थी। अत: वे पोप के प्रभाव से मुक्त होना चाहते थे। पोप यूरोप के समस्त कैथोलिक राज्यों के चर्चों का प्रधान था और इस हैसियत से इन राज्यों में चर्च के अधिकारियों को नियुक्त करना उसके अधिकार की बात थी। यह बात राजाओं को पसन्द न थी क्योंकि प्राय: पोप राजाओं को परेशान करने के लिए उनके विरोधियों को ऐसे पदों पर नियुक्त कर देते थे। इससे धर्माधिकारियों और राजाओं के मध्य कई प्रकार के विवाद उठ खड़े होते जिनको सुलझाने के लिए राजाओं को पोप की शरण लेनी पड़ती थी। इसलिए राजा लोग एक ऐसी ईसाइयत चाहते थे कि जो किसी विदेशी पोप के प्रति निष्ठावान न हो। पोप और राजाओं के मध्य संघर्ष का दूसरा कारण चर्च के न्यायालय थे।

क्या आप जानते हैं सामन्ती युग के प्रारम्भ में जब रोमन न्यायालय और नियम लुप्त होने लगे तब चर्च ने लोगों को न्याय प्रदान करने के लिए अपने न्यायालय स्थापित किये थे।

सोलहवीं सदी के प्रारम्भ तक इन न्यायालयों का अस्तित्व बना हुआ था और कई मामलों-विवाह, तलाक, उत्तराधिकार आदि का फैसला चर्च के न्यायालय ही करते थे। राजाओं को यह पसन्द न था। वे अपने राजकीय न्यायालयों का महत्त्व कायम करना चाहते थे, क्योंकि कई बार दोनों न्यायालयों के परस्पर विरोधी निर्णय से स्थिति विचित्र बन जाती थी। सामान्य जनता भी धार्मिक न्यायालयों के विरुद्ध थी, क्योंकि ये न्यायालय घूस तथा भ्रष्टाचार के केन्द्र बने हुए थे। इससे प्रशासन व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने में भी बाधा आती थी।

कुछ विद्वानों के अनुसार पोप तथा राजाओं के मध्य संघर्ष का मुख्य कारण चर्च की धनसम्पदा थी। चर्च के पास बहुत अधिक भूमि थी और इस भूमि से होने वाली उपज पर उसे किसी प्रकार का राजकीय कर नहीं देना पड़ता था। चर्च लोगों से धार्मिक कर भी वसूल करता था, जिससे काफी आय होती थी। धार्मिक न्यायालयों में भी चर्च की आय होती थी। श्रद्धालु ईसाइयों से भी चर्च को काफी धन मिलता रहता था। कुल मिलाकर चर्च काफी समृद्ध था और इसके पदाधिकारी राजाओं के समान ही ऐश्वर्य एवं विलासिता का जीवन बिताते थे। दूसरी तरफ राजाओं को शासन कार्य तथा सैनिक शक्ति को सबल बनाने के लिए धन की सख्त आवश्यकता होती थी। अत: वे लोग चर्च की भूमि तथा आय पर कर लगाना चाहते थे। अत: राजाओं ने धर्मसुधारकों को सहयोग एवं संरक्षण प्रदान किया ताकि पोप के वर्चस्व के समाप्त होते ही वे अपने स्वार्थों को पूरा कर सकें। **डी. जे. हिल** ने इस सन्दर्भ में लिखा है कि "यदि प्रोटेस्टेन्ट आन्दोलन केवल धार्मिक आन्दोलन ही होता तो यह अपने सृजनकर्ताओं के जीवनकाल तक भी न पनप पाता। जिस बात ने इसे सफल बनाया, वह थी इसके राजनीतिक उद्देश्य तथा प्रभाव और विशेषकर कूटनीति।" वस्तुत: लूथर से पहले के सुधारकों को राज्याश्रय उपलब्ध न होने की वजह से असफल होना पड़ा और राजाओं के संरक्षण के कारण लूथर पोप के दण्ड से बच गया था।

नोट

(4) आर्थिक कारण—मध्यकाल में यूरोपीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित थी। कृषि करने वाले किसान सामन्ती व्यवस्था के शिकंजे में जकड़े हुए थे और उन्हें किसी प्रकार की स्वतन्त्रता न थी। इस प्रकार उद्योग भी गिल्ड (श्रेणी) व्यवस्था से बँधे हुए थे। अर्थात् औद्योगिक क्षेत्र में भी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अभाव था। पुनर्जागरणकाल में राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना से सामन्ती व्यवस्था के पतन से किसानों की स्थिति में परिवर्तन आ गया। औद्योगिक क्षेत्र में कारीगरों तथा पूँजीपतियों को स्वतन्त्रता मिली। इससे व्यापार-वाणिज्य तथा उद्योग-धन्धों का विकास हुआ और इस काम में लगे एक सम्पन्न मध्यम वर्ग का उदय हुआ। जीवन के प्रति मध्यवर्गीय दृष्टिकोण चर्च की शिक्षाओं से मेल नहीं खाता था। जहाँ चर्च आध्यात्मिक गुणों और पारलौकिक जीवन की तैयारी पर जोर देता था, वहीं मध्यम वर्ग इसी संसार में आराम का जीवन बिताना चाहता था। इसके अलावा, व्यापारियों को चर्च से दूसरे प्रकार की शिकायतें भी थीं। वे लोग काफी संकटों को झेल कर दूर-दूर के देशों की यात्रा करते थे और व्यापार-वाणिज्य के द्वारा धन कमाकर जब स्वदेश लौटते थे तो उनके लाभ का बहुत बड़ा हिस्सा चर्च की भेंट हो जाया करता था। शासक लोग चर्च के शोषण के विरुद्ध व्यापारियों की सहायता करने में असमर्थ थे। क्योंकि उसके पास पर्याप्त सैनिक शक्ति का अभाव था। अत: व्यापारी वर्ग ने राजाओं को आर्थिक सहयोग देकर उन्हें सबल बनाया। व्यापारियों को इस बात की भी शिकायत थी कि चर्च सूद पर कर्ज के विरुद्ध था। परन्तु व्यापार-वाणिज्य के विकास के साथ-साथ सूद पर कर्ज लेना तथा देना आवश्यक हो गया था। इन दोनों कारणों से व्यापारी वर्ग ने धर्म-सुधारों की माँग का समर्थन कर सुधार आन्दोलन की गति को बल प्रदान किया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि धर्म सुधार आन्दोलन के विकास में तत्कालीन अर्थव्यवस्था का भी महत्त्वपूर्ण हाथ रहा था।

(5) अन्य कारण—धर्मसुधार आन्दोलन के लिए अन्य बहुत से कारण भी उत्तरदायी थे। एक कारण वैज्ञानिक प्रगति था। पुनर्जागरण काल में जगत् और मनुष्य के सम्बन्ध में यूनानी वैज्ञानिक विचारों का प्रसार हुआ जिसने चर्च की मध्यकालीन मान्यताओं के प्रभाव को काफी कम कर दिया। उदाहरणार्थ, चर्च ने टालमी के इस विचार को प्रामाणिक मान लिया था कि पृथ्वी सौरमण्डल का केन्द्र है, परन्तु वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है। इसी प्रकार अन्य वैज्ञानिक खोजों ने चर्च की बहुत सी मान्यताओं को असत्य सिद्ध कर दिखाया। शिक्षा के प्रसार ने भी धर्म के प्रभाव को कम करने में सहयोग दिया।

रोम के धार्मिक न्यायालयों में अपीलों की सुनवाई एवं उनके निर्णयों का खुलेआम क्रय-विक्रय होता था। यह बात भी आन्दोलन का एक कारण बन गई, क्योंकि इस प्रकार की व्यवस्था में निर्धन लोगों को न्याय नहीं मिल पाता था और सम्पन्न लोग धन के बल पर अपने अनुकूल न्याय पाने में सफल हो जाते थे। एक अन्य कारण चर्च के बड़े-बड़े पदों का बेचा जाना था। अर्थात् स्वयं पोप लोग भी ऐसे ही लोगों को उच्च पदों पर नियुक्त करते थे जो उन्हें अधिक से अधिक धन देने को तैयार होते थे। परिणामस्वरूप समृद्ध परिवारों के सदस्य चर्च के बड़े-बड़े पदों पर आसीन हो जाते थे और अपने पद के प्रभाव से अपने परिवार को लाभ पहुँचाने का काम किया करते थे। इससे बहुत से लोगों में भारी असन्तोष फैला हुआ था। इसी प्रकार एक अन्य कारण पादरी लोगों द्वारा अपने यजमानों को मनमाना धर्म सिखाना और उनसे अपनी इच्छानुसार द्रव्य वसूल करना था।

(6) तत्कालीन कारण—धर्मसुधार आन्दोलन का तत्कालीन कारण मार्टिन लूथर द्वारा 'इंडलजेन्स' (पाप विमोचन पत्र) का विरोध करना था। इंडलजेन्स एक ऐसा क्षमापत्र था जिसको धन के द्वारा खरीदा जा सकता था और इस पत्र को खरीदने वालों के लिए पोप का यह आश्वासन होता था कि उसके पापों को क्षमा कर दिया जायेगा।

30.4 प्रमुख समाज सुधारक (Prime Social Reformers)

नोट्स रोमन कैथोलिक चर्च के बौद्धिक विरोधियों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है—रहस्यवादी या भक्तिवादी, मानववादी और सुधारवादी।

रहस्यवादी चिन्तक धर्म के प्राचीन आदर्शों एवं सिद्धान्तों के समर्थक थे। उनके अनुसार धार्मिक आस्था एवं भक्ति के द्वारा मुक्ति सम्भव थी। वे लोग आस्थामय भक्ति को ज्ञान से अधिक महत्त्व देते थे। ऐसे लोगों में जर्मनी के पादरी

एरवार्ट तथा उनके शिष्य जॉन टाउलर के नाम उल्लेखनीय हैं। मानववादी विचारकों में दांते, पेट्राक तथा लौरेन्जोवालो के नाम अधिक प्रसिद्ध हैं। मानववादी विचारकों ने मानव जीवन को महत्त्व दिया और पारलौकिक जीवन के महत्त्व को गौण बना दिया। इन लोगों ने ईसाई धर्म को अधिक नैतिक, मानववादी और तर्कशील बनाने पर जोर दिया। सुधारवादी विचारकों ने चर्च के मौजूदा संगठन तथा पादरी जीवन में आमूल परिवर्तन की माँग की। इनमें से कुछ का विस्तृत परिचय नीचे दिया जा रहा है।

(1) जॉन वाइक्लिफ (1320-1384)—अंग्रेज विद्वान् जॉन वाइक्लिफ आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय का एक प्राध्यापक था। उसने कैथोलिक धर्म के बहुत से उपदेश तथा चर्च के क्रियाकलापों की आलोचना की। उसने घोषित किया कि "पोप पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि नहीं है तथा भ्रष्ट एवं विवेकहीन पादरियों द्वारा दिये जाने वाले धार्मिक उपदेश निरर्थक हैं।" उसका कहना था कि ऐश्वर्य एवं विलासिता का जीवन बिताने वाले पादरी दूसरों के पापों के क्षमा में कैसे सहायक हो सकते हैं? उसका कहना था कि प्रत्येक ईसाई को बाइबिल के सिद्धान्तों के अनुसार कार्य करना चाहिए और उसके लिए चर्च या पादरियों के मार्ग-निर्देशन की आवश्यकता नहीं है। उसने यह भी माँग की कि चर्च की विपुल धन सम्पत्ति पर राज्य को अधिकार कर लेना चाहिए। कुछ विद्वानों का मानना है कि उसने अपने साथियों के साथ मिलकर जन सामान्य के लिए बाइबिल का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया था, परन्तु अन्य विद्वान् इस बात को प्रामाणिक नहीं मानते थे। परन्तु इतना निश्चित है कि उसने अपने अनुयायियों को अंग्रेजी भाषा में अनुवादित बाइबिल का अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया था। उसने तत्वान्तरण के सिद्धान्त (पादरी द्वारा दैवी शक्ति से रोटी और शराब को ईसा मसीह के शरीर और रक्त में परिवर्तित करना) की कटु आलोचना की। वस्तुतः वाइक्लिफ के विचार क्रान्तिकारी थे जिन्हें रूढ़िवादी धर्माधिकारी सहन नहीं कर पाये। उन्होंने उस पर 'धर्मद्रोह' का आरोप लगाया, परन्तु सर्वसाधारण में वाइक्लिफ की लोकप्रियता से घबरा कर वे उसके विरुद्ध कोई सख्त कदम उठा नहीं पाये। वाइक्लिफ ने भी सार्वजनिक रूप से अपने विचारों का प्रचार न करने का आश्वासन दिया। उसने विश्वविद्यालय की सेवा भी त्याग दी और सम्मान सहित मृत्यु को प्राप्त हुआ। परन्तु बाद में चर्च के अधिकारियों ने उसकी लाश को कब्रिस्तान से निकलवा कर गन्दी जगह पर फिंकवा दिया। इंग्लैण्ड में उसके अनुयायी 'लोहार्ड' कहलाये। उन्होंने वाइक्लिफ के विचारों का प्रचार जारी रखा। चर्च ने उन पर घोर अत्याचार किये तथा कइयों को जीवित जला दिया गया।

टास्क तत्वान्तरण के सिद्धान्त को स्पष्ट करें।

(2) जॉन हस (1369-1515)—वाइक्लिफ के विचार कुछ विद्यार्थियों के माध्यम से जर्मनी और आस्ट्रिया में जा पहुँचे, जहाँ उनका प्रतिपादन जॉन हस ने किया। जॉन हस बोहेमिया का निवासी था और प्राग विश्वविद्यालय में प्राध्यापक था। उसके विचारों पर बाइबिल का गहरा प्रभाव था। वह वाइक्लिफ के इस विचार से सहमत था कि एक सामान्य ईसाई बाइबिल के अध्ययन से मुक्ति का मार्ग ढूँढ सकता है और इसके लिए चर्च अथवा धर्माधिकारियों के सहयोग की कोई आवश्यकता नहीं है। बोहेमिया के लोगों पर जॉन हस के विचारों का जबरदस्त प्रभाव पड़ा। 1414 ई. में जॉन हस को चर्च की उच्च सभा के सम्मुख अपने विचारों को पुष्ट करने के लिए बुलाया गया। यद्यपि सम्राट् की ओर से हस को शारीरिक सुरक्षा का वचन दिया गया था, फिर भी उसे गिरफ्तार कर लिया गया और चर्च की निन्दा तथा नास्तिकता का प्रचार करने के आरोप में उसे जिन्दा जला दिया गया। चर्च की इस घृणित एवं बर्बर कार्यवाही ने सम्पूर्ण बोहेमिया प्रान्त में सशस्त्र विद्रोह को जन्म दे दिया। इस विद्रोह के पीछे राजनैतिक कारण भी था। बोहेमिया के चेक लोग जर्मन प्रभाव से स्वतन्त्र होना चाहते थे। जो भी हो, दोनों पक्षों में कई वर्षों तक भयंकर संघर्ष चलता रहा। पोप, पवित्र रोमन सम्राट् तथा जर्मनों ने मिलकर चेकों के विद्रोह को दबाने का अथक प्रयास किया परन्तु वे असफल रहे। अन्त में 1436 में पोप ने जॉन हस के अनुयायियों के साथ समझौता कर लिया। उसने चर्च के ऊपर लगाये गये बहुत से आरोपों को स्वीकार कर लिया तथा उन्हें दूर करने का वचन दिया।

(3) सेवोनारोला (1452-1498)—सेवोनारोला फ्लोरेन्स नगर का एक विद्वान् पादरी तथा राजनीतिज्ञ था। उसने लोगों में नये विचारों का प्रचार किया और अपने जोशीले भाषणों से वह शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया। उसने मौजूदा

नोट

नैतिकता तथा राजनीति-दोनों की कटु आलोचना की। लोरेंजो की मृत्यु के बाद फ्लोरेन्स नगर पर उसका वास्तविक शासन कायम हो गया। अब उसने चर्च के भ्रष्ट नियमों एवं क्रिया-कलापों में सुधार करने पर जोर दिया। सेवोनारोला ने पोप के आदेश को ठुकरा दिया। इस पर उसे चर्च की उच्च सभा के सम्मुख स्पष्टीकरण के लिए बुलाया गया और चर्च की निन्दा करने के आरोप में उसे जीवित जला दिया गया।

(4) इरेस्मस (1466-1536)—इरेस्मस हालैण्ड का निवासी था। कुछ वर्ष वह इंग्लैण्ड में भी रहा और ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में यूनानी भाषा तथा साहित्य पढ़ाने का काम किया। वह अपने युग का एक प्रभावशाली लेखक, विचारक, विद्वान् एवं सुधारक था। यूरोप के बड़े-बड़े संभ्रान्त परिवारों में उसे आदरपूर्वक आमन्त्रित किया जाता था। इरेस्मस को भी चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा बुराइयों से भारी असन्तोष था। उसने अपनी पुस्तक 'मूर्खत्व की प्रशंसा' में पादरियों एवं धर्माधिकारियों की अज्ञानता तथा उन मूर्ख लोगों, जिन्हें विश्वास था कि धर्म का अर्थ केवल तीर्थ-यात्रा, शैव पूजा तथा द्रव्यादि लेकर पोप द्वारा अपराध क्षमापन ही है, की खूब आलोचना की। उसकी आलोचना में व्यंग्य तथा उपहास की प्रधानता थी इसलिए शिक्षित लोग रुचि के साथ उसकी कृतियों को पढ़ते थे। इरेस्मस ने प्राय: उन सभी बुराइयों की निन्दा की जिनकी बाद में लूथर ने खूब आलोचना की थी। अन्तर इतना ही था कि सर्वसाधारण इरेस्मस के वास्तविक विचारों को नहीं समझ सका। इरेस्मस ने ईसाई धर्म के मूल सिद्धान्तों के प्रचार हेतु न्यूटेस्टामेन्ट का शुद्ध संस्करण निकाल कर धर्म की उत्पत्ति की ठीक व्याख्या की। इससे धर्मशास्त्रियों की कई भूलें उजागर हो उठीं।

(5) मार्टिन लूथर (1483-1546)—चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा बुराइयों के विरुद्ध सबसे अधिक असन्तोष जर्मनी में फैला हुआ था और जर्मनी में ही चर्च के विरुद्ध एक व्यापक तथा सशक्त आन्दोलन भी चला। इस आन्दोलन का नेता था मार्टिन लूथर। उसका जन्म एक निर्धन परिवार में हुआ था परन्तु वह बचपन से ही मेधावी था। 1505 ई. के उसने एरफर्ट विश्वविद्यालय से एम. ए. किया। इसके बाद उसने कानून का अध्ययन शुरू किया परन्तु न जाने किस घटना के कारण उसने अध्ययन छोड़ कर वैराग्य धारण कर लिया और ईसाई मठ में सम्मिलित हो गया। एरफर्ट में मठ में रहते हुए वह मुक्ति का उपाय सोचने लगा। वहाँ के मठाधिपति ने उसे अपने पुण्य कार्यों पर भरोसा न रख कर ईश्वर की कृपा तथा क्षमा पर भरोसा रखने के लिए कहा। यहाँ रहते हुए लूथर ने महात्मा पाल और आगस्टाइन के लेखों का गम्भीर मनन किया, जिससे उसे ज्ञात हुआ कि मनुष्य किसी भी पुण्य को करने में समर्थ नहीं है, उसकी मुक्ति केवल ईश्वर में श्रद्धा और भक्ति करने से ही हो सकती है। फिर भी इससे लूथर को विशेष सन्तोष नहीं हुआ। 1508 में वह विटनबर्ग विश्वविद्यालय में प्राध्यापक बन गया और अपनी मृत्युपर्यन्त तक विश्वविद्यालय से जुड़ा रहा। यहाँ पर वह पाल के पत्रों तथा भक्ति से मुक्ति पाने के सिद्धान्त की शिक्षा देने लगा। विश्वविद्यालय में वह अपनी संगीत की निपुणता तथा वाक्पटुता के लिए प्रसिद्ध था। 1511 ई. में बड़े धर्माधिकारी उचित-अनुचित उपायों से धन अर्जित करने में लगे हुए थे और एक-दूसरे के प्रभाव को कम करने के लिए गुटबन्दी तथा जोड़-तोड़ में लगे हुए थे। वे लोग अपने कर्त्तव्यों की उपेक्षा करके सांसारिक जीवन बिता रहे थे। धर्माधिकारियों के भ्रष्ट आचरण से लूथर को घोर निराशा हुई। उसका यह विश्वास दृढ़ हो गया कि धर्म के प्रमुख शत्रु धर्म की प्रधान संस्था और उसके संचालक ही हैं। 1517 ई. में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी जिसने लूथर को एक प्रकट विद्रोही बना दिया। यह घटना थी 'पाप-विमोचन पत्रों की बिक्री।'

पोप लियो दशम इन दिनों रोम में सन्त पीटर के गिरजाघर को पुन: बनवाने के लिए धन एकत्र कर रहा था और इसके लिए इंडलजेन्स (पाप-विमोचन पत्र) बेचने शुरू किये। पाप-विमोचन पत्र देना कोई नई बात न थी।

नोट्स कैथोलिक परम्परा के अनुसार किसी व्यक्ति द्वारा किये गये पाप से उसे क्षमा मिल सकती है यदि वह व्यक्ति अपने पाप के लिये प्रायश्चित करे। इससे पापी व्यक्ति के लिए भी स्वर्ग के द्वार खुल जाते हैं।

परन्तु मृत्यु के बाद ऐसे पापी लोगों की आत्मा को कुछ समय के लिए अपने पाप की सजा भुगतने के लिए नरक में रहना पड़ता है। इंडलजेन्स के माध्यम से नरक की अवधि में अथवा सजा की कठोरता में थोड़ी-बहुत कमी की जा सकती है अथवा पूर्णतया माफ हो सकती है। इंडलजेन्स तभी सार्थक हो सकता था जबकि उसे प्राप्त करने वाला व्यक्ति सच्चे मन से अपने पाप का प्रायश्चित करे। प्रायश्चित करने के अनेक साधनों में से एक था—चर्च को भेंट अथवा गरीबों को दान-पुण्य करना। इसके लिए पोप सम्बन्धित व्यक्ति को इंडलजेन्स जारी करता था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. प्रत्येक राज्य चर्च का ………… था।
2. ईसाई जगत के साम्राज्य का सर्वोच्च अध्यक्ष रोम का ………… होता था।
3. चर्च प्रशासन में पोप की सहायता के लिए एक ………… सभा थी।
4. बड़े प्रान्तों के सर्वोच्च धर्माधिकारी को ………… कहा जाता था।
5. आन्दोलनकारियों ने कैथोलिक चर्च का विरोध किया, उनके द्वारा नवस्थापित धर्म ………… धर्म के नाम से मशहूर हुआ।
6. विरोध का कारण था—धर्माधिकारियों द्वारा अपने ………… का पालन करना।
7. लोगों को न्याय देने के लिए चर्च ने अपने ………… भी स्थापित कर लिए थे।
8. राजा तथा पोप के मध्य संघर्ष का मुख्य कारण था चर्च की …………।

30.5 सारांश (Summary)

- ईसाई जगत् के धार्मिक साम्राज्य के संगठनातमक ढाँचे का अध्यक्ष रोम का बिशप होता था जिसे 'पोप' के नाम से पुकारा जाता था। उसका निर्वाचन कुछ खास पादरियों द्वारा किया जाता था, जिन्हें 'कार्डिनल' कहा जाता था। पोप कैथोलिक चर्च का सर्वोच्च नियत-निर्माता, सर्वोच्च न्यायाधीश और चर्च की सम्पूर्ण गतिविधियों तथा वित्त-व्यवस्था का सर्वोच्च प्रशासक होता था।
- रोमन कैथोलिक चर्च की संगठनात्मक व्यवस्था बहुत विशाल एवं व्यापक थी। चर्च के प्रशासन में पोप की सहायता के लिए एक 'उच्चतम सभा' थी जिसमें 12 सदस्य होते थे और जिन्हें 'कार्डिनल' कहा जाता था। प्रारम्भ में एक कार्डिनल एक राज्य का सर्वोच्च धर्माधिकारी होता था। इनकी नियुक्ति पोप के द्वारा की जाती थी और इन लोगों को रोम में ही रहना पड़ता था।
- पुनर्जागरण ने धर्म के बन्धनों से जकड़ी हुई मध्यकालीन मान्यताओं एवं अन्धविश्वासों को समाप्त करके लोगों को स्वतन्त्र चिन्तन, मानववादी विचारधारा और वैज्ञानिक मार्ग की ओर अग्रसर किया। अब धार्मिक आस्था का स्थान तर्कवाद ने ले लिया। परिणामस्वरूप लोगों को धर्म का सही रूप समझ में आने लगा और अन्धविश्वासों तथा चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार से अरुचि उत्पन्न होने लगी।
- रोमन चर्च की आंतरिक कमजोरियाँ सुधारवादी आन्दोलन की मुख्य आधारशिला थीं। सामान्य लोग पोप को ईसा का प्रतिनिधि मान कर उसमें आस्था रखते थे। परन्तु 1378 ई. में पोप ग्रेगरी की मृत्यु के बाद पोप पद को लेकर कैथोलिक जगत् में जो गम्भीर विवाद उत्पन्न हुआ उससे पोप पद की प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा।
- चर्च की आंतरिक कमजोरी का एक कारण चर्च की उच्च सभा थी जिस पर इटली के कार्डिनलों का प्रभाव था। यूरोप के अन्य देशों में जब धर्माधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी, तो पोप स्थानीय लोगों को नियुक्त न करके इटली के कार्डिनलों के सम्बन्धियों को ही नियुक्त करता था। चर्च के संगठनात्मक पदों पर इटलीवासियों के वर्चस्व को अन्य देशों के लोग ईर्ष्या एवं द्वेष की भावना से देखते थे। एक अन्य कारण पोप तथा उसके अधिकारियों का ऐश्वर्य एवं विलासितापूर्ण भ्रष्ट जीवन था।

नोट

- धर्मसुधार आन्दोलन का एक प्रमुख कारण पोप का राजनीतिक प्रभाव तथा राजाओं द्वारा पोप के प्रभाव से स्वतन्त्र होने की आकांक्षा थी। रोमन कैथोलिक चर्च को मानने वाले सभी राजाओं का राज्याभिषेक पोप या उसके प्रतिनिधि के द्वारा अथवा पोप की स्वीकृति से किया जाता था। पोप को राज्य के घरेलू तथा वैदेशिक मामलों में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार था। पोप अपने आदेश के द्वारा किसी कैथोलिक शासक को धर्म से बहिष्कृत कर सकता था और उस शासक की जनता को उसके विरुद्ध करने का आदेश भी दे सकता था। इस प्रकार, पोप के पास असीमित राजनीतिक अधिकार थे।
- पोप तथा राजाओं के मध्य संघर्ष का मुख्य कारण चर्च की धनसम्पदा थी। चर्च के पास बहुत अधिक भूमि थी और इस भूमि से होने वाली उपज पर उसे किसी प्रकार का राजकीय कर नहीं देना पड़ता था। चर्च लोगों से धार्मिक कर भी वसूल करता था, जिससे काफी आय होती थी। धार्मिक न्यायालयों में भी चर्च की आय होती थी।
- मध्यकाल में यूरोपीय अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित थी। कृषि करने वाले किसान सामन्ती व्यवस्था के शिकंजे में जकड़े हुए थे और उन्हें किसी प्रकार की स्वतन्त्रता न थी। इस प्रकार उद्योग भी गिल्ड (श्रेणी) व्यवस्था से बँधे हुए थे। अर्थात् औद्योगिक क्षेत्र में भी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का अभाव था। पुनर्जागरणकाल में राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना से सामन्ती व्यवस्था के पतन से किसानों की स्थिति में परिवर्तन आ गया। औद्योगिक क्षेत्र में कारीगरों तथा पूँजीपतियों को स्वतन्त्रता मिली। इससे व्यापार-वाणिज्य तथा उद्योग-धन्धों का विकास हुआ और इस काम में लगे एक सम्पन्न मध्यम वर्ग का उदय हुआ।
- रोम के धार्मिक न्यायालयों में अपीलों की सुनवाई एवं उनके निर्णयों का खुलेआम क्रय-विक्रय होता था। यह बात भी आन्दोलन का एक कारण बन गई, क्योंकि इस प्रकार की व्यवस्था में निर्धन लोगों को न्याय नहीं मिल पाता था और सम्पन्न लोग धन के बल पर अपने अनुकूल न्याय पाने में सफल हो जाते थे। एक अन्य कारण चर्च के बड़े-बड़े पदों का बेचा जाना था।
- सेवोनारोला फ्लोरेन्स नगर का एक विद्वान् पादरी तथा राजनीतिज्ञ था। उसने लोगों में नये विचारों का प्रचार किया और अपने जोशीले भाषणों से वह शीघ्र ही लोकप्रिय हो गया। उसने मौजूदा नैतिकता तथा राजनीति-दोनों की कटु आलोचना की।
- चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार तथा बुराइयों के विरुद्ध सबसे अधिक असन्तोष जर्मनी में फैला हुआ था और जर्मनी में ही चर्च के विरुद्ध एक व्यापक तथा सशक्त आन्दोलन भी चला। इस आन्दोलन का नेता था मार्टिन लूथर।
- धर्माधिकारियों के भ्रष्ट आचरण से लूथर को घोर निराशा हुई। उसका यह विश्वास दृढ़ हो गया कि धर्म के प्रमुख शत्रु धर्म की प्रधान संस्था और उसके संचालक ही हैं। 1517 ई. में एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी जिसने लूथर को एक प्रकट विद्रोही बना दिया। यह घटना थी 'पाप-विमोचन पत्रों की बिक्री।'

30.6 शब्दकोश (Keywords)

- **एंडलजेन्स**—पाप से तथाकथित मुक्ति के लिए पोप द्वारा जारी एक पत्र, पाप-मुक्ति पत्र।
- **डिकन**—सहायक पादरी।
- **कार्डिनल**—12 सदस्यों की उच्चतम सभा, जो पोप की सहायता करती थी।

30.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. कैथोलिक धर्म का परिचय दीजिए। इसके संगठनात्मक ढांचे का वर्णन कीजिए।
2. धर्म-सुधार आंदोलन का क्या अर्थ है?
3. पुनर्जागरण का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
4. चर्च की प्रमुख आन्तरिक कमजोरियों का उल्लेख कीजिए।

5. उन राजनीतिक कारणों का विवेचन कीजिए, जिनके चलते पुनर्जागरण को बल मिला।
6. प्रमुख समाज-सुधारकों का परिचय दीजिए। पुनर्जागरण में इनके योगदान का मूल्यांकन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. समर्थन	2. बिशप	3. उच्चतम	4. पेट्रियाक
5. प्रोटेस्टेन्ट	6 कर्तव्य	7. न्यायालय	8. धन-सम्पदा।

30.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–31: आधुनिक विश्व की ओर (Transition to Modern World)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
31.1 आधुनिक विश्व की ओर (Transition to Modern World)
31.2 सारांश (Summary)
31.3 शब्दकोश (Keywords)
31.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
31.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- आधुनिक विश्व की अवधारणा से अवगत होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

पुनर्जागरण एक महान शक्तिशाली आन्दोलन था। इस आन्दोलन ने ज्ञान-विज्ञान के नए मार्ग खोल दिये। इसने मानव के विचारों की दिशा बदल दी। पुनर्जागरण एक मानसिक एवं बौद्धिक आन्दोलन था, जिसने मानव को उन पुरानी धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक मान्यताओं और बन्धनों से स्वतन्त्र किया जो उसे सदियों से जकड़े हुये थे और जिन्होंने उनके मन को भय के बोझ से दबा रखा था। इस आन्दोलन से प्रेरित होकर मनुष्य मानसिक दासता और कायता से स्वतन्त्र होने के लिये आगे बढ़ा।

31.1 आधुनिक विश्व की ओर (Transition to Modern World)

पुनर्जागरण और धार्मिक सुधारों ने विश्व को एक नई दिशा दी। इन आंदोलनों का विश्व पर व्यापक प्रभाव पड़ा–

(1) **वैज्ञानिक दृष्टिकोण**–पुनर्जागरण मानव सभ्यता के विकास में एक अनुपम घटना थी। इसने उस दृष्टिकोण की नींव डाली, जिसे वैज्ञानिक या आधुनिक दृष्टिकोण कहते हैं। मानसिक और बौद्धिक स्वतन्त्रता पाने के लिये मानव का यह प्रयास था। अब मनुष्य ने धर्मान्धता, रूढ़ि, अन्धविश्वास और पाखण्ड के बन्धन तोड़ फेंके और वैज्ञानिक दृष्टि से हर बात व तथ्य का मूल्यांकन करने लगा। अब तर्क तथा प्रमाण जीवन में मान्यता के मानदण्ड हो गये।

(2) **मान्यताओं में परिवर्तन**—मध्य युग का जीवन विशेष रूप से दो मान्यताओं से घिरा हुआ था। सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में सामन्त प्रथा का प्रभुत्व था। मानसिक एवं धार्मिक क्षेत्रों में 'स्वर्ग' व 'नर्क', 'प्रलय', 'गिरजा', 'पोप', 'पाप' आदि की पुरानी भावनाओं से आगे लोग सोचते ही नहीं थे। हर समय उनके मन पर इस बात का बोझ रहता था कि किसी प्रकार वे अपना परलोक सुधारें। पुनर्जागरण ने मानव के मन से इन बातों का बोझ हटा दिया और उसे इसी जीवन और इसी लोक में सुख, सौंदर्य और वास्तविकता ढूँढ़ने का उत्साह दिया। पुरानी विचारधाराओं, मान्यताओं और विश्वासों को नष्ट करना आरम्भ हुआ और उनके स्थान पर नए विचार, नई भावनाएं, नई मान्यतायें आने लगीं। अन्धविश्वास और पुराने पचड़ों को छोड़कर प्रकृति और जीवन को सीधी वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाने लगा।

(3) **मानव का कायाकल्प**—पुनर्जागरण ने मध्यकालीन जड़ता तथा मानव समाज में व्याप्त अन्धविश्वास को दूर कर दिया। विद्याध्ययन, स्वतन्त्र विचार एवं नवीन खोज के द्वार भी इसी के प्रताप से खुले। पुनर्जागरण ने भूतकाल के प्रति रुचि के साथ वर्तमान काल को बौद्धिक चेतना दी। पुनर्जागरण ने नवीन साहित्य, कला, नवीन देशों की खोज, विज्ञान की उन्नति और नवीन विचारधाराओं ने यूरोप की सभ्यता एवं संस्कृति पर बड़ा गहरा प्रभाव डाला। जहाँ पहले शिक्षा तथा पाठशाला को लोग जानते ही नहीं थे वहाँ बड़े-बड़े विश्वविद्यालय स्थापित हो गये जिनमें हजारों की संख्या में दूर-दूर के देशों से विद्या, ज्ञान एवं कला के प्रेमी आते थे।

क्या आप जानते हैं नई दुनिया की खोज ने यूरोप के मानव समाज का कायाकल्प कर दिया।

(4) **राजनैतिक प्रभाव**—इस समय से पहले अधिकतर सामन्त एवं राजाओं का राज्य था। पर पुनर्जागरण के कारण सामन्तवादी शक्तियों का लगभग अन्त हो गया और शक्तिशाली राष्ट्रीय राज्यों की स्थापना हुई। इंग्लैंड, फ्रांस और स्पेन में एकीकरण की भावना इतनी बढ़ी की वहाँ बड़े-बड़े केन्द्रीय राष्ट्रीय राज्य स्थापित हो गये केवल जर्मनी का 'पवित्र रोमन साम्राज्य' नाम का संगठन जर्मनी को एक राष्ट्र न बना सका और इटली में भी पोप और सम्राट आदि के कारण एकता न हो सकी।

(5) **विकसित जीवन का आरम्भ**—साधारण व्यक्तियों के जीवन में भी बड़ा परिवर्तन हुआ। उनका जीवन जो अब तक रूढ़िवाद, धार्मिक-बन्धनों, अन्धविश्वास एवं निर्धनता में जकड़ा हुआ था, अब चिन्ता रहित और सुखी होने लगा और लोग चिन्ता रहित एवं सुखी जीवन व्यतीत करने लगे। जीवन के सभी क्षेत्रों में ऐसा परिवर्तन दिखाई देने लगा मानो एक नये युग का आरम्भ हो रहा है।

नोट्स नवीन देशों की खोज, विदेशी वाणिज्य एवं व्यापार की उन्नति, उद्योग-धन्धों की वृद्धि से धन की अधिकता हो गई

(6) **मध्यम वर्ग का उदय**—पुनर्जागरण से पहले समाज में केवल दो वर्ग थे। उच्च वर्ग में जागीरदार एवं बड़े पादरी थे तथा छोटे वर्ग में किसान, मजदूर उद्योग-धन्धे करने वाले इत्यादि थे। परन्तु पुनर्जागरण में व्यापारियों के एक स्वतन्त्र मध्य वर्ग की उत्पत्ति और उन्नति हुई, जो धीरे-धीरे उन्नति करता हुआ पूँजीपतियों का वर्ग बन गया और आगे चलकर इसकी शक्ति इतनी बढ़ गई कि इसने सामन्तों से ही नहीं बल्कि राजाओं से भी टक्कर लेनी आरम्भ कर दी और सभी देशों में प्रजातन्त्र राज्यों की स्थापना का मार्ग खोल दिया। इस मध्य वर्ग की सहायता से राष्ट्रीय राज्यों का विकास हुआ और इन राष्ट्रीय राज्यों में राज्य और प्रत्येक व्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता का विचार घर करने लगा। इसी वर्ग ने व्यापार-व्यवसाय को बढ़ावा दिया और इसी वर्ग के बल पर औद्योगिक क्रान्ति का प्रसार हुआ।

(7) **मानवता**—इस पुनर्जागरण के कारण पोप और सम्राट की शक्ति एवं मान-मर्यादा भी लगभग नष्ट हो गई और उनके मनगढ़न्त कानून समाप्त हो गये। यूरोप में निरंकुश राजतन्त्र का आरम्भ हुआ। इसके अतिरिक्त

नोट

पुनर्जागरण ने मध्य युग के कठोर कानूनों और शारीरिक अत्याचारों से भरे हुए दण्डों पर मानव को फिर से विचार करने को बाध्य किया। सुन्दरता और ज्ञान-विज्ञान की खोज करने वाले लोग मानव-समाज में ऊँच-नीच के भेद को बुरी दृष्टि से देखने लगे, क्योंकि विज्ञान के अनुसार ये भेद झूठे हैं। मानव-मात्र को समान समझना तथा उसके ऊपर कठोर अत्याचार को समाप्त करना मानववाद का ही परिणाम था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)–

1. पुनर्जागरण सामन्तवाद को बढ़ावा देने के लिए शुरू हुआ।
2. पुनर्जागरण के अन्तर्गत साहित्य, कला, विज्ञान, शिक्षा आदि में उन्नति हुई।
3. पुनर्जागरण से पहले समाज में केवल दो वर्ग थे।
4. पुनर्जागरण ने पोप व चर्च की शक्ति में बढ़ोत्तरी की।

31.2 सारांश (Summary)

- पुनर्जागरण ने भूतकाल के प्रति रुचि के साथ वर्तमान काल को बौद्धिक चेतना दी। पुनर्जागरण ने नवीन साहित्य, कला, नवीन देशों की खोज, विज्ञान की उन्नति और नवीन विचारधाराओं ने यूरोप की सभ्यता एवं संस्कृति पर बड़ा गहरा प्रभाव डाला। जहाँ पहले शिक्षा तथा पाठशाला को लोग जानते ही नहीं थे वहाँ बड़े-बड़े विश्वविद्यालय स्थापित हो गये जिनमें हजारों की संख्या में दूर-दूर के देशों से विद्या, ज्ञान एवं कला के प्रेमी आते थे।
- पुनर्जागरण में व्यापारियों के एक स्वतन्त्र मध्य वर्ग की उत्पत्ति और उन्नति हुई, जो धीरे-धीरे उन्नति करता हुआ पूँजीपतियों का वर्ग बन गया और आगे चलकर इसकी शक्ति इतनी बढ़ गई कि इसने सामन्तों से ही नहीं बल्कि राजाओं से भी टक्कर लेनी आरम्भ कर दी और सभी देशों में प्रजातन्त्र राज्यों की स्थापना का मार्ग खोल दिया। इस मध्य वर्ग की सहायता से राष्ट्रीय राज्यों का विकास हुआ और इन राष्ट्रीय राज्यों में राज्य और प्रत्येक व्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता का विचार घर करने लगा।
- पुनर्जागरण ने मध्य युग के कठोर कानूनों और शारीरिक अत्याचारों से भरे हुए दण्डों पर मानव को फिर से विचार करने को बाध्य किया। सुन्दरता और ज्ञान-विज्ञान की खोज करने वाले लोग मानव-समाज में ऊँच-नीच के भेद को बुरी दृष्टि से देखने लगे, क्योंकि विज्ञान के अनुसार ये भेद झूठे हैं। मानव-मात्र को समान समझना तथा उसके ऊपर कठोर अत्याचार को समाप्त करना मानववाद का ही परिणाम था।

31.3 शब्दकोश (Keywords)

- **परम्परा**–सदियों से चला आ रहा अलिखित नियम।

31.4 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. 'पुनर्जागरण ने आधुनिक विश्व की नींव रखी' विवेचन कीजिए।
2. धर्म सुधार और पुनर्जागरण ने विश्व में क्या बदलाव किए?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. असत्य   2. सत्य   3. सत्य   4. असत्य।

31.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–32: जनसंख्या में बदलाव एवं प्रवृत्ति (Trends and Transition in Population)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
32.1 जनसंख्या में वृद्धि (Growth in Population)
32.2 कृषि व्यवस्था (Agriculture System)
32.3 व्यापार तथा वाणिज्य (Trade and Commerce)
32.4 औद्योगिक परिवर्तन (Industrial Change)
32.5 सारांश (Summary)
32.6 शब्दकोश (Keywords)
32.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
32.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- जनसंख्या में वृद्धि को समझेंगे;
- कृषि व्यवस्था को जानेंगे;
- औद्योगिक परिवर्तनों से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

अठारहवीं शताब्दी के आर्थिक इतिहास में तीन प्रवृत्तियाँ महत्त्वपूर्ण मानी जा सकती हैं। इनमें प्रथम है विश्वव्यापी अर्थव्यवस्था का उदय होना। इस शताब्दी में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में जो उन्नति हुई उसे क्रांतिकारी माना जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप विभिन्न देशों की आर्थिक गतिविधियाँ अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ गईं। इस व्यापार में यूरोपीय लोगों ने प्रमुख भूमिका निभाई तथा इसका लाभ भी यूरोपीय देशों को अधिक हुआ। दूसरी प्रवृत्ति यूरोप का संसार के सबसे समृद्ध महाद्वीप के रूप में उभरना है। एक हद तक इसका कारण अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में यूरोप की प्रमुखता थी जो स्वयं सामाजिक व आर्थिक कारणों का परिणाम थी। दूसरे यूरोपीय देशों की औद्योगिक उन्नति भी इस समृद्धि के लिए उत्तरदायी थी। इस शताब्दी की सबसे महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति यह थी कि इसी दौरान आर्थिक विकास के आधुनिक युग का प्रारंभ हुआ। आधुनिक युग से आशय उन गतिविधियों से है, जो आने वाले समय में स्वयं ही विकास-प्रक्रिया का सृजन करती रहीं।

नोट

32.1 जनसंख्या में वृद्धि (Growth in Population)

अठारहवीं शताब्दी तक जनगणना नहीं की जाती थी, अत: उस समय की जनसंख्या के जो भी विवरण मिलते हैं वे अनुमान पर आधारित हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि इस शताब्दी में यूरोप की जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। वृद्धि की दर भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न रही, परन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि शताब्दी के अंत तक सभी देशों में पहले से अधिक लोग थे। 1700 ई. में जहाँ यह 11 करोड़ 80 लाख रही होगी वहाँ 1750 ई. में 14 करोड़ तथा 1800 ई. में 18 करोड़ 70 लाख हो गई। यद्यपि सभी देशों में कुल जनसंख्या का अधिक भाग ग्रामीण क्षेत्रों में रहता रहा, यह वृद्धि शहरी क्षेत्रों में अधिक हुई तथा पूर्वी यूरोप की अपेक्षा पश्चिमी यूरोप में अधि क हुई। उस समय यूरोप में बड़े शहरों की संख्या अधिक नहीं थी। दो ही यूरोपीय नगरों को आजकल के हिसाब से बड़ा नगर कहा जा सकता था। ये थे लंदन और पेरिस जिनकी जनसंख्या क्रमश: 10 लाख और 6 लाख थी। यूरोप में 50,000 से अधिक जनसंख्या वाले बहुत कम शहर थे। यहाँ यह कह देना भी आवश्यक है कि शहरीकरण किसी देश की औद्योगिक उन्नति का द्योतक नहीं था क्योंकि औद्योगिक कार्य अधिकतर गाँवों में रहने वाले लोग करते थे। स्पेन, इटली तथा बाकलन प्रायद्वीप में बड़े शहरों की संख्या अधिक थी यद्यपि औद्योगिक विकास में ये देश कभी अग्रणी नहीं रहे।

क्या आप जानते हैं अठारहवीं शताब्दी तक जनगणना नहीं की जाती थी, अत: उस समय की जनसंख्या के जो भी विवरण मिलते हैं वे अनुमान पर आधारित हैं।

जनसंख्या में इस वृद्धि के कारण स्पष्ट नहीं था। आंशिक रूप से यह कृषि के उत्पादन में वृद्धि के फलस्वरूप भोजन के अधिक पौष्टिक होने का परिणाम था। इस संदर्भ में बहुत से इतिहासकारों ने यह तर्क दिया कि सफाई तथा चिकित्सा के तरीकों में सुधार के फलस्वरूप मृत्युदर कम हो गई तथा जनसंख्या बढ़ी। परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि अठारहवीं शताब्दी तक चिकित्सा का कार्य मुख्य रूप से परंपरागत तरीकों से ही किया जाता रहा। जनसंख्या में वृद्धि अन्य कारणों का परिणाम रही होगी। एक हद तक यह महामारियों पर विजय पाने का परिणाम थी। फ्रांस में 1704 ई. के बाद अकाल नहीं पड़ा तथा जर्मनी में 1711 ई. के बाद प्लेग नहीं फैली। कालो सिपोला के शोधकार्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि महामारी रोकने के प्रयत्नों का मृत्युदर कम करने में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा होगा। इसका अन्य कारण अकाल के प्रकोप का कम होना था क्योंकि यातायात व्यापार में वृद्धि के कारण अठारहवीं शताब्दी में अन्य प्रदेशों से अनाज मँगाना आसान हो गया।

अठारहवीं शताब्दी में जनसंख्या वृद्धि के कारण कुछ भी रहे हों, इसका यूरोपीय देशों की अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़ा। इससे खाद्यान्न की माँग बहुत बढ़ गई जिसके कारण कुछ क्षेत्रों (जैसे ब्रिटेन) में कृषि करने के तरीकों में सुधार को बढ़ावा मिला तथा अन्य क्षेत्रों (जैसे रूस) में और अधिक भूमि पर खेती-बाड़ी की जाने लगी। इस शताब्दी के अंतिम वर्षों में सर्वत्र श्रम की पूर्ति काफ़ी बढ़ गई जिससे औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिला। स्कॉटलैंड तथा स्विट्ज़रलैंड जैसे कुछ अन्य क्षेत्रों में इससे उत्प्रवास (emigration) बढ़ गया। अठारहवीं शताब्दी में जनसंख्या वृद्धि की एक बहुत बड़ी विशेषता यह थी कि इसका जनता के जीवन-स्तर पर विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा। आर्थिक विकास के कारण इस जनसंख्या को आर्थिक दृष्टि से लाभकारी बनाना तथा इसका पोषण करना संभव हो गया।

32.2 कृषि-व्यवस्था (Agriculture System)

अठारहवीं शताब्दी के यूरोप की अर्थव्यवस्था का अध्ययन करते समय इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि उस समय की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान थी। यूरोप के लगभग सभी देशों में जनसंख्या का अधिक भाग ग्रामों में रहता था। यदि कुछ व्यापारिक क्षेत्रों को छोड़ दिया जाए तो लगभग 80 प्रतिशत लोग गाँवों में रहते थे। बालकन क्षेत्र में 90 से 97 प्रतिशत लोग रहते थे। अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्वपूर्ण स्थान था। लगभग सभी उद्योग कृषि के उत्पादनों पर आश्रित थे। उदाहरण के लिए कपड़ा उद्योग में ऊन तथा फ्लैक्स का प्रयोग होता था और शराब

नोट

बनाने, तेल निकालने, आटा पीसने, आदि से कारखानों को कच्चा माल कृषि से ही मिलता था। शहरों में बसने वाले लोग भी अपनी पूँजी से बड़े भाग का निवेश भूमि में करते थे। कुछ भागों को छोड़कर कृषि-व्यवस्था तकनीकी दृष्टि से पारंपरिक तथा पिछड़ी हुई थी। मुख्यतः कुछ खाद्यान्न (जैसे राईघास, गेहूँ, जौ, ज्वार) कुछ औद्योगिक कच्चे माल (जैसे ऊन, शराब के लिए जौ, फ़्लैक्स) कुछ फल-सब्जियां उगाने का कार्य तथा पशुपालन किया जाता था। अधिकतर लोग स्थानीय रूप से उत्पादित वस्तुओं का उपभोग करते थे।

कृषि करने के तरीकों, उत्पादनशीलता के स्तर तथा कृषकों की दशा में यूरोप के भिन्न-भिन्न भागों में इतनी अधिक विषमता थी कि किसी प्रकार का सामान्यीकरण करना न्यायसंगत नहीं होगा। इस संदर्भ में यूरोपीय महाद्वीप को तीन भागों में बाँटा जा सकता है–(1) वे पिछड़े हुए प्रदेश जहाँ कृषि के परंपरागत तरीके काम में लाए जाते थे, उत्पादनशीलता कम थी तथा कृषकों की दशा दयनीय थी; (2) वे प्रदेश जहाँ, यद्यपि कृषि के परंपरागत तरीक़े ही प्रयोग में लाए जाते थे तब भी कृषकों की दशा अपेक्षाकृत अच्छी थी और (3) कृषि की दृष्टि से प्रगतिशील देश।

पहले भाग में पूर्वी यूरोप (एल्ब नदी से एड्रियाटिक सागर तक रेखा खींची जाए तो इससे पूर्व का क्षेत्र), इटली का टस्कनी के दक्षिण में पड़ने वाला क्षेत्र तथा स्पेन के दक्षिणी क्षेत्र आते हैं। यहाँ निर्धनता तथा पिछड़ापन देखने में आता था। यहाँ की जनसंख्या कुल उत्पादन के मुकाबले में अधिक थी, कृषि के लिए परंपरागत तरीक़ों का प्रयोग किया जाता था और आर्थिक व सामाजिक ढाँचा इस प्रकार का था कि कृषकों की दशा शोचनीय हो गई थी। भूमि की संभावित उत्पादन-क्षमता का पर्यवेक्षण नहीं किया गया था। सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में सिसली से खाद्यान्न का निर्यात होता था तथा इसे यूरोप का अन्न भंडार कहा जाता था। परंतु अठारहवीं शताब्दी तक यह बहुत कम हो गया था। इस सारे क्षेत्र की निर्धनता तथा खाद्यान्न के अभाव का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि 1763-64 में सिसली में जब अकाल पड़ा था तो 30,000 लोगों की मृत्यु हो गई थी। कुछ क्षेत्रों से कृषि उत्पादन का निर्यात भी होता था जैसे बाल्टिक सागर के तटीय प्रदेशों से अनाज, फ्लैक्स तथा पटसन का निर्यात किया जाता था। कृष्ण सागर मार्ग के खुलने तथा पश्चिम यूरोप के शहरीकरण से रूस में निर्यात के लिए अनाज का उत्पादन किया जाने लगा, परंतु इसका लाभ स्थानीय जनता को नहीं हुआ, केवल अभिजात वर्ग के लोगों को हुआ जिन्हें अनाज के निर्यात के बदले विलासिता की आयातित वस्तुएँ उपलब्ध होने लगीं। वास्तव में कच्चे माल तथा खाद्यान्न का उत्पादन करके तथा उत्पादित माल को मंडी में बेचने का कार्य करके पूर्वी यूरोपीय प्रदेशों ने पश्चिमी यूरोप की आर्थिक उन्नति में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इतिहासकार **ई. चे. हॉब्सबाम** ने तो यहाँ तक कहा कि पूर्वी यूरोप के दासप्रथा वाले क्षेत्र को इसीलिए समुद्रपार के उपनिवेशों के समान खाद्यान्न तथा कच्चे माल का उत्पादन करने वाली पश्चिमी यूरोप की 'आश्रित-अर्थव्यवस्था' कहा जा सकता है।

> *नोट्स* 1763-64 में सिसली में जब अकाल पड़ा था तो 30,000 लोगों की मृत्यु हो गई थी।

1801 के मास्को गज़ट में निकले इस इश्तहार से उनकी स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है–

बिक्री के लिए, दो गाड़ीवान प्रशिक्षित तथा निपुण; दो लड़कियाँ भी, आयु 15 तथा 18 वर्ष, देखने में अच्छी तथा विभिन्न प्रकार के कामों में कुशल। उसी घर में बिक्री के लिए... प्यानो तथा अन्य वाद्य भी हैं।

तुर्क साम्राज्य के अंतर्गत पड़ने वाले बाकलन क्षेत्र में वंशानुगत ज़मींदारियाँ स्थापित हो गई थीं। इनका स्थान राज्य द्वारा नियुक्त ज़मींदारों ने ले लिया था जिनका उद्देश्य भूमि की उत्पादन-शक्ति में सुधार करना नहीं बल्कि अतिरिक्त उत्पादन को हस्तगत करना होता था। इस क्षेत्र में किसान कानूनी तौर पर इसलिए स्वतंत्र नहीं थे क्योंकि वे ईसाई थे तथा व्यावहारिक रूप में इसलिए स्वतंत्र नहीं थे क्योंकि वे भूमि के मालिक नहीं थे। दक्षिणी इटली तथा दक्षिणी स्पेन में किसानों की स्थिति कानूनी दृष्टि से कुछ अच्छी अवश्य थी, परंतु वे भी ज़मींदारों द्वारा शोषण के शिकार थे और उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय ही थी।

क्या आप जानते हैं पूर्वी यूरोप के अधिकतर भागों में दासप्रथा का प्रचलन था। ये दास ज़मींदारों की संपत्ति होते थे जिन्हें खरीदा-बेचा जाता था।

नीदरलैंड, इंग्लैंड का अधिकतर भाग, स्कॉटलैंड के निचले इलाके तथा फ्रांस के कुछ प्रदेश प्रगतिशील क्षेत्र कहे जा सकते थे। कृषि की दृष्टि से नीदरलैंड को सर्वाधिक विकसित क्षेत्र कहा जा सकता था जहाँ फ़्लैडर्स, पश्चिमी व्रावांत, ज़ीलैंड तथा दक्षिणी क्षेत्र में सत्रहवीं शताब्दी के दौरान भी कई किसान केवल नक़दी फसलों (फ़्लैक्स, सन, तंबाकू इत्यादि) का उत्पादन करते थे। आलू की खेती व्यापक स्तर पर सबसे पहले यहीं की गई। 1802 में एक समकालीन जर्मन प्रेक्षक ने यह निष्कर्ष दिया कि कृषि-उत्पादन की दृष्टि से नीदरलैंड की उत्पादन-क्षमता ब्रिटिश उत्पादन-क्षमता से 30 प्रतिशत अधिक थी। ब्रिटेन में कृषि के क्षेत्र में परिवर्तन 18वीं शताब्दी के प्रारंभ से ही देखने में आते हैं। इस शताब्दी के तीसरे दशक में नौरफॉक में शलगम की खेती की जा रही थी और पशुपालन तथा भूमि से पानी निकालने की दिशा में नए-नए प्रयोग किए जा रहे थे। इस दिशा में ब्रिटिश ज़मीदारों ने अत्यंत सराहनीय कार्य किया। 1688 की क्रांति के पश्चात् इस वर्ग का स्थान राजनीति तथा समाज दोनों में ही बहुत ऊँचा हो गया था। ये ज़मींदार पशुओं की नस्ल तथा बीजों की क़िस्में सुधारने का भी उतना ही शौक़ रखते थे जितना कि शिकार व जुआ खेलने का। जिन लोगों ने कृषि के क्षेत्र में नए-नए प्रयोग किए उनमें जैथरी टल, रोबर्ट ओवन, थॉमस कॉक तथा टाउनशैड के नाम उल्लेखनीय हैं। ब्रिटिश ज़मींदारों ने अपनी राजनीतिक शक्ति तथा खाद्यान्न-संबंधी आवश्यकताओं का लाभ उठाकर "बाड़बंदी अधिनियम" पास करवाए जिसके अंतर्गत उपजाऊ तथा बंजर दोनों ही प्रकार की भूमि हथियाई गई। आर्थिक दृष्टि से यह आंदोलन लाभकारी सिद्ध हुआ क्योंकि कृषि के उन्नत तरीक़े प्रयोग में लाने के लिए खेतों का बड़ा होना आवश्यक था। इस समय कृषि-उत्पादन में इतनी वृद्धि हुई कि कृषि एक अत्यंत लाभप्रद व्यवसाय बन गया। इसका एक परिणाम यह हुआ कि बढ़ती हुई जनसंख्या को खाद्यान्न-संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करना आसान हो गया। बाड़बंदी का छोटे कृषकों पर क्या प्रभाव हुआ, यह इतिहासकारों में अभी विवादपूर्ण प्रश्न बना हुआ है। पहले यह माना जाता था कि बाड़बंदी से छोटे किसानों का उन्मूलन हुआ। परंतु ब्रिटेन में छोटे किसानों की संख्या 1815 के पश्चात् कम होनी शुरू हुई। इसके अतिरिक्त इन किसानों के लिए आर्थिक कठिनाई का समय बहुत लंबा रहा होगा क्योंकि औद्योगिक क्रांति के कारण श्रम की माँग बढ़ रही थी।

नोट्स ज़मींदार पशुओं की नस्ल तथा बीजों की क़िस्में सुधारने का भी उतना ही शौक़ रखते थे जितना कि शिकार व जुआ खेलने का।

अठारहवीं शताब्दी में डच कृषि-व्यवस्था बहुत विकसित थी। यह किसानों के लिए जीवन-यापन का एक पिछड़ा हुआ साधन मात्र नहीं थी वरन् यह एक स्वतंत्र, व्यावसायिक उद्यम थी। तकनीकी दृष्टि से भी यह उद्योगों की भाँति काफी विकसित तथा साधन-संपन्न थी। इसमें केवल खाद्यान्न का ही नहीं वरन् नक़दी फसलों का उत्पादन भी किया जाता था। यह व्यापार तथा उद्योगों से संतुलित रूप में संबद्ध थी। नीदरलैंड में इसीलिए ग्रामीण गरीब लोगों का वर्ग देखने में नहीं आया जिससे ब्रिटेन के उद्योगों में बहुत संख्या में श्रमजीवी आए थे। इस संदर्भ में कुछ अर्थशास्त्रियों ने यह तर्क भी दिया है कि सोलहवीं व सत्रहवीं शताब्दी के आर्थिक विकास के कारण संस्थागत अवरोध पैदा हो गए थे जिन्होंने नीदरलैंड में अठारहवीं शताब्दी में औद्योगिक विकास के मार्ग में बाधा डाली।

32.3 व्यापार तथा वाणिज्य (Trade and Commerce)

अठारहवीं शताब्दी में व्यापार के क्षेत्र में दो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इससे पहले अधिक व्यापार यूरोपीय देशों के मध्य ही होता था। परंतु इस समय यूरोपीय देशों के अन्य देशों के साथ व्यापार में बहुत अधिक वृद्धि हुई तथा अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का उदय हुआ। दूसरे, सत्रहवीं शताब्दी में नीदरलैंड की प्रमुखता का अंत हो गया तथा ब्रिटेन

नोट

और फ्रांस प्रतिद्वंद्वी के रूप में सामने आए। इन दोनों के मध्य चलने वाले संघर्ष में अंत में ब्रिटेन विजयी रहा। इस समय होने वाले आयात तथा निर्यात-संबंधी आँकड़े तो दे पाना संभव नहीं है परंतु यदि जहाज़रानी को इसका द्योतक माना जाए तो यह देखने में आता है कि ब्रिटेन में 1702 ई. में कुल टन भार 2,60,000 था जो 1776 ई. तक बढ़कर 6,95,000 हो गया था। यह टन भार अन्य यूरोपीय देशों के कुल टन भार का 33 प्रतिशत था। अनुमान लगाया गया है कि फ्रांस में भी कुल व्यापार-मूल्य में चार गुना वृद्धि हुई। इस समय वाणिज्य-संबंधी प्रश्नों पर काफी साहित्य लिखा गया तथा अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में व्यापारिक प्रश्नों को काफ़ी महत्त्व देने की प्रवृत्ति देखने में आई। यद्यपि हॉलैंड, बेल्जियम, ब्रिटेन तथा फ्रांस को छोड़कर अन्य देशों के लिए व्यापार का बहुत अधिक महत्त्व नहीं था, फिर भी इन देशों में वाणिज्य के क्षेत्र में जो परिवर्तन हो रहे थे, उन्हें क्रांतिकारी अवश्य कहा जा सकता था। व्यापार में वृद्धि से नए उद्योगों तथा व्यापार-केंद्रों को बढ़ावा मिला तथा समाज में उपयोग की नई-नई वस्तुओं का उपभोग बढ़ गया।

यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में व्यापार मुख्यत: यूरोप में उत्पादित वस्तुओं में किया जाता था, जैसे बाल्टिक क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले अनाज तथा टिम्बर, ब्रिटिश कपड़ा तथा धातु का सामान, फ्रांस का कपड़ा तथा शराब, स्पेन की ऊन तथा पुर्तगाली शराब। धीरे-धीरे इस व्यापार में अन्य महाद्वीपों से लाई जाने वाली वस्तुएँ भी शामिल हो गई तथा लाभदायक पुनर्निर्यात व्यापार शुरू हुआ। इस व्यापार का मुख्य उद्देश्य खरीद व बिक्री की वस्तुओं में अदला-बदली करके भुगतान संबंधी समस्या को हल करना था। इस शताब्दी में अंतर्महाद्वीपीय व्यापार के साथ-साथ यूरोप के अंतर्राज्यीय व्यापार में भी काफ़ी बढ़ोतरी हुई। 1790 ई. में ब्रिटेन रूस से 1700 ई. के मुकाबले 15 गुनी अधिक वस्तुओं का आयात तथा छह गुनी अधिक वस्तुओं का निर्यात करता था। फ्रांस तथा ल्वाप्ट प्रदेश के मध्य व्यापार में भी काफ़ी वृद्धि हुई।

परंतु अठारहवीं शताब्दी की विशेषता अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में बढ़ोतरी थी। अंध महासागरीय समुद्रमार्ग ने—जो अमरीका, एशिया और अफ्रीका की ओर जाने थे—पश्चिमी यूरोप के सभी देशों को 'इंडीज' से व्यापार के लिए प्रेरित किया। उस समय यूरोप में इंडीज शब्द का प्रयोग सुदूर समुद्रपार के सभी देशों के लिए किया जाता था। अँग्रेजी तथा फ्रांसीसी दोनों ही ईस्ट इंडिया कंपनियों को पुन: संगठित किया गया तथा इसमें निवेश की गई पूँजी में वृद्धि हुई। अन्य बहुत से स्थानों, जैसे स्कॉटलैंड, स्वीडन, हॉलैंड, हैमबर्ग, वेनिस, प्रशा तथा ऑस्ट्रिया में भी ऐसी कंपनियों का गठन किया गया। परंतु ये अधिक सफल नहीं हो सकी। इससे यह स्पष्ट हो गया कि सरकार के समर्थन के बिना व्यक्तियों के लिए सुदूर देशों के साथ व्यापार करना संभव नहीं था।

इस शताब्दी में अमरीका से किए जाने वाले व्यापार की मात्रा एशिया से किए जाने वाले व्यापार से भी अधिक थी। यहाँ से मुख्यत: चीनी का आयात किया जाता था। 17वीं शताब्दी में पहली बार पूर्व से गन्ना लाकर वेस्ट इंडीज़ में लगाया गया। यह प्रयोग अत्यंत सफल रहा तथा वहाँ बागान अर्थव्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ। इसके बाद इस क्षेत्र को व्यापक बनाया जाने लगा। 1713 ई. से 1792 ई. तक ब्रिटेन ने वेस्ट इंडीज़ के अपने ही द्वीपों से 16,20,00,000 पौंड के सामान का आयात किया जब कि इसी दौरान भारत से 10,40,00,000 पौंड का आयात किया गया। बागान अर्थव्यवस्था का एक प्रभाव अफ्रीका को अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का भाग बनाना हुआ। अँग्रेज़ लोग दास व्यापार में अग्रणी थे। इनके बाद फ्रांसीसियों का नंबर आता था। 18वीं शताब्दी में दास व्यापार बहुत व्यवस्थित रूप से किया गया। अफ्रीका में यूरोपीय माल के बदले में दास खरीदे जाते थे जिन्हें उत्तरी अमरीका में बेचा जाता था तथा इससे प्राप्त होने वाली पूँजी का ब्रिटिश उद्योगों में निवेश किया जाता था। 1713 ई. में और 1792 ई. के मध्य दासों के बदले अफ्रीका को भेजे जाने वाले माल में दस गुना वृद्धि हुई।

नोट्स 17वीं शताब्दी में पहली बार पूर्व से गन्ना लाकर वेस्ट इंडीज़ में लगाया गया। यह प्रयोग अत्यंत सफल रहा।

अठारहवीं शताब्दी ब्रिटेन व फ्रांस के मध्य तीव्र प्रतिद्वंद्विता का समय था। यूरोपीय देशों में लड़े गए दोनों युद्धों—ऑस्ट्रिया का उत्तराधिकार युद्ध तथा सप्तवर्षीय युद्ध—में ये देश विपरीत पक्ष में रहे थे। इन युद्धों में भाग लेने का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण व्यापार-संबंधी प्रतिद्वंद्विता थी। प्रारंभ में दोनों देश वेस्ट इंडीज़ से व्यापार को बहुत अधिक महत्त्व देते थे तथा इन युद्धों में दोनों देशों ने एशिया तथा अमरीका में एक-दूसरे के व्यापार को नष्ट करने का मौक़ा देखा। अंत में विजय ब्रिटेन की हुई। 1761 ई. तक भारत में फ्रांसीसी प्रभाव को लगभग समाप्त कर दिया गया। जहाँ तक वेस्ट इंडीज़ का प्रश्न है, धीरे-धीरे अँग्रेज उत्तरी अमरीका के उपनिवेशों को अधिक महत्त्व देने लगे थे, क्योंकि वहाँ पर श्वेत लोगों के बस जाने के कारण वस्तुओं की माँग बढ़ने लगी थी। 'यही कारण है कि सप्तवर्षीय युद्ध के बाद 1763 ई. में की गई पेरिस की संधि में वेस्ट इंडीज़ द्वीपसमूह फ्रांस के पास रहने दिया गया। यद्यपि इस युद्ध में फ्रांस की हार हुई थी।

32.4 औद्योगिक परिवर्तन (Industrial Changes)

अठारहवीं शताब्दी में सभी देशों की अर्थव्यवस्था में उद्योगों का महत्त्व बढ़ा। उत्तर-पश्चिमी यूरोप में इस दिशा में काफ़ी विकास हुआ तथा कई बड़े कारखाने स्थापित किए गए। फ्रांस में छठे दशक में आंज़िन (Anzine) कोल माइनिंग कंपनी की स्थापना की गई जिसमें क्रांति से पूर्व 4,000 श्रमिक कार्य करते थे। एबीविल (Abbeville) की फॉन रोबायस कपड़ा मिल (Van Robais Textile Factory) में, जो उस समय की प्रदर्शन वस्तु मानी जाती थी, 3000 श्रमिक कार्य करते थे और हज़ारों लोग इसके लिए घरों में सूत तैयार करने का काम करते थे। ब्रिटेन में थॉमस लाम्ब ने 1717-21 ई. के दौरान रेशमी कपड़े का कारखाना लगाया जिसमें 300 कारीगर काम करते थे तथा इसकी मशीनों में 26,000 चक्रियाँ लगी थीं। परंतु ये बड़े उद्योग गिने-चुने ही थे। अधिकतर उद्योगपति छोटे पैमाने पर कार्य करते थे। 1764 ई. में नीदरलैंड में (जो इस समय का औद्योगिक दृष्टि से सर्वाधिक विकसित क्षेत्र था) एक सर्वेक्षण किया गया था। इस सर्वेक्षण के अनुसार ऐसे औद्योगिक प्रतिष्ठान जहाँ 45 लोग कार्य करते थे, काफ़ी बड़े माने गए। अधिकतर उत्पादक उत्पादन के पारंपरिक तरीक़े ही अपनाते थे, घरेलू उद्योग काफ़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे तथा बहुत से कारखानों में माल को केवल अंतिम रूप दिया जाता था। भाप की शक्ति का प्रयोग विस्तृत रूप से उन्नीसवीं शताब्दी में ही किया गया। नए उद्योग स्थापित करने में जल शक्ति की उपलब्धि का सर्वाधिक ध्यान रखा जाता था। इस शताब्दी के बड़े शहर लंदन, पेरिस, इस्ताम्बूल, सैंट पीटर्सबर्ग, एम्सटरडम, नेपल्स या तो राजधानियाँ थीं या बंदरगाह—औद्योगिक केंद्र नहीं।

सभी देशों में उत्पादन साधारणतः घरेलू व्यवस्था के अंतर्गत किया जाता था। यहाँ तक कि ब्रिटेन में भी, जो औद्योगीकरण के क्षेत्र में संसार का अग्रणी बना, शताब्दी के अंत तक कपड़े के क्षेत्र में भी कारखाना व्यवस्था प्रारंभिक चरण में ही था। अधिकतर श्रमिक उत्पादनकर्ता या उनके मध्यस्थ द्वारा दिए गए कच्चे माल को लेकर उत्पादन करते थे। उनके पास औज़ार या तो अपने होते थे या वे उधार लेते थे। घरेलू उत्पादक उत्पादित वस्तुओं को कुछ अपरिष्कृत छोड़ देते थे जिन्हें कारखाने में तैयार किया जाता था। इस व्यवस्था ने हथकरघा प्रणाली का स्थान ले लिया था। इसके अंतर्गत अधिकतर श्रमिक कृषि तथा उद्योग दोनों पर आश्रित रहते थे। इसमें श्रमिकों से आवश्यकतानुसार काम लिया जाता था और जब काम नहीं होता था तब वे कृषि पर या सहायतार्थ संस्थानों पर आश्रित हो जाते थे। इस व्यवस्था में अधिक पूँजी तथा काफ़ी व्यवस्थित कार्यप्रणाली की आवश्यकता होती थी।

बड़े उद्योगों में श्रमिक अपनी इच्छा से कार्य नहीं करते थे बल्कि इसलिए करते थे क्योंकि उनके पास अन्य विकल्प नहीं था। सभी देशों में प्रायः उन लोगों को उद्योगों में लगाया जाता था जिन्हें अनुपयोगी या समाज के लिए खतरनाक समझा जाता था। अनाथ, अपराधी, कंगाल तथा आवारा लोगों से कारखानों में काम करवाया जाता था। बोहेमिया में साल में दो बार ऐसे लोगों को इकट्ठा करके ले जाया जाता था। फ्रैडरिक विलियम के समय में तो शांति के समय में सिपाहियों को इस कार्य में लगाया जाता था जिसके फलस्वरूप सेना की बैरक ही कारखानों में परिवर्तित हो जाती थी। कुछ लोगों को 1730-1770 की अवधि में बढ़ती हुई क़ीमतों के कारण श्रमजीवी बनना पड़ रहा था। शहरों

नोट

में श्रमिकों की कमी का एक प्रभाव यह हुआ कि उद्योग अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित किए जाने लगे जिससे कई पुराने शहरों का ह्रास होने लगा।

यह कहना कठिन है कि कुल उत्पादित माल का कितना भाग निर्यात किया जाता था और कितना स्थानीय रूप से प्रयोग किया जाता था। लेकिन कुल उत्पादन के अधिक भाग का उपयोग, विभिन्न देशों के भीतर ही कर लिया जाता था। अधिक व्यापार विभिन्न नगरों या विभिन्न क्षेत्रों के मध्य होता था। ब्रिटेन में आंतरिक व्यापार लगभग स्वतंत्र था तथा फ्रांस में भी बहुत कम स्थानों पर रुकावटें थीं। परंतु बड़े उद्यमियों के लिए विदेशी व्यापार अधिक महत्त्वपूर्ण था। इसी में वे पैसा कमाते थे। अधिकतर पूँजी का संचयन भी इसी से किया गया। यह विदेशी व्यापार अंतर्राष्ट्रीय प्रतिद्वंद्विता तथा युद्धों का महत्त्वपूर्ण कारण बना।

इस समय औद्योगीकरण के क्षेत्र में विभिन्न देशों की सापेक्षिक स्थिति में काफ़ी परिवर्तन आया। शताब्दी के प्रारंभ में यूरोप के सर्वाधिक विकसित भाग बेल्जियम, नीदरलैंड तथा फ्रांस, जर्मनी और इटली के कुछ हिस्से थे। ब्रिटेन ऊनी कपड़ों, टिन तथा सिक्कों का निर्यात करता था। ब्रिटेन के व्यापार तथा उद्योगों का महाद्वीपीय अर्थव्यवस्था पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता था परंतु शताब्दी के अंत तक जहाँ ब्रिटेन औद्योगीकरण के क्षेत्र में अग्रणी बन गया था। और फ्रांस तथा जर्मनी के कुछ भागों ने (विशेषकर बोहेमिया) ने काफ़ी प्रगति कर ली थी वहाँ बेल्जियम तथा नीदरलैंड का महत्त्व पहले से कम हो गया था और इटली काफ़ी पिछड़ गया था। कुछ क्षेत्रों में रूस में भी काफ़ी विकास हुआ, विशेषकर धातु उद्योग में वहाँ बहुत उन्नति हुई। पीटर महान के समय दक्षिणी उराल प्रांत में लकड़ी को शक्ति के साधन के रूप में प्रयोग करके तथा कृषि दासों का श्रमिकों के रूप में प्रयोग करके लोहे तथा पीतल का उत्पादन काफ़ी बढ़ा लिया गया। कैथरीन के समय यद्यपि 1773-1775 ई. में कृषक विद्रोह हुआ, तब भी विकास की गति बनाए रखी गई। इस शताब्दी के अंत तक ब्रिटेन 26,000 मीट्रिक टन लोहे का निर्यात कर रहा था, परंतु रूस में धातुओं तथा जहाज़ों पर पाल बाँधने के कपड़े को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में विशेष प्रगति नहीं हुई यद्यपि इसके लिए काफ़ी प्रयास किया गया। विदेशी प्रतिस्पर्धा, प्रशिक्षित श्रमिकों की कमी तथा कृषिप्रधान अर्थव्यवस्था कुछ ऐसे घटक थे, जिन्होंने इन प्रयत्नों को विफल कर दिया।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. यूरोप में अठारहवीं शताब्दी में केवल दो ही प्रमुख शहर थे एक .... और दूसरा ....।
2. साफ-सफाई और चिकित्सा क्षेत्र में सुधार ने .... को कम किया।
3. अठारहवीं शताब्दी में कुछ व्यापारिक क्षेत्रों को छोड़कर .... लोग गांवों में रहते थे।
4. बालकन क्षेत्रों में .... प्रतिशत लोग रहते थे।
5. लुई 15वें के समय में केवल पेरिस में .... भिखारी थे।
6. अंग्रेज लोग .... व्यापार में अग्रणी थे।

32.5 सारांश (Summary)

- जनसंख्या में इस वृद्धि के कारण स्पष्ट नहीं था। आंशिक रूप से यह कृषि के उत्पादन में वृद्धि के फलस्वरूप भोजन के अधिक पौष्टिक होने का परिणाम था। इस संदर्भ में बहुत से इतिहासकारों ने यह तर्क दिया कि सफाई तथा चिकित्सा के तरीकों में सुधार के फलस्वरूप मृत्युदर कम हो गई तथा जनसंख्या बढ़ी।
- अठारहवीं शताब्दी में जनसंख्या वृद्धि के कारण कुछ भी रहे हों, इसका यूरोपीय देशों की अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़ा। इससे खाद्यान्न की माँग बहुत बढ़ गई जिसके कारण कुछ क्षेत्रों (जैसे ब्रिटेन) में कृषि करने के तरीकों में सुधार को बढ़ावा मिला तथा अन्य क्षेत्रों (जैसे रूस) में और अधिक भूमि पर खेती-बाड़ी

की जाने लगी। इस शताब्दी के अंतिम वर्षों में सर्वत्र श्रम की पूर्ति काफ़ी बढ़ गई जिससे औद्योगीकरण को प्रोत्साहन मिला।

- अठारहवीं शताब्दी के यूरोप की अर्थव्यवस्था का अध्ययन करते समय इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि उस समय की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान थी। यूरोप के लगभग सभी देशों में जनसंख्या का अधिक भाग ग्रामों में रहता था। यदि कुछ व्यापारिक क्षेत्रों को छोड़ दिया जाए तो लगभग 80 प्रतिशत लोग गाँवों में रहते थे। बालकन क्षेत्र में 90 से 97 प्रतिशत लोग रहते थे। अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्त्वपूर्ण स्थान था। लगभग सभी उद्योग कृषि के उत्पादनों पर आश्रित थे।
- तुर्क साम्राज्य के अंतर्गत पड़ने वाले बाकलन क्षेत्र में वंशानुगत ज़मींदारियाँ स्थापित हो गई थीं। इनका स्थान राज्य द्वारा नियुक्त ज़मींदारों ने ले लिया था जिनका उद्देश्य भूमि की उत्पादन-शक्ति में सुधार करना नहीं बल्कि अतिरिक्त उत्पादन को हस्तगत करना होता था। इस क्षेत्र में किसान कानूनी तौर पर इसलिए स्वतंत्र नहीं थे क्योंकि वे ईसाई थे तथा व्यावहारिक रूप में इसलिए स्वतंत्र नहीं थे क्योंकि वे भूमि के मालिक नहीं थे।
- अठारहवीं शताब्दी में डच कृषि-व्यवस्था बहुत विकसित थी। यह किसानों के लिए जीवन-यापन का एक पिछड़ा हुआ साधन मात्र नहीं थी वरन् यह एक स्वतंत्र, व्यावसायिक उद्यम थी। तकनीकी दृष्टि से भी यह उद्योगों की भाँति काफ़ी विकसित तथा साधन-संपन्न थी। इसमें केवल खाद्यान्न का ही नहीं वरन् नक़दी फसलों का उत्पादन भी किया जाता था।
- अठारहवीं शताब्दी में व्यापार के क्षेत्र में दो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। इससे पहले अधिक व्यापार यूरोपीय देशों के मध्य ही होता था। परंतु इस समय यूरोपीय देशों के अन्य देशों के साथ व्यापार में बहुत अधिक वृद्धि हुई तथा अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का उदय हुआ। दूसरे, सत्रहवीं शताब्दी में नीदरलैंड की प्रमुखता का अंत हो गया तथा ब्रिटेन और फ्रांस प्रतिद्वंद्वी के रूप में सामने आए। इन दोनों के मध्य चलने वाले संघर्ष में अंत में ब्रिटेन विजयी रहा।
- यूरोप के विभिन्न क्षेत्रों में व्यापार मुख्यत: यूरोप में उत्पादित वस्तुओं में किया जाता था, जैसे बाल्टिक क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले अनाज तथा टिम्बर, ब्रिटिश कपड़ा तथा धातु का सामान, फ्रांस का कपड़ा तथा शराब, स्पेन की ऊन तथा पुर्तगाली शराब। धीरे-धीरे इस व्यापार में अन्य महाद्वीपों से लाई जाने वाली वस्तुएँ भी शामिल हो गई तथा लाभदायक पुनर्निर्यात व्यापार शुरू हुआ।
- अठारहवीं शताब्दी में सभी देशों की अर्थव्यवस्था में उद्योगों का महत्त्व बढ़ा। उत्तर-पश्चिमी यूरोप में इस दिशा में काफ़ी विकास हुआ तथा कई बड़े कारखाने स्थापित किए गए। फ्रांस में छठे दशक में आंज़िन (Anzine) कोल माइनिंग कंपनी की स्थापना की गई जिसमें क्रांति से पूर्व 4,000 श्रमिक कार्य करते थे।
- बड़े उद्योगों में श्रमिक अपनी इच्छा से कार्य नहीं करते थे बल्कि इसलिए करते थे क्योंकि उनके पास अन्य विकल्प नहीं था। सभी देशों में प्राय: उन लोगों को उद्योगों में लगाया जाता था जिन्हें अनुपयोगी या समाज के लिए खतरनाक समझा जाता था। अनाथ, अपराधी, कंगाल तथा आवारा लोगों से कारखानों में काम करवाया जाता था।

32.6 शब्दकोश (Keywords)

- **बन्दरगाह**—व्यापारिक समुद्री जहाजों से जहां माल चढ़ाया व उतारा जाता है।
- **सृजन**—निर्माण प्रक्रिया, निर्माण करना, सृजित करना।

32.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. अठारहवीं शताब्दी में जनसंख्या में अभूतपूर्व वृद्धि के क्या कारण थे?

नोट

2. 'यूरोप की अर्थव्यवस्था मुख्यत: कृषि पर आधारित थी।' अठारहवीं शताब्दी की कृषि व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
3. 'ब्रिटेन और फ्रान्स व्यापार के क्षेत्र में प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी थे।' इस कथन का आलोचनात्मक मूल्यांकन 'व्यापार और वाणिज्य' के विशेष संदर्भ में कीजिए।
4. अठारहवीं शताब्दी में प्रमुख औद्योगिक परिवर्तनों का विवेचन कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. लन्दन/पेरिस
2. मृत्युदर
3. 80 प्रतिशत
4. 90/97
5. 30 हजार
6. दास।

32.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–33: नगरवाद
(Urbanism)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

33.1 नगरों की बसावट (Dwelling of Township)

33.2 नगरीय जीवन की कठिनाइयां (Difficulties of Life of Township)

33.3 नगरों की प्रबन्ध व्यवस्था (Management System of Township)

33.4 आर्थिक जीवन (Economic Life)

33.5 ज्ञान-विज्ञान और शिक्षा (Education and Science)

33.6 सारांश (Summary)

33.7 शब्दकोश (Keywords)

33.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

33.9 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- नगरीय जीवन की बसावट, कठिनाइयां, प्रबन्ध व्यवस्था आदि को समझेंगे;
- आर्थिक जीवन, शिक्षा आदि से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्यकालीन यूरोप की एक चारित्रिक विशेषता है, बड़े अथवा छोटे गाँवों का नगरों अथवा पुरों के रूप में विकसित होना। ग्यारहवीं सदी के पहले जो नगर बसे हुए थे, वे भी इस समय से करवट बदल कर नया रूप धारण करने लगे थे। धर्मयुद्धों के परिणामस्वरूप यूरोपवासियों का पूर्व के देशों के साथ व्यापार फिर से शुरू हो गया जो धीरे-धीरे बढ़ता ही गया। इस बढ़ते हुये व्यापार के कारण यूरोप में पुरों और नगरों की वृद्धि भी तेजी से होने लगी। इससे पहले भूमध्यसागरीय व्यापार पर मुसलमानों (अरबों) का एकाधिकार था। सैल्युक तुर्कों ने अरबों की राजनीतिक सत्ता का अन्त कर दिया, जिससे अरबों का व्यापारिक एकाधिकार लड़खड़ा गया। चूँकि तुर्क लोगों की व्यापार-वाणिज्य में विशेष रुचि नहीं थी, अतः यूरोपवासियों को इस क्षेत्र में आगे बढ़ने और पनपने का सुअवसर मिल गया। इटली में जेनेवा, वेनिस तथा फ्लोरेन्स आदि बड़े नगरों का विकास हुआ, जो भूमध्यसागर में व्यापार के प्रधान केन्द्र बन गये। स्पेन तथा फ्रांस के नगरों का उत्तरी अफ्रीका के अरबों के साथ और इटली के नगरों का पूर्वी देशों के साथ

नोट

व्यापारिक सम्बन्ध था। पश्चिम जर्मनी में नूरेम्बर्ग और आग्सबर्ग के प्रसिद्ध नगर थे। वेनिस के बन्दरगाहों से भेजा हुआ माल इन्हीं नगरों से होकर उत्तरी यूरोप में जाता था। इंग्लैण्ड तथा बाल्टिक समुद्र के साथ व्यापार होने से हैम्बर्ग, ब्रूमेन आदि नगरों का विकास हुआ। राईन नदी के तट पर कोलन नगर अधिक प्रसिद्ध था।

क्या आप जानते हैं नगरों के विकास का मुख्य कारण धर्मयुद्धों और उनके परिणामस्वरूप व्यापार-वाणिज्य में हुई-समृद्धि को माना जाता है।

दूसरा मुख्य कारण तेजी से बदलती हुई सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ थीं। ज्यों-ज्यों बर्बर लोग ईसाई बनते गये त्यों-त्यों उनकी लूट-खसोट और रक्तपात की प्रवृत्तियाँ शान्त होती गईं, जिससे शान्ति और व्यवस्था की स्थापना सम्भव हो सकी। संयोगवश, बर्बर आक्रमणों के बाद यूरोप के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सरकारें भी पहले की अपेक्षा अधिकाधिक स्थिर होती गईं और स्थिर सरकारों के परिणामस्वरूप भी शान्ति की जड़ें सुदृढ़ हुईं। शान्ति और व्यवस्था के नये वातावरण में यूरोपीय व्यापारी और उत्पादक अपने आपको अधिक सुरक्षित अनुभव करने लगे और उन्हें अपना-अपना व्यवसाय एवं व्यापार बढ़ाने का प्रोत्साहन मिला।

पूर्वी देशों के साथ व्यापार से मुनाफा कमाने के लिये आयात के साथ-साथ निर्यात को बढ़ाना भी आवश्यक था। निर्यात बढ़ाने के लिये स्वदेशी उत्पादन को बढ़ाना जरूरी था। संयोगवश इसी युग में जनसंख्या की वृद्धि हुई और कृषक दास प्रथा भी चरमराने लगी। अब गाँवों से कृषक दासों तथा खेतिहर श्रमिकों का नगरों की तरफ बड़ी तेजी से पलायन होने लगा जिससे व्यवसायियों में सस्ती दर पर श्रमिक उपलब्ध हो गये। उद्योग-धन्धों का उत्पादन तथा उत्पादन के खरीददारों की संख्या में भी वृद्धि होती गई। नगर औद्योगिक विकास के भी केन्द्र बन गये। इससे नगरों का विकास द्रुतगति से होने लगा। व्यापार-वाणिज्य तथा उद्योग-धन्धों की उन्नति के परिणामस्वरूप नगरों के सम्पन्न लोगों के पास धन संचित होने लगा। इस बढ़ती हुई समृद्धि ने पुरों और नगरों के विकास को प्रोत्साहित किया।

33.1 नगरों की बसावट (Dwelling of Township)

मध्यकालीन यूरोप के नगरों की बसावट शैली अधिक आकर्षक नहीं थी। नगर के चारों तरफ एक चहारदीवारी होती थी। चहारदीवारी के प्रवेश द्वारों (अर्थात् नगर में प्रवेश करने वाले द्वार) में प्रवेश करने के लिए खाई के ऊपर एक उठाये जाने वाला पुल बना होता था। सूर्यास्त के बाद पुल को उठा लिया जाता था और प्रवेश द्वारा बन्द कर दिया जाता था। ऐसी व्यवस्था लुटेरों तथा बाह्य आक्रमणकारियों से सुरक्षा की दृष्टि से की जाती थी। चहारदीवारी नगर की बढ़ती हुई जनसंख्या को अपनी सीमा में धकेलने का काम भी करती थी। नगर की मुख्य सड़कें तो ठीक-ठाक चौड़ी थीं परन्तु गलियाँ बहुत सँकरी होती थीं। इन सँकरी गलियों के दोनों तरफ ऊँचे कंगूरे वाले मकान थे। गलियाँ सँकरी थीं और मकानों की ऊपरी मंजिलें, छज्जे आदि गलियों में इतनी अधिक आगे को निकली होती थीं कि एक मकान की खिड़की के सामने वाले मकान की खिड़की में छलाँग लगाई जा सकती थी। गलियाँ कच्ची होती थीं और उनमें कूड़ा-कर्कट, गंदा पानी तथा कीचड़ जमा रहता था। रात के समय में प्रकाश रहित इन गलियों को पार करना बहुत ही कष्टदायी होता था। दिन में भी ये गलियाँ दुर्गन्ध से भरी रहती थीं।

नोट्स वस्तुत: मध्यकालीन यूरोपवासियों को सार्वजनिक सफाई एवं स्वास्थ्य के प्रति न तो रुचि थी और न साधन थे।

नगर के एक बड़े खुले मैदान में स्वर्ग की ओर इंगित करते हुये शिखरों वाले भव्य कैथेड्रल (बड़ा गिरजाघर) होते थे। उसके आस-पास गिल्ड-हॉल और ऊँचे घंटाघर होते थे, जो नगर की धार्मिक और आर्थिक गतिविधियों के केन्द्र थे। सार्वजनिक सभाएँ भी वहीं लगती थीं। ज्यादातर शिल्पकार तथा व्यवसायी लोग अपने घरों में ही अपना काम

करते थे। चूँकि उस युग में लोग पढ़ना-लिखना कम जानते थे, अत: ये दुकानदार लोग अपने घरों के आगे मनोहारी छोटे-छोटे चिह्न टांग देते थे जिनको देखकर अनुमान लगा लिया जाता था। जैसे, ढाबा (टैबर्न) चलाने वाले का संकेत सूअर का सिर था तो, मोची का एक बड़ा जूता। महाजन का चिह्न तीन सुनहरी गेंदें थीं तो नाई का चिह्न लाल धारियों वाला एक सफेद बाँस।

33.2 नगर-जीवन की कठिनाइयाँ (Difficulties of Life of Township)

मध्यकालीन यूरोप में नगरवासियों को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ता था। सबसे बड़ी कठिनाई पानी की थी। बहुत से लोगों ने अपने मकानों में कुएँ बनवा रखे थे परन्तु अन्य लोगों को पैसे देकर पानी मँगवाना पड़ता था। पानी चाहे घर के कुएँ का हो अथवा मोल लिया हुआ, काफी गन्दा होता था जिससे लोगों का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता था। कभी-कभी महामारियाँ समूची आबादी का सफाया कर देती थीं। नगर के किसी एक मोहल्ले में यदि आग लग जाती तो वह कई मोहल्लों को अपनी चपेट में ले लेती थी, क्योंकि ज्यादातर मकान लकड़ी के बने होते थे और आस-पास सटे हुए थे। इस प्रकार एक मोहल्ले वालों का यदि दूसरे मोहल्ले वालों से झगड़ा हो जाता तो, दोनों मोहल्लों के लोगों की नींद उड़ जाती थी। हर मोहल्ले में सभी लोग बारी-बारी से रात्रि का पहरा दिया करते थे। बाह्य आक्रमण के दिनों में नगरवासियों का जीवन अत्यधिक दयनीय हो जाता था। यदि आक्रमणकारी लोग नगर की घेराबन्दी करके बैठ जाते तब तो कई लोग अकाल मौत के शिकार बन जाते थे।

33.3 नगरों की प्रबन्ध व्यवस्था (Management System of Township)

मध्यकालीन यूरोप में कई नगर और पुर सामन्तों की 'फीफ' में सम्मिलित थे। ऐसे नगरों के लोगों को अपने सामन्त स्वामी को लाग-बाग तथा चाकरी देनी पड़ती थी। जब नगरों की जनसंख्या और समृद्धि में वृद्धि हुई तो कई नगरवासियों ने अपने सामन्त स्वामी को एकमुश्त धन देकर नगर की स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी। कई नगर ऐसे भी थे जिन्होंने लड़-झगड़कर अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली। ऐसे मामलों में राजाओं का गुप्त सहयोग नगरवासियों को प्राप्त होता था, क्योंकि शासक अपने विरोधी सामन्त की शक्ति को कमजोर करने का अवसर खोना पसन्द नहीं करते थे।

स्वतन्त्र नगरों को ऐसे अधिकार पत्र मिल जाते थे, जिनमें उन्हें नगर का शासन चलाने सम्बन्धी कुछ अधिकारों की गारन्टी दी गई होती थी। सामान्यत: नगर की शासन-व्यवस्था का सर्वोच्च अधिकारी 'मेयर' (बर्गोमास्टर) कहा जाता था। उसकी सहायता के लिये एक परिषद् होती थी जो नगर-शासन से सम्बन्धित कानून बनाती थी। परिषद् के सदस्यों का निर्वाचन अलग-अलग नगरों में पृथक्-पृथक् ढंग से होता था और परिषद् के सदस्य 'मेयर' को चुनते थे। निर्वाचन पद्धति चाहे जो कोई रही हो, लगभग सभी नगरों की शासन-व्यवस्था में धनी व्यवसायियों व्यापारियों, निर्माताओं, महाजनों और कामकाजी लोगों ही का वर्चस्व कायम था। इस नये वर्ग को **'बुर्जुआ'** कहा जाता था। नगर को बुर्ग भी कहते थे। बुर्ग से ही बुर्जुआ शब्द बना प्रतीत होता है। इसी को 'मध्यम वर्ग' भी कहते हैं क्योंकि यह न तो कुलीन था और न ही किसानों और दासों की भाँति निम्न वर्ग था। इस वर्ग के महत्त्व का कारण उसकी धन सम्पत्ति था।

33.4 आर्थिक जीवन (Economic Life)

गिल्ड पद्धति–मध्य युग में भी इनका महत्त्व तो बना रहा परन्तु व्यापार-वाणिज्य और उद्योग धन्धों ने अधिक महत्त्व प्राप्त कर लिया था। यद्यपि मध्य युग में व्यवसायियों को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था; फिर भी वे अपने क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ते रहे। उनकी सफलता में श्रेणियों (गिल्ड) की भूमिका भी उत्तरदायी थी। प्रत्येक व्यवसाय का अपना संघ (एसोसिएशन) होता था, जिसे गिल्ड कहा जाता था। ये संघ व्यवसाय को चलाने के लिये कठोर नियम बनाते थे तथा उत्पादन का मानक तय करते थे। गिल्ड में कारीगरों, मालिकों, प्रशिक्षणार्थियों (अप्रैंटिस), प्रशिक्षितों (जर्नीमैन) और उस्तादों (मास्टर) सभी का उचित प्रतिनिधित्व होता था।

नोट

क्या आप जानते हैं कृषि एवं पशुपालन प्राचीन सभ्यताओं के आर्थिक जीवन के मुख्य आधार थे।

उस्ताद अथवा मिस्त्री के पास जो काम सीखने जाता था, उसे प्रशिक्षार्थी कहा जाता था। उसे वेतन नहीं दिया जाता था। परन्तु उसके खाने-पीने, कपड़े तथा निवास की व्यवस्था उस्ताद करता था। जब वह अपने काम में निपुणता प्राप्त कर लेता था तो उसे 'जर्नीमैन' (प्रशिक्षित) कहा जाता था और उसको वेतन मिलना शुरू हो जाता था। जब श्रेणी अथवा गिल्ड उसे योग्यता का प्रमाण पत्र दे देती तो वह 'उस्ताद' बन जाता था। उसके बाद वह अपनी दुकान खोल सकता था। परन्तु सामान्यत: कई उस्ताद अपने पुत्रों को ही प्रशिक्षित करते थे।

गिल्ड अपने सदस्यों के कल्याण के लिये भी बहुत कुछ करती थी। बीमारी, दुर्घटना, वृद्धावस्था के समय में सदस्यों को आर्थिक सहायता देती थी। उनकी विधवाओं तथा अनाथ बच्चों के भरण-पोषण की व्यवस्था करती थी। सदस्यों के मनोरंजन के लिये नाटक, धार्मिक समारोह और सहभोज का आयोजन करती थी परन्तु गिल्ड के नियमों का उल्लंघन करने वाले सदस्यों के प्रति सख्त कदम उठाती थी। यदि कोई सदस्य घटिया स्तर का उत्पादन करता, काम करने के घण्टों के नियमों का उल्लंघन करता अथवा ग्राहक से निर्धारित कीमत से ज्यादा पैसा लेने का दोषी पाया जाता तो उसे गिल्ड की सदस्यता से पृथक् कर दिया जाता था। यह सजा एक प्रकार से 'जाति से बहिष्कृत' किये जाने के समान ही अपमानजनक होती थी।

मेलों का महत्व

मध्ययुगीन यूरोप के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में मेलों का एक विशेष आकर्षण था। इन मेलों में मनोरंजन की व्यवस्था तो होती ही थी परन्तु व्यापारिक आदान-प्रदान भी होता था। दूर-दूर के व्यापारी लोग सामन्तीय भूमिपतियों को संरक्षण के लिये तथा मेलों में अपना सामान बेचने का अधिकार प्राप्त करने के लिये शुल्क अदा करते थे। इन मेलों में इंग्लैण्ड की ऊन, रूसी मसूर, स्पेनी मदिरा, फ्लैण्डर का लिनन और पूर्वी देशों में आयातित गर्म मसाला, रेशम तथा मलमल और श्रृंगार-प्रसाधन सामग्री का विनिमय किया जाता था। अलग-अलग देशों से आने वाले व्यापारियों के पास अलग-अलग किस्म की मुद्राएँ होती थीं, अत: उनका सही मूल्यांकन करने के लिये 'मनी चेंजर' (नाणावादियों) की जरूरत पड़ती थी। इनमें से कुछ ने साहूकारी का व्यवसाय भी अपना रखा था। कई व्यापारी इन साहूकारों के पास बड़ी-बड़ी राशियाँ सुरक्षित रखने के लिए छोड़ जाते थे और चूँकि सभी को एक साथ वापस धन देने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी, इसलिए साहूकार लोग जमा कराई गई राशि को उधार पर दे देते थे और ब्याज के रूप में मुनाफा कमा लेते थे। ये साहूकार लोग ही आगे चलकर 'महाजन' (बैंकर) बन गये। इन लोगों ने दूसरे देशों के बैंकरों से अपना लेन-देन का सम्पर्क बना लिया। इससे व्यापारियों को सुविधा हो गई। वे अपने क्षेत्र के किसी प्रतिष्ठित महाजन के पास रकम जमा कर देते थे और बदले में गन्तव्य स्थान के महाजन के नाम की **हुण्डी** ले लेते थे। हुण्डी प्रस्तुत करने पर वह महाजन उस व्यापारी की जमा कराई गई रकम दे देता था। यह पद्धति आधुनिक युग के बैंकों द्वारा जारी किये जाने वाले **डिमांड ड्राफ्ट** तथा ट्रैवलर्स चेक से मिलती-जुलती है।

1500 ई. के आसपास तो कागजी मुद्रा का प्रचलन भी शुरू हो गया। मध्यकालीन यूरोप में साहूकारी का काम ज्यादातर यहूदी लोग करते थे। इसका एक कारण तो यह था कि चर्च ब्याज लेने-देने के खिलाफ था। इसलिए ईसाई इस व्यवसाय से दूर रहे। दूसरा कारण यह था कि धार्मिक असहिष्णुता के उस युग में यहूदियों के लिए श्रेणियों के द्वार बन्द थे। इसलिये उनके लिये आजीविका का यही एकमात्र मुनाफा वाला मार्ग खुला था। कालान्तर में इटली के लोम्बार्डी नगर के धनिक भी इस क्षेत्र में आ गये। ऐसे मेलों में इंग्लैण्ड का सेंट इवेंस का मेला, रूस का नोवगोरोव और फ्रांस का शॉपेन का मेला अधिक विख्यात थे।

इन मेलों से कारीगरों, शिल्पकारों तथा हाथ से सामान बनाने वाले किसानों–सभी को प्रोत्साहन मिलता था। उन्हें यह ज्ञात हो गया कि 15-20 दिन चलने वाले इन मेलों में दूर से आने वाले ग्राहक मिल जायेंगे और उनके द्वारा तैयार किया गया सामान बिक जायेगा। विद्वानों का मानना है कि इन मेलों से ही अन्तत: व्यापारिक चिह्नों (ट्रेड मार्क) अर्थात् बेचने-बनाने के एकाधिकार का जन्म हुआ। बहीखाता रखने की पद्धति का विकास हुआ और अच्छे तथा कुशल कारीगरों को अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने का उचित रंगमंच मिला।

एशियाई व्यापार मार्ग—भूमध्यसागर तथा सुदूर-पूर्व के बीच तीन प्रमुख व्यापारिक मार्गों की जानकारी मिली है और इन तीनों व्यापारिक मार्गों पर दीर्घकाल तक मुसलमानों का एकाधिकार रहा। सबसे अधिक प्रचलित मार्ग भारत से फारस की खाड़ी तक, वहाँ से ऊँटों द्वारा दजला-फरात की घाटी में होते हुए बगदाद और वहाँ से एंटियोक की तरफ थे। कुछ व्यापारिक काफिले बगदाद से सिकन्दरिया का मार्ग पकड़ते थे। दूसरा मार्ग उत्तरी स्थल मार्ग था, परन्तु यह अधिक सुविधाजनक नहीं था। यह मार्ग खतरनाक पहाड़ी दर्रों एवं मरुस्थल से होकर गुजरता था। चीन के मरुस्थल को पार करके भारत के उत्तरी पर्वतीय क्षेत्र से होकर कास्पियन सागर के तट के सहारे-सहारे चलते हुए कृष्ण सागर के बन्दरगाहों तक पहुँचता था। सबसे खतरनाक मार्ग दक्षिणी मार्ग था—पूर्वी द्वीप समूह से समुद्र द्वारा भारत के दक्षिण तट और वहाँ से लाल सागर और फिर अरब होते हुये भूमध्यसागर के किनारे तक। लाल सागर से सामान काफिलों के द्वारा सिकन्दरिया ले जाया जाता था।

33.5 ज्ञान-विज्ञान और शिक्षा (Education and Science)

शिक्षा—मध्य युग के पूर्वार्द्ध में पश्चिमी यूरोप शिक्षा की दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ था। शौर्य प्रधान उस युग में पढ़े-लिखे लोगों की अपेक्षा शूरवीर सैनिकों की अधिक आवश्यकता थी। न पर्याप्त संख्या में विद्यालय थे और न ही पुस्तकालय एवं पुस्तकें। अधिकांश लोग अज्ञान, अन्धविश्वास एवं कूप-मण्डूकता के जाल में जकड़े हुए थे। मठों और गिरजाघरों में अध्ययन-अध्यापन होता था परन्तु उसका मुख्य ध्येय बच्चों को मठवासी अथवा पुरोहित बनाना था। इसलिये उन्हें उसी दृष्टिकोण से पढ़ाया जाता था। सम्राट् शार्लमेन ने शिक्षा के प्रसार के लिये अवश्य ही कुछ कार्य किया था परन्तु लोग उसके परिश्रम का अधिक लाभ नहीं उठा पाये। चर्च के विद्यालयों में मुख्यत: लेटिन व्याकरण, चर्च-संगीत, सामान्य गणित, खगोल-शास्त्र और दर्शन की शिक्षा दी जाती थी। गिल्ड ने भी अपने सदस्यों के बच्चों की शिक्षा के लिये कुछ विद्यालयों की स्थापना की थी। सम्पन्न परिवार अपने बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था अपने घरों पर ही कर लेते थे। इसके लिए दो-चार शिक्षकों की व्यवस्था कर ली जाती थी।

व्यापार-वाणिज्य की उन्नति के परिणामस्वरूप जब यूरोपीय देशों की समृद्धि का विकास हुआ तो नगरवाद के साथ-साथ विश्वविद्यालयों का भी भाग्योदय हुआ और अब हजारों छात्र अपनी ज्ञान-पिपासा को तृप्त करने के लिये वहाँ आने लगे। यह परिवर्तन धर्मयुद्धों के द्वारा पूर्वी देशों के साथ सम्पर्क के कारण भी आया। क्योंकि यूरोपवासी उन दिनों में विद्वान् मुसलमानों, यहूदियों और बाइजैन्टाइन लोगों के सम्पर्क में आये थे और उनकी विद्वता से काफी प्रभावित हुये थे। ये विश्वविद्यालय किसी पूर्व योजना के अन्तर्गत विकसित नहीं हुये थे। अनायास ही उनका उद्‌भव और विकास होता चला गया। चर्च के कुछ बड़े विद्यालय, विश्वविद्यालय में परिवर्तित हो गये। इनमें से कुछ विश्वविद्यालयों ने किसी खास क्षेत्र अथवा विषय में अपनी अलग पहचान बना ली थी। उदाहरण के लिये पारी (पेरिस) का विश्वविद्यालय धर्म की शिक्षा के लिये विख्यात हो गया।

क्या आप जानते हैं इटली का सालर्नो विश्वविद्यालय चिकित्सा विज्ञान के लिये प्रसिद्ध हुआ।

इंग्लैण्ड के ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय भी प्रसिद्ध हुये। जर्मनी का हाइडलबर्ग विश्वविद्यालय भी शिक्षा का विख्यात केन्द्र बन गया था। अधिकांश विश्वविद्यालय कलावर्ग संकाय से सम्बन्धित विषयों के साथ-साथ धर्म, विज्ञान, कानून और चिकित्सा की शिक्षा प्रदान करते थे। पाठ्यक्रम के विषयों में व्याकरण, अलंकार-शास्त्र, तर्कशास्त्र, ज्यामिति, अंकगणित, खगोल विज्ञान, संगीत आदि अधिक लोकप्रिय थे। इसी युग में 'बी. ए.' तथा 'एम. ए.' की उपाधियों का भी प्रचलन शुरू हुआ था। एम. ए. की उपाधि प्राप्त करने वाला व्यक्ति प्राध्यापक बनने की योग्यता प्राप्त कर लेता था।

पाठ्य-पुस्तकों की कमी के कारण विद्यार्थियों को नोट लेना बहुत जरूरी था क्योंकि अध्यापन व्याख्यान-पद्धति से होता था। जटिल समस्याओं पर वाद-विवाद भी होते थे। विद्यार्थियों से शुल्क वसूल किया जाता था और जो लोग बहुत निर्धन होते थे वे अपने शिक्षकों से अनुमति लेकर भिक्षा माँगकर फीस चुकाते थे। समाज में शिक्षक और

नोट

विद्यार्थी—दोनों सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे और वे विभिन्न राजकीय करों से मुक्त रखे जाते थे। दोषी शिक्षकों और विद्यार्थियों पर केवल चर्च के न्यायालयों में ही मुकदमा चलाया जा सकता था। अवकाश के क्षणों में आजकल के विद्यार्थियों की भाँति मौज-मस्ती भी मारते थे।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ

(State whether the following statements are True/False)—

1. राइन नदी के तट पर कोलन नगर अधिक प्रसिद्ध था।
2. यूरोपवासी सार्वजनिक सफाई और स्वास्थ्य के प्रति बेहद सजग थे।
3. जनसंख्या बढ़ने के साथ-साथ दास-प्रथा चरमराने लगी।
4. व्यापारी और दुकानदार लोग अपनी दुकानों के आगे लिखित बोर्ड लगाते थे।
5. मध्यकालीन यूरोप में पीने के साफ पानी की व्यवस्था थी।
6. मोहल्ले के ज्यादातर मकान लकड़ी के बने होते थे।
7. बुर्जुआ शब्द की उत्पति 'बुर्ग' शब्द से हुई प्रतीत होती है।
8. किसानों की संगठित संस्था को गिल्ड कहा जाता था।

33.6 सारांश (Summary)

- गाँवों से कृषक दासों तथा खेतिहर श्रमिकों का नगरों की तरफ बड़ी तेजी से पलायन होने लगा जिससे व्यवसायियों में सस्ती दर पर श्रमिक उपलब्ध हो गये। उद्योग-धन्धों का उत्पादन तथा उत्पादन के खरीददारों की संख्या में भी वृद्धि होती गई। नगर औद्योगिक विकास के भी केन्द्र बन गये। इससे नगरों का विकास द्रुतगति से होने लगा। व्यापार-वाणिज्य तथा उद्योग-धन्धों की उन्नति के परिणामस्वरूप नगरों के सम्पन्न लोगों के पास धन संचित होने लगा। इस बढ़ती हुई समृद्धि ने पुरों और नगरों के विकास को प्रोत्साहित किया।
- मध्यकालीन यूरोप के नगरों की बसावट शैली अधिक आकर्षक नहीं थी। नगर के चारों तरफ एक चहारदीवारी होती थी। चहारदीवारी के प्रवेश द्वारों (अर्थात् नगर में प्रवेश करने वाले द्वार) में प्रवेश करने के लिए खाई के ऊपर एक उठाये जाने वाला पुल बना होता था। सूर्यास्त के बाद पुल को उठा लिया जाता था और प्रवेश द्वारा बन्द कर दिया जाता था। ऐसी व्यवस्था लुटेरों तथा बाह्य आक्रमणकारियों से सुरक्षा की दृष्टि से की जाती थी।
- मध्यकालीन यूरोप में नगरवासियों को अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ता था। सबसे बड़ी कठिनाई पानी की थी। बहुत से लोगों ने अपने मकानों में कुएँ बनवा रखे थे परन्तु अन्य लोगों को पैसे देकर पानी मँगवाना पड़ता था।
- मध्यकालीन यूरोप में कई नगर और पुर सामन्तों की 'फीफ' में सम्मिलित थे। ऐसे नगरों के लोगों को अपने सामन्त स्वामी को लाग-बाग तथा चाकरी देनी पड़ती थी। जब नगरों की जनसंख्या और समृद्धि में वृद्धि हुई तो कई नगरवासियों ने अपने सामन्त स्वामी को एकमुश्त धन देकर नगर की स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी। कई नगर ऐसे भी थे जिन्होंने लड़-झगड़कर अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली। ऐसे मामलों में राजाओं का गुप्त सहयोग नगरवासियों को प्राप्त होता था, क्योंकि शासक अपने विरोधी सामन्त की शक्ति को कमजोर करने का अवसर खोना पसन्द नहीं करते थे।
- मध्ययुगीन यूरोप के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में मेलों का एक विशेष आकर्षण था। इन मेलों में मनोरंजन की व्यवस्था तो होती ही थी परन्तु व्यापारिक आदान-प्रदान भी होता था। दूर-दूर के व्यापारी लोग

नोट

सामन्तीय भूमिपतियों को संरक्षण के लिये तथा मेलों में अपना सामान बेचने का अधिकार प्राप्त करने के लिये शुल्क अदा करते थे।

- 1500 ई. के आसपास तो कागजी मुद्रा का प्रचलन भी शुरू हो गया। मध्यकालीन यूरोप में साहूकारी का काम ज्यादातर यहूदी लोग करते थे। इसका एक कारण तो यह था कि चर्च ब्याज लेने-देने के खिलाफ था। इसलिए ईसाई इस व्यवसाय से दूर रहे। दूसरा कारण यह था कि धार्मिक असहिष्णुता के उस युग में यहूदियों के लिए श्रेणियों के द्वार बन्द थे। इसलिये उनके लिये आजीविका का यही एकमात्र मुनाफा वाला मार्ग खुला था।
- मध्य युग के पूर्वार्द्ध में पश्चिमी यूरोप शिक्षा की दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ था। शौर्य प्रधान उस युग में पढ़े-लिखे लोगों की अपेक्षा शूरवीर सैनिकों की अधिक आवश्यकता थी। न पर्याप्त संख्या में विद्यालय थे और न ही पुस्तकालय एवं पुस्तकें। अधिकांश लोग अज्ञान, अन्धविश्वास एवं कूप-मण्डूकता के जाल में जकड़े हुए थे। मठों और गिरजाघरों में अध्ययन-अध्यापन होता था परन्तु उसका मुख्य ध्येय बच्चों को मठवासी अथवा पुरोहित बनाना था। इसलिये उन्हें उसी दृष्टिकोण से पढ़ाया जाता था।

33.7 शब्दकोश (Keywords)

- **गिल्ड**–व्यवसायियों की संगठित संस्था।
- **हुन्डी**–महाजनी क्षेत्र में ऋण लेने या देने के दौरान लिखित गारण्टी पत्र (डिमाण्ड ड्राफ्ट)।

33.8 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मध्यकालीन यूरोप में नगरों की बसावट की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. नगरों की शासन व्यवस्था कैसी थी?
3. गिल्ड पद्धति के विशेष सन्दर्भ में नगरों की आर्थिक व्यवस्था का विवेचन कीजिए।
4. ज्ञान-विज्ञान और शिक्षा की स्थिति का विश्लेषण कीजिए।
5. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए–

(क) जर्नीमैन (ख) एशियाई व्यापार मार्ग (ग) नगरीय जीवन की कठिनाइयां।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य	2. असत्य	3. सत्य	4. असत्य
5. असत्य	6. सत्य	7. सत्य	8. असत्य।

33.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–34: युद्ध एवं संचार की तकनीक (Technologies of Warfare and Communication)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)
प्रस्तावना (Introduction)
34.1 तोप का प्रयोग (Uses of Cannons)
34.2 किलेबंदी (Fortification)
34.3 सैन्य संगठन (Military Organization)
34.4 संचार-व्यवस्था (Communication System)
34.5 सारांश (Summary)
34.6 शब्दकोश (Keywords)
34.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)
34.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- तोप का प्रयोग तथा किलेबन्दी से अवगत होंगे;
- सैन्य संगठन तथा संचार व्यवस्था से परिचित होंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्यकालीन सेनाओं की स्थिति, सैनिकों की युद्ध क्षमता, तथा युद्ध की तकनीकें समय और क्षेत्र के अनुसार विभिन्नता पर आधारित थी। लम्बे समय तक चलने वाले युद्धों का पूर्व-आकलन कर लिया जाता था। युद्ध से पूर्व युद्ध के नेतृत्वकर्ताओं के बीच विभिन्न दौर के सलाह-मशवरे होते थे तथा योजनाएँ बनती थीं। इन सभाओं में कई तरह के मसौदे पेश किए जाते थे, अलग-अलग रणनीतियां बनाई जाती थीं। उन पर सामान्य बहस होती थी, यह योजनाएँ बहुमत से पारित हुआ करती थीं। युद्ध क्षेत्र में संचार बेहद दुष्कर कार्य था। युद्ध के मैदान में किसी तरह का संदेश देने के लिए विभिन्न परम्परागत उपाय अपनाए जाते थे जैसे कि–संगीत द्वारा संकेत देना, ऊँची आवाज में चिल्लाकर, संदेशक भेजकर, सफेद कपड़ा लहराकर या झण्डा फहराकर।

युद्ध क्षेत्र में सैनिकों को अवस्थित करना (जमाना) भी एक कला थी। सबसे आगे धनुर्धारी लगाए जाते थे या उन सैनिकों को लगाया जाता था जो अस्त्र फेंककर मारते थे। धनुर्धर सैनिक दुश्मन सेना पर सामने से हमला बोलते थे जबकि धनुर्धरों के लिए एक सुरक्षात्मक कवच बनाते हुए घुड़सवार सैनिक दुश्मनों की सेना पर पीछे से आक्रमण करते थे।

नोट

रकाब की खोज का मध्यकालीन यूरोप के इतिहास में एवं युद्ध के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। रकाब (घोड़े की पीठ पर रखी जाने वाली गद्दी तथा पैर टिकाए रखने का पायदान) का प्रयोग होने से घोड़े का महत्त्व युद्ध में बढ़ गया। अब घुड़सवार सैनिक जीत के लिए प्रमुख सहायक बन गए।

34.1 तोप का प्रयोग (Uses of Cannons)

लम्बी नालीदार गर्दन वाली तोप का आविष्कार युद्ध के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाया। तोप में बारूद से बने गोले डालकर दागे जाते थे, जिससे प्रतिपक्षी सेना के दर्जनों सैनिक एक बार में ही घायल हो जाते थे। युद्ध लड़ते हुए इतने सैनिक नहीं मारे जाते थे जितने बचने के लिए मची भगदड़ में मारे जाते थे। मध्यकालीन युद्ध में सबसे ज्यादा सैनिक तब मारे जाते थे जब वे दुश्मन से बच निकलने के लिए हड़बड़ाहट में भागते थे।

तोप के युद्ध में प्रयोग होने से धनुर्धारी तथा बरछी-भालामार सैनिकों का महत्त्व घटता गया। युद्ध में मारे गए लोगों में सबसे ज्यादा संख्या इन्हीं लोगों की होती थी।

तोपों में पहिए लगने के बाद इसे लाना-ले जाना आसान हो गया।

नोट्स किसी देश या राजा की सेना में तोप तथा गोला बारूद का होना ही युद्ध का निर्णय उसके पक्ष में मोड़ देता था।

हालांकि गोले दागने की दर बेहद कम थी। कभी-कभी कई दिनों के युद्ध में केवल एक बार ही तोप दागी जाती थी। निशाना सटीकता से न लग पाने के कारण कई बार इसका प्रयोग घातक सिद्ध होता था। सही निशाने पर न लगने के कारण अक्सर अपने सैनिक ही हताहत हो जाते थे।

धीरे-धीरे समय के साथ तोप तथा गोला-बारूद में सुधार किया गया जिससे इसके वजन में कमी आई। इसे घुमाना आसान हुआ। तोप के मुँह (नली) को विशेष आकार दिया गया ताकि निशाना सटीक लगे। तोप में पहिए लगने से इसके आवागमन की सुविधा मिली।

34.2 किलेबंदी (Fortification)

मध्यकाल से पूर्व बड़े-बड़े केन्द्रीकृत राज्यों में बिखराव हुआ। छोटे-छोटे राज्यों में हमला-लूटपाट आदि आय का मुख्य स्रोत था। कई राज्य कुछ संगठित समूहों में रहते थे। हिंसक समूहों का एक-दूसरे पर हमला, लूटपाट आदि आम बात थी। हिंसक और लूटपाट करने वाले समूहों में विशेष रूप से वाइकिंग्स, अरब, मंगोल, तुर्क आदि थे। ये समूह आमतौर पर छोटे थे तथा यायावर प्रवृत्ति के थे। विशेष अन्तराल पर अपना स्थान (डेरा) बदलते रहते थे। अक्सर एक समूह दूसरे समूह पर रात में सोते समय हमला कर देता जिससे जान-माल के साथ ही अपार धन की हानि होती थी।

क्या आप जानते हैं बाहरी हमलों से बचने का सबसे कारगर उपाय था—किलेबंदी।

दुर्ग या महल अचानक या रात में होने वाले आक्रमणों से बेहतर रक्षा करता था। महल या किलेबंदी वह संरचना थी, जो मध्यकालीन सामन्त वर्ग के लिए, अभिजनों तथा शासक वर्ग के लिए कवच का कार्य करती थी। एक महल के अन्दर वे हमलावरों, बाहरी आक्रमणकारियों आदि से सुरक्षित थे साथ ही अन्न-पानी रसद आदि भी महफूज थे।

किलेबन्दी सुरक्षा के साथ-साथ युद्ध का महत्त्वपूर्ण हिस्सा थी। राजा, शासक वर्ग, राजपरिवार तथा महलवासियों को संरक्षण देने के साथ ही किलेबंदी खुली लड़ाइयों में सामना करने के लिए सेनाओं को शरण प्रदान करती थी। विशाल

नोट

घुड़सवार सेना एक अच्छी किलेबन्दी के समक्ष बेकार थी। किलेबन्दी एक-दो दिन में नहीं हो जाती थी बल्कि इसमें महीनों-सालों का समय लग जाता था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the Blanks)–

1. युद्ध क्षेत्र में सैनिकों को अवस्थित करना एक .... थी।
2. युद्ध के इतिहास में .... की खोज का महत्त्वपूर्ण स्थान है।
3. लम्बी नालीदार गर्दन वाला हथियार .... थी।
4. बाहरी शत्रुओं के आक्रमण से बचने का ठोस उपाय था ....।

घेराबन्दी युद्ध (Siege Warfare)

मध्यकाल युग में शत्रु सेना को परास्त करने के लिए घेराबन्दी तकनीक अपनाई जाती थी। घेराबन्दी की विधियों में स्केलिंग सीढ़ी, ऊँची मेढ़ें बनाना और घेराबन्दी करना आदि शामिल था। घेराबन्दी के दौरान शत्रु सेना पर बड़े-बड़े भारी पत्थर फेंकने वाली गुलेल (मशीन) लगाई जाती थीं। शत्रु के आने वाले मार्ग पर पहले से बड़ी-बड़ी खाई (गहरी खाई) सुरंग आदि खोद दी जाती थी और उसे मिट्टी आदि से ऐसे ढंक दिया जाता था जिससे उसके होने का पता न चले। धोखे से शत्रु सेना को खाई में गिरा दिया जाता था।

घेराबन्दी विधि में माइनिंग (सुरंग) भी शामिल थी। बड़ी-बड़ी बाहरी दीवारों के नीचे लम्बी और गहरी सुंरग खोद दी जाती थी, जिससे दीवार की नींव एकदम कमज़ोर हो जाए और जब शत्रु सेना उस दीवार तक पहुँचे, उस दीवार को अचानक शत्रुओं पर गिरा दिया जाता था। इन विधियों का प्रयोग रोमन सेना किया करती थी, परन्तु इसका बड़े पैमाने पर प्रयोग धर्मयुद्धों के दौरान किया गया।

घेराबन्दी के उन्नत तथा रक्षात्मक उपायों को विभिन्न साम्राज्य प्रोत्साहित किया करते थे। मध्ययुगीन किलेबन्दी व घेराबन्दी उत्तरोत्तर मज़बूत बनती गई। उदाहरण के लिए–कंक्रीट की मज़बूत दीवारें बनाई जाने लगीं, इन दीवारों के साथ ऊँचे-ऊँचे लम्बे-चौड़े गुम्बद बनाए गए के जिनमें बड़े छेद बने होते थे जिनके पीछे छिपे सैनिक शत्रु सेना पर बड़े व भारी पत्थर फेंकते थे। इन बड़े छेदों को 'मौत के छेद' के नाम से जाना जाता था। इस तरह के छेद गुम्बदों का प्रयोग फ्रांस तथा उसके समकालिक इंगलिश साम्राज्यों में होता था।

34.3 सैन्य संगठन (Military Organization)

मध्यकालीन योद्धा सामान्य तौर पर एक बख्तरबन्द सैनिक होता था। इनकी कई श्रेणियाँ होती थी। कुछ सैनिक केवल धनुर्धर या तीर-भाला चलाने वाले पैदल सैनिक होते थे। जबकि कुछ तलवार तथा अन्य उन्नत अस्त्र चलाने वाले बख्तरबन्द (कवचधारी) घुड़सवार सैनिक थे।

सेना में भर्ती सामान्यत: अच्छे और उच्च वर्गों से होती थी, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर निम्न वर्ग और यहाँ तक कि दासों (गुलामों) को भी सेना में भर्ती कर लिया जाता था। घुड़सवारों की अधिकतम संख्या का किसी सेना में होना, उसकी जीत को सुनिश्चित करता था। सामन्त अपनी सेना आवश्यकता पड़ने पर राजा को देता था। अपनी सेना को चुस्त-दुरुस्त बनाए रखने के लिए सामन्त सदैव सतर्क रहता था। सामन्त केवल उन्हीं लोगों को सेना में भर्ती करता था, जो ज्यादातर अपने खर्चे स्वयं उठा सकते थे। अपने घोड़े, कवच, हथियार आदि की व्यवस्था और देखभाल योद्धा को स्वयं करनी पड़ती थी।

अच्छे व महँगे घुड़सवारों को, जो बख़्तरबन्द और सशस्त्र होते थे युद्ध में भेजा जाता था। जो योद्धा अपनी सैन्य उपाधि को लगातार बनाए नहीं रख पाता था उससे पदवी छीन ली जाती थी।

नोट

> *टास्क* मध्यकालीन योद्धाओं को राज्य की ओर से मिलने वाली सुविधाओं (वेतन) आदि का पता लगाइए।

भर्ती (Recruitment)

मध्यकाल में प्रत्येक सामन्त या 'नोबल' का यह दायित्व था कि युद्ध में आवश्यकता पड़ने पर तथा बुलाए जाने पर वह स्वयं के घोड़े, बख़्तरबन्द तथा शस्त्रों के साथ उपस्थित हो। उस काल में इस प्रणाली को सैन्य विकेन्द्रीकरण कहा जाता था।

राजा या सम्राट के पास अपनी कोई सेना नहीं थी। सैन्य व्यवस्था सामन्त या जागीरदार करते थे। भर्ती से लेकर युद्ध स्थल तक सेना भेजना सामन्त का कार्य था। आवश्यकता पड़ने पर सामन्त खुद भी युद्ध में भाग लेता था। सामन्त दूसरे सामन्तों से सैन्य सेवा भाड़े पर भी लेता था। अत्यधिक सैन्य आवश्यकता की पूर्ति के लिए दासों व किसानों को भी पैदल सैन्य कोर में शामिल कर लिया जाता था। युद्ध के दौरान मरने वालों और हताहत होने वालों की संख्या में यही सबसे अधिक होते थे।

जब केन्द्रकृत सरकारें बनी, सामन्त प्रथा का विघटन हुआ तब सेना में नागरिकों की भर्ती शुरू हुई। सेना स्थायी होती थी तथा राजा या शासक के सीधे नियन्त्रण में थी। आवश्यकता पड़ने पर राजा सहायक राजाओं से भाड़े पर सैनिक लेता था।

यह माना जाने लगा कि सबसे अच्छा सैन्य कर्मी एक स्वतन्त्र किसान का बेटा हो सकता है। अत: किसान 'केन्द्रीय भर्ती उपकरण' के रूप में उभर कर सामने आया। अंग्रेज किसानों के बेटे अच्छे तीरन्दाज तथा सैनिक साबित होने लगे। मध्य युग में इंग्लैण्ड सर्वाधिक केंद्रीकृत राज्य था। सैद्धान्तिक रूप से प्रत्येक इंग्लैण्डवासी को चालीस दिन तक सैन्य सेवा देनी पड़ती थी, लेकिन चालीस दिन किसी अभियान के लिए पर्याप्त समय नहीं था, खासकर एक महाद्वीप पर। अत: भाड़े के सैनिकों की प्रथा-सी चल पड़ी। मध्य युग में यूरोप में सबसे ज्यादा भाड़े के सैन्यकर्मियों का इस्तेमाल किया गया। 12वीं शताब्दी तक यूरोप भाड़े के सैनिकों की एक विशाल मण्डी (बाजार) बन चुका था।

34.4 संचार व्यवस्था (Communication System)

मध्यकाल से पहले सन्देश भेजने के कई परिष्कृत उपाय व विधियाँ अपनाई जाती थीं। जैसे—पर्शियन साम्राज्य में दूत भेजने की प्रथा, इंका साम्राज्य में रिले-धावक प्रणाली आदि। रोमन साम्राज्य के विघटन के बाद यूरोपीय साम्राज्यों ने दूत व्यवस्था तथा निजी या सामूहिक रूप से भेजी सन्देश प्रणाली पर भरोसा करना कम कर दिया।

मध्यकाल में संदेश व संचार व्यवस्था

मध्यकाल में यात्रा करना एक खतरनाक, कठिन, महँगी तथा अधिक समय गँवाने वाला कार्य था। शासक, बिशप, अमीर सामंत आदि लोगों के पास समय का अभाव था अत: अपने सन्देश, सूचनाओं को भेजने के लिए उन्हें विश्वसनीय संदेशवाहक नियुक्त करने पड़ते थे, जो उनकी ओर से उनका कार्य पूरा करें।

मध्यकाल में राजाओं, संस्थाओं, बिशपों, मठों, विश्वविद्यालयों, पोप, व्यापारिक कम्पनियों आदि के अपने स्वयं के सन्देशवाहक (दूत) थे। इनमें से कुछ को शाही डीक्री द्वारा संरक्षित किया गया था। पोप का स्वयं का एक संचार तन्त्र था, जिसमें कई दूत थे, जिनकी मदद से पोप छोटे कलर्गी (पादरी) को सन्देश भिजवाते थे। रोम से निरंतर अन्तराल पर सन्देश भेजें व प्राप्त किए जाते थे।

धनी व सम्पन्न लोग तथा संगठन ही कूरियर व्यवस्था को वहन कर पाते थे। घोड़े, आवास तथा यात्रा का खर्च जो वहन कर पाता था, वही कूरियर वाहक रखता था।

नोट

क्या आप जानते हैं सबसे अच्छा पुरुष दूत उसे माना जाता था जो स्वस्थ और हट्टा-कट्टा होता था तथा साथ ही उसे एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान होता था। बहु-भाषी होना सन्देशवाहक के लिए अतिरिक्त योग्यता समझा जाता था।

पुरुष दूत

युद्ध जैसे संवदेनशील हालातों में सन्देश अक्सर कोड (गुप्त) रूप से भेजे जाते थे। भेष बदलकर सेना में जाना और रणनीति ज्ञात करना।

इस तरह की स्थितियों में प्राय: सन्देशवाहक अपना असली रूप नहीं दिखाता था। अक्सर वह तीर्थयात्री, राही या अन्य रूप धरकर पहुँचता था। सन्देश कोड भाषा में होता था, या लिखित भाषा में होता था जिसे दूत अपने जूतों में या कपड़ों में छिपा कर रखता था।

संदेशवाहक दूत को अक्सर विशेष तरह के उपहार ले जाने पड़ते थे जो कि स्वयं में गुप्त संदेश होते थे। यात्रा के दौरान दूत को इन उपहारों का अपनी जान से भी ज्यादा ख्याल रखना पड़ता था।

सन्देशवाहक (दूत) में कुछ अनिवार्य योग्यताओं का होना जरूरी था। उसे अच्छा घुड़सवार होना चाहिए, तैराक होना चाहिए, रूप-भेष बदलने में माहिर होना चाहिए, दो से अधिक भाषाओं का ज्ञान होना चाहिए इत्यादि।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ–

(State whether the following statements are True/False)

5. घेराबन्दी के दौरान शत्रु सेना पर बड़ी गुलेल से भारी पत्थर फेंके जाते थे।
6. घेराबन्दी की ज्यादातर विधियों का प्रयोग ईरानी सेना करती थी।
7. दीवार में बने बड़े छेदों को 'मौत के छेद' कहा जाता था।
8. आवश्यकता पड़ने पर सामन्त राजा से सेना लेता था।
9. युद्ध के समय जरूरत पर किसानों व दासों को भी भर्ती कर लिया जाता था।
10. सबसे अच्छा सन्देश वाहक पोप हुआ करते थे।

34.5 सारांश (Summary)

- युद्ध के मैदान में किसी तरह का संदेश देने के लिए विभिन्न परम्परागत उपाय अपनाए जाते थे, जैसे कि–संगीत द्वारा संकेत देना, ऊँची आवाज में चिल्लाकर, सन्देशक भेजकर, सफेद कपड़ा लहराकर या झण्डा फहराकर।
- रकाब की खोज का मध्यकालीन यूरोप के इतिहास में, युद्ध के इतिहास में, एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। रकाब (घोड़े की पीठ पर रखी जाने वाली गद्दी तथा पैर टिकाए रखने का पायदान) का प्रयोग होने से घोड़े का महत्त्व युद्ध में बढ़ गया। अब घुड़सवार सैनिक जीत के लिए प्रमुख सहायक बन गए।
- छोटे-छोटे राज्यों में हमला-लूटपाट आदि आय का मुख्य स्रोत था। कई राज्य कुछ संगठित समूहों में रहते थे। हिंसक समूहों का एक-दूसरे पर हमला, लूटपाट आदि आम बात थी। हिंसक और लूटपाट करने वाले समूहों में विशेष रूप से वाइकिंग्स, अरब, मंगोल, तुर्क आदि थे।
- घेराबन्दी के दौरान शत्रु सेना पर बड़े-बड़े भारी पत्थर फेंकने वाली गुलेल (मशीन) लगाई जाती थीं। शत्रु के आने वाले मार्ग पर पहले से बड़ी-बड़ी खाई (गहरी खाई) सुरंग आदि खोद दी जाती थी और उसे मिट्टी आदि से ऐसे ढग दिया जाता था जिससे उसके होने का पता ना चले। धोखे से शत्रु सेना को खाई में गिरा दिया जाता था।

- सेना में भर्ती सामान्यत: अच्छे और उच्च वर्गों से होती थी, परन्तु आवश्यकता पड़ने पर निम्न वर्ग और यहाँ तक कि दासों (गुलामों) को भी सेना में भर्ती कर लिया जाता था। घुड़सवारों की अधिकतम संख्या का किसी सेना में होना, उसकी जीत को सुनिश्चित करता था।
- राजा या सम्राट के पास अपनी कोई सेना नहीं थी। सैन्य व्यवस्था सामन्त या जागीरदार करते थे। भर्ती से लेकर युद्ध स्थल तक सेना भेजना सामन्त का कार्य था। आवश्यकता पड़ने पर सामन्त खुद भी युद्ध में भाग लेता था। सामन्त दूसरे सामन्तों से सैन्य सेवा भाड़े पर भी लेता था।
- मध्ययुग में इंग्लैण्ड सर्वाधिक केन्द्रीकृत राज्य था। सैद्धान्तिक रूप से प्रत्येक इंग्लैण्ड वासी को चालीस दिन तक सैन्य सेवा देनी पड़ती थी, लेकिन चालीस दिन किसी अभियान के लिए पर्याप्त समय नहीं था, खासकर एक महाद्वीप पर। अत: भाड़े के सैनिकों की प्रथा-सी चल पड़ी।

34.6 शब्दकोश (Keywords)

- **किलेबन्दी**–राज्य के महत्त्वपूर्ण हिस्सों के चारों ओर ऊँची मज़बूत दीवारों तथा महल का निर्माण (सुरक्षा की दृष्टि से)।
- **दूत**–सन्देश या सूचना लेकर जाने वाला।
- **रकाब**–घोड़े की पीठ पर बिछाने वाली गद्दी तथा पायदान जिस पर सवार पैर टिका कर बैठता है।

34.7 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मध्यकालीन यूरोप की युद्ध प्रणाली कैसी थी?
2. 'तोप का प्रयोग युद्ध में निर्णायक सिद्ध हुआ।' विवेचना कीजिए।
3. किलेबन्दी से आप का क्या तात्पर्य है?
4. घेराबन्दी प्रणाली क्या थी? यह किलेबन्दी से कैसे अलग थी?
5. सैन्य संगठन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
6. मध्यकालीन संचार-व्यवस्था का विश्लेषणात्मक मूल्यांकन कीजिए।
7. भर्ती प्रक्रिया पर संक्षिप्त नोट लिखिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. कला	2. रकाब	3. तोप	4. किलेबन्दी
5. सत्य	6. असत्य	7. सत्य	8. असत्य
9. सत्य	10. असत्य।		

34.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बिपिन बिहारी सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास–ओम प्रकाश प्रसाद–राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका–रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल–राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास–कौलेश्वर राम–किताब महल।
5. विश्व इतिहास–कुसुम वाजपेयी–इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास–बी.बी. सिन्हा–ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास–गिरीश कुमार सिंह–ओमेगा पब्लिकेशन।

नोट

इकाई–35: रिश्तेदारी व्यवस्था और पारिवारिक संरचना (Kinship Pattern and Family Structure)

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

35.1 पारिवारिक संरचना (Family Structure)

35.2 वंशानुक्रम संपत्ति हस्तांतरण (Inheritance Transfer of Property)

35.3 सारांश (Summary)

35.4 शब्दकोश (Keywords)

35.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

35.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे–

- पारिवारिक संरचना को जानेंगे;
- वंशानुक्रम सम्पत्ति हस्तांतरण को समझेंगे।

प्रस्तावना (Introduction)

मध्यकालीन यूरोपीय परिवार और समाज आज के आधुनिक परिवार और समाज से मिलता-जुलता था। समाज के सभी वर्गों के लिए 'परिवार' जीवन का केन्द्र था। आज परिवार का 'एकल' रूप अधिक दिखाई देता है, लेकिन मध्ययुग के यूरोपीय परिवार 'संयुक्त' परिवार थे जिनमें अधिक पारिवारिक सदस्य शामिल रहते थे।

राजा या शासक वर्ग का परिवार काफी बड़ा होता था जिनमें बहुत से व्यक्ति रहते थे। राजा पर आश्रित राज-परिवार रिश्तेदार, नौकर-चाकर आदि। इनके लिए रहने की व्यवस्था भी महल में ही बने विभिन्न तरह के कमरों में थी।

निम्न वर्ग भी, जिनमें शामिल हैं–किसान, मजदूर, पेशेवर आदि इनके परिवार भी आज के परिवारों से सामान्यत: बड़े होते थे। विभिन्न रिश्तेदार और सेवक आदि एक साथ रहते थे।

उत्तरोत्तर मध्यकाल तक पारिवारिक संगठन की प्रक्रिया सामान्य बनी रही। आधुनिक काल आते-आते परिवारों में गोपनीयता बढ़ने लगी। पारिवारिक गोपनीयता ने परिवार की संरचना को भंग करना शुरू कर दिया।

35.1 पारिवारिक संरचना (Family Structure)

मध्यकालीन परिवारों की प्रकृति सैन्य आधारित थी। प्रत्येक परिवार में सामान्यत: एक व्यक्ति सैन्य कर्मी था। परिवार मुख्य रूप से पुरुष प्रधान था। मध्यकाल के अंत तक कुछ परिवारों में महिला प्रधान भी पाई जाने लगी थी। घर में उनका दखल भी था लेकिन केवल घर की चारदीवारी के भीतर ही।

महिलाओं का मुख्य कार्य घरेलू मामलों का प्रबंध करना था। महिलाएँ, उनकी बेटियाँ व अन्य स्त्री सदस्य खाना बनाना, साफ-सफाई, धोना-मांजना तथा पालतू पशुओं की देखभाल व अन्य कार्य किया करती थी। कुलीन परिवारों में महिलाओं की सहायता के लिए घरेलू सेवक व सेविकाएँ भी थी जो उनके काम में सहायक थीं आवश्यकता पड़ने पर घरेलू पुरुष नौकरों को भी सेना में शामिल कर लिया जाता था।

शाही परिवार का पारिवारिक ढाँचा जनता व अन्य वर्गों से सर्वथा भिन्न था। शाही परिवार की देखभाल के लिए सेवकों, अनुचरों व दासों की लंबी-चौड़ी जमात थी जो केवल वंशानुक्रम आधार पर रखे जाते थे।

एक समारोह द्वारा पदानुक्रम की घोषणा शाही परिवार द्वारा की जाती थी। एक पदानुक्रम सामाजिक होता था जबकि दूसरा अपने शीर्ष पर होता था।

शाही परिवार की प्रत्येक जरूरत के लिए सुसंगठित सेवकों, कर्मचारियों का दल था। शाही परिवार के शयनकक्षों के लिए सेविकाएँ थीं। शाही रसोई के लिए मसालची खानसामा तथा अन्य सहायक सेवक थे।

नोट्स आज परिवार का 'एकल' रूप अधिक दिखाई देता है, लेकिन मध्य युग के यूरोपीय परिवार 'संयुक्त' परिवार थे।

35.2 वंशानुक्रम संपत्ति हस्तांतरण (Inheritance Transfer of Property)

पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी यूरोप में संपत्ति पर मालिकाना हक पुरुषों का था। ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष परिवार का प्रधान होने के साथ ही सर्वेसर्वा था। वहीं पैतृक संपत्ति का स्वामी था। अपनी अर्जित संपत्ति के साथ-साथ पूर्वजों से प्राप्त खेत, धन व अन्य सम्पत्ति पर पुरुष का ही मालिकाना हक था। इस तरह की पैतृक परंपरा पीढ़ियों से चली आ रही थी और उस काल तक बनी हुई थी। भूमि या मकान आदि के रूप में संपत्ति पर महिलाओं का मालिकाना हक मध्य युग के आखिरी दशकों में मिला। पिता द्वारा पुत्री के नाम संपत्ति हस्तांतरण या पति द्वारा पत्नी के नाम संपत्ति सौंपने की प्रक्रिया आधुनिक काल में ही प्रारंभ हुई। हालाँकि मध्यकाल में भी इसके अपवाद मिल सकते हैं।

जबकि पश्चिमी और केंद्रीय यूरोप में संपत्ति पर स्त्रियों का मालिकाना हक मध्यकाल में ही नजर आने लगा था। इसमें परंपरा से चली आ रही संपत्ति पर पैतृक हक व अर्जित संपत्ति पर हक भी शामिल है।

पैतृक संपत्ति और संपत्ति हस्तांतरण की पद्धतियाँ परंपरागत रूप से लिंग आधारित श्रम विभाजन से जुड़ी थीं। ये श्रम आधारित पद्धतियां भी समाज व परिवार में पुरुषों की प्रधानता का ही समर्थन करती थीं तथा परंपरागत रूप से संपत्ति का मालिकाना हक पुरुषों को ही सौंपती थीं।

मध्यकाल में पुरुष परंपरागत रूप से कृषि कार्य करते थे, जिनमें महिलाओं की भागीदारी न के बराबर थी। कृषि के अलावा पशुपालन (अस्तबल आदि को छोड़कर), मछली पकड़ना तथा जंगल में शिकार करना पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी यूरोप में पुरुषों का प्रमुख कार्य था।

क्या आप जानते हैं मध्यकाल में परिवार मुख्य रूप से पुरुष प्रधान था।

कृषि व्यवस्था

आधुनिक काल से पूर्व तक पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी यूरोप में कृषि की विभिन्न परंपराएँ तथा रूप प्रचलित थे, जिसमें अर्ध-सामंती कृषि प्रणाली का वर्चस्व था। ज्यादातर किसान बंधुआ सेवक थे। कृषि तकनीक उन्नत नहीं थी। मजदूर-किसान को सुबह से शाम तक हाड़तोड़ मेहनत करनी पड़ती थी। किसान परिवार कुलीन परिवारों से बहुत छोटे व निम्न दर्जे के थे। सेवा करना उनके जीवन-चक्र का स्वाभाविक हिस्सा था। किसानों व मजदूरों के घर कच्चे व सीलन भरे होते थे। प्रकाश की व्यवस्था तथा वायु का संचार (वेंटिलेशन) नहीं था। घरों में मानवों के साथ-साथ पशु भी रहते थे हालाँकि मध्यकाल के अंत तक स्थिति में धीरे-धीरे सुधार आने लगा था।

> *टास्क* मध्यकाल में महिलाओं का मुख्य कार्य क्या था?

चर्च का प्रभाव

एक नियम के तहत ईसाइत ने खानदान तथा वंश की रूढ़िवादी परंपराओं को कमजोर करने में सहायता की। इसके साथ ही पति-पत्नी के भावनात्मक रिश्ते को मजबूती प्रदान की। पश्चिमी यूरोप में चर्च का प्रभाव पारिवारिक संबंधों पर अधिक था। चर्च के वैवाहिक कानूनों को पश्चिमी यूरोप में अधिक समर्थन प्राप्त था।

सहयोगात्मक तथा सामुदायिक सामाजिकता को चर्च का ठोस समर्थन मिलता था। परंपरागत रूढ़िवादी चर्च के प्रभाव में आने वाले क्षेत्रों में पित्रात्मक सगोत्रता पर आधुनिकता का असर कम था। जबकि प्रोटेस्टेंट चर्च दकियानूसी रीति-रिवाजों के बंधन को तोड़ने के लिए आम जनमानस को प्रोत्साहित कर रहा था।

स्व-मूल्यांकन (Self Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य/असत्य बताएँ–

(State whether the following statements are True/False)

1. समाज के सभी वर्गों के लिए जीवन का केंद्र परिवार ही था।
2. राजा या शासक वर्ग का परिवार बहुत छोटा होता था।
3. मध्यकाल में प्रत्येक परिवार का एक व्यक्ति महल में रसोइया था।
4. कुलीन परिवार की महिलाओं के लिए कई सेवक-सेविकाएँ थीं।
5. मध्यकाल में पुरुष परंपरागत तौर पर कृषि कार्य करते थे।
6. कैथोलिक परिवारों पर चर्च का प्रभाव नहीं था।

35.3 सारांश (Summary)

- राजा या शासक वर्ग का परिवार काफी बड़ा होता था, जिनमें बहुत से व्यक्ति रहते थे। राजा पर आश्रित राज-परिवार, रिश्तेदार, नौकर-चाकर आदि। इनके लिए रहने की व्यवस्था भी महल में ही बने विभिन्न तरह के कमरों में थी।
- उत्तरोत्तर मध्यकाल तक पारिवारिक संगठन की प्रक्रिया सामान्य बनी रही। आधुनिक काल आते-आते परिवारों में गोपनीयता बढ़ने लगी। पारिवारिक गोपनीयता ने परिवार की संरचना को भंग करना शुरू कर दिया।
- मध्यकाल के अंत तक कुछ परिवारों में महिला प्रधान भी पाई जाने लगी थी। घर में उनका दखल भी था। लेकिन केवल घर की चारदीवारी के भीतर ही।

नोट

- महिलाओं का मुख्य कार्य घरेलू मामलों का प्रबंध करना था। महिलाएँ उनकी बेटियाँ व अन्य स्त्री सदस्य खाना बनाना, साफ-सफाई, धोना-मांजना तथा पालतू पशुओं की देखभाल व अन्य कार्य किया करती थीं।
- पूर्वी और दक्षिण-पूर्वी यूरोप में संपत्ति पर मालिकाना हक पुरुषों का था। ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष परिवार का प्रधान होने के साथ ही सर्वेसर्वा था। वही पैतृक संपत्ति का स्वामी था। अपनी अर्जित संपत्ति के साथ-साथ पूर्वजों से प्राप्त खेत, धन व अन्य सम्पत्ति पर पुरुष का ही मालिकाना हक था।
- मध्यकाल में पुरुष परंपरागत रूप से कृषि करते थे, जिनमें महिलाओं की भागीदारी न के बराबर थी। कृषि के अलावा पशुपालन (अस्तबल आदि को छोड़कर), मछली पकड़ना तथा जंगल में शिकार करना पूर्वी तथा दक्षिण-पूर्वी यूरोप में पुरुषों का प्रमुख कार्य था।
- एक नियम के तहत ईसाइत ने खानदान तथा वंश की रूढ़िवादी परम्पराओं को कमजोर करने में सहायता की। इसके साथ ही पति-पत्नी के भावनात्मक रिश्ते को मजबूती प्रदान की। पश्चिमी यूरोप में चर्च का प्रभाव पारिवारिक संबंधों पर अधिक था। चर्च के वैवाहिक कानूनों को पश्चिमी यूरोप में अधिक समर्थन प्राप्त था।

35.4 शब्दकोश (Keywords)

- **वंशानुक्रम**—वंश के क्रम के आधार पर पीढ़ी दर पीढ़ी।
- **पित्रात्मक**—ऐसी परंपरा जिसमें पिता (पुरुष) की प्रधानता हो।

35.5 अभ्यास-प्रश्न (Review Questions)

1. मध्यकालीन पारिवारिक संरचना का संक्षिप्त परिचय दीजिए।
2. वंशानुक्रम संपत्ति हस्तांतरण का अर्थ स्पष्ट करते हुए विवेचना कीजिए।
3. मध्यकालीन कृषि व्यवस्था का परिचय दीजिए।
4. पारिवारिक संरचना पर चर्च के प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answer: Self Assessment)

1. सत्य	2. असत्य	3. असत्य	4. सत्य
5. सत्य	6. असत्य।		

35.6 संदर्भ पुस्तकें (Further Readings)

पुस्तकें

1. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बिपिन बिहारी सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
2. प्राचीन विश्व का उदय एवं इतिहास—ओम प्रकाश प्रसाद—राजकमल प्रकाशन।
3. विश्व इतिहास की भूमिका—रामसरन शर्मा, के. के. मण्डल—राजकमल प्रकाशन।
4. मध्यकालीन अरब इतिहास—कौलेश्वर राम—किताब महल।
5. विश्व इतिहास—कुसुम वाजपेयी—इशिका पब्लिशिंग हाउस।
6. प्राचीन एवं मध्यकालीन विश्व इतिहास—बी.बी. सिन्हा—ज्ञानन्दा प्रकाशन।
7. विश्व का इतिहास—गिरीश कुमार सिंह—ओमेगा पब्लिकेशन।

LOVELY PROFESSIONAL UNIVERSITY
Jalandhar-Delhi G.T. Road (NH-1)
Phagwara, Punjab (India)-144411
For Enquiry: +91-1824-300360
Fax.: +91-1824-506111
Email: odl@lpu.co.in